शिव सौरभम्

डा० शिव गोपाल मिश्र की 70वीं वर्षगाँठ पर अभिनन्दन

अनुक्रमणिका

कृतित्व खण्ड

अपनी बात

डॉ० शिवगोपाल मिश्र सरस्वती के ऐसे वरेण्य मानस पुत्र हैं जिनके बारे में जितना लिखा जायेगा उससे कहीं अधिक छूट जायेगा। वे ऐसे वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने अपनी लगन एवं कर्मठता के बल पर अपनी यशपताका चतुर्दिक फैलाई है। वे ऐसे सिद्धहस्त साहित्यकार हैं जिन्होंने स्वाध्याय व सृजन में सन्तुलन स्थापित किया है। आपके लेखन में अध्यवसाय और अनुसंधानपरक दृष्टिकोण का समन्वय होने के साथ ही ज्ञानपिपासा की तृप्ति का आस्वाद भी है।

अपनी माटी व भाषा के प्रति उनका लगाव स्तुत्य है। विदेशी चमक-दमक का आकर्षण उन्हें स्पर्श तक नहीं कर पाया है। हिन्दी राष्ट्रभाषा के माध्यम से विज्ञान को जन-जन तक पहुंचाने का जो बीड़ा उन्होंने उठाया है उससे निश्चित ही हिन्दी को बल मिला है और राष्ट्रीय भावना प्रबल हुई है। उन्होंने कितने ही लोगों को लेखक बना दिया है।

डॉ० मिश्र का व्यक्तित्व हिमालय जैसा विशाल व सागर सदृश अथाह व गम्भीर है। ऐसे में उनके कार्यों, उपलब्धियों व व्यक्तित्व से आम लोगों को परिचित कराने के परिप्रेक्ष्य में उनके शिष्यों के मन में एक साध उपजी थी। इस साध को सर्वप्रथम सन् १९९४ में विज्ञान वैचारिकी अकादमी के तत्वावधान में युवा विज्ञान लेखक शुकदेव प्रसाद जी ने **'डॉ0 शिवगोपाल मिश्र स्नेह मंजूषा'** निकालकर पूरा करने का प्रयास किया। पुनः १९९६ में डॉ० दिनेश मणि के सम्पादन में **Professor S.G. Mishra Commemoration Volume** का प्रकाशन किया गया। इन सबके बावजूद उनके तमाम शिष्यों एवं परिचितों को ऐसा लगता रहा कि उनके व्यक्तित्व व कृतित्व के अनुरूप एक समग्र अभिनन्दन ग्रंथ निकाला जाना आवश्यक है।

हमने डॉ० मिश्र के शिष्यों, मित्रों, प्रशंसकों, सहयोगियों सभी को इस महान यज्ञ में अपनी आहुति डालने के लिये आमन्त्रित किया। फिर भी कुछ लोगों के पते न होने तथा कुछ के पास पत्र न पहुंचने के कारण डॉ० मिश्र से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्यों से वंचित रहना पड़ा। हमें प्रसन्नता है कि अधिकांश ने अपना योगदान देकर अनुग्रहीत किया है। कुछेक लोग जिनका योग अपेक्षित था व्यस्तता अथवा अन्य कारणों से अपना योगदान नहीं दे सके, उसका हमें खेद है। कुछ लोगों ने आर्थिक सहयोग भी दिया है जिसके लिये हम उनके हृदय से आभारी हैं। इस पावन कार्य में वे लोग भी साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सहायता पहुंचाई है।

इस अभिनन्दन ग्रन्थ के लिए प्राप्त सामग्री को दो खण्डों के अन्तर्गत समायोजित किया गया है- व्यक्तित्व खण्ड तथा कृतित्व खण्ड। व्यक्तित्व खण्ड में सर्वप्रथम वरिष्ठजनों से प्राप्त शुभ सन्देश या लघु संस्मरण हैं। फिर इसी क्रम में डॉ० मिश्र के शिष्यों तथा पारिवारिक जनों के संस्मरण हैं। कुछेक संस्मरण अंग्रेजी में प्राप्त हुए हैं, जिन्हें उसी रूप में रखा गया है। ये सारे संस्मरण डॉ० मिश्र के बहुआयामी व्यक्तित्व को मुखरित करने वाले हैं।

द्वितीय खण्ड डॉ० मिश्र के कृतित्व से सम्बन्धित है। इसमें पहले उनके वैज्ञानिक अवदानों को रेखांकित करने वाले निबन्ध हैं, डॉ० मिश्र द्वारा लिखित कृतियों एवं निबन्धों की सूचियां हैं। साहित्यिक

अवदान से सम्बद्ध निबन्ध तथा डॉ० मिश्र द्वारा रचित कृतियों का उल्लेख हुआ है। अन्त में डॉ० मिश्र द्वारा प्रकाशित वैज्ञानिक शोधपत्रों की सूची है।

हमारा प्रयास यही रहा है कि डॉ० मिश्र के विषय में यथासम्भव परिपूर्ण विवरण प्रस्तुत किया जाए।

हम इस तथ्य से अवगत हैं कि यह अभिनन्दन ग्रन्थ डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व के अनुरूप तो नहीं बन पाया है फिर भी अपनी सीमाओं के अनुसार हमने भरपूर यत्न किया है।

डॉ० मिश्र को सरस्वती सम्मान, विज्ञान भूषण सम्मान, डॉ० आत्माराम सम्मान, विज्ञान भास्कर, हरशिरणानन्द पुरस्कार, सहस्राब्दि सम्मान सहित अनेक पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हुये हैं फिर भी उनके जानने वालों का यह मानना है कि यदि उन्हें प्रमुख राष्ट्रीय सम्मान नहीं प्राप्त हुये तो इसका एकमात्र कारण है आपकी स्पष्टवादिता। पुरस्कार प्राप्त करना आपका ध्येय नहीं, आपका लक्ष्य तो केवल सृजन है। आपने हिन्दी विज्ञान लेखन को अपने कृतित्व द्वारा जो नया आयाम दिया है, उसके लिये आपको सदा सर्वदा याद किया जायेगा।

ऐसे विज्ञान मनीषी व संघर्षशील व्यक्तित्व को कोटिशः प्रणाम करते हयुे परमपिता परमेश्वर से यही प्रार्थना है कि वह उन्हें चिरायु करे जिससे राष्ट्रभाषा हिन्दी व राष्ट्र के समस्त जनसमुदाय का कल्याण हो सके।

गिरीश पाण्डेय
सुनील कुमार पाण्डेय

शिव सौरभम्

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : संक्षिप्त जीवन रेखा

जन्म : 13 सितम्बर 1931, जनपद फतेहपुर (उ.प्र.) के नरौली ग्राम में

शैक्षणिक योग्यता : एम०एससी०, डी०फिल०, साहित्यरत्न, एफ०एन०ए०एससी०

कृतित्व : कई सौ लोकप्रिय विज्ञान विषयक लेख, 300 से अधिक मृदा विज्ञान विषयक शोध–पत्र जो देश तथा विदेश की विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। 42 डी०फिल० तथा 3 डी०एससी० शोध प्रबन्धों का कुशल निर्देशन।

लोकप्रिय वैज्ञानिक साहित्य के रूप में हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकें, 5 पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित। 3 मानक वैज्ञानिक पुस्तकों का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद कार्य।

विज्ञान साहित्य के साथ ही हिन्दी साहित्य में रुचि। वैज्ञानिक पुस्तकों के अतिरिक्त 9 हिन्दी साहित्यिक पुस्तकों की रचना।

सम्पादन : "विज्ञान" मासिक के 12 वर्षों तक सम्पादन के अतिरिक्त सन् 1958 से ही "विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका" के प्रबन्ध सम्पादक। भारत की सम्पदा, नई दिल्ली, आविष्कार, नई दिल्ली, रसायन समीक्षा, जयपुर, विज्ञान गरिमा सिन्धु, नई दिल्ली आदि विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादन मण्डल के सदस्य के रूप में भी सक्रिय योगदान। सम्प्रति 'विज्ञान' मासिक के सम्पादक।

प्रशासनिक अनुभव : विशेष कार्याधिकारी, भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली (1970–72), निदेशक, शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान, इलाहाबाद विश्वविद्यालय (1986–1991) तथा प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद (1977–1987)। सम्प्रति 1996 से पुनः विज्ञान परिषद् प्रयाग के प्रधानमंत्री।

सलाहकार समिति : संरक्षक, भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति, अध्यक्ष, विज्ञान प्रगति सम्पादन परामर्श समिति, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, उपाध्यक्ष, भारतीय लवणता अनुसंधान वैज्ञानिक समिति सहित अनेक समितियों के सदस्य।

सम्मान/पुरस्कार : 1. हरिशरणानन्द पुरस्कार (1961), 2. विज्ञान सरस्वती (1978), 3. डॉ० आत्माराम पुरस्कार (1993), 4. विज्ञान भूषण (1996), 5. विज्ञान भास्कर (1997), 6. विज्ञान मार्तण्ड (1997), 7. अभिषेक श्री (2000), इण्डियन साइंस राइटर्स एसोसियेशन का मानद फेलोशिप (2000), राष्ट्रीय हिन्दी सेवा सहस्त्राब्दि सम्मान (2000)।

परियोजनाओं का कार्यान्वयन : विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली के लिये "हिन्दी विज्ञान लेखन के सौ वर्ष", विज्ञान लोकप्रियकरण के प्रारम्भिक व्यक्तिनिष्ठ प्रयास, एन०सी०एस०टी०सी० नई दिल्ली के लिये हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तकों की टीका सहित सन्दर्भिका आदि परियोजनायें, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार हेतु जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश का समन्वयन।

मानव संसाधन विकास मंत्री
भारत
नई दिल्ली - ११० ००१
MINISTER OF
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT
INDIA
NEW DELHI-110 001
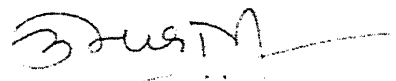
डा मुरली मनोहर जोशी
DR MURLI MANOHAR JOSHI

सन्देश

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता है कि विज्ञान परिषद प्रयाग के प्रधानमंत्री, प्रसिद्ध मृदाविज्ञानी एवं वरिष्ठ विज्ञान लेखक डॉ. शिवगोपाल मिश्र जी की सत्तरवीं वर्षगांठ पर उनके शोध छात्रों एवं शिष्यों द्वारा उनके सम्मान में एक अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है।

आदरणीय मिश्र जी जैसे विज्ञान मनीषियों का अभिनन्दन उनके शिष्यों द्वारा किया जाना भारतीय संस्कृति की परम्परा है। उनका अभिनन्दन कर हम स्वयं को गौरवान्वित कर रहे हैं। अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन प्रशंसनीय है, यह अपने उद्देश्य में सफल हो तथा डॉ. मिश्र चिरायु हों - यही शुभकामना है।

(मुरली मनोहर जोशी)

डा० (श्रीमती) मंजु शर्मा
Dr. (Mrs.) Manju Sharma

सचिव
भारत सरकार
विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय
बायोटेक्नोलॉजी विभाग
ब्लाक–2, 7 वां तल, सी०जी०ओ० कम्पलेक्स
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003
SECRETARY
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF SCIENCE & TECHNOLOGY
DEPARTMENT OF BIOTECHNOLOGY
Block-2 (7th Floor) CGO Complex
Lodi Road, New Delhi-110003

अ.गा.प.मं.एम.वी.टी./3099/2001 दिनांक 21.6.2001

मान्यवर,

आपका कृपा पत्र प्राप्त हुआ। इम ममय में लेख तो नहीं दे मकती पग्न्तु आदग्णीय श्री शिवगोपाल मिश्र के लिए अपनी शुभकामनाएँ भेज रहीं हूँ। उन्होंने विज्ञान परिषद प्रयाग उल्लेखनीय कार्य किया है। उनकी म्हृदयता, कार्य कुशलता और अच्छे व्यवहार ने हम मवको अति प्रभाविन किया है। हमारी शुभकामनाएँ मदैव उनके माथ हैं और हम उनकी दीर्घायु एवं मफलता की कामना करते हैं।

मादर

भवदीया,
मंजु शर्मा
(मंजु शर्मा)

श्री गिरीश पाण्डेय
मम्पादक
डा. मिश्र अभिनन्दन-ग्रन्थ
10, भरतपुरी कॉलोनी
धारा रोड फैजावाद

THE BHAKTIVEDANTA BOOK TRUST

Founder-Acharya : His Divine Grace A. C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada

Hare Krishna Land, Juhu, MUMBAI-400 049. [Post Box No. 28267]

Phone : 620 0357, 620 2921, 620 0975, Fax No. 91-22-6200357.

Ref. BBT *Date :*

दिनांक : ३१ मई २००१
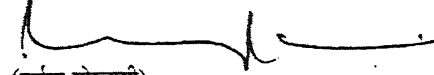
मान्यवर,

कृपया हमारी शुभ कामनाएँ स्वीकार करें। भगवान् श्रीकृष्ण की असीम कृपा आप पर बनी रहे। श्रील प्रभुपाद की जय। भगवान् श्रीकृष्ण की जय।

यह हमारे लिए अति गौरव का विषय है कि अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त वरिष्ठ विज्ञान लेखक, विज्ञान तथा आध्यात्मिक पुस्तकों के अनुवादक, साहित्यकार, सम्पादक एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अवकाशप्राप्त प्रोफेसर डॉ. शिवगोपाल मिश्र द्वारा साहित्य एवं विज्ञान के क्षेत्र में किये गये अविस्मरणीय, अति महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय योगदान से जनमानस को अवगत कराने हेतु उनकी सप्तदशक-पूर्ति के उपलक्ष्य में एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है।

यह हमारा सौभाग्य है कि डॉ. शिवगोपाल मिश्र ने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ (ISKCON) के संस्थापकाचार्य कृष्णकृपाश्रीमूर्ति श्री. श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद द्वारा अंग्रेजी में लिखित एवं भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित श्रीमद्भागवतम् (१८ खण्ड), श्रीचैतन्य-चरितामृत (९ खण्ड), लीलापुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण, भक्तिरसामृत सिंधु, उपदेशामृत, श्रीईशोपनिषद् जैसे ४० से अधिक ग्रंथों का (लगभग ३५ हजार पृष्ठ) हिन्दी भाषा में बारह वर्ष की अल्पावधि में अनुवाद कर एक महान् कार्य किया है। इसके अतिरिक्त आपने हमारी बैक टु गॉडहेड पत्रिका के लेखों का भी १४ वर्षों तक लगातार अनुवाद प्रस्तुत कर हमें अनुगृहीत किया है, ये सभी लेख भगवद्दर्शन मासिक पत्रिका में छपे हैं।

हम भगवान् श्रीकृष्ण से डॉ. शिवगोपाल जी के दीर्घ जीवन एवं उत्तमोत्तम स्वास्थ्य की कामना करते हैं ताकि वे अपने उज्ज्वल कार्यों द्वारा विश्व को इसी प्रकार से ज्ञान-विज्ञान एवं आध्यात्मिक ग्रंथों की आभा से प्रकाशित करते रहें।

हार्दिक शुभ कामनाओं सहित,
भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा में,
भवदीय,

(नर्मदा गोस्वामी)
ट्रस्टी एवं महाप्रबंधक

प्रतिष्ठा में,
प्रो. गिरीश पाण्डेय, सम्पादक
डॉ. मिश्र अभिनन्दन-ग्रन्थ
१०, भरतपुरी कॉलोनी
धारा रोड, फैजाबाद (उ.प्र.) २२४२२९

PRABHUPADA CENTENNIAL

MUMBAI • LOS ANGELES ★ NEW YORK ★ LONDON ★ TOKYO ★ MOSCOW ★ SYDNEY • HONGKONG

अभिनन्दन गीत

डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल'

हिन्दी के सेवक अनन्य वैज्ञानिक बद्रीनन्दन।
गुरुवर शिवगोपाल मिश्र का अभिवन्दन, अभिनन्दन।

शोध प्रबन्धन, शोध निदेशन, शोधकार्य आजीवन।
संपादन, सुप्रकाशन, परियोजना कुशल संचालन।

साहित्यिक वैज्ञानिक कृतियों के हे रचनाकार।
अनुवादन से सतत् समृद्ध किया हिन्दी आगार।

मौलिक लेखन, चिन्तन, श्रेष्ठ शोध जन-जन हितकारी।
कठिन विषय को सरल, सुबोध बनाने के अधिकारी।

नील रत्न धर जैसे गुरु के शिष्य, मृदा विज्ञानी।
राहुल सांकृत्यायन और 'निराला' के अनुगामी।

निष्ठावान कर्मयोगी, निज लक्ष्य निरंतर तत्पर।
आजीवन निष्काम भाव से सतत् अग्रसर पथ पर।

ज्ञानी विज्ञानी गुरुवर का काव्यांजलि अभिनन्दन।
'प्रभामाल' का भक्ति भाव से अर्पण अक्षत चन्दन।

शिवगोपाल प्रयागराज के प्रवर तीर्थ हैं 'जंगम'।
भाव सुमन का अंगवस्त्र सादर अर्पित करते हम।

'अध्यात्म कुटीर'
४३६ ए, बासुकी खुर्द
दारागंज, इलाहाबाद-२११००६

व्यक्तित्व खण्ड

विज्ञान प्रेमियों, शिष्यों, प्रशंसकों तथा परिवारजनों
के संस्मरण

बहुआयामी विज्ञान सेवी डॉ० प्रोफेसर शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 सुनील कुमार पाण्डेय

जीवन-यात्रा में वैसे तो अनेक व्यक्तियों से सम्पर्क होता है, लेकिन कभी-कभी ऐसे व्यक्ति से भी सम्पर्क हो जाता है, जिसका सम्पर्क ही मानो गौरव का विषय हो। मैं भी शायद स्वनामधन्य विज्ञान भूषण डॉ० शिवगोपाल मिश्र जैसे लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति का सम्पर्क पाकर स्वयं को धन्य समझने लगा हूँ क्योंकि ऐसे महान व्यक्तियों का सान्निध्य व प्रेम विरलों को ही मिल पाता है। आप शिव की भाँति परोपकारी व दयालु तथा गोपाल की भाँति अत्यन्त सरल हैं। इस प्रकार 'यथा नाम तथा गुण' की कहावत आप पर पूर्णतया चरितार्थ होती है। आप व्यक्ति नहीं स्वयं अपने आप में एक संस्था हैं।

डॉ० साहब के दर्शन का प्रथम अवसर १९९२ की शुरुआत में उस समय मिला, जब मैं शोध छात्र के रूप में निवेदन करने गया। इसके पूर्व मैंने डॉ० साहब के लेख पढ़े थे और मुझे अपने कुछ वरिष्ठ साथियों द्वारा बहुत कुछ जानने का अवसर मिलता रहता था, जिससे मन में यह इच्छा प्रबल होती जा रही थी कि डॉ० साहब के निर्देशन में शोध करूँ। लेकिन मन में यह डर जरूर रहता था कि पता नहीं मेरी यह इच्छा मूर्त रूप ले पायेगी कि नहीं। मेरे इस कार्य को डॉ० ए.एन. पाठक, पूर्व विभागाध्यक्ष, मृदा विज्ञान, च.शे. आ.कृषि एवं प्रौ० वि.वि. तथा इसी विभाग के ही डॉ० टी.पी. तिवारी ने सरल बनाया। जब उन्होंने यह जाना कि मैंने एम.एससी. तक की सभी परीक्षायें प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की हैं तो उन्होंने सहर्ष डॉ० साहब को पत्र लिख दिया और मेरी इच्छा साकार हुई।

जीवन-वृत्त

डॉ० साहब का जन्म १३ सितम्बर १९३१ को उ०प्र० के फतेहपुर जनपद में यमुना नदी के तट पर स्थित एक छोटे से गाँव नरौली में हुआ। आपके पिता पं० बद्री विशाल मिश्र एक कृषक थे तथा माता श्रीमती पार्वती देवी गृहकार्य में निपुण एक धर्मपरायण महिला थीं। आपके दो बहनें थीं तथा छः भाइयों में आप पांचवें स्थान पर थे। आपने गाँव से तीन मील की दूरी पर स्थित पाठशाला में पढ़ाई शुरू की। सन् १९४० में अल्पायु में ही पितृविहीन हो गये। प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने के बाद आगे की शिक्षा के लिये फतेहपुर अपने अग्रज के पास चले गये। १९४२ में छठीं कक्षा में आपका प्रवेश राजकीय विद्यालय फतेहपुर में हुआ। सन् १९४६ में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद आप प्रयाग आ गये और यहीं के.पी. इण्टर कॉलेज में प्रवेश ले लिया। उच्च शिक्षा हेतु जुलाई १९४८ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय (म्योर कॉलेज) में प्रविष्ट हुये। १९५२ में जब एम.एससी. का परीक्षाफल घोषित हुआ तो उसमें आपका स्थान सर्वोपरि रहा। इससे आपके अध्यापकगण बहुत प्रसन्न हुये। विश्वविख्यात मृदाविज्ञानी प्रो० नीलरत्न धर ने आपकी प्रतिभा को देखते हुये अपने साथ शोध कार्य करने को कहा। आपके शोध का विषय था "क्षारीय और अम्लीय मिट्टियों का निर्माण"। आपके शोध प्रबन्ध के निरीक्षक

थे- अमेरिका के सुप्रसिद्ध मृदाविज्ञानी डब्ल्यू.पी. केली और भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के मृदाविज्ञानी डॉ० एस.पी. रायचौधरी। आपके कार्य को देखकर ये लोग आपसे प्रभावित हुये और आपको डॉक्टरेट की उपाधि मिल गयी। आगे डी.एससी. की उपाधि के लिये 'फास्फेट पर अध्ययन' विषय पर शोध कार्य प्रारम्भ ही किया था कि जुलाई १९५६ में आपकी नियुक्ति कृषि रसायन के स्नातकोत्तर छात्रों को पढ़ाने के लिये उसी विश्वविद्यालय में हो गई और डी.एससी. उपाधि प्राप्त करने का स्वप्न साकार न हो सका। सन् १९५७ में आप प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक डॉ० उदय नारायण तिवारी की पुत्री राम कुमारी जी के साथ परिणय-सूत्र में बँध गये। १९८६ से आपको अध्यापन के साथ ही शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक के रूप में प्रशासनिक कार्य भी करना पड़ा। सन् १९७०-७१ के मध्य वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली में 'भारत की सम्पदा' के विशेष हिन्दी अधिकारी के रूप में भी कार्य किया। सन् १९९१ में शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक पद से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त भी अगले चार वर्षों तक संस्थान को अपनी सेवायें देते रहे।

शोध-यात्रा

सन् १९६० से अध्यापन के साथ ही आपको शोध कार्य का निर्देशन भी करना पड़ा। आपने अपने शिष्यों को शोध हेतु सर्वथा ऐसे नवीन व ज्वलंत विषय चुनने के लिये प्रेरित किया जिनकी प्रासंगिकता देश की कृषि समस्या से हो। आपने सूक्ष्ममात्रिक तत्व, ऊसर मिट्टी, फास्फेट, जीवनाशी रसायनों पर उत्कृष्ट शोध कार्य कराया। मृदा-प्रदूषण पर आपने शोध कार्य उस समय शुरू कराया जब इस ओर लोगों का ध्यान तक नहीं जाता था। डॉ० धर मृदा उर्वरता के प्रसंग में मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाने पर सदैव बल देते थे तो आपने घरेलू मल-जल तथा अवमल के प्रयोग पर बल दिया। आपके प्रयोग फसलों तथा मिट्टी पर पड़ने वाले प्रभावों को स्पष्ट करने वाले हैं। अब तो समस्त विश्व भारी धातुओं की विषाक्तता के प्रति जागरूक हो उठा है लेकिन आप इस ओर वैज्ञानिकों का ध्यान पहले ही आकृष्ट कर चुके थे। आपके द्वारा कराये गये प्रयोगों से इन भारी धातुओं की यथेष्ट मात्राओं की अभिग्रहण-क्रियाविधि पर प्रकाश पड़ता है। इधर जब मृदा में बढ़ते रसायनों की मात्रा ने एक नई समस्या उत्पन्न कर दी तो आपने अपना शोध कार्य वर्मीकम्पोस्टिंग पर केन्द्रित कर दिया और पिछले १०-१२ वर्षों के परिणाम काफी उत्साहजनक रहे।

आपके शोध कार्यों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिली है और शोध-पत्र देश-विदेश के उत्कृष्टतम जर्नलों में प्रकाशित होते रहे हैं। अब तक आपके लगभग ३०० शोध-पत्र प्रकाशित हुये हैं, जो स्वयं आपकी शोध-यात्रा की कहानी कहते हैं।

आपके निर्देशन में ४२ शोधार्थियों को डी.फिल. तथा ३ शोधार्थियों को डी.एससी. की उपाधि प्राप्त हुई।

शिष्यों के प्रति अगाध लगाव

डॉ० साहब का अपने शिष्यों से अगाध लगाव रहा है। वे शिष्यों का दुख दर्द अपना दुख दर्द समझते रहे हैं और उन्हें आगे बढ़ता देख उनको असीम प्रसन्न होते हैं। विज्ञान परिषद् से मेरा सम्बन्ध डॉ० साहब के ही कारण हुआ। यह डॉ० साहब का अपने शिष्यों के प्रति वात्सल्य ही है कि जब मुझे एक विशेष कार्य हेतु कुछ मास के लिये विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

विभाग, भारत सरकार) बुलाया गया तो स्टेशन पर विदा करने डॉ० साहब अपने एक अन्य शिष्य के साथ मेरे पहुँचने से काफी पूर्व ही पहुँच चुके थे। २५ नवम्बर १९९७ को जब मेरे पूज्य पिताजी का स्वर्गवास हुआ तो मैं वहीं पर था। दुख की उस घड़ी में दूरभाष पर डॉ० साहब ने सान्त्वना स्वरूप जो वचन कहे थे वे आज भी मेरे मस्तिष्क-पटल पर अंकित हैं। आपने सदैव शिष्यों को कभी निराश न होने तथा कर्तव्यपथ पर अनवरत आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है। आप द्वारा दिये गये इसी मूल-मंत्र को अपनाकर आपके कई शिष्य देश-विदेश में आपकी यश-पताका फैला रहे हैं।

आप शिष्यों की कठिनाइयों को समझने और समाधान करने का हर सम्भव प्रयास करते रहे हैं। शोध कार्य के दौरान मैंने देखा है कि वे शिष्यों को क्रमशः बुलाते और उनकी शोध सम्बन्धी अथवा व्यक्तिगत कठिनाई यदि कोई हो, तो अपने स्तर पर दूर करने का प्रयास करते। वे शोध कार्य की प्रगति से अवगत होकर नवीन शोधों के विषय में जानकारी देते तथा कार्य को पूर्ण ऊर्जा व तन्मयता के साथ करने के लिये प्रेरित करते। डॉ० साहब कुछ लोगों को काफी सख्त व कठोर लगते हैं, किन्तु वास्तव में उनका अन्तर्मन अत्यन्त निर्मल व दयालु है।

हिन्दी प्रेम

यह डॉ० साहब का हिन्दी प्रेम ही है कि उन्होंने विज्ञान में उच्च उपाधि प्राप्त करने के साथ ही विशारद तथा साहित्यरत्न की उपाधियाँ भी प्राप्त कीं। आपका कहना है कि हाई स्कूल में हिन्दी की कविताओं को गा-गाकर याद करना अच्छा लगता था और आज भी आप हिन्दी कविताओं को गुनगुनाया करते हैं। आपका हिन्दी प्रेम दो रूपों में स्पष्ट झलकता है- एक तो वैज्ञानिक साहित्य के लेखन, सम्पादन के रूप में और दूसरा हिन्दी साहित्य संवर्द्धनकर्ता के रूप में।

१९५० में महाकवि निराला के सम्पर्क में आने पर आपके हिन्दी प्रेम ने और भी साकार रूप ले लिया। उनके माध्यम से आप उस समय के देश के शीर्षस्थ कवियों और लेखकों के सम्पर्क में आये। महादेवी वर्मा और अमृत राय जैसे लोग तो आपके पड़ोस में ही रहते थे। कवियों और लेखकों के निकट सम्पर्क में आने से आपके हिन्दी प्रेम ने रंग दिखाया जिससे आपने साहित्य के संवर्द्धन में उत्कृष्ट कार्य किया। यह सौभाग्य ही था कि आपको जीवनसंगिनी के रूप में डॉ० राम कुमारी मिश्रा जैसी विदुषी महिला मिलीं। चूंकि वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यापन कार्य करती रही हैं, इसलिये आपको इस विधा में उनका भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ।

आप अंग्रेजी भाषा के विरोधी नहीं हैं किन्तु आपका स्पष्ट मत है कि अंग्रेजी राष्ट्रीयता की पहचान नहीं हो सकती। आपका यह विचार है कि जितना समय हम अंग्रेजी भाषा को सीखने और जानने में नष्ट करते हैं वह समय किसी अन्य सृजनात्मक कार्य में व्यय किया जा सकता है। यह भी कि हम किसी भी विषय-वस्तु को अपनी भाषा में ज्यादा सरलता और आसानी से समझा सकते हैं और वह ज्यादा बोधगम्य होगी। आप अपने इस मन्तव्य को विभिन्न मंचों से सदैव ही कहते रहते हैं।

हिन्दी साहित्य साधना

डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त करने के बाद आपने निराला जी की अनुमति से उनके कतिपय निबन्धों तथा कविताओं का विभिन्न स्थानों से संकलन करके चयन, संग्रह तथा गीतगुंज नाम से प्रकाशन कराया और उनकी भूमिका भी आपने लिखी। निराला के साथ आपने अनेक स्थानों का भ्रमण किया और मृत्यु के समय उनके चरणकमलों के पास रहे।

सन् १६५६ में फतेहपुर जनपद के तत्कालीन जिला नियोजन अधिकारी कैप्टन शूरवीर सिंह ने हसवा ग्राम में सन्त चन्ददास की अनेक कृतियों की खोज की थी। इस परिप्रेक्ष्य में डॉ० राम कुमार वर्मा के साथ एकडला की यात्रा की। एकडला में आपके मित्र रावत ओम प्रकाश सिंह के हस्तलिखित ग्रन्थागार में सूफी कवि कुतुबन कृत 'मृगावती' तथा मंझन कृत 'मधुमालती' की पाण्डुलिपियाँ प्राप्त हुईं। पाण्डुलिपियों के सम्पादन का भार आपने अपने ऊपर लिया। अध्यापन कार्य तथा शोध कार्य में किसी तरह की शिथिलता बरते बिना प्राणपण से जुटकर इन ग्रन्थों का सम्पादन किया और भूमिकायें लिखीं, जिनकी भूरि-भूरि प्रशंसा हुई। इसी दौरान सन् १६५८ में ईश्वरदासकृत 'सत्यवती' का भी सम्पादन कार्य किया। इन सबसे बड़े-बड़े विद्वान भी आपका आदर करने लगे।

महापंडित राहुल सांकृत्यायन तथा पं० कृष्णदत्त बाजपेयी के सम्पर्क में आने पर आपका ध्यान पुरातत्व व लोक साहित्य की भी ओर गया। 'अन्तरवेद' नामक पत्रिका का प्रकाशन कार्य करने के साथ ही 'अपरा' पत्रिका का भी सम्पादन किया। सूफी साहित्य, लोक साहित्य तथा प्राचीन पाण्डुलिपियों को विषय बनाकर आपने अनेक लेख लिखे। इसके अतिरिक्त भी आपने कई पुस्तकों के सम्पादन तथा लेखन का कार्य किया जिससे हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान हुआ।

धार्मिक साहित्य का अनुवाद

अनेक लोगों के लिये यह कौतूहल का विषय होगा कि डॉ० साहब ने अन्य कार्यों में शिथिलता लाये बिना धार्मिक साहित्य के अनुवाद कार्य को कैसे और कब किया। वास्तव में यह विराट कार्य आप जैसे अपने धुन के पक्के व्यक्ति के लिये ही सम्भव था। आपके इस अद्वितीय कार्य द्वारा श्रील प्रभुपाद के ग्रन्थों से हिन्दी भाषी लोगों को ज्ञान के अगाध सागर में गोता लगाने का अवसर मिला। यह कार्य आपने सन् १६८२ में प्रारम्भ किया और तभी से यह कार्य अनवरत रूप से आप द्वारा निरन्तर किया जाता रहा है। इस प्रकार 'अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ (ISKCON) वालों को आप जैसा मूर्धन्य विद्वान पाकर यह सुअवसर प्राप्त हुआ कि वे 'श्रीमद्भागवत' तथा 'भगवद्गीता', 'चैतन्य चरितामृत' सहित अनेक वैष्णव ग्रन्थों को हिन्दी मतावलम्बियों के मध्य पहुँचा सकें। इस अनुवाद कार्य से भक्ति साहित्य में रुचि रखने वाले तथा शोधार्थियों को ऐसी सामग्री प्राप्त हो रही है, जिससे वे अपरिचित रहे हैं।

विज्ञान लेखन

जहाँ तक मुझे ज्ञात है कि वर्तमान में हमारे देश में आपके समान कोई दूसरा हिन्दी विज्ञान लेखक नहीं है। मुझे याद है कि एक अन्य वरिष्ठ विज्ञान लेखक श्री गुणाकर मुले ने डॉ० मिश्र से एक अवसर पर कहा था कि डॉ० साहब यह महत्वपूर्ण कार्य आप कर दीजिये क्योंकि यह कार्य न तो वर्तमान में कोई कर सकता है और न भविष्य में। जहां तक मैं समझता हूँ डॉ० साहब के लेखन में उत्कृष्टता का एक प्रमुख कारण है, हिन्दी साहित्य, संस्कृत साहित्य, अंग्रेजी साहित्य, पुरातत्व विज्ञान पर पूर्ण अधिकार। शायद ही कोई अन्य हिन्दी विज्ञान लेखक हो जो एकसाथ इतनी विधाओं पर समान अधिकार रखता हो। सच पूछा जाय तो डॉ० मिश्र और उनके विज्ञान विषयक ग्रन्थ हिन्दी में विज्ञान लेखन के इतिहास को समृद्ध बनाने वाले हैं। यद्यपि आपके लेखों की संख्या की कोई सूची नहीं है तथापि अनुमान है कि आपके लेखों की संख्या सैकड़ों में होगी तथा देश की शायद ही कोई महत्वपूर्ण विज्ञान पत्रिका हो जिसके लिये आपसे लेख न माँगा गया हो और आपने अपना अवदान न किया हो।

आपकी पुस्तकों की सूची आपकी लेखन क्षमता की स्वयं ही कहानी कहती है।

आपने लेखों अथवा पुस्तकों के लिये सर्वथा नवीन विषयों का चयन किया। आपने अन्य विज्ञान लेखकों को भी सर्वदा समाज की भावी समस्याओं को ध्यान में रखते हुये लेख लिखने की प्रेरणा दी। आपकी प्रेरणा से अनेक छात्र विज्ञान लेखक बन गये और आज इस क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

डॉ० मिश्र की योजना हिन्दी विज्ञान लेखन के इतिहास पर एक शोधपरक ग्रन्थ लिखने की है तथा अपनी इस योजना को मूर्त रूप प्रदान करने में जुटे हुये हैं।

सन् १९७० में जब वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली ने "भारत की सम्पदा" के प्रकाशन का निश्चय किया तो परिषद् ने आपसे 'विशेष हिन्दी अधिकारी' के रूप में अपनी सेवायें देने का अनुरोध किया, क्योंकि डॉ० आत्माराम व स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती का यह स्पष्ट मत था कि यह महत्वपूर्ण कार्य केवल आपके द्वारा ही सम्भव है। आपने रात-दिन मेहनत करके इस विशाल कार्य को केवल दो वर्षों में पूर्ण कर दिया। इसके प्रथम खंड का विमोचन देश की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी से कराकर आप प्रयाग वापस आ गये। यह अलग बात है कि उसका प्रकाशन ३० वर्षों तक चलता रहा।

हिन्दी की क्षमता पर प्रश्नचिन्ह लगाने वालों से वे सहमत नहीं। पारिभाषिक शब्दावली के सम्बन्ध में उनका यह स्पष्ट मत है कि जो शब्द प्रचलन में हैं उनको उसी रूप में स्वीकार करने में कोई बुराई नहीं है।

विज्ञान परिषद् और डॉ0 मिश्र

विज्ञान परिषद् प्रयाग से आपका जुड़ाव सन् १९५६ में हिन्दी विज्ञान लेखन के पुरोधा स्वामी (डॉ०) सत्यप्रकाश सरस्वती के माध्यम से हुआ। स्वामी जी ने तो आपको अपनी 'महत्वपूर्ण खोज' भी कहा था। सन् १९५८ में जब विज्ञान परिषद् द्वारा सर्वप्रथम हिन्दी वैज्ञानिक शोध पत्रिका को प्रकाशित करने का विचार किया गया तो इस गुरुतर कार्य का उत्तरदायित्व भी प्रबन्ध सम्पादक के रूप में आपको ही सौंपा गया। तब से लगातार आप अपनी इस जिम्मेदारी का निर्वहन पूर्ण मनोयोग के साथ करते आ रहे हैं। विज्ञान परिषद् के आप इस समय वरिष्ठतम सदस्य हैं और सच पूछा जाये तो संस्था के प्राण हैं तथा विज्ञान परिषद् व आप एक दूसरे के पर्याय हैं।

इस संस्था ने आपके प्रधानमंत्री काल में नये आयाम स्थापित किये हैं। आपके कुशल निर्देशन में नई-नई परियोजनायें मूर्त रूप प्राप्त कर रही हैं। आपके मस्तिष्क में विज्ञान परिषद् के लिये कुछ न कुछ योजनायें आती रहती हैं। आपकी यह इच्छा है कि संस्था को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित किया जाये और आप इसके लिये प्रयासरत भी हैं।

आप विज्ञान परिषद् में किसी महत्वपूर्ण पद पर रहें या न रहें, आपका योगदान किसी भी रूप में कम नहीं रहता। संस्था का कोई भी पदाधिकारी आपकी सलाह के बिना कोई कार्य नहीं करता और सभी का आदर व सम्मान आपको सदैव मिलता है।

जिस संस्था से पं० गंगानाथ झा, श्रीमती एनी बेसेन्ट, डॉ० आत्माराम, सर सुन्दर लाल जैसे लोग जुड़े रहे हों उस संस्था से जुड़ना ही जहाँ गौरव की बात हो उस संस्था का प्रधानमंत्री होना तथा सभी का आदर प्राप्त होना व्यक्ति के व्यक्तित्व व महानता को स्वयं ही स्पष्ट कर देता है।

सन् १६६६ में आपको प्रधानमंत्री पद का दोबारा उत्तरदायित्व सौंपा गया तबसे संस्था के कार्यक्षेत्र में काफी विस्तार आया है। अपने सीमित संसाधनों के बावजूद जिस तेजी से संस्था अपनी महत्ता के नये आयामों का स्पर्श कर रही है, वह आप जैसे सुयोग्य, कर्मठ व लगनशील व्यक्ति के सद्प्रयासों का ही परिणाम है। आपने निष्काम सेवा करते हुये, अविचल भाव से संस्था को देश की अग्रणी संस्था का रूप दिलाने का जो सपना संजोया है, वह मूर्त रूप लेती प्रतीत हो रही है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि यदि इसी प्रकार सभी का सहयोग आपको प्राप्त होता रहा तो आपका स्वप्न साकार होना सन्निकट है।

पुरस्कार व सम्मान

डॉ० मिश्र को प्रारम्भ से ही हरिशरणानन्द पुरस्कार, विज्ञान सरस्वती सम्मान, विज्ञान वाचस्पति, डॉ० आत्माराम पुरस्कार, विज्ञान भूषण, विज्ञान मार्तण्ड, अभिषेकश्री, सहस्राब्दि सम्मान सहित अनेक पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हुये हैं। अनेक संस्थाओं के आप सभ्य भी नियुक्त किये गये हैं।

किन्तु इन सबसे बढ़कर आपको और कौन सा सम्मान मिल सकता है कि देश-विदेश में फैले हुये आपके शिष्यों में आपके प्रति अटूट आस्था व लगाव है। फिर भी आपको जो पुरस्कार अथवा सम्मान मिलने चाहिये थे, वे यदि नहीं मिले तो इसका एकमात्र कारण यही है कि अपनी बातों को स्पष्ट कह देते हैं और राजनीतिक कौशल के इस युग में किसी भी प्रकार से खरे नहीं उतरते।

प्रो0 शिवगोपाल के निर्देशन में डी.फिल. उपाधि प्राप्तकर्ता

क्र.सं. नाम	वर्ष	क्र.सं. नाम	वर्ष
१. डॉ० रमेश चन्द्र तिवारी	१६६५	२. डॉ० देवेन्द्र प्रसाद शर्मा	१६६७
३. डॉ० प्रेम चन्द्र मिश्र	१६६७	४. डॉ० सन्तोष कुमार ओझा	१६६७
५. डॉ० केशवाचार्य मिश्र	१६६८	६. डॉ० बृहस्पति सिंह	१६६६
७. डॉ० तौहीद खान	१६६८	८. डॉ० महेश कुमार मिश्र	१६७१
६. डॉ० नरेन्द्र त्रिपाठी	१६७०	१०. डॉ० बैजनाथ प्रसाद गुप्ता	१६७३
११. डॉ० राम सजीवन पाण्डेय	१६७३	१२. डॉ० घनश्याम सिंह	१६७३
१३. डॉ० पद्माकर पाण्डेय	१६७४	१४. डॉ० श्याम सुन्दर त्रिपाठी	१६७५
१५. डॉ० गिरीश पाण्डेय	१६७५	१६. डॉ० राम शंकर द्विवेदी	१६७६
१७. डॉ० रमाशंकर द्विवेदी	१६७६	१८. डॉ० सरयू प्रसाद पाठक	१६८०
१६. डॉ० हेमचन्द्र जोशी	१६८१	२०. डॉ० एस. मुरलीधर	१६८१
२१. डॉ० अशोक कुमार गुप्ता	१६८२	२२. डॉ० पी.सी. जायसवाल	१६८२
२३. डॉ० प्रभाकर द्विवेदी	१६८४	२४. डॉ० अम्बरीष तिवारी	१६८८
२५. डॉ० उमेश सिंह	१६८६	२६. डॉ० चन्द्र प्रकाश श्रीवास्तव	१६८६
२७. डॉ० युगल किशोर अग्निहोत्री	१६८६	२८. डॉ० ए.एन. सिंह	१६६०
२६. डॉ० विनय कुमार	१६६१	३०. डॉ० दिनेश मणि	१६६१
३१. डॉ० प्रमोद कुमार शुक्ला	१६६२	३२. डॉ० सुनील दत्त तिवारी	१६६२
३३. डॉ० अशोक तिवारी	१६६२	३४. डॉ० जगदम्बा प्रसाद पाठक	१६६३

३५.	डॉ० उमाशंकर मिश्र	१६६३	३६.	डॉ० अरुण कुमार चतुर्वेदी	१६६४
३७.	डॉ० पवन कुमार	१६६५	३८.	डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय	१६६६
३६.	डॉ० देवी दयाल पाण्डेय	१६६६	४०.	डॉ० संजीव त्रिपाठी	१६६७
४१.	डॉ० अरुण कुमार सिंह	२००१	४२.	डॉ० अजय कुमार	२००१

डी.एससी.

१.	डॉ० देवेन्द्र प्रसाद शर्मा	१६८१	२.	डॉ० दिनेश मणि	१६६४
३.	डॉ० अशोक कुमार गुप्ता	२०००			

डॉ० मिश्र का यह मानना है कि हिन्दी साहित्यकारों को हमारी कृतियाँ पढ़नी चाहिये। यदि हम उनकी कृतियाँ पढ़ते हैं तो फिर वे हमारी क्यों नहीं पढ़ते ? हिन्दी किसी एक वर्ग की नहीं है। इसे विश्व भाषा बनाने का सपना तभी पूर्ण होगा जब हिन्दी विज्ञान लेखकों की सहभागिता स्वीकार की जायेगी।

डॉ० मिश्र की देश के वरिष्ठ वैज्ञानिकों से यह अपेक्षा है कि शोध संस्थानों तथा प्रयोगशालाओं में जो कार्य हो रहा है उसको वे जनसामान्य तक पहुँचाने का भी कार्य करें। वे हिन्दी का सम्यक अध्ययन करें, हिन्दी में लेखन करें और अपना दायित्व निभावें। वैज्ञानिकों को सचेत करते हुये उन्होंने लिखा है- "कब चेतेंगे हमारे विज्ञानी ? रूस, चीन, जापान हमारे लिये आदर्श हैं तो फिर उन देशों में विज्ञान का लेखन जिस प्रकार उनकी भाषाओं में हो रहा है, उसका अनुकरण हम क्यों नही करते........" उनका मानना है कि इससे निश्चित रूप से जनमानस को लाभ होगा और ऐसे विज्ञानियों पर राष्ट्र को गर्व होगा।

यह डॉ० मिश्र जैसे कर्मठ व दृढ़प्रतिज्ञ हिन्दी विज्ञान लेखकों के प्रयास का ही प्रतिफल है कि अब हिन्दी का प्रयोग वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में भी बड़े पैमाने पर होने लगा है। अनेक कार्य अब मौलिक रूप में हिन्दी में किये जा रहे हैं और कई अनुवाद हिन्दी के माध्यम से हो रहे हैं। इन सबसे हिन्दी के शब्द भण्डार और पहुंच में अपार वृद्धि हुई है और हिन्दी का प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है। निस्सन्देह इससे राष्ट्रीय भावना प्रबल होगी।

अन्त में ईश्वर से यही प्रार्थना है कि ऐसे बहुआयामी विज्ञानसेवी व सरस्वती पुत्र को चिरायु करें जिससे पूरे राष्ट्र तथा समाज का कल्याण हो सके।

संयुक्त मंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग
एवं विषय वस्तु विशेषज्ञ
कृषि ज्ञान केन्द्र
(सम्बद्ध न.दे.कृ. एवं प्रौ.वि.वि., फैजाबाद)
संत कबीर नगर

हिन्दी में विज्ञान लेखन के एक सशक्त समर्थक

प्रो० एस.के. जोशी

डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से मेरा पहला परिचय पचास के दशक में हुआ तभी से वह हिन्दी में विज्ञान लेखन के एक सशक्त समर्थक थे। वह न केवल स्वयं नियमित रूप से विज्ञान परिषद् से प्रकाशित "विज्ञान" पत्रिका में लिखते थे वरन् अन्य लोगों को भी हिन्दी में विज्ञान के विभिन्न विषयों पर लिखने के लिये प्रेरित करते थे। मेरा विज्ञान में पहला लेख उनके प्रोत्साहन से ही लिखा गया।

शिवगोपाल जी यह कहा करते थे कि हिन्दी के माध्यम से शोधकार्य को अन्य शोधकर्ताओं तक पहुँचाना सम्भव है। इसी विश्वास से स्वामी सत्यप्रकाश जी के नेतृत्व में उन्होंने विज्ञान शोध पत्रिका के प्रकाशन का बीड़ा उठाया। इसमें वह सफल हुये।

शिवगोपाल जी पूर्ण रूप से अपने शोध विषय मृदा विज्ञान को समर्पित थे। इसके साथ ही साथ उनका स्वयं का जीवन हिन्दी में विज्ञान लेखन का पर्याय बन गया। वह अकेले ही कई गतिरोधों के बावजूद आगे बढ़ते गये। विज्ञान परिषद् प्रयाग जो उनके हिन्दी में विज्ञान लिखने का माध्यम बना, उनकी सेवाओं से पोषित हुआ। इस परिषद् का यह सौभाग्य था कि उसे शिवगोपाल जी जैसा समर्पित व्यक्ति का आधार मिला। शिवगोपाल जी का विज्ञान परिषद् के प्रति पूर्ण समर्पण विज्ञान परिषद् की स्थिरता का आधार था। धन और जन के अभाव में भी उन्होंने कभी परिषद् को प्रभावी बनाने के अपने प्रयत्नों में ढील नहीं आने दी।

यह मेरा सौभाग्य है कि मैं डॉ० शिवगोपाल जी के सम्पर्क में आया। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि डॉ० शिवगोपाल और कई दशकों तक विज्ञान परिषद् और हिन्दी में विज्ञान लेखन को गति दें, हमारा पथ प्रदर्शन करते रहें।

पूर्व महानिदेशक
वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्
नई दिल्ली

डॉ० मिश्र दीर्घजीवी हों

डॉ0 रामचरण मेहरोत्रा

प्रिय गिरीश जी,

आपका पत्र २-३ दिन हुये मिला था। इस समय मेरी आंखों में बहुत कष्ट है, मोतियाबिन्दु के कारण अपना लिखा ही ठीक से पढ़ नहीं पाता हूं इसलिये गल्तियों के लिये क्षमा करते हुये उन्हें सुधार देना।

मैं आपको अंतरंग मित्र डॉ० शिवगोपाल मिश्र के ७०वें जन्म दिवस पर स्मारिका निकलवाने के लिए कोटिशः बधाई देता हूं- अति सुन्दर विचार और योजना है तथा उसकी सफलता की कामना करता हूं।

शिवगोपाल जी का मैं बहुत प्रशंसक हूं। सन् १६४७ से १६५० तक केवल ६०० के अनुदान के सहारे मासिक विज्ञान के सम्पादन को झेल चुका हूं। कोटा परमिट का वातावरण था- अपने मित्र डॉ० हीरालाल दुबे और रामदास तिवारी के साथ प्रत्येक मास कागज के परमिट के लिये बहुत चक्कर लगाने पड़ते थे। लेखक भी कम थे, कभी कभी तो छद्म नामों से लेख लिखकर ६ फर्मे की सामग्री को पूरा करना पड़ता था- धनाभाव के कारण सबसे सस्ते प्रेस में छपवाना पड़ता था और विश्वविद्यालय से अहियापुर जाते हुये प्रूफ लेता जाता था और दूसरे दिन संशोधित प्रूफ देते हुये विश्वविद्यालय आता था। इस समय भी डॉ० सत्य प्रकाश जी का निर्देशन था और शिवगोपाल जैसे नवयुवक का सहयोग ही सम्बल था।

उपर्युक्त व्यक्तिगत अनुभूतियों का उल्लेख तो केवल इसलिये कर रहा हूं कि मैं इस सब कार्य में कठिनाइयों से अपरिचित नहीं हूं और तभी शिवगोपाल जी के प्रयासों के महत्व को समझता हूं। शिवगोपाल जी की कार्यकुशलता से विज्ञान परिषद् की आर्थिक स्थिति भी पहले से अच्छी हो गयी है और प्रकाशन स्तर भी अति उत्तम हो रहा है मेरे पास उनके अथक प्रयासों के लिये प्रशंसा के उपयुक्त शब्द नहीं है।

अनुसंधान पत्रिका का प्रकाशन तो और भी दुर्लभ कार्य है और उसका तो समस्त श्रेय शिवगोपाल जी को ही है। एन.सी.ई.आर.टी. में मुझे पुस्तकें लिखवाने का भार सौंपा गया उसमें भी मिश्र जी से इतनी सहायता और सहयोग मिला कि उसके लिये उनका समुचित प्रतिदान मेरे लिये असंभव है।

हिन्दी का मार्ग प्रशस्त होने के स्थान पर कम्प्यूटर युग में धुंधला होता जाता है और अब उसे जीवित रखने के लिये मिश्र जी ऐसे अथक सेवकों की और भी आवश्यकता है। परमात्मा उन्हें दीर्घ जीवन दे और प्रसन्न रखे, यही कामना है।

रा. च. मेहरोत्रा
प्रोफेसर एमेरिटस, राजस्थान विश्वविद्यालय
(पूर्व कुलपति, राजस्थान, दिल्ली एवं
इलाहाबाद विश्वविद्यालय)

कल, आज और कल

डॉ० देवेन्द्र शर्मा

बीसवीं शताब्दी के छठे दशक का समय था जब मैंने शिवगोपालजी के 'विज्ञान' में प्रकाशित लेखों के द्वारा उनसे परिचय प्राप्त किया। तदुपरान्त उनसे व्यक्तिगत परिचय हुआ। इस मुलाकात के दो-तीन वर्ष के अन्दर मैं प्रयाग से गोरखपुर चला गया जिससे हमारा मिलना कम ही होता था, परन्तु विज्ञान में उनके जन मानस के लिये सुलभ भाषा में लिखे लेखों को पढ़कर प्रसन्नता होती थी। एक मृदा वैज्ञानिक के नाते भारत के कृषि से जुड़े विशाल जन जीवन के लिये ये रोचक होने के साथ ही अत्यन्त उपयोगी हैं और रहेंगे।

इतना ही नहीं, शिवगोपाल जी की विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में पकड़ तथा नये आविष्कारों को सरल भाषा में सामान्य नागरिक तक पहुँचाने की अपूर्व क्षमता है। 'विज्ञान' के स्तर को ऊँचा उठाने और उसको नया रूप देने में उनका ही अनुपम और अनुकरणीय योग है।

विज्ञान भूषण प्रो० (डॉ०) शिवगोपाल मिश्र पारिवारिक जीवन में दैवी आपदाओं से जूझते हुये भी विज्ञान की हिन्दी के माध्यम से जो सेवा करते रहे हैं, वह सबके लिये अद्‌भुत उदाहरण है। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि वह उनको कल और आज की भाँति आने वाले कल (भविष्य) में विज्ञान और हिन्दी के हित में सुदीर्घ, स्वस्थ और सक्रिय जीवन प्रदान करें।

पूर्व कुलपति
गोरखपुर तथा इंदौर विश्वविद्यालय

तरुण सदृश ऊर्जा का रहस्य

प्रो0 विश्वम्भर दयाल गुप्त
तथा डॉ0 चन्द्रमोहन नौटियाल

कुछ व्यक्ति वैज्ञानिक होते हैं, कुछ साहित्यकार, कुछ प्रबन्धक परन्तु बिरले ही ये सब। प्रो० शिवगोपाल मिश्र ये सब हैं और सर्वोपरि हमारे सुहृद भी। इसमें आयु, स्थान या ऐसा कोई अन्तर बीच में नहीं आता। सम्भवतः इसीलिए जब हम दोनों को प्रो० शिवगोपाल मिश्र पर कुछ शब्द लिखने की संभावना दिखी तो हमने साथ-साथ ही अपने संस्मरणों को पिरोने का निर्णय किया। जिस सहजता से हम दोनों को अपने अनुभवों की समानता, उनके बारे में अपने पर्यवेक्षणों का सादृश्य तथा उनके स्वाभाविक स्नेहिल स्वरूप के समान अनुभवों की झलकियों का आभास होने लगा, हमें इस अनूठे व्यक्तित्व के स्नेह की अनन्त ऊष्मा का भी पता लगने लगा।

संयोगवश हम दोनों का मिश्र जी के साथ सम्पर्क भी किसी सीमा तक एक ही तरह की गतिविधियों में रहा। हम दोनों ही मूलतः भौतिकीविद् 'विज्ञान परिषद्' लखनऊ की व्यवस्था भी देखते रहे एवं विज्ञान लेखन तथा उसके प्रशिक्षण में सक्रिय रहे हैं। एक ही वर्ष (१९९९) में विज्ञान परिषद् से हमें क्रमशः 'विज्ञान भास्कर' तथा 'विज्ञान वाचस्पति; के सम्मान भी मिले। इसलिए उनके विषय में लिखते समय हमारी समस्या यह नहीं है कि किन अनुभवों को एक साथ कैसे लिखें अपितु यह है कि सदृश अनुभवों को दो व्यक्तियों के अनुभवों/संस्मरणों की तरह कैसे लिखें ?

च.मो.नौ- लखनऊ में हमने विज्ञान पत्रकारिता के पाठ्यक्रम निर्धारण पर एक कार्यशाला का आयोजन किया था। स्वाभाविक था कि प्रो० मिश्र भी सादर आमन्त्रित थे। उनके अनुभव तथा ज्ञान का लाभ उठाने से कैसे वंचित रहते। लेकिन कार्यक्रम से एक दिन पूर्व किसी ने बताया कि परिवार के किसी सदस्य के साथ हाल ही में दुर्घटना हो जाने के कारण संभवतः प्रो० मिश्र न आ पाएं। समाचार दुःखद तो था ही। उनकी अनुपस्थिति कार्यक्रम के लिए भी धक्का होती। मैंने तुरन्त प्रयाग फोन किया क्योंकि समाचार अभी अस्पष्ट था इसलिए केवल उनसे उनके आगमन का कार्यक्रम पूछा। उनका संयत, शान्त उत्तर था कि वे स्वयं सभास्थल पहुँच जाएंगे और वे आए।

इस घटना का उल्लेख करने का आशय केवल इस कवि हृदय, विज्ञान के व्यक्तित्व की दृढ़ता तथा दूसरों को असुविधा न हो इसके लिए बड़े से बड़े दुःख को सह जाने की विलक्षण क्षमता का आभास कराना है।

वि.द.गु.- मैं पूर्णतः सहमत हूँ। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अपने कुलपति के कार्यकाल में

मुझे विशेष रूप से प्रो० मिश्र तथा विज्ञान परिषद् के साथ अनेक कार्यक्रमों में सहभागिता का अवसर मिला। परिषद् के प्रति उनकी निष्टा, विज्ञान तथा इसके प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित रहने की उनकी भावना सचमुच श्लाघनीय है।

च.मो.नौ- परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' के कलेवर में हुआ परिवर्तन इन्हीं की लगन का परिणाम है। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, उ०प्र० विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् तथा राष्ट्रभाषा निधि के साथ सतत् प्रयास करके उन्होंने यह संभव कर दिखाया। परिषद् के प्रति उनकी निष्टा की बात से मुझे स्मरण हो आया कि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के लखनऊ में २ वर्ष आयोजित करने के उपरान्त हम इसे प्रयाग में आयोजित करना चाहते थे। विज्ञान तथा विज्ञान परिषद् से उपयुक्त स्थली क्या होती ! विज्ञान तथा बच्चों के लिए उनकी भावना थी कि वे सहर्ष तुरन्त तैयार हो गए तथा बाल विज्ञान कांग्रेस सुचारु रूप से सम्पन्न हुई।

वि.द.गु.- पर इसमें परिषद् के प्रति निष्ठा की बात कहाँ आई ?

च.मो.नौ- वह इस तरह से कि उन्होंने सभागार के शुल्क में कोई छूट नहीं दी। पर विनोद से हट कर देखें तो मैंने यह पाया कि विज्ञान सम्प्रेषण के किसी कार्यक्रम में उनका सहयोग मांगा हो और कभी न मिला हो, ऐसा नहीं हुआ।

वि.द.गु.- शीलाधर संस्थान में मुझे व्याख्यान के लिए आमंत्रित किया गया था। यह बात है वर्ष १९९७ की। उस समय मुझे प्रो० मिश्र की सांगठनिक क्षमता का आभास हुआ। इसके बाद भी मुझे विज्ञान परिषद् में व्याख्यान देने के लिए जाने का अवसर मिला। मुझे उनके मृदुल व्यवहार तथा अपने सहयोगियों के साथ व्यवहार ने सदा प्रभावित किया।

च.मो.नौ- मैं तो प्रो० मिश्र से काफ़ी कनिष्ठ हूँ, सभी दृष्टिकोणों से परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगा कि उनकी वरिष्टता विचारों के आदान-प्रदान में आड़े आई हो। उनके स्नेह की ऊष्मा तथा दिशा निर्देश के लिए तत्पर रहने की प्रवृत्ति मुझे ही नहीं मेरे साथ के सभी व्यक्तियों को प्रभावित करती रही हो। लखनऊ आएं और सम्पर्क न करें ऐसा शायद ही कभी हुआ हो। फतेहपुर, रायबरेली, बाराबंकी, लखनऊ, वाराणसी, उन्नाव तथा प्रयाग सभी स्थानों पर उनके साथ कार्यशालाओं में रहने का सौभाग्य मुझे मिला। कम लोगों में युवा व्यक्तियों के प्रति इतना सहयोगी दृष्टिकोण दिखने को मिलता है।

वि.द.गु.- संभवतः यही उनकी तरुण सदृश ऊर्जा का रहस्य है। आज भी वे 'विज्ञान' पत्रिका का स्वरूप सुधारने में तन्मय हैं। आज भी 'विज्ञान' के लिए लिखने का उनका आग्रह इतना ही बलपूर्वक होता है।

च.मो.नौ- इस बिन्दु पर तो मैं भी दोषी हूँ। परन्तु मैं उनके आदेश का कतिपय कारणों से

पालन नहीं कर पाया– लेकिन विवशता को समझ कर उन्होंने कभी इसका बुरा नहीं माना। मैंने एक बार उनको अपनी कविता दिखाई थी। उन्होंने मनोयोग से उसे पढ़ा। मुस्कुराए, फिर बोले– पहली रचना नहीं हो सकती। मैंने स्वीकार किया और धीरे-धीरे पुरानी रचनाएं भी दिखाईं। यह बात ६-७ वर्ष पुरानी है जब उन्होंने डॉ० दिनेश मणि के साथ 'विज्ञानान्जलि' सम्पादित की। आमुख में विज्ञान कवियों में मेरे नाम का भी उल्लेख किया। आजकल जब ऐसे उल्लेखों तथा सम्मानों के लिए लोग प्रयत्नपूर्वक संलग्न रहते हैं, यह देखना सुखद आश्चर्य तो था ही, उनकी उदारता, सरलता एवं न्यायप्रियता का प्रतीक भी। ऐसा ही मुझे तब लगा जब 'विज्ञान' पत्रिका में पढ़ कर मुझे 'विज्ञान वाचस्पति' के लिए अपने चयन का पता चला।

वि.द.गु.– यही बातें हैं जो व्यक्ति-व्यक्ति का भेद बताती हैं। मुझे लगता है कि कोई भी बड़ा तो अपेक्षाकृत सरलता से बन सकता है पर महान बनने के लिए उदार, महामना तथा न्यायप्रिय होना अनिवार्य है।

च.मो.नौ– ऐसे प्रकाण्ड विद्वान, विज्ञानधर्मी तथा विज्ञानकर्मी के जीवन के सात दशक पूर्ण करने पर उनके सभी इष्टमित्रों, साथियों के मन में आह्लाद स्वाभाविक है और उनकी सक्रिय जीवन के ऐसे ही क्रियाशील बने रहने की आकांक्षा का उदय होना भी।

वि.द.गु.– हमारा विश्वास है कि हम सबकी इन कामनाओं की पूर्ति होगी तथा आने वाले वर्षों में भी प्रो० शिवगोपाल मिश्र का वरद् हस्त हम पर रहेगा तथा वे इतने ही सक्रिय रहेंगे, और अधिक सम्मान अर्जित करेंगे।

वि.द.गु.- भूतपूर्व कुलपति गोरखपुर विश्वविद्यालय
तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय
एमेरिटस प्रोफेसर, सी.डी.आर.आई. लखनऊ

च. मो. नौ.- वैज्ञानिक
डॉ० बीरबल साहनी पुरावनस्पति
शोध संस्थान, लखनऊ

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

पं० सुधाकर पाण्डेय

प्रयाग आधुनिक हिन्दी के उन्नायकों की लीलाभूमि है। २०वीं सदी के आरंभ से ही वहां वर्तमान हिन्दी के उन्नयन की कहानी में प्रभावशाली योगदान का संकल्प मुखरित हुआ यद्यपि भारतेन्दु युग में ही बालकृष्ण भट्ट जैसा ओजस्वी विधायक हिन्दी को मिला। नागरी प्रचारिणी सभा हिन्दी की सबसे प्राचीन संस्था है। पं० मदन मोहन मालवीय ने उसे १६वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में नेतृत्व प्रदान किया। साथ ही न्यायालयों में देवनागरी लिपि की प्रवेश की सार्थक सिद्धि प्राप्त हुई। राष्ट्रभाषा के इतिहास में यह बहुत बड़ा प्रगतिशील चरण था। साथ ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने का संकल्प महर्षि बालगंगाधर तिलक ने सभा के प्रांगण में २८ दिसम्बर, १६०५ को खुद घोषित किया और उस आयोजन की अध्यक्षता की श्री रमेशचंद्र दत्त आई०सी०एस० ने जो कांग्रेस के अध्यक्ष थे और उसी घटनाक्रम में उस संकल्प की पूर्ति के लिये नागरी प्रचारिणी सभा के प्रांगण में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई और उसका द्वितीय अधिवेशन प्रयाग में हुआ। तबसे अंग्रेजी के इस गढ़ में हिन्दी की पताका लहराने लगी जो दिन प्रतिदिन ऊपर ही उठती रही।

उस समय के वरिष्ठ द्रष्टा लोगों ने यह सोच लिया था कि केवल साहित्य के बल पर कोई भाषा राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती जब तक कि आधुनिक वाङ्मय का उसमें सर्जन न हो। इस बात की सूचना इसके पूर्ववर्ती मनीषियों को थी, इसीलिये श्यामसुन्दर दास जी ने नागरी पत्रिका तथा सरस्वती के अपने सम्पादन काल में केतु तारा, सुहागा, फोटाग्राफी, रेल जैसे विषयों पर स्वयं लिखा और छपवाया। किंतु यह प्रयत्न बहुत ही सामान्य था या यह कहा जा सकता है कि जंगल में तुलसी के १० पौधों के समान था। विज्ञान से हिन्दी ने कभी मुख नहीं मोड़ा था। किंतु इस पथ पर चलने के लिये उसके पास पगडंडी भी नहीं थी। हां कभी कभी प्रतिभायें चमक उठती थीं जैसे सुधाकर द्विवेदी इत्यादि। नागरी प्रचारिणी सभा ने भी विज्ञान के ऊपर पुस्तकें लिखवानी आरंभ की। किन्तु वे बहुत कम थीं यद्यपि डॉ० सम्पूर्णानन्द जैसे लोगों ने इसमें योगदान दिया था। इस दिशा में प्रयाग का अवदान स्थाई महत्व का धीरे धीरे बनने लगा और इस महत्ता के सृजन का उत्स प्रयाग का विज्ञान परिषद् है। उक्त परिषद् के वर्तमान में सर्वाधिक समर्पित सेवक डॉ० शिवगोपाल मिश्र हैं यद्यपि यह संस्था अनेक महापुरुषों के तप बल से सम्पुष्ट है।

हिन्दी में विज्ञान लेखन की एक चेतना व्याप्त थी जिसे इस परिषद् ने विस्तार और प्रसार दिया। उस युग में समर्पण और सेवा के तपव्रती थे, अर्थ जिनका साध्य नहीं था। सेवा को ही वे अपना धर्म समझते थे। सेवाव्रत समाप्त होने के बाद आज के युग में जैसा अर्थव्रत शीर्ष पर है उसमें ढूंढने पर भी वे पुराने सेवाव्रती कहीं दिखाई नहीं पड़ेंगे जिनकी तपस्या का परिणाम हिन्दी में विज्ञान लेखन

है। विज्ञान नित्य नूतन होता जाता है और उसका प्राचीन इतिहास का विषय बन जाता है और जो नया आता है वह इतनी गति से आता है कि उसके समानान्तर चलना असाधारण बात होती है। इसलिये स्वतंत्र भारत में प्रायः सभी बड़े विश्वविद्यालयों में विज्ञान लेखन के कक्ष खोले गये हैं और अपार धनराशि उसमें व्यय की गई। उस समय की प्रकाशित पुस्तकें अब गोदाम का बोझ बन गई हैं।

ऐसी स्थिति में भी उस पुरानी सेवामयी परम्परा पर चलने की सफल साधना असाधारण बात है। यह विद्या का कोई प्रेमी ही कर सकता है और यह काम शिवगोपाल जी समर्पित भाव से कर रहे हैं। यद्यपि वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में विज्ञान में उच्चतम सम्मान के अधिकारी रहे हैं फिर भी अवकाश प्राप्ति के बाद भी इस अनुष्ठान में दत्तचित्त से लगे रहना समय को सार्थक बनाने की प्रक्रिया है और इसमें वे अपने जीवन की सार्थकता स्थापित कर रहे हैं।

आज संस्थाओं की जो स्थिति है उसे वे ही समझ सकते हैं जो उसमें कार्यरत हैं। इन संस्थाओं की सेवायें आजादी के बाद दिनोत्तर घटती जा रही हैं क्योंकि जिन लोगों के कारण विद्या के क्षेत्र में हिन्दी माध्यम नहीं हो पाई, वे सरकार पर अब भी सवार हैं। स्वार्थ का पाश सेवा के पैर में बेड़ी बन गया है। ऐसी स्थिति में जो भी संस्थायें अविरल चल रही हैं, उसके पीछे किसी पुरुष की साधना की सिद्धि है। शिवगोपाल जी ऐसे ही कर्मजयी, सेवाव्रती, विज्ञान के सेवक हैं।

वे विज्ञान के ही नहीं प्राचीन साहित्य के भी प्रेमी और उद्धारक हैं। मेरा उनका सम्बन्ध लगभग ५० वर्ष पुराना है। जब वे छात्र थे, तब से मैं उन्हें जानता हूं। वे और उनके अग्रज जयगोपाल जी ने मुझे हिन्दी साहित्य के अघोर महाकवि निराला जी के निकट लाने में उस समय सहायता पहुंचाई थी और मेरी पहली कृति पर निराला जी से शुभाशंसा भी भिजवाई थी। वे तभी से हिन्दी जगत में चर्चा के विषय बने रहे और उनका चतुर्दिक विरोध हो रहा था। फिर भी ये अपने पथ पर डटे रहे। इनके भीतर दृढ़ता थी। उनमें संकल्पशक्ति का उस समय भी मुझे दर्शन हुआ था। मैं इन्हें अपने अनुज की भांति मानता रहा हूं और मुझे विश्वास है कि वे निरंतर वाङ्मय और साहित्य की सेवा करते रहेंगे। सेवा ही शक्ति है और वह जीवन को अमृत प्रदान करती है। मेरा आशीर्वाद उन्हें है कि वे इस दिशा में प्रकाशस्तम्भ बने रहें।

प्रधानमंत्री
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

कुछ संस्मरण

प्रो0 चंद्रिका प्रसाद

प्रोफेसर शिवगोपाल मिश्र से मेरा प्रथम परिचय तब हुआ जब मेरे पूज्य पिता डाक्टर गोरख प्रसाद के देहावसान के बाद उनके सम्मान में वे विज्ञान का स्मृति अंक निकाल रहे थे।

मेरे पास जो बहुत सारे शोक संवाद आये थे, उन्होंने मुझसे लिये और उनको इस स्मृति अंक में बड़े सुचारु ढंग से छापा। उन्होंने कई व्यक्तियों से सम्पर्क करने में बड़ी मेहनत की और उनके संस्मरण इस अंक में दिये। यही नहीं, नमूने के तौर पर उन्होंने पिताजी के मेरे नाम कुछ पत्र और कुछ पत्र मेरे बच्चों के नाम भी मूल रूप में इस अंक में छापे। इन सब लेखों और पत्रों द्वारा मेरे पिताजी का व्यक्तित्व बिलकुल सामने आ जाता है। इस सब के लिये मैं मिश्र जी का आभारी हूं।

इसके बाद मैंने अधिकांश समय रुड़की विश्वविद्यालय में गणित के प्रोफेसर के पद पर बिताये और प्रोफेसर मिश्र से अधिक संपर्क न हो पाया। नवंबर १९८४ में रुड़की से अवकाश प्राप्त करने के बाद जब मैं इलाहाबाद वापस आया तक उनसे फिर मुलाकात होने लगी। वे अब भी 'विज्ञान' से उसी भांति जुड़े हुये थे। लेखन, संपादन, प्रबंधन से लेकर अनुसंधान पत्रिका के संचालन तक का कोई काम ऐसा नहीं था जिसमें उन्होंने हाथ न डाला हो। विज्ञान परिषद् के प्रति जैसी लगन मैंने अपने पिताजी में देखी थी, वैसी ही लगन मैं इनमें देखता हूं।

इस स्मारिका के अवसर पर मैं उनके स्वास्थ्य की कामना और दीर्घायु की मंगल कामना करता हूं और यह भी कामना करता हूं कि वे इस कार्य-परायणता से दूसरों को भी प्रेरणा देते रहें।

बेली एवेन्यू
इलाहाबाद-२

विज्ञान और साहित्य के संगम

डॉ० शकुन्तला सिरोठिया

मानव को श्रेष्ठता प्रदान करने में साहित्य और विज्ञान ने अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है। साहित्य मानव के मन में मधुर और कोमल भावों का प्रस्फुरण करता है, अन्तर के तनावों का निराकरण करता है तो विज्ञान उसमें शक्ति और साहस का संचार करता है। उसके विचारों को तार्किक बनाता है, उसे प्रखरता प्रदान करता है। विज्ञान मनुष्य के गतिशील जीवन को ठोस धरातल देता है, तो साहित्य उसके क्लान्त, शिथिल चरणों के हरी-हरी कोमल दूब का स्पर्श देकर उसे तनावमुक्त करता है।

साहित्य और विज्ञान मानव को पूर्णता प्रदान करने में एक दूसरे के पूरक हैं। डॉ० शिवगोपाल मिश्र में साहित्य और विज्ञान का संगम मिलता है। वे एक लब्धप्रतिष्ठ विज्ञानवेत्ता हैं। कृषि रसायन और मृदा विज्ञान की ज्योति को मिश्र जी ने अपने विचारों का स्नेह देकर उसे प्रखरतर किया है।

डॉ० मिश्र को जानने का संयोग और सौभाग्य मुझे १९५३ से प्राप्त है। उस समय के युवक शिवगोपाल आज अपने गौरवशाली जीवन के सात दशक को लांघ कर अगले दशक सोपान पर कदम रख रहे हैं जो उन्हें निश्चय ही सफल और अधिक कीर्तिमान बनायेगा। यह कामना और विश्वास मुझे असीम सुख-सन्तोष का आभास दे रहा है।

आज जहाँ उनके अगणित विद्यार्थी उनके निर्देशित मार्ग पर बढ़ते हुये उन्हें प्रणाम निवेदित करके गौरवान्वित हो रहे हैं वहीं मैं भी अग्रजा के रूप में उन्हें स्नेहाशीष प्रदान करके उल्लसित हूँ और प्रभु से उनके सुखद, स्वस्थ जीवन के साथ शतायु होने की कामना करती हूँ।

१०६, बाई का बाग
इलाहाबाद- २११ ००३

विज्ञान भूषण डॉ० शिवगोपाल मिश्र

कृष्णवल्लभ द्विवेदी

महोदय,

विज्ञान भूषण डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से परिचय विज्ञान पत्रिका के संदर्भ में हुआ। उस संदर्भ में वे कई बार पत्राचार में और मेरे निवास में भी पधारकर साक्षीकृत हुये जबकि उन्होंने मेरी हिन्दी की विज्ञानपक्षीय सेवा को चीन्हकर इस संबंध में विज्ञान पत्रिका का एक सम्मान अंक तक निकाला। इस नाते वह मेरे परम स्नेही मित्र बने और आज जबकि आप हिन्दी की विज्ञान विधा के उन्नायक बन्धुजन उनका अभिनन्दन ग्रन्थ नियोजित कर अपनी अगाध श्रद्धा मूर्तिमान करने जा रहे हैं तो मैं भी शत शत आपके साथ हूँ। मैं मिश्र जी को हिन्दी विज्ञान विधा के मूर्धन्य युगस्तम्भों में से एक अति कर्मयोगी शक्तिपुरुष मानता हूँ। उन्हें मेरा हार्दिक अभिनन्दन है।

परन्तु अपनी आयु (८० वर्ष) के बोझ के कारण उन पर दीर्घ लेख लिखने में असमर्थ हूँ अतः क्षमायाचना है।

प्रधान संपादक, हिन्दी विश्व भारती
मनु निकुंज, सी-४५/ए, लखनऊ-२०

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

प्रो0 आर.डी. शुक्ल

डॉ० शिवगोपाल मिश्र विज्ञान के क्षेत्र में एक अच्छे लेखक हैं। उन्होंने एन.सी.ई.आर.टी. के द्वारा चलाई जा रही 'पढ़ें और सीखें' योजना के अंतर्गत दो पुस्तकें लिखने का निमंत्रण स्वीकार किया तथा उन दो पुस्तकों को बड़े ही सुंदर ढंग से लिखा और समय पर पूरा किया। उनके द्वारा लिखी पुस्तकें 'मिट्टी का मोल' और 'जीवनोपयोगी सूक्ष्ममात्रिक तत्व' बहुत ही सरल एवं रोचक शैली में हैं। 'मिट्टी का मोल' में मिट्टी का स्वरूप, रंगरूप, रासायनिक संरचना, उसमें उपस्थित जीवाणुओं आदि का वर्णन है। 'जीवनोपयोगी सूक्ष्ममात्रिक तत्व' पुस्तक में यह बताया गया है कि तत्वों की अत्यल्प मात्रा भी कैसे जानवरों तथा पौधों के लिये इतनी प्रभावोत्पादक होती है। इन तत्वों में कौन सी समानता है ? और ऐसे तत्वों की कुल संख्या कितनी हो सकती है ? ऐसी ही जिज्ञासाओं की व्याख्या की गई है।

ये दोनों पुस्तकें बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुईं और आज तक इनकी १० हजार से ज्यादा प्रतियां बिक चुकी हैं। हम डॉ० मिश्र जी के बहुत आभारी हैं कि उन्होंने देश के बच्चों के लिये राष्ट्रीय स्तर पर ये दो पुस्तकें लिखीं।

विभागाध्यक्ष, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
नई दिल्ली- ११००१६

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

रत्नाकर पाण्डेय

विश्वास ही नहीं होता कि समय कितनी गति से आगे बढ़ रहा है। यह जानकर कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र ७० वर्ष के हो गए हैं और उनके शिष्य उनके कृतित्व से जनमानस को परिचित कराने के लिए अभिनन्दन ग्रन्थ छपवा रहे हैं, प्रसन्नता हुई।

निराला जी के साथ जय गोपाल, शिवगोपाल मिश्र जय-विजय, ऋद्धि-सिद्धि की तरह लगे थे। सेवाभावना से ओतप्रोत डॉ० शिवगोपाल मिश्र सेवाभावना से अभिप्रेरित होकर विज्ञान का अध्ययन करते हुए निरंतर वैज्ञानिक शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ते गए और शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित करते चले गए। कर्मठता, प्रतिभा और जिज्ञासा की त्रिवेणी उनके व्यक्तित्व की विशेषता है। निरंतर स्पष्टवादी नई ऊर्जा से नए से नए लक्ष्य तक पहुंचने के लिए वे जागरूक रहे। जो वैज्ञानिक केवल सत्य का साक्षात्कार करने में अपने आपको संवेदनारहित बना लेते हैं उनमें डॉ० शिवगोपाल मिश्र नहीं हैं। विज्ञान के साथ गहरी मानवीय संवेदना को जोड़कर ही उपलब्धियों की सार्थकता है। संपादक, लेखक, विज्ञान भूषण के रूप में साहित्यिक सौंदर्य बोध से जुड़े शिवगोपाल जी ने सत्यं शिवं सुन्दरम् की आराधना, साधना सृजन के जो अगणित प्रतिमान स्थापित किए हैं उनसे आने वाली पीढ़ियां निरन्तर अपना मार्गदर्शन और दिशा निर्देश प्राप्त करेंगी। आगे भी वे कर्मठ, सृजनशील और संवेदना की सार्वभौमिक शक्ति से संपन्न होकर राष्ट्र की ज्ञानवर्धक जिजीविषा को अपनी प्रतिभा से आलोकित करते हुए स्वस्थ और शतायु रहकर हमारे अग्रज के रूप में कर्मठ जीवन जिएं यही मानस कामना है। अभिनन्दन ग्रन्थ के सफल प्रकाशन की शुभकामना के साथ !

नागरी प्रचारिणी सभा
दिल्ली

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : एक बहुमुखी व्यक्तित्व

डॉ० एन. सुन्दरम

डॉ० शिवगोपाल मिश्र मूलतः विज्ञान से जुड़े हुये व्यक्ति हैं पर साहित्य उनका उतना ही प्रिय विषय है जितना कि विज्ञान। बहुत कम ही ऐसे बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति मिलते हैं जो साहित्य और विज्ञान की सेवा में ऐसा सामंजस्य करके चलें। इसका मूल कारण उनके परितः साहित्यिक परिवेश का होना है। विद्यार्थी जीवन से ही इनका सम्बन्ध हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से अटूट रहा। इनका सौभाग्य रहा कि ये दिग्गज विद्वानों- निराला जी, राहुल सांकृत्यायन, पं० कृष्णदत्त बाजपेयी, डॉ० उदय नारायण तिवारी आदि के सम्पर्क में रहे। सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा का सान्निध्य इन्हें विशेष रूप से प्राप्त हुआ, इस कारण महादेवी वर्मा से इनकी प्रायः भेंट हुआ करती थी। इससे इनकी साहित्यिक अभिरुचि को बल मिला।

मिश्र जी ने बड़ी लगन के साथ 'मृगावती' की एक हस्तलिपि की खोज की और बहुत परिश्रम से वैज्ञानिक ढंग से अन्य प्रतियों से पाठ भेद करके मूल पाण्डुलिपि तैयार की। पाठालोचन में क्या क्या कठिनाइयां होती हैं यह बात कोई भुक्तभोगी ही जान सकता है। ग्रामीण अवधी के जानकार होने के कारण मिश्र जी ने इस गुरुतर कार्य को बखूबी निभाया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ की विद्वानों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की।

मिश्र जी की उन्मुक्त ठहाकेदार हंसी सहज ही अपनी ओर लोगों को आकृष्ट कर लेती है। इन्होंने पारिवारिक, साहित्यिक, सामाजिक दायित्वों में बहुत ही सुन्दर सामंजस्य बनाये रखा है। मिश्र जी के साथ मेरा निकटतम सम्पर्क तब हुआ जब वे अपनी बेटी की चिकित्सा हेतु मद्रास आये। इस संकट की घड़ी में उनका धैर्य देखकर मैं विस्मित रह गया। पत्नी के विचलित होने पर उन्होंने बड़े धैर्य और सहृदयता के साथ पत्नी को ढाढस बंधाया।

मिश्र जी कठिन परिश्रमी और अध्यवसायी हैं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य करते हुये मिश्र जी सदैव मौलिक विज्ञान सम्बन्धी आलेख लिखा करते थे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के विद्वानों ने अमृत महोत्सव के अवसर पर उनसे अनुरोध किया कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक उत्सवों पर दिये गये विज्ञान विषयों से सम्बद्ध भाषणों का सम्पादन कर दें जिसे उन्होंने पूरा किया। मौलिक सृजन का कार्य अबाध गति से चल रहा है पर वैज्ञानिक साहित्य की कमी है। मिश्र जी ने इस चुनौती को सहर्ष स्वीकार कर लिया। उन्होंने हिन्दी में १६१५ से प्रकाशित होने वाली सैद्धान्तिक पत्रिका 'विज्ञान' का सम्पादन भार अपने ऊपर लिया। उन्होंने शोधार्थियों को मूलतः हिन्दी में वैज्ञानिक आलेखों को लिखने के लिये प्रेरित किया। वे अपने विद्यार्थियों से कहा करते थे कि यदि तुम मौलिक सृजन करना चाहते हो तो हिन्दी में ही चिन्तन करो। इन कार्यों के लिये आप 'विज्ञान भूषण' जैसी उपाधियों पुरस्कारों से विभूषित हुये।

हिन्दी साहित्यकारों में अधिकांशतः यह दोष पाया जाता है कि वे विषय को अनावश्यक विस्तार देकर पाठक को गुमराह कर देते हैं। पर डॉ० मिश्र जैसे वैज्ञानिक साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य जगत में प्रवेश करके निबन्ध शैली में आमूल परिवर्तन करने का स्तुत्य प्रयास किया है, साहित्य में वैज्ञानिक पहलुओं को स्पष्ट किया है। साहित्यिक परिवेश मिलने के कारण मिश्र जी साहित्य की सभी विधाओं से भली भांति परिचित हैं। भाषा विज्ञान, रीतिविज्ञान पर भी आपका कार्य सराहनीय है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि चाहे साहित्य का क्षेत्र हो या विज्ञान का- मिश्र जी की पहुँच सब कहीं है। मिश्र जी बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति हैं।

प्लाट नं० १०, बालाजी नगर
विरुगमबाक्कम, चेन्नई-६०००६२

मान्यवर डॉ० शिवगोपाल मिश्र

कृष्ण चन्द्र बेरी

डॉ० शिवगोपाल मिश्र हिन्दी साहित्य की उन विभूतियों में हैं जिनकी साहित्य और विज्ञान पर एक जैसी पकड़ है। मेरा उनका लगभग ५० वर्षों का परिचय है। उन्होंने कृषि विज्ञान पर पांच पुस्तकों का एक सेट हमारी संस्था से प्रकाशित करवाया है। इसका बड़ा स्वागत हुआ।

मंझनकृत 'मधुमालती' ने हिन्दी जगत में बड़ी प्रसिद्धि पाई। हिन्दी जगत को उन्होंने कुतुबनकृत 'मृगावती' भी खोज कर दिया।

निराला जी के निकट शिष्यों में भ्रातृद्वय सर्वश्री जयगोपाल मिश्र और डॉ० शिवगोपाल मिश्र अति प्रसिद्ध व्यक्तित्व हैं।

उनका अभिनंदन ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है, यह जानकर प्रसन्नता हुई। स्वास्थ्य अनुकूल न होने के कारण मैं उन पर एक लेख न लिख सका। मैं उनके दीर्घ जीवन की कामना करता हूँ। बाबा विश्वनाथ से प्रार्थना करता हूँ कि शतायु हों, वे विज्ञान और साहित्य जगत की सेवा करें।

सी २१/३०, पिशाचमोचन
वाराणसी

विज्ञान और साहित्य के सेतु डॉ शिवगोपाल मिश्र

श्याम सुन्दर

डॉ० शिवगोपाल मिश्र हिन्दी में विज्ञान और तकनीकी विषयों के लेखन के आधारस्तम्भ हैं। उन्होंने अनेक प्रतिभावान और ऊर्जावान वैज्ञानिकों को हिन्दी में वैज्ञानिक विषयों पर लिखने के लिये प्रेरित, प्रोत्साहित किया। वे शुरू से ही विज्ञान परिषद् से जुड़े रहे। विज्ञान और तकनीकी विषयों की पुस्तकों के द्वारा मां भारती का भंडार भरना ही उनके जीवन का उद्देश्य है। पहले हिन्दी को कथा कहानी की भाषा कहा जाता था, परंतु उनके द्वारा संचालित विज्ञान परिषद् के अथक प्रयासों से अब हिन्दी में विज्ञान और तकनीकी विषयों की पुस्तकें बड़ी संख्या में प्रकाशित हो रही हैं।

उनकी प्रतिबद्धता केवल वैज्ञानिक विषयों तक सीमित नहीं है अपितु हिन्दी साहित्य के अन्य क्षेत्रों में भी उनके प्रयास उल्लेखनीय हैं। महाकवि निराला के साथ वे लगभग बारह वर्षों रहे और उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रामाणिक ग्रन्थों की रचना की। लोग उन्हें विज्ञान और साहित्य का सेतु कहते हैं, यह अतिशयोक्ति नहीं है। सचमुच वे अपने आप में एक संस्था हैं और विज्ञान एवं साहित्य के क्षेत्र में प्रतिभावान लेखकों के लिये वे एक बड़े प्रेरणास्रोत हैं।

उनके तथा विज्ञान विषयक उनके ग्रंथों के उल्लेख के बिना हिन्दी में विज्ञान लेखन का इतिहास अधूरा है।

प्रभात प्रकाशन
४/१६, आसफ अली रोड
दिल्ली-२

कई ज्ञानधाराओं के कुशल तैराक

नारायण दत्त

हमें उन मित्रों का दोहरा उपकार मानना चाहिये जो अपने मित्रों को हमारा मित्र बनाकर हमारी स्नेह-संपदा को बढ़ाते हैं। डॉ० शिवगोपाल मिश्र से मेरा मैत्री सूत्र विज्ञान लेखक डॉ० रमेश दत्त शर्मा की कृपा से जुड़ा। यह बात अलग है कि रमेश जी मेरे मित्रों में शुमार किया जाना पसंद नहीं करते। वे मेरे छोटे भाइयों की संगत में आ बैठे हैं।

यों मिश्र जी के नाम और काम से मैं बहुत पहले से ही परिचित था। विविध क्षेत्रों की छोटी बड़ी हस्तियों और उनके क्रियाकलापों की खबर पत्रकार की पेशेवराना जिम्मेदारी में शामिल है और मिश्र जी विज्ञान लेखक, हिन्दी विज्ञान परिषद् प्रयाग के सुदृढ़ स्तंभ के रूप में हिन्दी जगत में अपना स्थान बना चुके हैं। किंतु मुझे इस बात का पता नहीं था कि मिश्र जी मेरी संपादकीय गतिविधियों पर नजर रखे हुये हैं। वे हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन की पूरी खोज खबर-रखते थे और उन्होंने इस बात को नोट किया था कि 'नवनीत' हिंदी डाइजेस्ट (जिसका कि मैं उन दिनों सम्पादक था) अन्य लोकप्रिय हिन्दी पत्रिकाओं की तुलना में कुछ ज्यादा मात्रा में विज्ञान विषयक सामग्री छापता है। शायद इस चीज ने मिश्र जी के मन में मेरे पक्ष में कुछ पूर्वग्रह पैदा किया, जिसके अनेक लाभ मुझे आगे चलकर मिले।

यहां पर एक बात कहना शायद अप्रासंगिक न होगा। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' को ज्ञान की पत्रिका बनाकर हिन्दी पाठकों के बौद्धिक क्षितिज को फैलाव देने का काम बीसवीं सदी के पहले दशक में ही गंभीरता से आरंभ कर दिया था। फिर १९१५ में हिन्दी विज्ञान परिषद् प्रयाग की स्थापना हुई, जिसका उद्देश्य हिन्दी के माध्यम से विज्ञान को जनता तक पहुंचाना था। किंतु आज भी सच्चाई यह है कि औसत हिन्दी पाठक पत्र पत्रिकाओं में कुल मिलाकर कविता-कहानी, सतही धार्मिक व राजनीतिक चर्चा और मनोरंजन ही तलाशता है।

मेरा यह प्रयत्न रहता था कि 'नवनीत' के प्रत्येक अंक में १०-१२ प्रतिशत पाठ्य सामग्री विज्ञान से संबंधित हो और इसका काफी विरोध मुझे सहना पड़ता था। हर महीने इस प्रकार के पत्र पाठकों की ओर से आते थे कि मैं इतने सारे पन्ने विज्ञान पर बरबाद करके पत्रिका को उबाऊ और अरोचक बनाये दे रहा हूं। यह मेरा सौभाग्य था कि 'नवनीत' के संपादक (स्व०) श्रीगोपाल नेवटिया पत्रिका संचालन को केवल उत्पादन और बिक्री का मामला नहीं समझते थे और विज्ञान जगत में उनकी रुचि थी। उन्होंने मुझे यह अभयदान दे रखा था कि इस प्रकार के पत्रों से विचलित होने की जरूरत नहीं।

विज्ञान परिषद् के कर्मठ कार्यकर्ता और विज्ञान के सम्पादक के नाते मिश्र जी वैज्ञानिक विषयों पर सुबोध, सरस और साथ ही प्रामाणिक लेख लिखवाने और हिन्दी पाठकों को विज्ञान की ओर आकृष्ट करने की समस्या से स्वयं भी जूझ रहे थे। इसलिये मेरे जैसे सम्पादकों के साथ उनकी सहानुभूति थी। शायद यही कारण था कि जब देश की प्रमुख समाचार समिति प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया ने हिन्दी में फीचर सेवा आरंभ की और मुझे उसका संपादन भार सौंपा तब मिश्र जी ने मुझे खुले दिल से सहयोग दिया और अपने मित्रों से भी दिलवाया। इससे मेरा काम काफी आसान हो गया।

इसी सिलसिले में मुझे मिश्र जी की व्यापक बौद्धिक रुचियों और उनकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय मिला। मिश्र जी जाने माने रसायनशास्त्री और मृदा विज्ञानी हैं। किंतु साथ ही वे भारतीय इतिहास के गंभीर अध्येता और हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ हैं। एक बार मुझे पंचाल जनपद के इतिहास से जुड़ी एक पुस्तक की

समालोचना करानी थी। मैं योग्य समीक्षक की खोज में था। रमेश दत्त जी ने मिश्र जी का नाम सुझाया। मैंने कुछ आशंका के साथ पुस्तक उनके पास भेजी। जल्दी ही समीक्षा आ गयी। किसी पेशेवर इतिहासकार की लिखी समीक्षा से भिन्न नहीं था उसका स्तर। तभी मुझे यह भी पता चला कि पंचाल इतिहास शोध संस्थान से उनका घनिष्ठ संबंध है।

जे०बी०एस० हाल्डेन को यह शिकायत थी कि भारत का बौद्धिक समाज और विशेषतः वैज्ञानिक समाज चातुर्वर्ण्य की मानसिकता से ग्रस्त है। यहां यह धारणा है कि जिसने ज्ञान की जिस शाखा में शिक्षा-दीक्षा पायी है वह जीवन भर अपने कार्यकलाप और जिज्ञासा को उसी शाखा तक सीमित रखे, यदि किसी ने किसी दूसरी ज्ञान शाखा में चंचुपात किया या ताकझांक की तो वह व्रात्य है या कम से कम पथभ्रष्ट तो है ही। हाल्डेन मूलतः ग्रीक साहित्य और सांख्यिकी के छात्र थे जो आगे चलकर आनुवांशिकी और जैवसांख्यिकी के प्राध्यापक बने। जीवन के अंतिम वर्षों में भारत के नागरिक थे इसीलिये भारत की इस बौद्धिक बीमारी को ठीक पहचान सके।

मैं नहीं जानता कि मिश्र जी कभी हाल्डेन से मिले थे कि नहीं। मिले होते तो यह जानकर हाल्डेन को खुशी हुई होती कि ब्राह्मणत्व की घोषणा करने वाले अपने अल्ल के बावजूद मिश्र जी ऊपर चर्चित बौद्धिक चातुर्वर्ण्य की जकड़न से मुक्त हैं और पेशे से वैज्ञानिक होते हुये भी उन्होंने भीमकवि की डंगवै कथा और चक्रव्यूह कथा का संपादन किया है और उनका वह काम पाठ संपादक की शास्त्रीय कसौटी पर खरा उतरा है।

मेरे दिवंगत मित्र कानपुर के साहित्यकार और सांसद श्री नरेश चंद्र चतुर्वेदी ने किसी प्रसंग में बताया था कि मिश्र जी और उनके भाई ने निराला जी के जीवन के अंतिम वर्षों में उनकी वड़ी सेवा और परिचर्या की थी। यह चीज मेरे मन में दर्ज थी और मिश्र जी से सीधा संपर्क होते ही मैंने उनसे आग्रह करना शुरू कर दिया कि वे निराला जी के विषय में अपने संस्मरण एक लेखमाला के रूप में लिख डालें। कई तकाजों के बाद उन्होंने वह लेखमाला लिखनी शुरू की और उसकी पांच या छह किस्तें मेरे समय प्रेस ट्रस्ट फीचर से जारी हुईं। बाद में जब ये संस्मरण पुस्तक के रूप में छपे, मिश्र जी ने स्नेहपूर्वक उसका समर्पण मुझे किया। यह मेरा बहुत बड़ा सम्मान था। कहां सहस्र सूर्यों की दीप्ति वाले निराला और कहां मैं !

मिश्र जी के मुझ पर अनेक उपकार हैं। उनमें से एक का जिक्र यहां किये बिना मेरा मन नहीं मानेगा। पिछले कुछ वर्षों से मैं स्व० बनारसीदास जी चतुर्वेदी के पत्रों का एक संकलन तैयार कर रहा हूं। उसके सिलसिले में जब भी मैंने मिश्र जी से किसी जानकारी के लिये प्रार्थना की है उन्होंने बड़ी तत्परता से वह जानकारी जुटाकर दी है। यही नहीं, अपने श्वसुर एवं विख्यात भाषाशास्त्री डॉ० उदयनारायण तिवारी के निजी कागजात में से उन्होंने राहुल जी, माखन लाल जी आदि हिन्दी दिग्गजों के नाम श्री चतुर्वेदी के पत्रों की प्रतिलिपियां खोजकर मुझे दी हैं। यह अमूल्य सामग्री मुझे किसी अन्य स्रोत से मिल ही न पाती।

यह मेरे लिये बहुत सुखद अनुभव था कि हिन्दी के माध्यम से विज्ञान सेवा के लिये मिश्र जी को डॉ० आत्माराम पुरस्कार और हिन्दी पत्रकारिता की सेवा के मिले मुझे गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार राष्ट्रपति से एकसाथ प्राप्त हुआ।

जैसा कि सब जानते हैं, स्वामी सत्यप्रकाश जी का मिश्र जी पर विशेष स्नेहाभाव था। यदि वे जीवित होते तो मिश्र जी को अथर्ववेद के जिस मंत्र से असीसते, उसकी पहली पंक्ति यहां दुहराना चाहता हूं। (मैं समझता हूं कि ऐसा करने का कुछ अधिकार मुझे है, क्योंकि उम्र में मैं मिश्र जी से तीन साल बड़ा हूं)।

शतं जीवे शरदो वर्धमानः शतं हेमन्तान् शतमु वसन्तान्।

-वृद्धिशील रहते हुये सौ शरद जियो, सौ हेमंत और सौ बसंत देखो। अथर्व ३.११.४

२३६ छठवां मेन, चौथा ब्लाक
जयानगर, बंगलौर-११

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : हिन्दी में विज्ञान को समर्पित व्यक्तित्व

डॉ0 महाराज नारायण मेहरोत्रा

डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी एक ख्यातिप्राप्त कृषि रसायनज्ञ व मृदा विज्ञानी होने के साथ-साथ राष्ट्रभाषा के महान सेवी हैं। विज्ञान विषयों पर हिन्दी में लिखने वाले विद्वानों की प्रथम पंक्ति के वैज्ञानिक हैं। अपनी विद्वता से आपने जटिल एवं सूखे विषयों को सरल एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत कर हिन्दी साहित्य के कोष में जो योगदान किया वह प्रशंसनीय है।

डॉ० मिश्र 'विज्ञान' एवं 'विज्ञान अनुसंधान पत्रिका' से दशकों से जुड़े हैं। 'विज्ञान' का प्रकाशन पिछले ८५ वर्षों से निर्बाध रूप से हो रहा है। यह कोई साधारण बात नहीं है। प्रारम्भ में सरकारी असहयोग, आर्थिक तंगी, लेखों व लेखकों का अभाव आदि विभिन्न विपरीत परिस्थितियों में 'विज्ञान' का निरन्तर प्रकाशन प्रकाशन जगत में एक अनूठी मिसाल है। यह हिन्दीप्रेमियों, हिन्दीसेवियों की त्याग तपस्या के बलबूते पर ही सम्भव हुआ है। इन सभी वयोवृद्ध हिन्दी सेनानियों के प्रति हम नमन करते हैं। पिछले कुछ दशकों से 'विज्ञान' की प्रगति में डॉ० शिवगोपाल मिश्र का योगदान अत्यन्त सराहनीय रहा है। आप 'विज्ञान' के सम्पादक व सम्प्रति (१६६६ से) प्रधानमंत्री भी हैं। आपने बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं तथा 'विज्ञान' में निरन्तर आपके सामयिक लेख प्रकाशित होते रहते हैं तथा नयी प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा भी। मैं विशेष रूप से उल्लेख करना चाहूंगा, विज्ञान में प्रकाशित आपके खोजपरक लेखों का, जो पाठकों को बहुत अर्थपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराते हैं, जैसे- पाण्डुलिपियों में विज्ञान (नवम्बर २०००) जिसमें १६३६-१६०० के बीच प्रकाशित ३०० विज्ञान विषयक हस्तलिपियों के बारे में बताया गया है। सुधी पाठकों की सुविधा हेतु विज्ञान परिषद् उन हस्तलिपियों के संरक्षण और पुनर्मुद्रण को प्रस्तुत है। इसी प्रकार के अन्य लेख हैं- हिन्दी की प्राचीन विज्ञान विषयक पुस्तकें (नवम्बर १६८८), हिन्दी की विज्ञान पत्रिकायें (जनवरी १६६६), महान वैज्ञानिकों की हिन्दी कृतियों के अनुवाद (अप्रैल १६६६), विश्वकोष सम्बंधी जानकारी (फरवरी १६६६) आदि। आप 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' के प्रारम्भ (१६५८) से ही प्रबन्ध सम्पादक रहे हैं। वैज्ञानिक शोध पत्रों को हिन्दी में प्रस्तुत करना एक दुरूह कार्य रहा है। वर्तमान में तकनीकी शब्दावली का अभाव तो बहुत कुछ दूर हो गया है, तथा तकनीकी वाक्य प्रयोग भी धीरे-धीरे स्थापित हो रहे हैं। पर ठीक ही कहा गया है कि भाषा चाहे साहित्यिक अभिव्यक्ति के लिये हो या वैज्ञानिक कार्यकलापों को लिपिबद्ध करने के लिये, प्रयोग से ही मँजती है। उपरोक्त से स्पष्ट है कि डॉ० मिश्र को प्रबन्ध सम्पादक के रूप में अनुसंधान पत्रिका के प्रकाशन हेतु कितना परिश्रम करना पड़ता है।

हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह दीर्घजीवी हों और अपनी लेखनी से साहित्य भंडार भरते रहें।

अवकाश प्राप्त प्रोफेसर,
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय,
१२, उपेन्द्र नगर (दुर्गाकुण्ड) वाराणसी- २२१ ००५

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी डॉ० मिश्र

डॉ0 कैलाश चन्द्र भाटिया

बहुत कम ऐसे व्यक्ति होते हैं जो निरंतर विविध क्षेत्रों में एकसाथ कार्यरत रहते हैं। काफी समय पूर्व इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने के बाद भी उन्होंने विज्ञान जगत से अवकाश नहीं लिया क्योंकि विज्ञान परिषद् इलाहाबाद की सक्रिय सेवाओं में कोई कमी नहीं आई। इसी प्रकार साहित्य जगत में भी सक्रिय रहे, कुछ वर्ष पूर्व ही निराला पर उनका ग्रंथ आया। 'प्रदूषण' के विविध रूपों/पक्षों पर तो उनकी अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं। पर्यावरण की अनेक दिशाओं में पर्याप्त चिंतन किया है। सार्वजनिक जीवन में निरंतर सक्रिय रहने वाले डॉ० शिवगोपाल मिश्र का ऐसा ही बहुआयामी व्यक्तित्व है।

विज्ञान के शिक्षक के रूप में, साहित्य के अध्येता के रूप में इलाहाबाद से बाहर वाले उनसे सुपरिचित हैं पर सार्वजनिक जीवन में नागरिक के रूप में मानवीय मूल्यों पर अड़ने वाले व्यक्तित्व से कम लोग ही परिचित हैं। डॉ० मिश्र उस वर्ग के बुद्धिजीवी हैं जो परिवेश से संयुक्त रहने के कारण इसमें निरंतर सुधार की चेष्टा करते हैं। निरंतर सक्रियता ही उनकी जीवंतता है। वे समाज में रहते हुये प्रत्येक व्यक्ति की क्षमताओं का समुचित आकलन करते हुये उसका भरपूर उपयोग करते हैं।

डॉ० मिश्र की सहधर्मिणी तो मेरे साथ दकन कालेज, पुणे में लगभग अर्धशताब्दी पूर्व अध्ययन करती थीं, पर डॉ० शिवगोपाल जी से पहली भेंट कब हुई, यह तो स्मरण ही नहीं आ रहा है। बस इतना स्मरण है कि कई दशक पूर्व जब उनसे अशोक नगर स्थित आवास पर भेंट हुई तो उनकी वाणी, विचार विशेषतः मुखाकृति से मेरे मन पर विशेष प्रभाव पड़ा। संयोग से मेरे साथ मेरी पत्नी (डॉ० श्रीमती नंदिनी भाटिया) भी थीं। उनके मोहक तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व से हम दोनों प्रभावित हुये।

विज्ञान से संबद्ध होते हुये भी साहित्य में उनकी अभिरुचि देखकर हम दोनों चकित रह गये। विज्ञान परिषद् प्रयाग में वह युगों से सक्रिय सदस्य रहे हैं जिसकी सेवा अनेक रूपों में की है। अपनी लगन और तपस्या से उन्होंने जो मानदंड स्थापित किये हैं उनकी प्रशंसा सर्वत्र होती है। इस संस्था के प्रति उनकी कार्यनिष्ठा श्लाघनीय है। विचारों का प्रभाव व्यक्तित्व में झलकता है। इसके वह प्रत्यक्ष जीते जागते उदाहरण हैं।

जीवन गति को नियंत्रित करने वाला परिवेश, परंपरा से प्राप्त संस्कार और मन का शरीर की क्रियाओं को संतुलित करने वाले अवयव विचारों और व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। डॉ० मिश्र के जीवन और व्यक्तित्व से यह प्रमाणित होता है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य और उपकरण विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिये भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा द्वारा 'आत्माराम पुरस्कार' से अनेक वर्ष पूर्व ही डॉ० मिश्र जी को सम्मानित किया जा चुका है।

शतायु हों, इस कामना के साथ।

नंदन, भारती नगर
मैरिस रोड, अलीगढ़-२०२००१

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : समर्पित व्यक्तित्व के धनी

डॉ० हीरालाल निगम

सन् १९५० के दशक में शिवगोपाल जी एक मेधावी छात्र के रूप में मेरी कृषि रसायन स्नातकोत्तर कक्षाओं में आये। कृषि रसायन उन दिनों भी रसायन विभाग में ही था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने कृषि रसायन का विषय एक विशेषता के रूप में आरम्भ किया था जिसमें विज्ञान की स्नातक उपाधि धारण करने वाला कोई भी अच्छा विद्यार्थी प्रवेश ले सकता था। मिश्र जी ऐसे उदीयमान विद्यार्थियों में से एक थे। कालान्तर में कृषि रसायन में स्नातकोत्तर कक्षा में प्रवेश पाने के लिये कृषि स्नातक होना आवश्यक कर दिया गया था। आचार्य नीलरत्न धर के प्रयास से रसायन विभाग में कृषि रसायन प्रखण्ड की स्थापना हुई। उन दिनों आचार्य धर ही रसायन विभाग के अध्यक्ष थे। उनकी विज्ञान में असीम रुचि थी और उनके वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रशंसा समस्त विश्व में फैली थी। वैज्ञानिक धर को यह आभास था कि विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या को भूखग्रस्त होने से बचाने के लिये अन्न-उत्पादन में वृद्धि करने के उपायों पर अनुसंधान रसायनज्ञों का परम कर्तव्य है। मृदा विज्ञान, मृदा के सूक्ष्मजीवों का विज्ञान और विशेष रूप से मृदा के उर्वरत्व के उपायों की ओर उनका ध्यान आकर्षित हुआ। नाइट्रोजन निग्रहण पर उन्होंने अनेकानेक अनुसंधान किये, १५० से ऊपर विद्यार्थियों को दीक्षित किया और अपनी गाढ़ी कमाई से एक मृदा विज्ञान की रसायनशाला बनाकर विश्वविद्यालय को भेंट किया। इस प्रयोगशाला का नाम आचार्य धर की स्वर्गीय पत्नी श्रीमती शीला धर के नाम पर 'शीला धर मृदा विज्ञान संस्थान' रखा गया जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग का ही एक अंग के रूप में विश्वविद्यालय ने भेंट के रूप में स्वीकार किया और आज भी उसमें इसी दिशा में अनुसंधान कार्य हो रहा है।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र का वैज्ञानिक कार्यकलाप समझने के लिये इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग के कृषि रसायन प्रखण्ड और मृदा विज्ञान शीलाधर संस्थान की भूमिका अत्यन्तावश्यक है।

डॉ० मिश्र कृषि रसायन के स्नातकोत्तर कक्षाओं में आने वाले छात्रों में लगभग प्रारम्भ के छात्रों में रहे। कृषि रसायन का मैं एकमात्र अध्यापक था किन्तु विभाग के अन्य अध्यापकों से समुचित सहायता मिलती रही और कार्य आगे बढ़ता गया। सन् १९५५-५६ के सत्र के बाद मैं अनुसंधान के लिये राल्फ फास्टर तथा सर विलियम रैमसे रसायनशाला, लन्दन विश्वविद्यालय प्रवास कर गया और मेरे स्थान पर प्रवक्ता के पद पर डॉ० शिवगोपाल मिश्र की नियुक्ति हुई, मेरे लिये इससे अधिक सुखकर और शुभ समाचार क्या हो सकता था ? मैं पूर्णरूपेण आश्वस्त हो गया कि युवक मिश्र की वैज्ञानिक उपलब्धियों, उनकी शैक्षिक योग्यता और मानवीय संबोध की कर्मठता पर कृषि रसायन प्रखण्ड का कार्य न केवल सुचारु रूप से अग्रसारित होता रहेगा, वरन् नई ऊंचाइयों को छुयेगा।

शिवगोपाल जी से मेरे दो रिश्ते बने, एक तो गुरु शिष्य का और दूसरा गुरु-भाई का क्योंकि हम दोनों ने अपने अपने समय में महान वैज्ञानिक आचार्य धर से अपनी शोध उपाधि की दीक्षा पाई थी। दोनों रिश्तों को मिलाकर हमने परख कर मधुर रिश्ता स्थापित किया, जिसकी संज्ञा बनी, बड़े छोटे भाई की। यह मधुर रिश्ता आज भी कायम है और जीवनपर्यन्त रहेगा।

डॉ० मिश्र एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक तथा अपने विशेष क्षेत्र में प्रकाण्ड विशेषज्ञ के रूप में जाने जाते हैं पर उनके व्यक्तित्व का एक नया पहलू उभर कर आया है, वह है विज्ञान लेखन। विज्ञान परिषद् देश की पहली संस्था है जिसने राष्ट्रभाषा में विज्ञान के प्रचार व प्रसार का प्रयास आरम्भ किया, २०वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मासिक पत्रिका 'विज्ञान' तथा 'विज्ञान अनुसंधान पत्रिका' रूपी प्रसून इस परिषद् ने देश को भेंट किया है जिसकी सौरभ से राष्ट्रभाषा उद्यान का विज्ञान क्षेत्र सुगन्धित है और सुशोभित है। स्वर्गीय डॉ० गोरख प्रसाद तथा स्वामी डॉ० सत्यप्रकाश की सूझबूझ, उनके अथक परिश्रम, उनके त्याग और उनकी कर्मठता से सशक्त यह परिषद् अपने संकल्प में सुदृढ़ रूप से अपने लक्ष्य की प्राप्ति में कार्यरत है। मैंने विज्ञान की विनम्र सेवा 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक के रूप में और फिर विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री के रूप में सन् १६५० के दशक में किया, डॉ० मिश्र ने मेरा वह कार्य भी बहुत तेजी से और कहीं अधिक सम्पन्नता से बढ़ाया। मैं यह तो नहीं जानता कि उन्होंने प्रेरणा किससे ली, किन्तु मैं यह जानता हूं कि विज्ञान लेखन में आज जो महारत उन्हें प्राप्त है, वह बहुत ही विरले लोगों को प्राप्त होती है। विज्ञान लेखन के लिये ही उनका समर्पित व्यक्तित्व आज उनकी पहचान बन गया है। विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण करने के बाद उनका सारा समय, सारी शक्ति विज्ञान परिषद् के कार्य में, विज्ञान लेखन में लगी है। वास्तव में अब विज्ञान लेखन उनका व्यसन हो गया है। हर्ष का विषय है कि उनकी अनेक कृतियों पर पुरस्कारों की वर्षा हुई है और उन्हें सार्वजनिक व सरकारी मान्यता भी प्राप्त हुई है।

मेरा विश्वास है कि वे अपने संकल्प में, समर्पण में, सफल होंगे। मेरी कामना है वे चिरायु हों और उन्हें उन्नति के पथ पर अग्रसर होते देखकर मुझे सुख अनुभव करने के अवसर मिलते रहेंगे।

बी-३३२, सेक्टर-ए
सीतापुर रोड स्कीम
लखनऊ-२०

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : वैज्ञानिक तथा तकनीकी हिन्दी के यशस्वी पुरोधा

डॉ0 राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव

स्वतंत्र भारत ने हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया तथा भारत के संविधान ने इसकी स्वीकृति भी दी। हिन्दी के लिये उसी समय से राजनैतिक खेल भी शुरू हो गया। सही परिप्रेक्ष्य में यदि देखा जाये तो हिन्दी हमेशा से ही राजपाट करने वाले लोगों की उपेक्षा का भाव सहती रही। इसी कारण आज हिन्दी विडम्बनाओं के बीच जूझ रही है। अब तो स्थिति यहां तक आ पहुंची है कि हिन्दी निरवधि के लिये निर्वासित है। मतलब, जब तक कोई भी राज्य चाहे यह मांग कर सकता है कि अंग्रेजी बनी रहे। क्या इस परिदृश्य में बदलाव ले आने की उम्मीद की जा सकती है ? आज की स्थिति तो और भी विचित्र है। सूचना प्रौद्योगिकी का एक क्रांतिकारी युग हमारे सामने है और ऐसे समय में हिन्दी तथा भारत की अन्य आधुनिक भाषाओं के सामने कई नई चुनौतियां उपस्थित हो गई हैं। आज भारत के भाषा का प्रश्न मात्र एक सवैधानिक प्रश्न नहीं रह गया है और न ही एक सांस्कृतिक सवाल। आज भाषा का प्रश्न सीधे सीधे तकनीकी, व्यापार तथा विकास का एक प्रश्न बन गया है। आज भाषा की गरिमा तथा स्थान बहुत कुछ इस तथ्य पर निर्भर कर रहा है कि वह सूचनाओं को कितना अधिक से अधिक संप्रेषित करने में समृद्ध है, वह कितनी विस्तृत है, उसमें कितनी विविधता है, वह बाजार में कितनी तथा किस रूप में स्वीकृत है तथा शिक्षा एवं सामाजिक विकास में कितनी कारगर है। आज केवल भावनात्मक लगाव, संस्कृति तथा सांस्कृतिक आत्मपहचान की दुहाई देकर हम हिन्दी तथा अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं को जीवित नहीं रख सकेंगे।

सूचना प्रौद्योगिकी के इस विश्वव्यापी उभार के युग में हिन्दी नये दर्शन, कठिन परिश्रम, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और जोखिम उठाने की मांग कर रही है। इस ऐतिहासिक युग में महज परम्परा तथा काव्यात्मक रूप से चिपके रहने से काम नहीं चलने वाला है। हिन्दी को महज साहित्य की भाषा ही नहीं, वरन् रोजगार की भाषा, आत्मचिंतन की भाषा, सूचना क्रांति की भाषा तथा सत्ता शक्ति की भाषा बनाना ही होगा।

इस कार्य के लिये आज की पीढ़ी को बार बार सोचना होगा और उसी प्रकार के उद्यम करने होंगे, जोखिम उठाने होंगे तथा एक ऐसी राष्ट्रीय चेतना विकसित करनी होगी जहां अपनी भाषा के प्रति लोग गौरव का अनुभव करें। आर्थिक उदारीकरण के इस दौर में राजनैतिक विडम्बनाओं तथा आधारभूत ढांचे की कमी के बावजूद भी हमें अपने सवैधानिक अधिकारों के प्रति सचेत रहते हुये हिन्दी को मौलिक ज्ञान का द्योतक बनाना है। इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषायें उच्च शिक्षा तथा शोध का माध्यम बनें, हिन्दी रोजगार से जुड़े तथा सौंदर्यानुभव एवं

मूल्य प्रेरणा के साथ-साथ ज्ञान क्षमता तथा सूचना क्षमता की भी शक्ति का स्रोत बने।

हिन्दी को इस नये युग की अपेक्षाओं के अनुसार ढालना होगा। हिन्दी को ज्ञान, सूचना प्रवाह तथा तकनीकी विकास की नई धुरी बनाना होगा। इसे २१वीं सदी की गति देनी होगी। भाषा के नाम पर हमें अपनी दीन-हीन, निराशा, पिछड़ेपन जैसी मानसिकता से ऊपर उठना होगा तथा यह निर्णय लेना होगा कि हमारी प्रज्ञा की मौलिकता, हमारी भाषा की मौलिकता तथा हमारे ज्ञान की मौलिकता सुरक्षित रहे, वह कहीं अंधेरे में खो न जाये। आज का परिदृश्य हमें उत्साहित भी कर रहा है तो दूसरी ओर सचेत भी कर रहा है। हिन्दी को उच्च्य तकनीकी शिक्षा तथा शोध का माध्यम बनाने से न केवल व्यापारिक तथा प्रशासनिक काम-काज की क्षमता बढ़ेगी बल्कि इसमें नये आकर्षण भी पैदा होंगे।

हिन्दी के साथ जुड़ी इन तमाम विडम्बनाओं, आकांक्षाओं तथा आधुनिक आवश्यकताओं पर जब हम विचार करने चलते हैं तो हमें कुछ ऐसे पुरोधाओं, कुछ ऐसी परम्पराओं तथा कुछ ऐसे व्यक्तित्व तथा हस्ताक्षर बरबस याद आते हैं जिन्होंने हिन्दी को सृजनात्मक राह पर लाने के लिये विशेष योगदान दिया है और अपनी इच्छाशक्ति से तमाम बाधाओं को दूर करते हुये कुछ ऐसे मानदंड स्थापित किये हैं जिनके आधार पर आज हिन्दी वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्र में एक सशक्त भाषा के रूप में उभर कर सारे विश्व में सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाने वाली तीसरी भाषा बन गई है।

ऐसे पुरोधाओं में एक ऐसा यशस्वी व्यक्तित्व भी उभर कर आता है जिसने अपना सारा जीवन हिन्दी को विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सशक्त बनाने के लिये उसका विस्तार तथा विकास करने के लिये, उसका प्रचार-प्रसार करने तथा लोकप्रिय करने के लिये लगाया है। जिनकी मैं बात कर रहा हूं वे कोई और नहीं बल्कि हम सब के आदरणीय प्रो० शिवगोपाल मिश्र हैं, जो अपनी आयु के ७०वें बसन्त में भी उतने ही ऊर्जावान, तेजस्वी, कर्मठ तथा गतिवान हैं जितना कि एक नौजवान से अपेक्षा की जा सकती है। इस वय में भी प्रो० मिश्र अपने सरल, सादगीपसंद, निश्छल तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ विज्ञान परिषद् प्रयाग के प्रधानमंत्री पद को सुशोभित कर रहे हैं तथा उनके कई छात्र तथा शुभचिंतक उनके पथप्रदर्शन में ज्ञान के प्रकाश से आलोकित हो रहे हैं। प्रो० मिश्र ने परम्परावादी होते हुये भी हमेशा नवीनता के तेवरों को पहचाना है तथा उसी अनुसार अपनी कार्यपद्धति को निर्धारित भी किया है। जहां एक ओर उन्हें हिन्दी के महान कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला जी का साहचर्य मिला वहीं प्रो० नीलरत्न धर, स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जैसे मूर्धन्य वैज्ञानिकों के साथ रहकर उन्होंने अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व को नये सोपान दिये हैं। हिन्दी को विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में लोकप्रिय करने के लिये प्रो० शिवगोपाल मिश्र ने जो कार्य किया है, उनका जो योगदान रहा है उसे महान कार्यों की श्रेणी में सहज ही रखा जा सकता है।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र मेरे लिये एक ऐसे व्यक्तित्व हैं जिनका नाम, जिनका कार्य तथा जिनके लेखन से मैं अपने विद्यार्थी जीवन से ही प्रभावित रहा हूं। बात उन दिनों की है जब मैं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अपनी डाक्टरेट के लिये भूविज्ञान विषय में प्रो० महाराज नारायण मेहरोत्रा के पर्यवेक्षण में शोध कार्य कर रहा था। मैंने यह निश्चय किया था कि मैं अपना शोध प्रबंध हिन्दी भाषा में लिखूंगा जिससे कि लोगों को यह ज्ञात हो सके कि हिन्दी के माध्यम से भी हम शोध स्तर का कार्य कर उच्चकोटि तथा उत्कृष्ट स्तर की सामग्री प्रस्तुत कर रहे हैं। शोध सामग्री के लिये पूर्ववर्ती कार्यों को जब मैं एकत्र कर रहा था तभी विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद द्वारा 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान

पत्रिका' तथा 'विज्ञान' जैसी लोकप्रिय पत्रिकाओं से मेरा परिचय हुआ। इसी दौरान प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी की संपादन कला, वैज्ञानिक लेखन तथा पुस्तक लेखन इत्यादि से परिचित हुआ।

कभी कभी जीवन में ऐसा होता है कि आप किसी के विषय में उसकी कृतियों के माध्यम से जानते हों, उससे मिलना चाहते हों, विचार विमर्श करना चाहते हों परन्तु वह अवसर चाह कर भी जल्दी नहीं आ पाता। ऐसा ही कुछ मेरे साथ भी प्रो० शिवगोपाल मिश्र के संदर्भ में हुआ। मुझे १९७३ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पी.एच.डी. की डिग्री मिल गयी थी। इस बीच मेरे कई शोधपत्र तथा वैज्ञानिक लेख 'विज्ञान परिषद अनुसंधान पत्रिका' तथा 'विज्ञान' में प्रकाशित भी हुये। मैं सी.एस.आई.आर. का पोस्ट डॉक्टोरल फेलो भी रहा तथा १९७७ में देहरादून स्थित वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान में वैज्ञानिक के पद पर मेरी नियुक्ति भी हुई। वहां से मैंने कई शोधपत्र विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका के लिये भेजे, जो प्रकाशित भी हुये। परन्तु कोई भी ऐसा अवसर इस बीच नहीं आया कि मैं प्रो० मिश्र से रूबरू हो सकूं।

१ दिसम्बर १९९८ को मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग का जब मैं अध्यक्ष नियुक्त हुआ तब अप्रैल १९९९ में आयोग द्वारा लखनऊ में उ०प्र० के भूगर्भ तथा खनिकर्म निदेशालय में भूगर्भ तथा खनन विषय पर वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में मैंने प्रो० शिवगोपाल को विशेषज्ञ वक्ता के रूप में विशेष रूप से आमंत्रित किया। एक लंबे अंतराल के बाद इसी कार्यशाला के दौरान मैं पहली बार प्रो० शिवगोपाल मिश्र के दर्शन कर सका, व्यक्तिगत रूप से मिल सका। इस कार्यशाला के दौरान कई ऐसे अवसर आये जब मुझे प्रो० मिश्र से आयोग की भावी गतिविधियों तथा विज्ञान परिषद् प्रयाग के साथ मिलकर कुछ नया कार्य करने के विषय में विचार-विमर्श करने का अवसर प्राप्त हुआ। प्रो० मिश्र ने गंभीरतापूर्वक मेरे विचारों को सुना तथा कई एक महत्वपूर्ण सुझाव भी दिये। मैं यहां रेखांकित करना चाहता हूं कि प्रो० शिवगोपाल मिश्र बहुत पहले से ही वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के शब्द निर्माण, ग्रंथमाला मूल्यांकन तथा आयोग के द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक 'विज्ञान गरिमा सिंधु' की गतिविधियों से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। आज भी वे 'विज्ञान गरिमा सिंधु' के संपादन परामर्श मंडल के सक्रिय सदस्य हैं तथा आयोग की ग्रंथमाला योजना के अन्तर्गत प्रो० मिश्र के कई मोनोग्राफ प्रकाशित हो चुके हैं तथा कुछेक प्रकाशन के लिये तैयार हैं।

अप्रैल १९९९ में मेरी तथा प्रो० मिश्र की लखनऊ में हुई व्यक्तिगत मुलाकात एक ऐसा ठोस आधार बनी जो आज तक निर्बाध रूप से गतिशील है। इस बीच दिसंबर १९९९ में आयोग द्वारा 'जैव प्रौद्योगिकी के नये आयाम' तथा अक्टूबर २००० में 'इंजीनियरी शब्दावली तथा भारतीय भाषायें' विषयों पर विज्ञान परिषद् प्रयाग में सफलतापूर्वक शब्दावली कार्यशालायें आयोजित की गई। इन कार्यशालाओं की व्यवस्था तथा सफलता का सारा श्रेय प्रो० मिश्र के कुशल व्यवस्थापन तथा टीम भावना को जाता है। प्रो० मिश्र ने विज्ञान परिषद् में अपने छात्रों, शुभचिंतकों का एक ऐसा अनुशासित दल तैयार कर रखा है जो बड़े से बड़े आयोजन को व्यवस्थित ढंग से संचालित करने में पूर्ण सक्षम है। दिसंबर १९९९ में आयोजित 'जैव प्रौद्योगिकी के नये आयाम' कार्यशाला में प्रस्तुत किये गये शोधपत्रों के प्रारम्भिक संपादन का कार्य भी प्रो० मिश्र की देखरेख में विज्ञान परिषद् प्रयाग में ही सम्पन्न हुआ तथा आयोग इसे 'विज्ञान गरिमा सिंधु' के ३३वें अंक जैव प्रौद्योगिकी विशेषांक के रूप में प्रकाशित कर रहा है।

अक्टूबर २००० में आयोजित 'इंजीनियरी शब्दावली तथा भारतीय भाषायें' कार्यशाला के मुख्य अतिथि के रूप में नागरी प्रचारिणी सभा के प्रधान पं० सुधाकर पाण्डेय पधारे थे। यह प्रो० मिश्र के व्यक्तित्व का ही आकर्षण तथा उनका मृदु आग्रह था जिसे अपनी अस्वस्थता तथा वय को नजरअंदाज करके पं० सुधाकर पाण्डेय प्रयाग पधारे थे। यह कार्यशाला आयोग, विज्ञान परिषद् तथा नागरी प्रचारिणी सभा जैसी शीर्ष संस्थाओं की त्रिवेणी संगम का दृश्य उपस्थित कर रही थी और मुझे विश्वास हो चला कि यदि ये तीनों संस्थायें मिलकर कार्य करें तो विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी को सशक्त होने से कोई रोक नहीं सकता।

नवम्बर १९९९ में आयोग की ओर से विज्ञान परिषद् प्रयाग में 'शब्दावली क्लब' की स्थापना की गई तथा आगामी महीनों में आयोग द्वारा विज्ञान परिषद् प्रयाग में 'सूचना प्रौद्योगिकी के नये आयाम' विषय पर कार्यशाला प्रस्तावित है।

दिसंबर १९९९ में आयोग द्वारा विज्ञान परिषद् प्रयाग में आयोजित 'जैव प्रौद्योगिकी के नये आयाम' कार्यशाला के दौरान यह तथ्य उभर कर सामने आया कि जैव प्रौद्योगिकी जैसे बहुआयामी विषय की तकनीकी शब्दावली अभी बहुत ही शैशव स्थिति में है, यदा कदा व्यक्तिगत स्तर पर शब्दावली बनाकर लोग काम चला रहे हैं। अतः तत्काल जैव प्रौद्योगिकी शब्दावली तथा परिभाषा कोश का विकास किया जाये। मैंने आयोग में स्टाफ तथा संसाधनों की कमी के विषय में बताया। एक ऐसी परियोजना बनाने की बात प्रो० शिवगोपाल मिश्र ने सुझायी जिसमें भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग, विज्ञान परिषद् प्रयाग एवं वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग संयुक्त रूप से जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश के निर्माण हेतु कार्य करें। मैंने इस विचार का हार्दिक स्वागत किया। यह प्रो० मिश्र की दूरदर्शिता, अथक प्रयास तथा लगन का ही प्रतिफल है जो यह परियोजना जैव प्रौद्योगिकी विभाग तथा आयोग द्वारा अनुमोदित होकर अप्रैल २००१ से विज्ञान परिषद् प्रयाग में प्रारम्भ हो गयी है। जून २००१ में इसके सलाहकार मंडल की बैठक भी विज्ञान परिषद् में हुई तथा इस समय शब्दावली निर्माण कार्य प्रगति पर है।

एक और सृजनात्मक तथा सार्थक विचार प्रो० शिवगोपाल मिश्र ने मेरे सम्मुख रखा है। वह है, हिंदी तथा अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं के विज्ञान लेखकों की निर्देशिका तैयार करने का। इस प्रकार के संदर्भ ग्रंथ आज के सूचना प्रौद्योगिकी युग में अत्यंत ही आवश्यक हैं। यह एक ऐसे डाटाबेस का कार्य करेगी जहां लोकप्रिय विज्ञान लेखकों से सीधा सम्पर्क हो सकेगा, उनके सृजनात्मक क्षेत्र का पता चलेगा तथा सूचनाओं का सहज तथा सरल आदान-प्रदान हो सकेगा। मैं इस विषय में भारत सरकार के विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग की संस्था 'विज्ञान प्रसार एव संचार परिषद्' से बात आगे बढ़ा रहा हूं तथा इस परियोजना का प्रस्ताव मानव संसाधन विकास मंत्रालय को भी भेज रहा हूं। आशा है, वहां से अनुमोदन मिलते ही इस निर्देशिका को तैयार करने का कार्य भी प्रो० मिश्र के दिशा-निर्देश में विज्ञान परिषद् द्वारा प्रारम्भ कर दिया जायेगा।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र जैसे सृजनात्मक व्यक्तित्व के कई आयाम हैं। उनमें जहां एक ओर निराला जैसा फक्कड़पन तथा सादगी है, वहीं सहृदयता, सदाशयता, शिष्टाचार, अपनापन तथा वैज्ञानिक गंभीरता के साथ साथ हँस बोल कर हल्के होने की कला भी है। उनका व्यक्तित्व बहुत ही चुम्बकीय है तथा भाषा, धर्म, ज्ञान विज्ञान का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां वे गहरी पैठ न रखते हों। उनके

साथ बात करना बहुत ही आत्मीय तथा अच्छा लगता है। उनके साथ जो भी कुछ समय व्यतीत कर लेता है वह उनका मुरीद हो जाता है। वह बड़े होने का रौब नहीं झाड़ते बल्कि अपने आसपास के यथार्थ को बड़ी संजीदगी से लोगों को अवगत कराते हैं। अपने से छोटों पर हमेशा उनका स्नेह रहा है।

उनके चेहरे पर एक किस्म का प्रेरक आशावाद है और इन सबसे ज्यादा दिखायी पड़ती है अनुकरणीय शिष्टता और ग़ज़ब का बड़प्पन। वह एक ऐसे शख्स हैं जिन्होंने अपनी उपस्थिति से हिन्दी के कैनवास को विराट कर दिया है, उन्होंने हिन्दी भाषा का कद बढ़ाया है तथा उसके प्रति लोगों के आकर्षण को बढ़ाने में कामयाब हुये हैं। अपने छात्रों तथा शुभचिंतकों को उन्होंने सफलता के गुर बताये हैं और सृजनात्मक सपने दिखाये हैं। संभवतः यह सब उन्होंने अपने जीवन के विभिन्न सोपानों से ग्रहण किया है तथा एक जीवंत जीवनशैली का विकास किया है।

उन्होंने अपने पारिवारिक, शैक्षणिक तथा कार्यस्थली के वातावरण से लगातार रचनात्मक तथ्यों को सीखने की कोशिश की है तथा उसे अपने जीवन में उतारा है। प्रो० शिवगोपाल मिश्र की शैक्षणिक, प्रशासनिक तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों के विषय में लोगों के भिन्न-भिन्न विचार हो सकते हैं परन्तु उन्होंने मुझे कर्मठता, लगन तथा त्याग का जो रास्ता दिखाया है उससे यदि मैं थोड़ा कुछ भी सीख सकूं तो यह मेरा सौभाग्य होगा।

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी भाषा को आगे बढ़ाने का, उसकी श्रीवृद्धि करने का, उसे लोकप्रिय करने का जो अथक प्रयास प्रो० शिवगोपाल मिश्र ने अपने जीवन भर किया है उसे सम्मानित करने का अवसर संभवतः बहुत पहले से मौजूद रहा है। भारत सरकार को इस उदासीनता से उबरना चाहिये तथा प्रो० शिवगोपाल मिश्र को नागरिक सम्मान से अवश्य ही सम्मानित किया जाना चाहिये। यह विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी के गौरव को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगा।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र का क्या कोई विकल्प भी हो सकता है ? संभवतः नहीं। परन्तु क्या प्रो० मिश्र ने स्वयं ही कोई विकल्प तैयार किया है ? अपने विकल्प तथा उत्तराधिकारी की सटीक परिभाषा उन्हें ही करनी होगी तभी उनके द्वारा बनायी जा रही हिन्दी की इमारत भविष्य में भी आलोकित होती रहेगी।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र हमारे श्रद्धेय हैं, आदर्श हैं तथा उनके ७०वें जन्म दिवस पर मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूं तथा उनके शतायु होने की कामना करता हूं।

अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार,
नई दिल्ली-११०००६

प्रो० शिवगोपाल मिश्र और विज्ञान प्रसार

डॉ0 सुबोध महन्ती

यह बहुत प्रसन्नता का विषय है कि प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी के जीवन के सात दशक पूर्ण करने के अवसर पर उनके विज्ञान एवं साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदानों से जनमानस को परिचित कराने के उद्देश्य से अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। इस सिलसिले में मुझे लिखने के लिये आग्रह हुआ कि मिश्रा जी का 'विज्ञान प्रसार' के कार्यक्रमों में किस प्रकार का सहयोग रहा है। इस कार्य के लिये मैं स्वयं को गौरवान्वित महसूस करता हूं।

'विज्ञान प्रसार' का मूल उद्देश्य विज्ञान को बड़े पैमाने पर लोकप्रिय बनाना है। यह संस्था विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्तशासी संस्था है। इसके प्रकाशन विभाग के अंतर्गत इसका मुख्य प्रकाशन था- पंजाब के अग्रणी विज्ञान संचारक प्रो० रुचिराम साहनी के संस्मरण। रुचिराम साहनी का विज्ञान को लोकप्रिय बनाने का प्रयास इतना अभिनव था कि इस पुस्तक को पढ़कर लोग न केवल प्रभावित हुये बल्कि उन्होंने इतने वर्ष पूर्व किये गये विज्ञान-लोकप्रियकरण के कार्य पर आश्चर्य भी व्यक्त किया। आज के दिनों में, जहां अधिकतर लोग विज्ञान लोकप्रियकरण में न तो रुचि रखते हैं और न बिना किसी लाभ के कार्य करने के लिये तैयार होते हैं, वहीं रुचिराम साहनी ने अपने जीवन भर की पूंजी विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में लगा दी।

यह आपको ज्ञात होगा कि भारत में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने का कार्य सर्वप्रथम बंगाल में प्रारम्भ हुआ और इसको प्रारम्भ करने में महेंद्र लाल सरकार का विशेष योगदान रहा है। उन्होंने १८७६ में इंडियन एसोसियेशन फार कल्टीवेशन आफ साइंस संस्था की स्थापना की। यह संस्था भारत का प्रथम वैज्ञानिक शोध संस्थान है और यहीं से सी.वी. रामन ने, जो विज्ञान में नोबेल पुरस्कार पाने वाले एकमात्र भारतीय वैज्ञानिक रहे हैं, अपना शोधकार्य शुरू किया। इसी संस्थान ने विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिये व्याख्यान की परम्परा प्रारम्भ की। दुर्भाग्यवश यह परम्परा आज नहीं के बराबर है। रुचिराम साहनी को कोलकाता से ही प्रेरणा मिली। कोलकाता में जिन लोगों ने इस कार्य को शुरू किया उसकी जानकारी थोड़ी बहुत सभी को है। मगर रुचिराम साहनी के संस्मरण प्रकाशित करने के बाद हमें यह एहसास हुआ कि अन्य भारतीय भाषाओं में सम्भवतः स्वतंत्रता से पूर्व काफी प्रयास किये गये थे, जिन्हें ढूंढ निकालने का प्रयत्न करना चाहिये। इस उद्देश्य के तहत सर्वप्रथम हिन्दी भाषा में किये गये कार्य को जनमानस के सामने लाने का निश्चय किया गया। इस कार्य को शुरू करने से पहले यह प्रश्न उठा कि यह कार्य किस व्यक्ति व संस्थान को दिया जाये। इस प्रश्न का हल ढूंढते-ढूंढते हम विज्ञान परिषद् प्रयाग और उसके प्रधानमंत्री प्रो० मिश्र जी से मिले। हमें प्रसन्नता हुई कि मिश्र जी न केवल इस कार्य को करने के लिये तैयार हुये बल्कि उन्होंने इस काम की महत्ता पर भी जोर दिया। मिश्र जी के साथ 'विज्ञान प्रसार' का यह पहला कार्य था। इसके अतिरिक्त दो अन्य महत्वपूर्ण कार्य

विज्ञान परिषद् प्रयाग और 'विज्ञान प्रसार' के संयुक्त तत्वावधान में शुरू किये गये। यहां तीनों का संक्षिप्त विवरण देने से पहले मैं विज्ञान परिषद् एवं मिश्र जी के बारे में दो शब्द लिखूंगा।

विज्ञान परिषद् की स्थापना १६१३ में हुई और इससे विज्ञान प्रेमी लेखकों के लिये नया आधार मिला। कई महान विभूतियां जिन्होंने हिन्दी लेखन में महत्वपूर्ण कार्य किया वे न केवल इस संस्था से जुड़ी रहीं बल्कि इस संस्था के विकास में उन्होंने योगदान दिया। विज्ञान परिषद् १६१५ से आज तक 'विज्ञान' मासिक पत्रिका निरंतर प्रकाशित करती आयी है। कई जाने माने हिन्दी विज्ञान लेखकों ने इस पत्रिका से अपने लेखन की शुरुआत की है। इस संस्था को बरकरार रखने में मिश्र जी की अहम भूमिका रही है। जैसा कि मैंने पहले ही यह इंगित किया है कि आज के युग में निःस्वार्थ सेवा कार्य करने का उदाहरण कम देखने को मिलता है। इस मामले में मिश्र जी एक अनूठी मिसाल हैं। एक प्रतिष्ठित वैज्ञानिक होने के साथ-साथ उन्होंने विज्ञान लोकप्रियकरण में विशेष भूमिका अदा की है। उन्होंने बहुत सारे नयी पीढ़ी के लोगों को उत्प्रेरित किया है। मिश्र जी उस परम्परा से नाता रखते हैं जो आचार्य प्रफुल्लचंद राय ने शुरू की थी। मिश्र जी ने प्रोफेसर नीलरत्न धर के तत्वावधान में शोधकार्य शुरू किया और नीलरत्न धर प्रफुल्लचंद राय के छात्र थे। यहां मेरा मिश्र जी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन का उद्देश्य नहीं है क्योंकि यह तो वे ही कर सकते हैं जो उनके अत्यन्त निकट रहे हैं, किन्तु मैं एक बात जरूर बताना चाहूंगा कि मिश्र जी का विनम्र स्वभाव, छात्रों के प्रति उनका स्नेह, काम के प्रति उनकी निष्ठा और बिना किसी लाभ के कार्य करना, न केवल सरहानीय है बल्कि आज के युग में बेमिसाल है।

स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में जिन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की उसकी चर्चा करने के लिये विज्ञान परिषद् में २८-२६ जनवरी १६६६ को एक कार्यगोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें कई जाने माने विज्ञान लेखकों ने भाग लिया। बाद में उनके विचारों को पुस्तक के रूप में लाया गया। इसका सम्पादन मिश्र जी ने किया। यह पुस्तक स्वयं में महत्वपूर्ण है और जो लोग हिन्दी में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के इतिहास के बारे में जानना चाहेंगे, उनके लिये यह काफी उपयोगी साबित हो सकती है। शब्दावली एवं अन्य असुविधाओं के बाजवूद अपनी निष्ठा, लगन एवं अधिक परिश्रम के बल पर इन पूर्वजों ने विज्ञान लोकप्रियकरण का जो प्रयास किया वह नयी पीढ़ी के लिये प्रेरणादायक सिद्ध होगा। जिन लोगों को इस किताब के साथ परिचय नहीं है उनकी सुविधा के लिये मैं पुस्तक के निबंधों की सूची प्रस्तुत कर रहा हूँ। गणितज्ञ ज्योतिष विज्ञानी : शंकर बालकृष्ण दीक्षित (गुणाकर मुले), स्वतंत्रता पूर्व विज्ञान लेखन में प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा का योगदान (डॉ० दिनेश मणि), स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती का स्वतंत्रता से पूर्व विज्ञान के प्रचार प्रसार में योगदान (प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव), हिन्दी विज्ञान को समर्पित महावीर प्रसाद श्रीवास्तव (डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय), रामदास गौड़- व्यक्तित्व एवं कृतित्व (डॉ० सुनील दत्त तिवारी), विज्ञान लेखन की आधारशिला डॉ० (स्वामी) सत्यप्रकाश सरस्वती (तुरशन पाल पाठक), औद्योगिक साहित्य के संवर्धक डॉ० गोरख प्रसाद (डॉ० शिवगोपाल मिश्र), युगपुरुष श्री गोपाल स्वरूप भार्गव (डॉ० प्रभाकर द्विवेदी), स्वामी हरिशरणानन्द (श्याम सुन्दर शर्मा), हिन्दी में विज्ञान लेखन के सशक्त हस्ताक्षर, डॉ० आत्माराम (डॉ० रमेश दत्त शर्मा), जगपति चतुर्वेदी जिनकी वैज्ञानिक ज्ञान के प्रचार प्रसार में अप्रतिम भूमिका थी (शुकदेव प्रसाद), विज्ञान लोकप्रियकरण में डॉ० मेहरोत्रा का योगदान (डॉ० राजकुमार दुबे), आयुर्वेद के लोकप्रियकरण

में भावमिश्र का अवदान (डॉ० राजीव रंजन उपाध्याय), भारतेन्दु काल में विज्ञान के लोकप्रियकरण के व्यक्तिनिष्ठ प्रयास (डॉ० गिरीश चन्द्र चौधरी), मराठी में विज्ञान के लोकप्रियकरण में शंकरबाल कृष्ण दीक्षित का योगदान (रामधनी द्विवेदी), स्वतंत्रतापूर्व वैज्ञानिक शब्दावली निर्माण और वाड्मय-प्रणयन में डॉ० रघुवीर की भूमिका (हरिमोहन मालवीय), अंग्रेजी माध्यम से विज्ञान लोकप्रियकरण में प्रोफेसर विलियम बुस्टर हेज का योगदान (दर्शनानन्द), कुछ सूत्रों के सहारे खुलेंगे अनछुये अध्याय (मनोज कुमार पटेरिया)।

इस कार्य को और आगे बढ़ाने के उद्देश्य से विज्ञान परिषद् प्रयाग और विज्ञान प्रसार ने साथ मिलकर यह तय किया कि १८५० से १६५० तक लोकप्रिय विज्ञान में जो लिखा गया उसका एक प्रामाणिक विवरण तैयार किया जाये। विज्ञान प्रसार ने यह परियोजना डॉ० मिश्र को दी। 'हिन्दी में विज्ञान लेखन के सौ वर्ष' योजना को कार्यरूप देने में डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने सम्पादक एवं समन्वयक की महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस कार्य को आरंभ कराने के लिये उन्होंने पहले नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, हिन्दुस्तानी एकेडमी, भारती भवन लाइब्रेरी प्रयाग से उपलब्ध प्राचीन हिन्दी पत्रिकाओं से विज्ञान विषयक लेखों की सूची डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय के सहयोग से तैयार करायी। इस तरह सन् १८५० से १६५० की अवधि में ३८०० लेख निकाले गये और उनमें से चुनकर कोई तीन सौ लेख अलग किये गये। इसके बाद विज्ञान परिषद् प्रयाग में आयोजित एक कार्यशाला में १६० निबन्धों को छांटकर अलग किया गया जो विषयवस्तु तथा शैली की दृष्टि से उल्लेखनीय थे। इन निबन्धों को दो खण्डों में प्रकाशित करने पर सहमति बनी। अब यह दोनों खण्ड विज्ञान प्रसार से प्रकाशित हो रहे हैं। डॉ० मिश्र के संपादन में तैयार यह संकलन वास्तव में विज्ञान पत्रकारिता का एक अनूठा संग्रह है। यह संग्रह शोधार्थियों और विज्ञान के अध्येताओं के लिये तो महत्वपूर्ण है ही, विज्ञान लोकप्रियकरण की दिशा में जुटे लोगों के लिये एक अनुपम कृति है। इस सम्बंध में डॉ० मिश्र जी का यह कथन न केवल महत्वपूर्ण है, बल्कि विचारणीय भी है "स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षित जनता जिस ऊहापोह में रही है और विज्ञान विषयों के अध्ययन-अध्यापक को लेकर जिस अनिश्चितता एवं द्वैतता को प्रश्रय दिया जाने लगा, उससे हिन्दी में विज्ञान के उच्चस्तरीय पठन-पाठन में अवरोध आया और किसी ने उच्चस्तरीय लेखन का दुस्साहस नहीं किया। हाँ, लोकप्रिय विज्ञान लेखन अबाध गति से चलता ही रहा, क्योंकि उससे पूर्व से ऐसे लेखन की लम्बी परम्परा जो थी।"

"आज इन पूर्ववती लेखकों का नामलेवा कोई नहीं है जिन्होंने स्वतंत्रतापूर्व विज्ञान लेखन किया, और अब जो इस धराधाम में नहीं हैं। वे विस्मृत कर दिये गये। उनके विषय में न तो उन्होंने स्वयं कुछ लिखा न अन्यों ने ही। न ही कोई ऐसा इतिहास लिखा गया कि उन सारे लेखकों के नाम ज्ञात हो पाते। यदि उन्होंने कोई अन्य रचना की होगी तो भी उसका कोई संदर्भ नहीं मिल रहा है। उन्होंने किन-किन स्रोतों से अपनी सामग्री ली होगी, यह भी केवल अनुमान का विषय बन कर रह जाता है। किन्तु लेखन के प्रति उनकी लगन, आस्था एवं उनकी अन्वेषण प्रवृत्ति की दाद देनी पड़ेगी। वे तब शून्य पर भित्ति उठा रहे थे, मात्र दुस्साहसवश और वे इसमें सफल हुये। यह हिन्दी के विज्ञान लेखकों के इतिहास में कम महत्व की बात नहीं। शब्द निर्माण एवं पटुता एवं विषय सामग्री संसाधन के क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। वे मानो हमारे लिये यह सन्देश छोड़ गये हैं कि महापुरुष अपना मार्ग स्वयं

बनाते हैं। उनके द्वारा दिखाया गया मार्ग, उनके द्वारा अपनाई गई शैलियां, उनके द्वारा सामयिक विषयों का चुनाव, उनके द्वारा जुटाये गये चित्र एवं उनके द्वारा देश विदेश के वैज्ञानिकों के जीवन चरित्रों को उजागर करने की कोशिशें, ये सभी अत्यन्त सराहनीय कार्य हैं। कतिपय महिलाओं ने भी अपनी कर्तव्यपरायणता का परिचय दिया है और वे भी पुरुष लेखकों की तरह अपने अपने विषय के प्रस्तुतिकरण में सफल रही हैं। पूर्ववती लेखकों में से कुछेक ही स्वतंत्रता के बाद भी लेखन कार्य में पूर्ववत् जुटे रहे।"

विज्ञान प्रसार के सहयोग से डॉ० मिश्र ने एक अन्य योजना को कार्यरूप दिया है वह है- विज्ञान लेखकों के लिये पारिभाषिक शब्द संग्रह। अभी भी हिन्दी विज्ञान लेखक शब्दावली के मामले में कठिनाई महसूस करते हैं। इसके कारण पाठकों को समझने में दिक्कत महसूस होती है। इसी को नजर में रखते हुये विज्ञान प्रसार ने हिन्दी पारिभाषिक शब्द कोश बनाने का निश्चय किया। यह शब्दकोश किसी भी साधारण शब्दकोश से भिन्न होगा। इस शब्दकोश में प्रत्येक शब्द का विस्तृत विवरण चित्रों सहित दिया जाना है। इस कार्य को प्रारम्भ करने से पहले मिश्र जी ने वर्किंग पेपर तैयार किया जिसमें अभी तक शब्दकोश बनाने में जो प्रयास एवं कमियां रहीं उसका विवरण उल्लिखित था। इस पेपर को अनेक विशेषज्ञों के बीच वितरित किया गया। उनके मतों को लेने के लिये एक विचारगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस विचारगोष्ठी का उद्देश्य था शब्दकोश को बनाने के लिये गाइडलाइन तैयार करना। इसके बाद विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों को शब्दों के अनेक अर्थों के लिये कार्य दिया गया। अभी तक १५ हजार शब्दों के अर्थ लिखे जा चुके हैं। आशा है कि मिश्र जी के तत्वावधान में यह कार्य भविष्य में अतिशीघ्र पूरा होगा।

मैं डॉ० मिश्र को सत्तर वर्ष पूरे करने पर उन्हें हार्दिक बधाई देता हूँ और उनके दीर्घायु होने की कामना करता हूँ। विज्ञान लोकप्रियकरण की दिशा में अभी उनसे बहुत सी अपेक्षायें हैं।

विज्ञान प्रसार
सी-२४, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया
नई दिल्ली-११००१६

शुभ चिंतन

गिरीश चन्द्र चौधरी

दधीचि ऋषि की कल्पना साकार हो उठी जब मैंने आज से लगभग ७-८ वर्ष पूर्व डॉ० शिवगोपाल मिश्र के दर्शन प्रयाग में किये। वैसे नाम से परिचित तो था ही। सुना था कि आप हिन्दी विज्ञान साहित्य को समर्पित व्यक्तित्व हैं। अतः लालसा दर्शनों की पूरी करनी थी। स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी में विज्ञान साहित्य पर गोष्ठी थी। आपने जिस श्रद्धा से उसका संचालन किया, हमें अपनी पीढ़ी को अनुकरणीय उदाहरण मिला। विज्ञान को हिन्दी में लाना सहज नहीं, सबसे बड़ी कठिनाई आर्थिक सहयोग की है। स्वतंत्रता पश्चात अंग्रेजी के प्रति बढ़ता लगाव एवं हिन्दी से अप्रियता झलकाना कुछ प्रबुद्ध वर्ग के लोगों का फैशन बन गया है। इस धारणा को ध्वस्त करना आपका सहज, सरल स्वभाव कार्य प्रणाली सबसे कारगर रहे। सबसे बड़ी बात हृदय निष्कपट जो आज जल्दी नहीं मिलता।

आप कृषि विज्ञान में मृदा विज्ञानी हैं। जैसा ज्ञात है कि सभी मिट्टी से बने हैं इसी में समाविष्ट भी होंगे। आपका चरित्र भी वैसा ही है। विज्ञान को हिन्दी में लाना और इसी से हिन्दी में विज्ञान प्रगट भी करना- धन्य है आपका यह अवदान। मिट्टी में सब उपजता है। जो डालो उगेगा। इसी प्रकार मैं भूविज्ञान का विद्यार्थी कृषि वैज्ञानिक की मिट्टी से उगने का अवसर पा गया। ऐसी अनेक विज्ञान की विधायें आपकी मृदा प्रवृत्ति से उगीं एवं फल फूल रही हैं। सचमुच ही आपने मृदा के गुणों का जो ज्वलंत प्रमाण प्रस्तुत किया है। फिर आप महान विज्ञानी डॉ० धर के पट्टशिष्य साथ ही अनन्य भक्त भी। सोने में सुहागा हो गया। डॉ० धर ऐसी विभूति से कौन अनजान है उनके गुणों का क्या बखान करेंगे। आप उनसे पारस स्पर्श की कल्पना साकार कर रहे हैं।

प्रोफेसर, भौतिकी विभाग
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी-५

प्रो० शिवगोपाल मिश्र मेरी दृष्टि में

डॉ० ए.एल. श्रीवास्तव

जीवनयात्रा में अनेक व्यक्तियों से सम्पर्क होता है। कुछ थोड़ी देर तक साथ चलते हैं और कुछ अधिक देर तक। साथ-साथ चलते हुये भी कुछ पारम्परिक सम्बन्ध बना पाते हैं, कुछ नहीं। विचार करने पर प्रायः पता चलता है कि जिन अनेक व्यक्तियों के संपर्क में आने का अवसर मिला, उनमें बहुसंख्य तो स्मृति पटल से ही ओझल हो जाते हैं। जो याद भी रह जाते हैं उनमें वे विरले होते हैं जो अपनी आत्मीयता, सज्जनता, मानवीयता अथवा संवेदनशीलता की छाप छोड़ते हैं। प्रो० शिवगोपाल मिश्र एक ऐसे ही व्यक्ति हैं जिन्होंने मुझ पर अपने आत्मीय, मानवीय एवं सौजन्यपूर्ण व्यवहार से ऐसा प्रभाव डाला है कि मैं अपने को उनके बहुत निकट पाता हूँ। उनको अपना शुभचिन्तक मानता हूँ और अपने को उनके नितांत अनौपचारिक स्नेह से सम्मानित समझता हूँ।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र से मेरे परिचित होने के कारण भी एक प्रकार से विचित्र ही कहे जाने चाहिये, क्योंकि वे विज्ञान के क्षेत्र में रहे और मैं प्राचीन इतिहास, संस्कृति और कला का विद्यार्थी रहा। इसी प्रकार वे विश्वविद्यलाय में और मैं एक महाविद्यालय में रहा। शिक्षा, सेवा अथवा व्यवसाय किसी क्षेत्र में उनका समानधर्मा नहीं रहा। प्रो० मिश्र से मेरा प्रथम परिचय कब हुआ इसकी सही सही याद तो नहीं है किन्तु उनसे संपर्क के दो सूत्र रहे हैं, एक सागर विश्वविद्यलाय के विख्यात पुराविद् एवं इतिहासकार स्व० प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी और दूसरे विज्ञान के पूर्व संपादक मेरे सहयोगी एवं परम मित्र श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव। प्रो० वाजपेयी का मुझ पर स्नेह था, इसलिये जब कभी वे प्रयाग आते, मुझे पहले ही पत्र से सूचित कर देते और मैं निर्दिष्ट स्थान व तिथि पर उनसे मिलने जाता। मेरी ही तरह प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी कभी अकेले, कभी सपत्नीक अथवा कभी अपनी बेटी विभा के साथ प्रो० वाजपेयी से मिलने आते। वहीं प्रो० वाजपेयी ने हम दोनों का परिचय कराया। श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव स्वयं विज्ञान के प्राध्यापक तो हैं ही, साथ ही वे एक विज्ञान लेखक भी हैं। विज्ञान परिषद् प्रयाग से प्रो० मिश्र तो पहले से ही जुड़े हुये हैं, उन्होंने श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव को भी उस संस्था से सफलतापूर्वक जोड़ लिया। परिषद् के कार्यकलापों, गोष्ठियों, सम्मेलनों अथवा प्रकाशनों में रुचि लेने वाले मेरे मित्र श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने अपने कतिपय मित्रों को भी विज्ञान परिषद् के निकट लाने का प्रयास किया। उनके इस प्रयास के परिणामस्वरूप मैं भी विज्ञान परिषद् की संगोष्ठियों में आने-जाने लगा और इस प्रकार प्रो० शिवगोपाल मिश्र से संपर्क में आया।

आगे चलकर मेरी प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी से निकटता बढ़ती गई। उनकी बेटी प्राचीन इतिहास से सम्बन्धित विषय पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में डी.फिल के लिये शोध कर रही थी, मैं उसी विषय का विद्यार्थी था। इसीलिये कभी-कभी किसी विषय पर स्पष्टीकरण के लिये अथवा किसी पुस्तक विशेष के लिये मेरी प्रो० मिश्र से भेंट होने लगी। इस प्रकार विज्ञान परिषद् से प्रारंभ होकर मेरा

उनसे संपर्क अब पारिवारिक हो गया और हम दोनों एक दूसरे के घर भी आने जाने लगे।

कई वर्ष पहले की बात है, स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी ने रत्नकुमारी स्वाध्याय संस्थान के तत्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की पुण्यशती के अवसर पर कई महिलाओं से छोटी-छोटी पुस्तकों की रचना करवाकर प्रकाशित करवाया था जिनमें महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की झाँकी प्रस्तुत की गई थी। उस अवसर पर प्रो० शिवगोपाल मिश्र एवं श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव के सुझाव पर ही स्वामी जी ने मेरी पत्नी स्वर्गीया श्रीमती सरोजबाला श्रीवास्तव से भी एक पुस्तक लिखवाई थी 'महर्षि दयानन्द सरस्वती और प्राचीन परंपरायें'। इस प्रसंग में भी हमारी प्रो० मिश्र से सन्निकटता सहजता बढ़ती गई।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र की कार्यशैली से मैं विशेष रूप से प्रभावित हुआ हूँ। वे एक बार ही लिखते हैं और उसी को टाइप करने के लिये दे देते हैं। हममें से अधिकांश लोग पहले लिखते हैं। उसे बार-बार कई स्थानों पर काटते हैं, घटाते-बढ़ाते हैं और इसीलिए वे बाद में साफ-साफ लिखकर आलेख तैयार करते हैं। प्रो० मिश्र किसी भी पत्र का उत्तर तत्काल देते हैं। उनके पत्र छोटे किन्तु स्पष्ट होते हैं। प्रो० मिश्र में औपचारिकता का नितान्त अभाव है। वे जिससे मिलते हैं पूर्णतः अनौपचारिक रहते हैं। किसी भी समस्या के समाधान में वे अधिक समय नहीं लगाते हैं।

प्रो० मिश्र एक बहुआयामी लेखक हैं। हिन्दी में विज्ञान लेखन तो उनका अपना प्रिय क्षेत्र है ही, उन्होंने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मुझे ठीक से याद है, जून १९९२ में प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी के निधन के पश्चात् उन्हीं के द्वारा स्थापित पन्चाल शोध संस्थान के कार्यकारी अध्यक्ष श्री हजारीमल बाँठिया ने मेरे सम्मुख प्रस्ताव रखा कि मैं प्रो० वाजपेयी की गरिमा के अनुरूप उनके स्मृति ग्रन्थ का सम्पादन और प्रकाशन करूँ। इस ग्रन्थ का विमोचन दिसम्बर १९९२ में होना था। केवल चार माह का समय शेष था। मैंने प्रो० शिवगोपाल मिश्र से अपनी समस्या बताई कि इतने कम समय में कैसे लेख एकत्र किये जा सकेंगे और कैसे उन्हें छापा जा सकेगा। उन्होंने मुझे उत्साहित करते हुये कहा कि सब हो जायेगा, आप स्वीकृति भेज दें, और मैंने हाँ कर दी। मेरे उस गुरुतर कार्य में प्रो० मिश्र ने मेरा कोरा उत्साहवर्धन ही नहीं किया, अपितु स्व० वाजपेयी के सम्बंध में अपने संस्मरण भी लिखे तथा अपने गृहनगर फतेहपुर के पुरातात्विक स्थलों का बड़ा ही विस्तृत सर्वेक्षण भी एक आलेख में प्रस्तुत किया।

विज्ञान परिषद् के दैनन्दिन कार्यों में प्रो० शिवगोपाल मिश्र, विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त कर लेने के बाद भी निरंतर क्रियाशील और जागरूक रहे हैं। वस्तुतः वे और विज्ञान परिषद् एक दूसरे के पर्याय से हो गये हैं। वे सतत् इसी प्रकार विज्ञान और साहित्य के माध्यम से समाज सेवा में सक्रिय रहें, स्वस्थ रहें और शतायु हों, ऐसी मेरी मंगल कामना है।

पूर्व प्राध्यापक
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
सी.एम.पी. डिग्री कालेज, इलाहाबाद
उ०प्र० २११००२

विज्ञान लेखनाचार्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 रजनीश प्रसाद मिश्र

डॉ० शिवगोपाल मिश्र की लेखकीय प्रतिभा से तो मैं पिछले अनेक वर्षों से परिचित था, परन्तु उनके व्यक्तित्व का शीतल संस्पर्श मुझे आकाशवाणी इलाहाबाद में पदस्थापन के बाद (जून, १६६८ में) प्राप्त हुआ। सर्वप्रथम काशी नागरी प्रचारणी सभा के मंत्री विद्वान एवं विचारक श्री सुधाकर पाण्डेय के व्याख्यान के अवसर पर डॉ० मिश्र ने अध्यक्षता के लिये मुझे आमंत्रित किया था। श्री पाण्डेय वाराणसी से कार द्वारा आने वाले थे, आने में कुछ विलम्ब हो रहा था। इस अन्तराल को डॉ० मिश्र जी ने अपने गंभीर विवेचन और प्रवाह से इस प्रकार भर दिया कि वह समय कैसे बीत गया इसका भान तक नहीं हुआ। पाण्डेय जी के आगमन की सूचना मिलने पर वे उनकी आगवानी करने गये। इसके बाद पाण्डेय जी का व्याख्यान भी खूब जमा और पूरा वातावरण इतना ऊर्जस्विल हो गया था कि उसी प्रवाह में मेरा अध्यक्षीय भाषण भी लोगों ने सुना और सराहा भी। मिट्टी को छूकर सोना बनानें वाले मिश्र जी के विराट व्यक्तित्व का यह एक पक्ष है।

कुछ दिनों के बाद पहली दिसम्बर, २००० को आकाशवाणी और विज्ञान विषय पर एक व्याख्यान देने के लिये उन्होंने मुझे विज्ञान परिषद् इलाहाबाद आमंत्रित किया। मैं समयानुसार अपराह्न ३ बजे पंहुच गया। अभी प्रशिक्षुओं के आने में कुछ विलम्ब था। इस अन्तराल में भी उन्होंने विज्ञान लेखक की कठिनाइयां, हिन्दी में विज्ञान लेखन की समस्यायें एवं अनिवार्यता जैसे अनेक विषयों का ऐसा तलस्पर्शी विवेचन प्रस्तुत किया कि प्रशिक्षुओं के आने पर ही पता चला कि अब मुझे व्याख्यान प्रारम्भ करना है। संभवतः यह एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव था कि यह व्याख्यान भी आशातीत रूप से सफल हुआ।

एक बार इलाहाबाद संग्रहालय के सभागार में आकाशवाणी के कार्यक्रम अधिकारियों की एक कार्यशाला थी। उसमें मिश्र जी ने अनेक केन्द्रों के अधिकारियों को सम्बोधित करते हुये विज्ञान कार्यक्रमों और विज्ञान वार्ता की प्रस्तुति पर अत्यन्त मौलिक विचार रखे। वास्तव में डॉ० मिश्र अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त सुप्रसिद्ध रसायनज्ञ, मृदाविज्ञानी, वरिष्ठ विज्ञान लेखक, संपादक और ऐसी प्रतिभा के धनी हैं जिन्होंने लेखन के साथ-साथ लेखनाचार्यत्व का उत्तरदायित्व वहन किया और अपने मार्ग निर्देशन में विज्ञान लेखकों का एक दल तैयार किया जो अपने अपने ढंग से राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा में लगे। ऐसे सुकृति डॉ० शिवगोपाल मिश्र को अनेक७ बार उनकी मंहगी और दीर्घ सेवा के लिये सादर नमन।

पूर्व निदेशक
आकाशवाणी, इलाहाबाद

मौन तपस्वी : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

प्रो० कृष्ण बिहारी पाण्डेय

अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त सुप्रसिद्ध रसायनज्ञ एवं मृदा विज्ञानी स्वनामधन्य वरिष्ठ विज्ञान लेखक डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के जीवन के सात दशक पूर्ण करने पर उनके उल्लेखनीय योगदानों के लिये अभिनन्दन वृत्त प्रकाशित करने की योजना सराहनीय है। अभिनन्दन ग्रंथ हेतु मुझे अपने संस्मरण भेजने का न्यौता मिला, इसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूँ।

प्रयाग विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में पहले स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्र के रूप में, फिर शोध छात्र के रूप में और कुछ समय व्याख्याता के रूप में मैंने कुल तेरह वर्ष बिताये। इस अवधि में मुझे डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी का स्नेह मिला। विज्ञान परिषद् प्रयाग की गौरवशाली पत्रिका 'विज्ञान' के सम्पादक के रूप में हिन्दी विज्ञान लेखन के क्षेत्र में डॉ० शिवगोपाल मिश्र का योगदान अतुलनीय है। अपने सहज स्वभाव के बल पर उन्होंने अनेक छात्रों को 'विज्ञान' में लेखन हेतु प्रेरित किया।

कुल सैंतीस वर्ष पहले की बात है, मैं एम.एस-सी. उत्तरार्द्ध (अकार्बनिक रसायन) का छात्र था। उन दिनों एम.एस-सी. की पढ़ाई अंग्रेजी में होती थी। डॉ० सत्य प्रकाश जी विभागाध्यक्ष थे। उनका राष्ट्र-भाषा प्रेम सर्वविदित है। विज्ञान विषयों को हिन्दी माध्यम में पढ़ाये जाने की उनकी आतुरता भी सहज ही झलकती थी। रसायन विज्ञान विभाग के अधिसंख्य शिक्षक भी सत्य प्रकाश जी की ही तरह हिन्दी के लिये समर्पित थे, पर पढ़ाते सभी अंग्रेजी में थे। हिन्दी माध्यम में पाठ्यपुस्तकों की संख्या तब भी नगण्य थी। अकार्बनिक रसायन में अनेक क्लिष्ट विषय हमें पढ़ाये जाते थे। विदेशी भाषा इन क्लिष्ट विषयों की दुरूहता और भी बढ़ा देती थी। Emelius-Anderson जैसे लेखकों की अंग्रेजी समझने के लिये शब्दकोश लेकर बैठना पड़ता था। जब कोई विषय मुझे अच्छे से समझ में आ जाता, तो उस विषय पर हिन्दी भाषा में सरल लेख लिखने का मेरा बहुत मन करता।

एक दिन जब हम अकार्बनिक रसायन के सभी छात्र डॉ० मनहरन नाथ श्रीवास्तव जी से Ligand Field Theory पढ़ रहे थे, डॉ० शिवगोपाल मिश्र उनसे कुछ बात करने उनके कमरे में ही आ गये और जाते-जाते मुझे सम्बोधित करके आदेश के स्वर में बोले, " कृष्ण बिहारी, तुम विज्ञान के लिये लिखते क्यों नहीं ?" मुझे आश्चर्य हुआ, डॉ० मिश्र मेरे मन की बात कैसे जान गये।

हमारी परीक्षायें सर पर थीं। परीक्षा की तैयारी के साथ-साथ मैंने 'विज्ञान' के लिये चटपट दो लेख लिख डाले। पहले लेख का शीर्षक था 'परमाणु घड़ी' और दूसरे लेख का शीर्षक था 'धातु-क्षरण'। दोनों लेख एकसाथ मैंने डॉ० मिश्र को इस निवेदन के साथ दिये कि वे पढ़कर उन्हें संशोधित कर दें ताकि मैं स्वच्छ हस्तलिपि में लिखकर अथवा टंकण करा कर प्रकाशन हेतु उन्हें दे सकूं। उन्होंने दोनों लेख अपनी फाइल में रख लिये और मुझे पन्द्रह दिनों बाद मिलने को कहा। इसी बीच परीक्षायें प्रारम्भ

हो गईं। मैं लगभग माह भर बाद इस आशा से उनके पास गया कि अब तक उन्होंने लेख अवश्य संशोधित कर दिये होंगे और मुझे बतायेंगे कि लेख 'विज्ञान' में प्रकाशन योग्य हैं अथवा नहीं। किन्तु उन्होंने अपने झोले से विज्ञान के नवीनतम अंक की एक प्रति निकाल कर मुझे पकड़ा दी और बोले पढ़ो, इसमें तुम्हारा लेख छपा है। मैंने पत्रिका में अपना लेख छपा देखा और अपना नाम भी छपा देखा। मेरी खुशी का ठिकाना न था। तब तक डॉ० मिश्र ने दस रुपये का नोट मेरी ओर बढ़ाते हुये कहा, " यह लो अपना पारिश्रमिक, हम इससे अधिक नहीं दे सकते, 'विज्ञान' बहुत गरीब है, इसे चलाने के लिये तुम लोग आगे आओ।"

२.

काल का चक्र अपनी गति से आगे बढ़ता गया। मैं दिल्ली विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान विभाग में व्याख्याता बनकर आ गया। बड़े-बड़े संस्थान, बड़े-बड़े लोग। हिन्दी को लेकर बड़ी-बड़ी नुमाइशें। पर डॉ० शिवगोपाल मिश्र जैसा एक भी समर्पित हिन्दीसेवी नज़र नहीं आया। दिल्ली में रहते हुये वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् (Council of Scientific and Industrial Research, C.S.I.R.) के प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय (Publication and Information Directorate, P.I.D.) पूसा गेट प्रायः जाता रहता था। Indian Journal of Chemistry यहीं से छपता था। उन दिनों डॉ० सत्य प्रकाश जी के नेतृत्व में Wealth of India का हिन्दी रूपांतर 'भारत की सम्पदा' पर तेजी से काम हो रहा था। इस कार्य में डॉ० शिवगोपाल मिश्र माननीय सत्य प्रकाश जी के प्रमुख सहयोगी थे। 'भारत की संपदा' का प्रकाशन भी पी.आई.डी. से ही होना था। एक दिन पी.आई.डी. के गलियारों में चलते-चलते मुझे एक कक्ष के बाहर डॉ० शिवगोपाल मिश्र के नाम की पट्टिका लगी दिखी। Indian Journal of Chemistry के सहायक सम्पादक डॉ० शर्मा से पूछने पर मालूम पड़ा कि 'भारत की सम्पदा' के सम्पादन के लिये डॉ० मिश्र प्रतिनियुक्ति पर पी.आई.डी. में आ गये हैं। मैं जल्दी से डॉ० मिश्र के कक्ष की ओर गया। आधे खुले कपाट से मैं धीरे से उनके कमरे के अन्दर दाखिल हुआ। साधारण कक्ष में डॉ० मिश्र अपने कार्य में मग्न थे। उनकी मेज पर 'भारत की सम्पदा' के प्रूफ का अम्बार लगा था। एक ओर बिना पढ़े प्रूफ और दूसरी ओर पढ़े गये संशोधित प्रूफ। बीच में उनकी हथेली के नीचे प्रूफ के चार पन्ने और सबसे ऊपर के पृष्ठ पर दौड़ती उनकी नज़र। लाल रीफिल वाली बाल पेन से वे अशुद्धियां सुधार रहे थे। एक-एक अक्षर, एक-एक मात्रा, एक-एक अल्प विराम। कुछ भी तो उनकी नज़रों से छूट नहीं रहा था। एक-एक अशुद्धि को निकालकर उसकी जगह लाल रोशनाई से शुद्ध पाठ बैठाते जा रहे थे, जैसे कहीं से चुन-चुन कर लाल फूल माँ भारती की चरणों में अर्पित कर रहे हों। निःस्वार्थ साधना की एक अद्‌भुत मिसाल। अंग्रेजी की जंजीर में जकड़ी 'भारत की सम्पदा' की मुक्ति के लिये समर्पित उनकी एक-एक सांस। आजादी के बाद देश में राष्ट्रभाषा की अवहेलना से उनका मन व्यथित था। अवश्य ही अति व्यथा की किसी बेला में उन्होंने यह महान संकल्प लिया होगा। मैं इस मौन तपस्वी के दर्शन से धन्य हो रहा था, पर उन्हें अभी तक मेरे वहां होने का एहसास भी नहीं हुआ था। प्रूफ का पन्ना उलटते समय जब उन्होंने नजर दौड़ाई, तो मुझे देखकर चौंक पड़े। कलम मेज पर रख दी और सम्भलते हुये से बोले, "अरे कृष्ण बिहारी तुम !"

मैंने उलाहना सा देते हुये कहा- "सर, आपके आने की कोई खबर ही नहीं मिली।"

वे बोले "अभी दो दिन पहले ही आया हूं। सब कुछ अचानक हुआ। डॉ० सत्य प्रकाश जी का

निर्णय है, 'भारत की सम्पदा' के सम्पादन का दायित्व मुझे निभाना है।"

'मुझे बहुत खुशी हुई, सर ! दिल्ली में मैं अपने को बिल्कुल अकेला पा रहा था। अब रोज आपके पास आऊंगा। न हो तो मुझे भी अपना कुछ काम दे दीजिये।'

'तुम्हें काम क्या दूंगा मैं। खुद कितने दिन रह पाऊंगा क्या पता ? मेरा मन यहां बिल्कुल नहीं लग रहा है।'

तब वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मात्र व्याख्याता थे और सी.एस.आई.आर. ने उन्हें प्रोफेसर के वेतनमान पर बुलाया था। मुझे लगा यह व्याख्याता मिश्र नहीं बोल रहे हैं, उनके अन्दर का तपस्वी बोल रहा है। वह तपस्वी जिसके लिये उच्च्च वेतनमान का कोई अर्थ नहीं है। वह तपस्वी जिसके लिये दिल्ली की चमक दमक और सी.एस.आई.आर. की साज सज्जा निरर्थक है। वह तपस्वी जिसकी साधना का एकमात्र लक्ष्य है मातृभाषा हिन्दी की सेवा और हिन्दी में विज्ञान लेखन। 'विज्ञान' जैसी गरीब किन्तु गौरवशाली पत्रिका के लिये उनकी व्याकुलता उनकी आंखों में झलक रही थी। वे अपने 'विज्ञान' से दूर एक दिन भी नहीं रहना चाहते थे। और फिर इलाहाबाद छोड़ना कोई सरल नहीं है। मुझे ही कहां दिल्ली रास आ रही है। पर मैं विवश था। मेरे पास इलाहाबाद रहने के लिये कोई विकल्प ही कहां था।

३.

कुल तीस साल की परिक्रमा पूरी कर मैं अब इलाहाबाद आ गया हूं, उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष बनकर। बार-बार डॉ० मिश्र से मिलना होता है। कभी विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में, कभी विज्ञान परिषद् के किसी कार्यक्रम में, तो कभी हिन्दुस्तानी एकेडमी में। आयोग में भी उन्हें साक्षात्कार समितियों में विशेषज्ञ के रूप में बुलाता हूं। उनके पैर छूता हूं, वे आशीष देते हैं। पर मन करता है, वे आदेश के से स्वर में एक बार फिर कहें, "कृष्ण बिहारी, तुम विज्ञान के लिये लिखते क्यों नहीं।"

उनके स्वस्थ जीवन के लिये अनन्त शुभकामनायें।

अध्यक्ष
उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग

प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी की कलम लगाई जाये

डॉ० रमेश दत्त शर्मा

मेरी शुरू की रचनायें 'विज्ञान' मासिक में ही प्रकाशित हुई थीं और मेरी पहली पहचान परमादरणीय मिश्र जी से 'विज्ञान' के संपादक के रूप में ही हुई थी। सितंबर १९६२ के 'विज्ञान' मासिक में मेरी रचना 'पादप रोग विज्ञान का इतिहास' प्रकाशित हुई थी और जुलाई १९६३ के अंक में 'जहां जीवन अमोनिया पर आधारित है'। उस समय के 'विज्ञान' से आज तक के 'विज्ञान' की यात्रा अपने आप में एक इतिहास है और इतिहास के निर्माण का श्रेय किसी एक व्यक्तित्व को दिया जा सकता है, तो वह भला शिवगोपाल मिश्र जी के सिवा कौन हो सकता है ? जिस अवधि में वे प्रधान संपादक या संपादक न रहे हों, उन दिनों भी परोक्ष रूप से 'विज्ञान' पर उनके संपादकत्व की छाप हमेशा रही। उनके संपादन में 'विज्ञान' के अनेक स्मृति अंक प्रकाशित हुये हैं और वे सब हिन्दी के विज्ञान साहित्य की निधि हैं। हिन्दी में आज जो भी विज्ञान लेखक हैं, उनमें से अधिकतर 'विज्ञान' के बनाये हुये हैं और इस तरह इस अकेली 'विज्ञान' पत्रिका ने विज्ञान पत्रकारिता के विश्वविद्यालय का काम किया है, जिसके कुलाधिपति कोई भी रहे हैं- कुलपति शिवगोपाल मिश्र जी ही हैं।

लेखक, संपादक के रूप में मिश्र जी से जो परिचय बना तो फिर प्रगाढ़ता में बदलता गया और समान अभिरुचियों के कारण हम एक दूसरे के निकट आते चले गये। जब डॉ० आत्माराम जी सी.एस.आई.आर. के महानिदेशक बनकर दिल्ली आये और उन्होंने भारतीय भाषाओं में प्रकाशित विज्ञान पत्रिकाओं को प्रोत्साहन देने के लिये इन पत्रिकाओं के संपादकों की एक समिति बनाई तो उसके पहले सचिव, जहां तक मुझे याद है, शिवगोपाल मिश्र जी ही बनाये गये थे। इसके संस्थापक सदस्य के रूप में इन्हें और भी निकट से जानने का मौका मिला। यह संस्था सी.एस.आई.आर. के अंतर्गत ही कार्य करती थी और इसकी आर्थिक सहायता से हिन्दी की अनेक विज्ञान पत्रिकाओं को खाद-पानी मिला और वे पल्लवित हुईं। मुझे इनमें से उदयपुर से प्रकाशित 'लोक विज्ञान', आगरा से प्रकाशित 'विज्ञान लोक' और इलाहाबाद से प्रकाशित 'विज्ञान जगत' की याद है। इस समिति की ओर से दी गयी सहायता से ही मलयालम में 'केरल शास्त्र साहित्य परिषद्' द्वारा तीन पत्रिकायें प्रकाशित की गईं-शास्त्र गति, शास्त्र केरलम् तथा 'यूरेका'। मलयालम की पत्रिकायें तो जल्दी ही स्वावलम्बी हो गईं, लेकिन हिन्दी की उपर्युक्त तीनों पत्रिकायें कुछ समय तक प्रकाश फैला कर सद्गति को प्राप्त हो गईं। इसे हिन्दी जगत का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा।

जब दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने श्रद्धेय गोपाल प्रसाद व्यास के प्रधानमंत्री काल में विज्ञान लेखन को प्रोत्साहन देने के लिये मुझे 'वैज्ञानिकी' नामक मासिक विचार गोष्ठी का संयोजक बनाया तो डॉ० आत्माराम जी की प्रेरणा से उसकी वार्षिक गोष्ठी 'विज्ञान साहित्य सम्मेलन' के रूप में शुरू की गई। इस सम्मेलन में भारतीय भाषाओं के विज्ञान लेखकों को सम्मानित करने का निर्णय भी किया गया। इसमें स्व० स्वामी सत्यप्रकाशानंद जी का सम्मान किया गया और फिर डॉ० शिवगोपाल मिश्र का। और भी अनेक वरिष्ट गण्यमान्य लेखक इस सम्मेलन में अभिनंदित हुये थे। इनमें प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा, प्रो० ब्रजमोहन, प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव, श्री सुरेश सिंह, डॉ० हरसरन सिंह विश्नोई, श्री रमेश चन्द्र प्रेम, श्री हरीश अग्रवाल इत्यादि शामिल थे। उस समय शिवगोपाल जी ने अपने विज्ञान

लेखन संबंधी संस्मरण सुनाये थे और तब पता चला कि वे किस तरह विज्ञान परिषद् से जुड़े और उसके अभिन्न अंग बन गये।

फिर मुझे सन् १९८० में हिन्दी में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक रचना 'प्रकृति से छेड़छाड़ क्यों' के लिये विज्ञान परिषद् ने डॉ० गोरख प्रसाद पुरस्कार से सम्मानित किया और मैं प्रयाग गया। मिश्र जी के घर ही रुका था और उनके परिवार से परिचय हुआ। वे सब मेरे विज्ञान लेखन, 'कृषि दर्शन' के मेरे कार्यक्रम तथा आकाशवाणी से प्रसारित मेरी विज्ञान वार्ताओं से भली-भांति परिचित थे। घर का वातावरण पूरी तरह साहित्यिक था- सबके सब साहित्य-रसिक और विज्ञान लेखन तथा विज्ञान पत्रकारिता के लिये सम्मान भाव से ओतप्रोत थे। तब मुझे लगा कि किस तरह पारिवारिक सहयोग के कारण शिवगोपाल जी 'विज्ञान परिषद्' और 'विज्ञान' के माध्यम से हिन्दी की इतनी सेवा कर पा रहे हैं।

यही सेवाभाव मिश्र जी को दिल्ली खींच लाया। यहां सी.एस.आई.आर. के प्रकाशन निदेशालय में उन्हें 'भारत की सम्पदा' विश्वकोश का संपादन करने के लिये विशेष अधिकारी नियुक्त किया गया था। वहीं पास में ही वेस्ट पटेल नगर में उन्होंने किराये पर घर लिया। उन्होंने बड़ी तेजी से काम किया। ऐसी तेजी दिल्ली के सरकारी कर्मचारियों में विरले ही देखने को मिलती है। यों तो श्रद्धेय सत्यप्रकाश जी ने ही 'वेल्थ ऑफ इण्डिया' के अंग्रेजी खण्डों के अनुवाद के लिये अनुवादकों की एक नामिका बनाने के लिये मुझसे नाम मंगवाये थे और मुझे याद है कि मैंने कोई तीसेक नाम भिजवाये थे। इस तरह अनुवाद का काम काफी पहले से चल पड़ा था लेकिन विभिन्न व्यक्तियों द्वारा किये गये अनुवाद में भाषा-शैली और शब्दावली की एकरूपता लाना बड़े ही संपादकीय जीवट का काम है। यह काम शिवगोपाल जी ने अपने यश के अनुरूप बखूबी निभाया और जब वे डॉ० आत्माराम जी 'भारत की संपदा' के सहायक सम्पादक श्री तुरशनपाल पाठक के साथ श्रीमती इंदिरा गांधी को 'भारत की संपदा' का प्रथम खंड भेंट करने गये तो श्रीमती गांधी ने डॉ० आत्माराम जी से कहा था कि कुछ समय पहले ही तो आपने इस काम को शुरू करने की बात कही थी और आपने तो बड़ी जल्दी ही पहला खण्ड छाप भी दिया। और तब उदारमना आत्माराम जी ने इसका श्रेय तुरंत शिवगोपाल जी की मेहनत और लगन को दिया।

दिल्ली की भागम-भाग भरी जिंदगी और भीड़-भाड़ से प्रयाग के शांतिमय समरस जीवन का आदी मिश्र परिवार जल्दी ही ऊब गया और वे हम सबकी अनुनय-विनय को ठुकरा कर ओ.एस.डी. की नौकरी को लात मार वापस इलाहाबाद लौट आये। मुझे अवश्य यह सौभाग्य मिला कि मिश्र जी के दिल्ली प्रवास के दौरान हम दोनों के परिवार भी निकट आये और प्रायः आना-जाना और मिलना-जुलना होता रहा।

अपने कार्य और परिवार में प्रायः लोग संतुलन नहीं रख पाते। श्रीमती मिश्र की भले ही शिकायत रही हो लेकिन मैंने देखा कि शिवगोपाल जी पारिवारिक दायित्वों के प्रति भी पूरी तरह सचेत थे। यही कारण है कि उनकी संतानें एक से बढ़कर एक अपने चयनित क्षेत्रों में आगे बढ़ती रहीं। हालांकि इसमें श्रीमती मिश्र का भी विशेष योगदान है, जो अपने अध्यापन कार्य के बावजूद घर की बागडोर कसकर थामे रहीं। दुख के समय श्री मिश्र-दम्पति 'सुख दुःखे समे कृत्वा' के कर्मयोग को किस तरह निभाते हैं, यह मैंने उनकी निकटता से जाना और थोड़ा बहुत सीखा। जब विभा बिटिया की आंखों की रोशनी अचानक बुझती चली गई और वह अपने इलाज के लिये दिल्ली आई तो मेरे घर ही रुके। मैं और मेरी पत्नी गीता तो इतने दुखी हो गये कि विभा को देखते ही हमारी आंखों में आंसू आ जाते थे कि इतनी होनहार, सौम्य और सुंदर कन्या पर यह कैसा वज्रपात हुआ। ऑल इण्डिया मेडिकल इन्स्टीट्यूट के न्यूरोसर्जरी विभाग में उसकी जांच-पड़ताल के बाद इलाज शुरू हुआ और इस संकट को मिश्र-दम्पत्ति ने बड़े साहस के साथ झेला। मेरी बेटी आस्था की तो विभा के साथ अच्छी मित्रता हो गई थी और विभा उसके साथ खूब घुल मिल गई थी। मेरा बेटा अनुराग भी विभा की प्रतिभा का बड़ा कायल था। वह यह देखकर भी दंग था कि अपने कष्ट को विभा किस तरह हँस कर सह

रही थी। आज उसकी सहनशीलता ही उसे डाक्टरेट के बाद अध्यापन के क्षेत्र में यश अर्जित करने का अवसर दे रही है। ऐसे बच्चे तो दूसरों के लिये प्रेरणा के स्रोत होते हैं बिल्कुल वैसे ही जैसे कि हमारे प्रेरणास्रोत मिश्र जी रहे हैं।

सन् १९८३ में स्तरीय विज्ञान-लेखन-सम्पादन के लिये अनेक विज्ञान-साहित्यकारों का अभिनंदन विज्ञान परिषद् ने किया था। इस पंक्ति में मुझे भी शामिल किया गया और विज्ञान के एक विशेषांक में हम सब का सचित्र परिचय प्रकाशित किया गया (सितम्बर १९८३)। इनमें डॉ० आत्माराम, श्री जगपति चतुर्वेदी, डॉ० नंदलाल सिंह, डॉ० सन्त प्रसाद टण्डन, डॉ० ब्रजमोहन, प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव, डॉ० रामचरण मेहरोत्रा, डॉ० हीरालाल निगम, श्री रामेश बेदी, श्री श्याम सरन अग्रवाल "विक्रम" तथा श्री ओंकार नाथ शर्मा शामिल थे। मेरे अभिनंदन पत्र में मिश्र जी ने मेरे बारे में अतिशयोक्ति ही कर डाली थी कि "हिन्दी में विज्ञान लेखकों की एक पूरी पीढ़ी उन्हीं से प्रेरणा लेकर तैयार हुई और उन्होंने हिन्दी के विज्ञान लेखन को अपूर्व साहित्यिक गरिमा दी है। अगर कभी हिन्दी में विज्ञान लेखन का इतिहास लिखा गया तो उसमें 'रमेश दत्त शर्मा युग' का उल्लेख अलग से करना होगा।"

असल में ये पंक्तियां स्वयं शिवगोपाल जी के लिये उपयुक्त हैं। और मैं बड़ी श्रद्धा के साथ ये आशीर्वचन उनको ही समर्पित करता हूं कि "त्वदीयं वस्तु गोविंदं, तुभ्यमेव समर्पयामि"।

जब दिल्ली में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अंतर्गत वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रचार प्रसार के लिये 'एन सी एस टी सी' (नेशनल कौंसिल ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी कम्यूनिकेशन) शुरू हुई, तो उसके संस्थापक-संचालक डॉ० नरेन्द्र सहगल को विज्ञान परिषद् के कार्यकलापों से परिचित कराने का सौभाग्य मुझे ही प्राप्त हुआ। जब इक्कीसवीं सदी के आगमन का शोर होने लगा तो मेरा ही सुझाव था कि पिछले एक सौ वर्षों में विज्ञान के क्षेत्र में क्या कुछ लिखा गया है, इसका सर्वेक्षण किया जाना चाहिये। सहगल जी को सुझाव भा गया और हिन्दी में इसका दायित्व शिवगोपाल जी को ही सौंपा गया। उन्होंने एक युवा डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय को प्रयाग, वाराणसी और कलकत्ता के राष्ट्रीय पुस्तकालय को छानने की जिम्मेदारी सौंपी और तब हमें पता चला कि सर्वेक्षण तो पूरे डेढ़ सौ वर्षों का हो गया है और इस अवधि में प्रकाशित वैज्ञानिक लेखों की संख्या तीन हजार से ऊपर है। फिर चुनिंदा लेख प्रकाशित करने की योजना बनी। इसी पुस्तक के संपादन के सिलसिले में मिश्र जी पिछले दिनों दिल्ली आये थे और हर बार की तरह आते ही उन्होंने मुझे फोन किया। मिलना नहीं हो पाया, क्योंकि वे विज्ञान प्रसार और वैज्ञानिक शब्दावली आयोग के बीच हिन्दी के विज्ञान साहित्य की नई दिशा देने के अपने अनवरत ज्ञान-यज्ञ में समय की आहुति देने में मग्न थे।

अपने इस अग्रज विज्ञान साहित्यकार को मैं शत-शत नमन करता हूं और यह शुभकामना करता हूं कि वे चिरायु हों। अब जब मानव-जीनोम की खोज हो चुकी है और आदमी की कलम लगाई जा सकती है तो मैं चाहूंगा कि शिवगोपाल जी के असंख्य क्लोन बनाये जायें ताकि विज्ञान के अगाध सागर से हिन्दी में अभी बूंद बराबर साहित्य ही रचा गया है, वह अगणित शिवगोपालों द्वारा महासागर में बदल दिया जाये।

पूर्व निदेशक
कृषि प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
नई दिल्ली

कार्यों के धनी : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

तुरशन पाल पाठक

बात १६७१ की है, उन दिनों मैं वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली में कृषि शब्दावली की रचना में संलग्न था। यूँ तो विज्ञान लेखन का कार्य विद्यार्थी जीवन से ही छुटपुट तौर पर करता रहता था, उसी क्रम में मेरी 'कृषि प्रसार' और 'पादप रोग विज्ञान' विषयों पर स्नातक स्तर की पुस्तकें हिन्दी माध्यम से प्रकाशित हो चुकी थीं। डॉ० आर.वी. तम्हाणे, डी.पी. मोतीरमानी, वाई.पी. बाली और राय एल. डोनाहू की पुस्तक 'साइल्स-देयर केमिस्ट्री एण्ड फर्टिलिटी इन ट्रापिकल एशिया' का भारत अमेरिका सहयोग की संयुक्त मानक पुस्तक प्रकाशन योजना के अंतर्गत हिन्दी रूपान्तरण का कार्य भी मैं निजी तौर पर पूरा कर चुका था। यह पुस्तक 'मिट्टियाँः उष्ण कटिबंधीय एशिया में उनका रसायन तथा उर्वरता' शीर्षक से प्रेंटिस हाल आफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित और थामसन प्रेस लिमिटेड, फरीदाबाद, हरियाणा से मुद्रित होकर आ चुकी थी। मेरे ऐसे कार्य मुझे सी.एस.आई.आर. की 'भारत की सम्पदा-वैज्ञानिक विश्वकोश' के सम्पादन के कार्य में वैज्ञानिक-बी (सहायक सम्पादक), भारत की सम्पदा, के पद पर पहुँचाने में सफल हुये। डॉ० शिवगोपाल मिश्र राष्ट्रीय स्तर के इस महान कार्य के लिये विशेष कार्य अधिकारी थे और उन्हीं की देख रेख तथा सम्पादकत्व में यह कार्य सम्पन्न हो रहा था। यह मेरा सौभाग्य था कि मेरे कार्य मुझे सहृदय कठोर प्रशिक्षक डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के सान्निध्य में ले आये। तब से आज तक इनका स्नेह और वरदहस्त मुझे अविरल प्रोत्साहित और प्रोन्नत करता रहता है।

शब्दावली आयोग में तो वैज्ञानिक शब्दों की रचना में अनेक पहलुओं से विचार-विमर्श के बाद बड़ी सावधानीपूर्वक, समूचे देश के हिन्दी विज्ञान जगत को ध्यान में रखकर कार्य को धीरे-धीरे आगे बढ़ाया जाता था। मैं लगभग नौ वर्षों से इसी रीति-नीति से कार्य करने का अभ्यस्त भी था। लेकिन डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के पास 'भारत की सम्पदा : प्राकृतिक पदार्थ' वैज्ञानिक विश्वकोश के अनुसंधानपरक कार्य को जल्दी निपटाने की कार्यप्रणाली थी और वे इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर कार्य पूरा करने में जुटे हुये थे। यह मेरे लिये एक नया अनुभव था। इस समय 'भारत की सम्पदा' के दस खण्ड और दो पूरक प्रकाशित हो चुके हैं।

मैंने जब डॉ० मिश्र जी के पास ज्वाइन किया था उस समय 'भारत की सम्पदा' का पहला खण्ड सरस्वती प्रेस कलकत्ता में था और इसके संपादन तथा प्रूफ देखने का कार्य तेज गति से चल रहा था अतः मिश्र जी ने मुझे भी इसी कार्य पर लगा दिया था। वे इसे शीघ्र प्रकाशित कर उस समय की प्रध ानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी से विमोचित कराना चाहते थे जिससे इस कार्य को गौरव मिले और जनमानस को यह संदेश मिले कि हिन्दी भाषा में भी भारत के प्राकृतिक पदार्थों पर प्रामाणिक वैज्ञानिक

विश्वकोश तैयार किये जा सकते हैं।

जिस व्यक्ति के मन में हिन्दी विज्ञान की राष्ट्रीय भावना हो वह सरकारी तंत्र की घिसी-पिटी कार्यप्रणाली से बँधा हुआ नहीं होता है कि नौ बजे दफ्तर खुलेगा, एक बजे लंच होगा और पांच बजे दफ्तर बंद हो जायेगा, इसमें जो कार्य हो जाये सो हो जाये, बाकी कल देखेंगे आदि-आदि। डॉ० मिश्र जी तो सही और व्यवहारिक तौर पर चौबीसों घंटों के विशेष कार्य अधिकारी थे। वे दफ्तर आते ही जोर-शोर से कार्य पर लग जाते थे और मुझे भी अपनी मेज के सामने बिठाकर ढेर सारा कार्य दे देते थे। साथ ही यह भी कहते थे कि आज इसे पूरा करके ही जाना है। मैं काम लेकर अपने कमरे की ओर जाने लगता था तो कहते थे कि वहाँ कहाँ जा रहे हो, वहाँ काम थोड़े ही होगा, वहाँ तो गप्पें होंगी। यहीं मेरी ही मेज पर बैठकर काम करो तभी पूरा हो पायेगा और बस हम उन्हीं के साथ बैठकर काम में जुट जाते थे। बीच-बीच में थकान भगाने के लिये मनोविनोद भी होता रहता था। फिर भी जब वे देखते थे कि हमें थकान होने लगी है तो तुरंत चाय-पान की व्यवस्था करते थे और मिल जुलकर चाय पान करने के बाद कार्य फिर तेज गति से चल पड़ता था।

दिल्ली के वातावरण में मुझे उन दिनों गैस, सिरदर्द और मिचली का शिकायत रहने लगी थी, जब ऐसा होता था तो काम में मन नहीं लगता था, जी आराम करने को करता था लेकिन 'भारत की सम्पदा' शीघ्र प्रकाशित होकर प्रधानमंत्री द्वारा विमोचन के लिये जानी थी सो मैं अस्वस्थ होने पर भी कार्य सम्पन्न करने हेतु कार्यालय आ गया था, रोजाना की तरह ढेर सारे कार्य लेकर डॉ० मिश्र जी के पास बैठकर उसे सम्पन्न करने लगा, पर मेरा मन नहीं लग रहा था। जाने कैसे डॉ० मिश्र जी ने मेरी स्थिति को भांप लिया और उन्होंने दराज खोलकर सिरदर्द और मिचली आदि की गोलियां निकाल कर मेरी ओर बढ़ाते हुये बोले, लो पाठक जी ! इन्हें ताजे पानी के साथ ले लो और काम पर लग जाओ। मैंने ऐसा ही किया और मन ही मन बड़बड़ाता रहा कि कैसा कठोर बॉस है जो गोलियां खिला खिला कर काम कराता है। यदि आज मुझे छुट्टी दे देता तो कोई आसमान तो नहीं टूट पड़ता, अरे ! तरोताजा होकर कल आता तो काम भी खूब अच्छी तरह निपटा लेता आदि आदि। जब मैं ऐसा सोच रहा था कि तभी वे बड़े प्यार से बोल पड़े "पाठक जी! अब दर्द का क्या हाल है" मैंने कहा पहले से कुछ कम हो गया है। उन्होंने कहा "देखो भाई ! दवा गोली अपनी जगह है। काम में जुटे रहोगे तो आधा दर्द तो वैसे ही भाग जायेगा, मेहनत से काम करते रहोगे तो कल अच्छे सम्पादक बनोगे" सुनते ही जी अनायास कुछ और भी हलका होने लगा, मेरे हाथ सम्पादन की ओर दौड़ने लगे ओर मैं भी उन्हीं की तरह काम में खो गया। दर्द कब गायब हुआ, यह कुछ पता ही नहीं चला।

-दफ्तर बंद होने के समय के अनुसार कमरा और बिजली बंद करने वाला आ जाता था। पर वे कार्य में लगे ही रहते थे और जो कार्य पूरा नहीं हो पाता था उसे थैले में रखकर घर लेकर चले आते थे और अगले दिन उसे पूरा करके दफ्तर ले आते थे। इसी क्रम से 'भारत की सम्पदा' का कार्य आगे बढ़ता रहता था।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र के नेतृत्व में कठिन मेहनत के बाद सरस्वती प्रेस, कलकत्ता से 'भारत की सम्पदा' का पहला खण्ड प्रकाशित होकर आया तो इस विश्वकोश के प्रधान संपादक डॉ० स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती, सी.एस.आई.आर. के महानिदेशक डॉ० आत्माराम एवं संपादक डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी ने इस प्रथम खंड को इंदिरा जी को भेंट किया तथा प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने

प्रसन्नतापूर्वक अपने आवास पर ही 'भारत की सम्पदा' का विमोचन किया था।

अगला दिन 'भारत की सम्पदा' परिवार एवं हिन्दी विज्ञान लेखकों के लिये निश्चय ही खुशी का अवसर था क्योंकि श्रीमती इंदिरा गांधी जी के श्रीमुख से की गई 'भारत की सम्पदा' विश्वकोश की प्रशंसा का उल्लेख सभी संचार माध्यमों एवं अखबारों आदि से सचित्र देखने और सुनने को मिल रहा था। इस तरह निश्चित समय में कार्य पूरा कर देश को सौंपने और हिन्दी की विज्ञान जैसे दुरूह विषय को अभिव्यक्त करने की क्षमता सिद्ध करने का डॉ० मिश्र जी का सपना साकार हुआ तो परिश्रम की महिमा का हमें भी आभास हुआ। मैं आज भी कठिन परिश्रम के सिखाये गये पाठ के लिये डॉ० मिश्र जी का आभारी हूं। यह उन्हीं के द्वारा दिये गये कठोर प्रशिक्षण का प्रतिफल है कि मैं सरल या कठिन, जल्दी के या देर के, अति अर्जेन्ट या तात्कालिक महत्व के सभी कार्य सम्पन्न करके यदा कदा प्रशंसा का पात्र बना रहता हूं।

सरकारी तंत्र तो डॉ० मिश्र जी को पसंद नहीं आया था, काम कम, लिखा पढ़ी ज्यादा से वे खिन्न रहते थे, सामान्य कार्यालयी आवश्यकताओं के लिये वे सरकार का मुंह ताकने के बजाय अपनी जेब से खर्च करके उन्हें तुरंत उपलब्ध कराने में रुचि रखते थे ताकि काम रुकने के बजाय चलता रहे। पर सरकारी तंत्र में सरकारी तंत्र ही चलता है अतः वे 'भारत की सम्पदा' के कुछ खण्ड निकाल कर इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद को अध्यापन कार्य की ओर वापस चले गये। काश ! वे और अधिक रहते तो मुझे और अधिक उनसे सीखने, समझने को मिलता पर ऐसा नहीं हो सका।

डॉ० आत्माराम राष्ट्रभक्ति और राष्ट्रभाषा प्रेम दोनों के लिये सी.एस.आई.आर. के समर्पित महानिदेशक माने जाते हैं। उन्हीं की पहल पर 'भारत की सम्पदा' के अतिरिक्त भाषाओं की विज्ञान पत्रिकाओं को प्रोत्साहन देने का कार्य भी प्रारंभ हुआ था। सी.एस.आई.आर. मुख्यालय में 'भारतीय विज्ञान पत्रिका समिति' का गठन किया गया था जिसकी देख-रेख में हिन्दी सहित भारत की सभी भाषाओं में ज्ञान विज्ञान आम आदमी तक सुलभ कराये जाने की व्यवस्था थी और आर्थिक विपन्नता की मारी विज्ञान पत्रिकाओं को सहायता देकर उन्हें प्रोत्साहित तथा प्रोन्नत करना था। डॉ० शिवगोपाल जी सी.एस.आई.आर. में इस समिति के सचिव के पद पर प्रतिष्ठित किये गये थे। इस समिति में किसी न किसी भाषायी विज्ञान पत्रिका के संपादक सदस्य ही होते थे। डॉ० मिश्र जी कई वर्षों तक इस समिति के सचिव की हैसियत से कार्य करते रहे। विज्ञान परिषद् प्रयाग से प्रकाशित 'विज्ञान' और 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' के अतिरिक्त उदयपुर से प्रकाशित 'लोक विज्ञान', आगरा से प्रकाशित 'विज्ञान लोक' आदि को भी प्रकाशन हेतु वित्तीय सहायता मिलती थी। विज्ञान पत्रिकायें तेलुगू, तमिल, मलयालम, कन्नड़, मराठी, गुजराती, बंगला, उड़िया तथा असमिया आदि भाषाओं में भी प्रकाशित हो रही थीं, इन सभी को वित्तीय सहायता मिलने लगी थी और जनमानस को अपनी-अपनी भाषाओं में विज्ञान का ज्ञान मिलने लगा था। डॉ० मिश्र जी के बाद अन्य लोग सचिव बने जिनमें डॉ० रमेश दत्त शर्मा का कार्य उल्लेखनीय है। फिर कुछ नये सचिव पदासीन हुये और आज पता नहीं कि सी.एस.आई.आर. की यह 'भारतीय विज्ञान पत्रिका समिति' कहां खो गई है।

हिन्दी विज्ञान के कार्यों के अतिरिक्त यूं तो डॉ० मिश्र जी अन्य अनेक क्षेत्रों से जुड़े हैं लेकिन उनका एक पहलू सहृदयता, स्नेह और सेवा भाव का भी है। कभी कभी तो हम वयस्क लोगों को भी उनसे वात्सल्यमय प्यार का अनुभव होता है। अनेक बार इलाहाबाद से दिल्ली आते समय वे इलाहाबाद

स्टेशन तक छोड़ने आते हैं और रास्ते के लिये मौसमी फल, खासकर इलाहाबादी अमरूद रखना नहीं भूलते हैं।

अभी चार पाँच वर्ष पहले वे अपने पुत्र डॉ० आशुतोष मिश्र से मिलने पत्नी सहित अमेरिका गये थे। जाते आते समय उन्होंने मेरे यहां जनकपुरी नई दिल्ली पर ठहरने की कृपा की। दिल्ली से अमेरिका जाने आने वाले हवाई जहाज लगभग अर्धरात्रि के आसपास पालम हवाई अड्डे से आते जाते हैं। दिल्ली में यह अड्डा मेरे निवास के कुछ पास भी है। हालांकि 'आविष्कार' के पूर्व संपादक श्री डी. एन. भटनागर दिल्ली में कुछ अधिक दूरी पर रहते हैं लेकिन डॉ० मिश्र जी ने स्नेहपूर्वक हम दोनों की सेवायें हवाई अड्डा जाने आने हेतु स्वीकार की थीं। जब वे लौट कर आये तो उन्हें सफर की थकावट थी, लेकिन दिल्ली में उनके शुभ चिंतकों, प्रकाशकों के उनके लिये फोन तथा स्वयं आना प्रातः से ही प्रारंभ हो गया था। वे सबसे मिलते और बात करते ही रहते थे, प्रभात प्रकाशन की ओर से तो संभवतः निराला पर उनकी पुस्तक के पृष्ठों का पुलंदा आ गया था। वे अथक परिश्रम के साथ उन्हें भी निपटाने में जुट गये थे। इस तरह मेरा घर उनकी कृपा से कुछ समय के लिये दिल्ली के हिन्दी विज्ञान लेखकों-प्रकाशकों का एक सुखद केन्द्र सा बन गया था, जो मेरे लिये एक तरह से डॉ० मिश्र जी की कृपा का ही अवसर था। इतना ही नहीं, दिल्ली में भौतिक वस्तुओं की हालांकि कमी नहीं है फिर भी वे अमेरिका से मेरे लिये कमीज, मेरी पत्नी के लिये गाउन और मेरे नाती के लिये बेबी सूट लाना नहीं भूले। उनकी ऐसी स्नेहिलता से मेरे परिवारियों को ऐसा आभास होता रहता है कि हमारा भी कोई हितैषी, दिल्ली में न सही कम से कम इलाहाबाद में तो बैठा है।

जोधपुर में रक्षा अनुसंधान प्रयोगशाला में हिन्दी विज्ञान और तम्बाकू के सेवन पर कार्यशाला प्रायोजित की गई थी, देश भर के विशेषज्ञ आये थे, सब काफी व्यस्त थे। मेरी अचानक तबीयत खराब हो गई थी, रेलगाड़ी में रिजर्वेशन था, दिल्ली आना भी जरूरी था, यह बात जानते ही वे मेरे स्वास्थ्य लाभ और गाड़ी पकड़वाने की युक्ति में जुट गये थे, मुझे सकुशल गाड़ी में बिठाया था और गाड़ी चलने से पहले गर्मी से आराम दिलाने के लिये प्लेटफार्म पर दौड़ दौड़ कर ठण्डा पिलाना और रास्ते के लिये अखबार में लपेट कर नाश्ता रखना नहीं भूले। मानवता के उनके ऐसे अनेक अवसर मेरे साथ आये हैं जो स्मरणीय रहेंगे।

भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर में सेमिनार था। डॉ० मिश्र जी पत्नी और बिटिया सहित वहां आये थे। सेमिनार अपनी जगह था, मैसूर किला और वृंदावन गार्डन तो अनेक बार देखा था, हर बार ऊटी जाने की बात किसी न किसी तरह रह जाती थी, मैंने ऐसा ही उल्लेख डॉ० मिश्र जी से कर दिया था। बस बात बन गई, डॉ० मिश्र जी के सम्पर्कों से सभी व्यवस्थायें हो गईं और मझोली बस से ऊटी का पर्यटन बड़े ही सुखद वातावरण में सम्पन्न हुआ। डॉ० मिश्र जी के पास कैमरा भी था अतः ऊटी के बाटनीकल गार्डन सहित अनेक अन्य स्थानों पर चित्र खींचे गये जिनकी प्रतियाँ डॉ० मिश्र जी ने इलाहाबाद पहुँच कर हमें भेजी थीं। आज ये चित्र उनके परिवार के साथ स्नेहिल पर्यटन यात्रा के प्रति यादगार बन गये हैं।

सन् १९७२ में डॉ० मिश्र जी 'भारत की सम्पदा' के कार्य के कारण पश्चिमी पटेल नगर, नई दिल्ली में रहते थे। यह स्थान उनके कार्यस्थल के पास ही था। गणतंत्र दिवस २६ जनवरी का अवसर था, उनकी पत्नी और बच्चे भी दिल्ली आये हुये थे। हवाई जहाजों का एक दस्ता जब इण्डिया गेट पर

करतब दिखाते हुये सलामी लेते हुये आकाश में तिरंगा झण्डा बना रहा था तभी उस दस्ते में एक जहाज उनसे अलग हो गया था और बुद्ध जयंती पार्क में गिरकर दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। जब जांच पड़ताल के बाद यह दुर्घटना स्थल आम जनता के लिये खोल दिया गया था तो लोगों की भीड़ का वहां मेला सा लग गया था। दिल्ली घूमने के उद्देश्य से डॉ० मिश्र जी के परिवार के साथ मैं भी था, जब हम लोग भी बुद्ध जयंती पार्क पहुंचे तो लोग हवाई जहाज के टुकड़े, जो चारों तरफ बिखरे पड़े थे, में से कोई छोटा सा अंश यादगार स्वरूप रखने के लिये खोजबीन में लगे थे। देखादेखी हमने भी कुछ टुकड़े खोज लिये। बच्चों में कौतूहल था। डॉ० मिश्र जी ने कहा, इनका क्या करोगे तो हमने जैसा सभी वहां कह रहे थे, यादगार स्वरूप घर पर उस टुकड़े को रखने की बात दोहरा दी थी। इस पर डॉ० मिश्र जी ने कहा था "इन टुकड़ों को यादगार बनाकर क्या होगा, हवाई जहाज तो यदा कदा गिरते ही रहते हैं, थोड़े ही दिनों में लोग भूल जाते हैं, तुम लिखने पढ़ने वाले व्यक्ति हो कुछ ऐसा काम करो जिससे तुम्हारा साहित्य या कार्य पुस्तकालयों में सुरक्षित हो जाये। सबसे बड़ी यादगार तुम्हारे लिये तुम्हारा साहित्य ही हो सकता है, लोग भूलना चाहेंगे तो भी नहीं भूल सकेंगे। हो सकता है नई पीढ़ियाँ भी याद करें।"

डॉ० मिश्र की यह बात अगर मैं कहूं कि एक तरह से कालजयी सत्य है तो अतिशयोक्ति न होगी। मैं समझता हूं कि उनके द्वारा प्रारंभ किया गया 'भारत की सम्पदा' प्राकृतिक पदार्थ, वैज्ञानिक विश्वकोश का कार्य ऐसा ही एक यादगार कार्य है जिससे सौभाग्यवश डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के साथ स्वयं मैं भी जुड़ा हुआ हूं। उनके स्नेह, प्रेम, शिक्षण-प्रशिक्षण तथा समय समय पर मार्गदर्शन के लिये मैं डॉ० मिश्र जी का आभारी हूं और ईश्वर से कामना करता हूं कि डॉ० मिश्र जी ने भावी योजना के रूप में- हिन्दी में विज्ञान लेखन के इतिहास पर शोधपरक ग्रंथ लिखने का जो भी साहित्य लिखा रचा गया है उसके मूल्यांकन किये जाने का विचार समय समय पर प्रकट किया है- वे स्वस्थ रहें और उनकी देख़ रेख में हम सबके सहयोग से पूरा हो जाय, तो यह भी एक चिर-स्मरणीय कार्य होगा।

सी-४-एच/५६, जनकपुरी
नई दिल्ली- ११००५८

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : हिन्दी के विकास के लिये समर्पित व्यक्तित्व

प्रो० महावीर सरन जैन

इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के रसायन शास्त्र के सेवानिवृत्त प्रोफेसर तथा शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान के पूर्व निदेशक डॉ० शिवगोपाल मिश्र हिन्दी के विकास के लिये समर्पित हैं। उनकी हिन्दी के प्राचीन कृतियों के पाठ सम्पादन तथा हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन सामग्री सेवाओं का मूल्य अप्रतिम है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने एक ओर सुगम विज्ञान तथा बालकों के लिये वैज्ञानिक साहित्य के क्षेत्रों में प्रचुर कार्य किया है वहीं दूसरी ओर हिन्दी में विज्ञान विषयक, स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों और अनुसंधान के स्तरों पर प्रशंसनीय एवं अमूल्य लेखन कार्य किया है। आप विज्ञान परिषद् प्रयाग की मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के लम्बे समय से सम्पादक रहे हैं। आप लेखकों से विज्ञान लेखों को लिखवाने के लिये कितना परिश्रम करते हैं, यह मेरे लिये स्वानुभूत है। मैंने अपने गुरु डॉ० उदयनारायण तिवारी स्मृति व्याख्यानमाला के अन्तर्गत हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद में व्याख्यान दिया था। उस समय मैंने डॉ० शिवगोपाल मिश्र की प्रबंध पटुता, संकल्पशक्ति, अतिथि परायणता एवं सदाशयता का निकट से साक्षात्कार किया था। इसके बाद लेख मंगवाने, लेख का सारांश लिखने, लेख को प्रकाशित करने के लिये जिस निष्ठा भाव से उन्होंने कार्य किया उनकी वैज्ञानिक हिन्दी के विकास की भावना को एक अंश तक पहचान सका।

आप हिन्दी में विज्ञान पर प्रकाशित पत्रिकाओं और ग्रन्थ मालाओं के सम्पादन मण्डल से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे हैं। आपकी कई पुस्तकें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली से पुरस्कृत हुई हैं। हिन्दी में विज्ञान साहित्य के विकास के क्षेत्र में आपका योगदान सर्वविदित है।

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, भारत सरकार, आगरा द्वारा प्रतिवर्ष विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा के लिये विद्वानों को सम्मानित किया जाता है। 'आत्माराम पुरस्कार' हिन्दी में वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य और उपकरण विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिये प्रदान किया जाता है। चयन प्रक्रिया और सम्मान की दृष्टि से केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के पुरस्कारों का महत्व बौद्धिक जगत् में स्वीकृत है। वर्ष १९९३ से केन्द्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा हिन्दी सेवियों का सम्मान समारोह राष्ट्रपति भवन में आयोजित हो रहा है। महामहिम राष्ट्रपति जी के कर कमलों से हिन्दी सेवियों को पुरस्कृत एवं सम्मानित करने का समारम्भ तभी से आरम्भ हुआ। सन् १९९३ के लिये हिन्दी सेवियों को सम्मानित करने के लिये गठित चयन समिति ने 'आत्माराम पुरस्कार' के लिये सैकड़ों नामों पर विचार करने के अनन्तर सर्वसम्मति से १. प्रो० एम.जी.के. मेनन २. डॉ० शिवगोपाल मिश्र के नामों की संस्थान के मण्डल के अध्यक्ष तथा मानव संसाधन मंत्री को संस्तुति की। सम्मान-पुरस्कार समारोह में १४ सितम्बर १९९३ को भारत के राष्ट्रपति ने अपने कर कमलों से डॉ० शिवगोपाल मिश्र को 'आत्माराम पुरस्कार' से सम्मानित किया। उक्त अवसर की अनेक सुखद यादों के बिम्ब मानस-पटल पर दृश्यमान हो रहे हैं। मैं डॉ० शिवगोपाल मिश्र एवं उनके परिवार के सदस्यों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

निदेशक (सेवानिवृत्त), केन्द्रीय हिन्दी संस्थान
भारत सरकार, आगरा

विज्ञान और साहित्य के संगम : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

नरेश मिश्र

दारागंज की सड़क पर उन्हें देखा तो कई बार था, लेकिन उनसे रूबरू होने का मौका कभी नहीं मिला। महाप्राण निराला के सानिध्य में डॉ० शिवगोपाल मिश्र और उनके भाई जयगोपाल मिश्र अक्सर नज़र आते थे। उन्हें महाकवि का सहज स्नेह प्राप्त था। निराला जी अपने आप में एक प्रभामण्डल थे। उनके समकालीनों, प्रशंसकों और अनुयायी शिष्यों के बारे में अक्सर चर्चा होती रहती थी।

मैं उन दिनों कॉलेज का छात्र था। बचपन से ही साहित्य में रुचि होने के कारण मेरी उत्सुकता निराला जी के इई-गिर्द जमा होने वाली नक्षत्र मण्डली के लिये कुछ ज्यादा थी। मैं अक्सर सोचता था कि जो कलाकार, कवि, गायक और साहित्य मनीषी निराला जी के पास बैठने का मौका पाते हैं, वे सचमुच भाग्यशाली हैं। निराला एक क्रांतिकारी, कालजयी कवि थे। उनके स्नेहभाजनों का महत्व किसी भी तरह कम करके नहीं आंका जा सकता।

लम्बा अर्सा बीत गया। मैं अध्ययन समाप्त करके आकाशवाणी इलाहाबाद में नौकरी करने लगा। यहाँ मैं किसान भाइयों के 'पंचायत घर' नामक कार्यक्रम में एक पंच की भूमिका निभाता था।

इसी कार्यक्रम में बातचीत करने के लिये डॉक्टर शिवगोपाल मिश्र एक दिन आकाशवाणी स्टूडियो में आये। तब उनके पास बैठने और उन्हें नज़दीक से समझने का थोड़ा सा मौका मिला।

आकाशवाणी की दुनिया में वाचिक शब्दों का बड़ा महत्व होता है। वाचिक शब्द-स्पोकेन वर्ड-की बनावट और शैली लिखित शब्दों से काफी हद तक अलग होती है। जो भाषा पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं के लिये लिखी जाती है और जो आकाशवाणी से प्रसारित की जाती है उन दोनों के बीच एक बुनियादी फर्क है। आकाशवाणी का प्रसारण कोई किताब या मैगजीन नहीं है, जिसे आप एक बार में न समझ पायें तो दोबारा पन्ने पलट कर पढ़ लें। आकाशवाणी में वह जबान इस्तेमाल की जाती है, जिसे श्रोता एक ही बार में आसानी से समझ लें। प्रसारण की भाषा का यही मानदण्ड है। इस कसौटी पर ज्यादातर वार्तायें खरी नहीं उतरतीं। इन दिनों आकाशवाणी में वार्ताओं के लिये दिलचस्पी लगातार घटती जा रही है इसकी सबसे बड़ी वजह यही है कि आमतौर से वार्ताकार आकाशवाणी के लिये वाचिक शब्दों (स्पोकेन वर्ड्स) को लिखना नहीं जानते।

आकाशवाणी के सेवाकाल में मैंने गिने-चुने वार्ताकारों को ही इस कसौटी पर खरा पाया है। मुझे कांग्रेस के नेता उड़ीसा के पूर्व राज्यपाल स्वर्गीय विश्वम्भर नाथ पाण्डेय, पत्रकार स्वर्गीय मुकुन्ददेव शर्मा और बाल कृष्ण पाण्डेय जैसे कुछ ही नाम याद आते हैं, जिनकी प्रसारित वार्ता सुनकर संतोष होता था।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र की वार्ता का विषय मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाने से ताल्लुक रखता था। उन्होंने किसान श्रोताओं से बिल्कुल आत्मीय और सहज शैली में बात की। उन्होंने खेत की मिट्टी को अपनी वार्ता में सजीव कर दिखाया। वे मिट्टी की भौतिक संरचना और उसमें पाये जाने वाले तत्वों का विवेचन इतनी सरल शैली में कर रहे थे कि मुझे सचमुच अचरज होने लगा। एक वैज्ञानिक सिद्धान्त को असाक्षर, अंगूठाछाप किसानों की समझ में आने वाली शैली और भाषा में समझा देना मेरी नज़र में इस वार्ताकार की बहुत बड़ी कामयाबी थी। उस दिन पंचायत घर प्रोग्राम इतना अच्छा हुआ कि मैं आकाशवाणी से लौटते वक्त रास्ते भर यही सोचता रहा कि आकाशवाणी के सारे वार्ताकार डॉ० मिश्र की तरह तैयारी करके क्यों नहीं आते !

डॉ० मिश्र तब शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान इलाहाबाद के निदेशक और प्रोफेसर थे। पंचायत घर कार्यक्रम में वे समय समय पर वार्ता प्रसारित करते थे। जिस दिन उनका प्रोग्राम प्रसारित होता था, पंचायत घर कार्यक्रम निश्चित रूप से ज्यादा उपयोगी लगता था।

बाद में मैंने डॉ० मिश्र की इस कामयाबी का राज समझने का प्रयास किया। दरअसल उनकी ग्रामीण पृष्ठभूमि, खेती-बारी के लिये उनकी निष्ठा, लोक भाषा और संस्कारों से उनका लगाव और वैज्ञानिक सूत्र, सिद्धान्तों को सरल हिन्दी में समझाने की उनकी क्षमता ही इस कामयाबी की बुनियाद थी।

फतेहपुर जिले के नरौली गाँव में जन्मे डॉ० मिश्र श्रेष्ठ विज्ञानवेत्ता हैं। वे अपने कठोर श्रम, अध्यवसाय और निष्ठा के बल पर छात्र जीवन में हमेशा शिखर पर दिखाई पड़े। वे अपने ही बल-बूते अपना भविष्य बनाने में कामयाब हुये। एम.एससी. तक सभी परीक्षायें प्रथम श्रेणी में पास करने के बाद वे इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के रसायन विभाग में प्रवक्ता नियुक्त हुये।

डॉ० मिश्र ने अनेक पुस्तकें लिखीं। उनका सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होंने विज्ञान लेखन करके अपने समकालीनों और परवर्तियों को रास्ता दिखाया। हिन्दी में विज्ञान पढ़ने-पढ़ाने का दायरा आज भी बेहद संकुचित है। आजादी के पाँच दशक बाद भी विज्ञान शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही बनी हुई है।

डॉ० मिश्र ने हिन्दी में विज्ञान लेखन करके सही दिशा में कुछ कदम चलने का प्रयास किया। विज्ञान परिषद् सूत्र-संचालन उनके हाथ में आया तो उन्होंने इस संस्था की गतिविधियों का दायरा काफी हद तक बढ़ाने में योगदान दिया।

डॉ० मिश्र ने गम्भीर वैज्ञानिक विवेचनापरक पुस्तकें लिखी हैं। इसके साथ ही उन्होंने बालोपयोगी विज्ञान पुस्तकें लिखने में भी रुचि दिखाई है। उन्हें अपनी रचनाओं और उपलब्धियों के लिये कई पुरस्कार हासिल हो चुके हैं।

विज्ञान साहित्य और शोध के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान करने के साथ ही डॉ० मिश्र ने अपने साहित्यिक व्यक्तित्व को कभी छीजने नहीं दिया। उनके अंतर्मन में मजबूती से जगह बनाने वाला साहित्यकार बेदखल होने को कभी तैयार नहीं हुआ। जो डॉ० मिश्र निराला जी के पास बैठकर काव्य रस की चर्चा में समय गुजारते थे, जो साहित्यिक कृतियों को पढ़ने-सराहने का वक्त निकाल लेते थे वे अपनी इस प्रतिभा को बिसारने के लिये कभी तैयार नहीं हुये।

डॉ० मिश्र ने कुतुबन, मंझन, भीम, बिहारी, आलम और ईश्वरदास जैसे कवियों की रचनाओं

का सम्पादन किया। उन्होंने 'विज्ञानान्जलि' शीर्षक से एक काव्य संग्रह भी पाठकों के लिये प्रस्तुत किया। उन्होंने दो सौ से ज्यादा शोध-पत्र लिखे और बयालीस डी.फिल व तीन डी.एस-सी. शोध छात्रों का निर्देशन किया।

गम्भीर वैज्ञानिक विवेचन और सरस साहित्यिक चर्चा के दायरे में वे समान रूप से अपनी प्रतिभा और क्षमता का प्रदर्शन करने में समर्थ हैं। दरअसल विज्ञान और साहित्य की धाराओं को समानान्तर बहता देखकर अचरज होता है। ये धारायें एक दूसरे की पूरक नहीं हैं। वैज्ञानिक और साहित्यिक चिंतन की मनोभूमि भी समान नहीं है।

डॉ० मिश्र में विज्ञान और साहित्य की श्री वृद्धि करने की क्षमता है, तो इसे सरस्वती का विशेष वरदान ही माना जायेगा।

डॉ० मिश्र को काफी हद तक जानने और समझने के बावजूद वे मेरे लिये आज भी एक पहेली हैं। उनकी सहज मुस्कुराहट, उनका धीमे स्वर में बोलना, उनके अकाट्य तर्क सहज ही सम्पर्क में आने वाले का मन मोह लेते हैं। ऐसा सौम्य, शालीन और दृढ़ स्वभाव बड़े भाग्य से मिलता है।

मैं अक्सर सोचता हूँ कि डॉ० मिश्र कभी गुस्सा करते होंगे, तो वे कैसे लगते होंगे। मैं यह सवाल उन्हीं से पूछना चाहता हूँ। मुझे वक्त नहीं मिला, वरना मैं उनसे यह सवाल जरूर पूछता। अभी काफी वक्त है। हमारी यही शुभकामना है कि वे वैदिक ऋषियों की शुभाशंसा के अनुसार शतजीवी हों। वे जीवेम् शरदः शतम् श्रृणुयाम शरदः शतम्, प्रब्रवाम शरदः शतम् मंत्र को चरितार्थ करें। वे लेखन और चिन्तन के क्षेत्र में नये उन्मेष और नयी ऊर्जा के साथ अपने योगदान से बौद्धिक जगत् को आलोकित करें। वे अपनी अजातशत्रु मुस्कुराहट के साथ हमें हमेशा एक अच्छा इंसान बनने की प्रेरणा देते रहें।

नेह निकुंज कॉलोनी, बाघम्बरी गद्दी
भारद्वाजपुरम, इलाहाबाद

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : एक विराट व्यक्तित्व

सुभाष लखेड़ा

पिछले पच्चीस वर्षों के दौरान मैं जिन प्रतिभासम्पन्न, स्वनामधन्य विभूतियों के संपर्क में आया हूँ, उनमें डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी का नाम सर्वोपरि है। मुझे नहीं लगता है कि ऐसा निस्वार्थ और निश्छल स्नेह बाँटने वाला कोई अन्य व्यक्ति मैंने इस दौरान देखा होगा।

डॉ० मिश्र से मेरी मुलाकात सर्वप्रथम इलाहाबाद में विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम के दौरान हुई। आयु में पर्याप्त अन्तर, ज्ञान में पर्याप्त अन्तर तथा पद की दृष्टि से भी अन्तर होने के बावजूद डॉ० मिश्र ने मुझे प्रारम्भ में ही अपने अति निकट होने की स्थिति में ला खड़ा किया और न जाने मुझे क्यों ऐसा लगने लगा कि मैं उन्हें अब से नहीं, वर्षों से जानता हूँ।

उसके बाद फिर इलाहाबाद में, और तत्पश्चात् विभिन्न समयांतरालों के बाद उनसे कानपुर, दिल्ली, मुंबई, जोधपुर आदि नगरों में आयोजित विज्ञान लेखन से जुड़े विभिन्न समारोहों के दौरान भेंट करने का सौभाग्य मिलता गया।

जहाँ तक मुझे याद है, कि वर्ष १६८८ में जब मैं विज्ञान परिषद् के निमंत्रण पर इलाहाबाद पहुँचा तो मार्ग में ही मुझे तेज बुखार हो गया। इलाहाबाद पहुँचने पर डॉ० मिश्र ने ऐसे सभी उपाय किये जिनसे मुझे कम से कम परेशानी हो। उन्होंने अपने एक छात्र श्री पवन सिरोठिया को मेरी देखभाल की जिम्मेदारी सौंपी जिसे श्री पवन ने बखूबी निभाया। इतना ही नहीं, वे स्वयं भी जहाँ तक संभव था, अपने व्यस्त कार्यक्रम से समय निकालकर मेरी देखभाल करते रहे।

डॉ० मिश्र के एक अन्य गुण ने जो आजकल लगभग कम ही देखने को मिलता है, मुझे बहुत अधिक प्रभावित किया है। वह हमेशा इस बात का ख्याल रखते हैं कि उभरते हुये युवाओं को अधिक से अधिक मौका मिले। उनमें दूसरों की बात सुनने की और अपनी बात को समझाने की ऐसी अद्भुत क्षमता है कि उनके संपर्क में आते ही हर व्यक्ति उनके इन गुणों का स्वाद ग्रहण कर लेता है।

जोधपुर में आयोजित एक संगोष्ठी के समापन के बाद मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि डॉ० मिश्र कुछ प्रतिभागियों को विदा करने हेतु स्वयं रेलवे स्टेशन पर मौजूद हैं। किसी भी संगोष्ठी में वे यह ख्याल रखते हैं कि किसी को कोई भी असुविधा न हो।

जब कभी मैं उनके यानी डॉ० मिश्र के विषय में सोचता हूँ मुझे एक अद्भुत आनन्द मिलता है यह सोचकर कि आज के इस अर्थप्रधान और सच कहूँ तो स्वार्थप्रधान युग में मैं एक ऐसी विभूति को जानता हूँ जो सभी को स्नेह देते हैं, सभी को प्रेरणा देते हैं और सभी को आगे बढ़ने की कुंजी इस तरह से थमाते हैं कि किसी के भी अहं को चोट नहीं पहुँचती है।

बहुत मुश्किल होता है अपने से बड़ों की प्रशंसा करना। यह स्थिति तब और भी जटिल हो जाती

है जब डॉ० मिश्र जैसे विराट व्यक्तित्व के विषय में कुछ कहना हो। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि वह डॉ० मिश्र को दीर्घायु प्रदान करे ताकि मुझ जैसे लोग उनके स्नेह की शीतल छाया का आनन्द उठाते रहें। मैं पुनः कामना करता हूँ कि मुझे डॉ० मिश्र का मार्गदर्शन मिलता रहे।

अंत में मैं एक और बात कहना चाहूँगा कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र को मैंने कभी किसी पर क्रोधित होते नहीं देखा। जहाँ तक संभव है, डॉ० साहब विपरीत परिस्थितियों में भी मुस्कुराते रहते हैं। अपने से बड़ों का आदर कैसे किया जाता है यह भी उनसे बखूबी सीखा जा सकता है। श्रद्धेय (स्वर्गीय) स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी से डॉ० साहब को मैंने कानपुर आई०आई०टी० में आयोजित एक कार्यक्रम के दौरान बातचीत करते देखा था। उनकी विनयशीलता देखते ही बनती थी। यह विनयशीलता (विनम्रता) डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व को और अधिक विराट बनाती है।

वैज्ञानिक, डी.आर.डी.ओ.
७४६, सेक्टर-३, आर०के० पुरम
नई दिल्ली-११००२२

तराजू और बटखरों से परे : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

कैलाश गौतम

कभी-कभी ऐसा कोई बानक या सुयोग जुड़ता बनता है जिसके चलते कोई कोई अनेक धाराओं और परिस्थितियों में भी बेहद संतुलित और बेहद क्रियाशील दिखाई देता है, और उसका संतुलन और उसकी क्रियाशीलता दोनों संवेदनशील समाज में निरंतर चर्चा का विषय बने रहते हैं। ऐसे ही संतुलन, ऐसी ही क्रियाशीलता को ओढ़ने बिछाने वालों, उसे ही अपनी जिन्दगी का अहम हिस्सा मानकर जीने वालों और ऐसी ही सहजता को अपनी दृष्टि, अपनी सोच, अपनी भाषा, अपनी जिजीविषा और अपनी ऊर्जा बनाकर सामाजिकता निभाने वालों की श्रेणी में डॉ० शिवगोपाल मिश्र गिने गिनाये जाते हैं। वह जन्मना और कर्मणा दोनों स्तर पर इसी विशेषण के योग्य ठहरते हैं। ऐसा कहा जाता है कि व्यक्ति के निर्माण में इसके परिवेश का बहुत बड़ा हाथ होता है। सौभाग्य से डॉ० मिश्र को जो परिवेश मिला वह सचमुच ऐसा ही था। दरअसल इनका जो मूल है वह सचमुच बहुत ही ऊर्जावान और प्रेरक रहा है। आज से नहीं सदियों से। जनपद फतेहपुर की खागा तहसील का यमुना तट पर बसा दक्षिण पूर्वी भूभाग सांस्कृतिक एवं बौद्धिक दृष्टि से उदयन काल से ही इतिहास में चर्चित रहा है-कौशाम्बी के नाते। विशेष रूप से किशनपुर और उसके आस पास का पूर्वी इलाका। इकडला तो आज लहुरी काशी के रूप में जाना जाता है और किंवदंतियों के अनुसार तो महाभारत काल की भी कुछ महत्वपूर्ण घटनायें आस-पास घटित हुई हैं। बीरबल की राजधानी के रूप में भी इकडला चर्चित है। और इसी इकडला से थोड़ा हटकर बसा है डॉ० मिश्र का गांव नरौली। जिन दिनों सूबे की राजधानी कड़ा था उन दिनों भी यह इलाका अपनी सारस्वत पहचान बनाये हुये था और अग्रणी था। कृषि एवं पशुपालन प्रधान होने के कारण आर्थिक स्तर पर भी संपन्न था। फलों का सर्वाधिक उत्पादन इसी इलाके में होता था। समाज संवेदनशील था, जागरूक था और राग रंग से भरपूर था। हालांकि यह इलाका मिश्र जी के जन्म काल के बहुत पहले से ही अपने ऐसे गौरवशाली अतीत से कोसों दूर हो चुका था लेकिन एक कहावत कही जाती है न 'मुअलो हाथी तो नौ लाख' यही बात इसके संदर्भ में भी कही जाती है क्योंकि सभ्यता, संस्कृति, परंपरा को हम चटपट में नहीं मार सकते। इनके समाप्त होने में सदियों का समय लगता है। फिर भी ये पूरी तरह समाप्त नहीं होतीं। स्थूल से सूक्ष्म हो जाती हैं लेकिन रहती हैं। जैसे मिट्टी में मिलने के बाद भी सब कुछ मिट्टी नहीं होता, बहुत कुछ मिट्टी होने से बचा रहता है- शायद वही कहीं वनस्पतियों सा दिखाई देता है, कहीं उत्सवों पर्वों सा, कहीं मांगलिक सांस्कृतिक अनुष्ठानों सा और कहीं दिखाई देता है- टीलों सा, कंदराओं सा, समाधियों, चौरी-चौरों और आध्यात्मिक पारंपरिक प्रयोगों सा। ऐसे तत्व किसी जिज्ञासु को जल्दी छूते और प्रभावित करते हैं। इस जमीन पर खड़ा होकर यह बात मैं डंके की चोट पर कह सकता हूं कि डॉ० मिश्र के जिज्ञासु मन को निश्चय ही ऐसे तत्वों ने

कभी हौले से छुआ होगा, फिर मन मोह लिया होगा, फिर उनके सामने खुद को भी खोला होगा। तभी यह बानक बना होगा, यह सुयोग जुड़ा होगा, क्योंकि डॉ० मिश्र के कृतित्व और व्यक्तित्व में यहां की मिट्टी बोलती है। यहां का परिवेश बोलता है।

जिसकी बुनियाद इतनी पुख्ता होगी उसकी मंजिलें भी अपने पाये पर टिकी दिखाई देंगी। जाहिर है ऐसा जागरूक आदमी केवल भावनाओं में नहीं बहेगा बल्कि अपने बुद्धि विवेक पर भरोसा रखेगा और अपनी दृष्टि, अपनी सोच से काम लेगा। यही काम डॉ० मिश्र ने भी किया। 'सार सार को गहि रहै थोथा देइ उड़ाय' जैसी मानसिकता से जिन्दगी जीने वाले परंपरा को विज्ञान की कसौटी पर कसने परखने वाले, यंत्रों मशीनों की उपादेयता को साहित्य संगीत की जमीन देने वाले और अपनी परेशानियों संघर्षों को परे ठेलकर दूसरों के बीच अपनी अनिवार्यता को प्राथमिकता देने वाले डॉ० मिश्र का कोई सानी नहीं है। जैसा रचनाकार पक्ष वैसा ही व्यवहार पक्ष। दोनों पक्ष तिरसठ के अंक की तरह परस्पर एक दूसरे के पूरक ही दिखाई देते हैं। यह मणि कांचन योग बहुत कम लोगों में देखने को मिलता है। दायित्वबोध तो जैसे मिश्र जी में कूट-कूट कर भरा है। और यह दायित्वबोध केवल सगे सम्बंधियों तक ही सीमित नहीं है बल्कि प्रकृति और पर्यावरण से तो और गहरे जुड़ा है। इसका कारण भी है। इनके गांव के आस पास का इलाका अपने जिस सांस्कृतिक-ऐतिहासिक गौरव के लिये सदियों से जाना जाता रहा वह पिछले लगभग डेढ़ सदी से प्राकृतिक असन्तुलन और प्रकोप के चलते धीरे धीरे कई तरह की विसंगतियों का शिकार होता गया जिनमें मुख्य विसंगति थी खेती योग्य जमीन का बरबाद होना और इससे पैदा हुई रोजी रोटी की समस्या। फिर शुरू हुआ लोगों का नगरों महानगरों की ओर पलायन। निश्चय ही इस संकट को डॉ० मिश्र ने खुली आंखों देखा, भरे मन से जिया और मातृभूमि के प्रति अपना जन्मना नैतिक ऋण चुकाने का संकल्प भी लिया। द्विजकुलोत्पन्न संस्कारित मन तथाकथित पंडिताऊ ताने बाने से बाहर निकल पड़ा और चल पड़ा प्रयोगों और आविष्कारों के संसार की ओर। सड़ी गली परंपराओं, पुराने फालतू रूढ़िवादी विचारों और पूरी तरह बोझ हो गये लबादे से अपने को अलग करने से लेकर ज्ञान विज्ञान के नये कलेवर, परिवेश और आयाम से जुड़ने तक की यात्रा डॉ० मिश्र के सार्थक प्रयोगों और उपलब्धियों की साक्षी रही है। इस साक्षी का दूसरा नाम है- डॉ० मिश्र का कृतित्व। और अपने ऐसे कृतित्व पर डॉ० मिश्र को तनिक भी गुमान नहीं है। बल्कि इतने के बावजूद अपने को विशेषज्ञ नहीं, विद्यार्थी ही बताते हैं। यह उनका बड़प्पन है। मिट्टी की नई कुंडली बनाने और उसे शोध प्रयोग उपलब्धि की संज्ञा से जोड़ने जैसा महान कार्य करके डॉ० मिश्र ने मिट्टी के प्रति, खेती के प्रति, किसानों के प्रति, वनस्पतियों के प्रति और इससे जुड़ी आर्थिक व्यावसायिक संपन्नता के प्रति बहुत बड़ा दायित्व निभाया है। आज सारा देश इनके प्रयोगों का आभारी है क्योंकि उसका फायदा उसे मिल रहा है। मिट्टी को ऊर्जासंपन्न बनाना दाल भात का कौर नहीं है। इसमें दिल दिमाग दोनों लगाने पड़ते हैं और कुशल योद्धा की तरह इसमें जूझना पड़ता है। मैंने जूझते हुये भी डॉ० मिश्र को देखा है। माथे पर पसीना, होठों पर हंसी, आखों में चमक, मन में उत्साह और हाथों में वैज्ञानिक उपकरण। भजनिये का ठुमका तो दर्शनिया देख लेता है लेकिन साधक का ठुमका तो ब्रह्मा भी नहीं देख पाते। यह तो वही जानता है जो साधता है या जो सधता है। चूंकि अंतराल नहीं है इसलिये तीसरे की गुंजाइश भी नहीं है। जैसा बाहर वैसा भीतर। ऐसी बुनावट का आदमी जब सामाजिकता के धरातल पर किसी तम्बू सा खुलने फैलने लगता है तो देखते ही बनता है। सहजता की कोई सीमा नहीं।

जिसने सूट-बूट में देखा होगा सचमुच वह यकायक कुर्ता धोती में देखकर दांतो तले उंगली दबाने को विवश हो जायेगा।

आविष्कार और आविष्कार के चमत्कार से आंखों को चौंधियाने से बचाये रखने की सामर्थ्य केवल उसी में होती है जिसकी संवेदना मरी नहीं होती। यह सामर्थ्य डॉ० मिश्र में भरपूर है। भरपूर इसलिये है कि 'संतन ढिग बैटि बैटि लोक लाज खोई' जैसी साहित्यिक एवं सांगीतिक बैठक शुरू से ही जुड़ी रही। चाहे वह गांव देहात के टेट लोक रंग से जुड़े उत्सव मेले रहे हों, चाहे इलाहाबाद आने पर निराला जी जैसे व्यक्तित्व का सहज आत्मीय सानिध्य रहा हो या उन दिनों इलाहाबाद शहर में सम्पन्न होने वाली साहित्यिक गोष्टियों का वातावरण रहा हो- इन सबने मिल जुलकर डॉ० मिश्र को बराबर संवेदना से जोड़े रखा। राग रंग हारे थके को ऊर्जा भी देता है और प्रेरणा भी। बदहवास, विक्षिप्त और एकांगी होने से बचाता है। आदमी को संपूर्ण बनाता है। डॉ० मिश्र की ऐसी निजता का उद्गम उनकी साहित्यिक सामाजिकता ही है। रही सही कोर कसर पूरी हो गई साहित्यिक परिवार से होने से। रद्दे पर रद्दा चढ़ ही गया। मन और सोच दोनों इसी रसायन में सीझते गये। आज जो कुछ डा० शिवगोपाल मिश्र में दिखाई दे रहा है वह इसी सिझाव का प्रतिफल और गुणनफल कहा जायेगा क्योंकि प्रयोग तो फार्मूलाजीवी होते हैं लेकिन जिन्दगी फार्मूला नहीं होती। वह तो प्रकृति की तरह स्वच्छन्द भी होती है और अनुशासित भी। रसायन दोनों जगह है- विज्ञान में भी और जिन्दगी में भी लेकिन दोनों में फर्क है। इनके प्रतिशत को, इनकी मात्रा को, इनके आयतन और आयाम को डॉ० मिश्र ने बड़ी कुशलता से अपने भीतर धारण कर रखा है, इसीलिये क्रियाशील भी हैं और संवेदनशील भी।

अपने इस संतुलन के लिये अपने परिवार और परिवेश दोनों के प्रति वे कृतज्ञ भी हैं क्योंकि कभी कभी ऐसा भी होता है कि परिवार अच्छा मिला तो परिवेश नहीं, और कभी परिवेश अच्छा मिला तो परिवार नहीं। डॉ० मिश्र का पूरा परिवार निराला जी का बहुत ही आत्मीय और अंतरंग रहा है और विश्वसनीय भी। इनके बड़े भाई (पं० जयगोपाल मिश्र) और ये दोनों लोग निराला जी के अनन्य सेवक रहे हैं। और सेवा भी कैसी ? निस्वार्थ। कोई अपेक्षा नहीं, कोई आग्रह नहीं। बीसवीं सदी के ईसा मसीह के प्रतिरूप करुणापुरुष निराला जी की उनके अंतिम दिनों में इन दोनों भाइयों ने अद्भुत सेवा की। न भूतो न भविष्यति। और यह भी संयोग देखिये कि उस महामानव, महाप्राण का प्राण छुटा भी तो कहां ? डॉ० शिवगोपाल मिश्र की गोद में। जरूर कोई न कोई पूर्वजन्म का संस्कार संबंध रहा होगा वर्ना जिन्दगी भर निराला जी भागते पराते रहे। आज यहां तो कल वहां। लेकिन ठहरे तो मुक्त होने के लिये ही ठहरे। निराला का मुक्त होना डॉ० शिवगोपाल मिश्र की आंखों से देखिये तब पता चलेगा कि फूटकर रोना किसे कहते हैं और मन मसोसकर, हाथ मलकर रह जाना किसे कहते हैं। साधारण गृहस्थ परिवार में जन्म लेने से लेकर असाधारण पहचान बनाने तक डॉ० शिवगोपाल मिश्र समाये हुये हैं। इन्हें न किसी तराजू पर बैटाया जा सकता है न किसी बटखरे से तौला जा सकता है। ये इन सब फालतू चीजों से परे हैं और परे रहेंगे।

आकशवाणी, इलाहाबाद

मेरे तो गुरु शिव गोपाल - एक संस्मरण

डॉ0 हेमचन्द्र जोशी

शिव की तरह परोपकारी व सहज तथा गोपाल की तरह कर्मठ व सरल शिव गोपाल मिश्र शिव व गोपाल के सटीक मिश्रण हैं। 'यथा नाम तथा गुण' की कहावत को चरितार्थ करते हुये यही चारों गुण प्रो० शिव गोपाल मिश्र के अध्ययन, अनुसंधान, लेखन तथा संपादन के ही नहीं, उनके संपूर्ण व्यक्तित्व के अमूल्य मंत्र रहे हैं। मृदा विज्ञान में शोध के क्षेत्र में ज्ञान सृजन का उनका विशाल व महत्वपूर्ण योगदान जहां अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ वहीं उन्होंने इस ज्ञान को हिन्दी में रूपान्तरित कर विज्ञान व मानव जाति की अभूतपूर्व सेवा की है। मृदा विज्ञान तथा हिन्दी सेवा की पटरियों पर उनकी यात्रा आज भी अपने गंतव्य की ओर संलिप्त है।

डाक्टर साहब से मैं पहली बार अपने शोध विषय 'कीटनाशी रसायनों के मृदा में व्यवहार' के क्षेत्र में शोधकार्य में मार्गदर्शन के लिये निवेदन करने हेतु मिला था। उन्होंने बड़ी तल्लीनता से मेरा निवेदन सुना था तथा स्पष्ट उत्तर दिया था- देखिये यह मेरा विषय नहीं है इसलिये मैं इस विषय में आपका मार्गदर्शन नहीं कर सकता लेकिन आपके लिये मार्गदर्शन का यथोचित प्रबंध कर दिया जायेगा। यदि इन शर्तों पर आप मेरे अधीन अपना शोधकार्य करना चाहते हैं तो आप आ सकते हैं। उनकी स्पष्टवादिता से मैं स्तब्ध सा रह गया, उन्हें अपना गुरु मानने का मेरे लिये यह पहला मील का पत्थर था। मैंने उनकी शर्तों को स्वीकार कर उनके अधीन शोधकार्य करने का मन बना लिया तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय की औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् मैं उनके अधीन शोध छात्र के रूप में कार्य करने लगा।

अपने प्रारंभिक आश्वासनों के अनुसार डॉ० साहब ने मुझे चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय कानपुर में कीटनाशी रसायन के प्राध्यापक डॉ. कल्याण सिंह, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में प्रधान वैज्ञानिक, डॉ० नरेन्द्र अग्निहोत्री तथा गोविन्द वल्लभ पंत कृषि व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर में प्रो० रमन के पास भेज कर मुझे अपने शोधकार्य के लिये यथोचित सामग्री जुटाने का अवसर प्रदान किया। इन लोगों के संपर्क में मुझे डॉ० साहब के प्रति इन लोगों के आदर भाव का परिचय मिला। अर्थात् यद्यपि इन स्थानों पर डॉ० साहब स्वयं उनके सामने उपस्थित नहीं थे परन्तु उनकी प्रतिध्वनि मुझे हर क्षण सुनाई देती थी। उनके मार्गदर्शन का यह अनूठा अनुभव शायद ही अन्य किसी को प्राप्त हुआ हो। उन्हें गुरु मानने का यह मेरा दूसरा मील का पत्थर था।

प्रथम दो माह तक अपने शोध अध्ययन के लिये यथोचित साहित्य व सामग्री जुटाने के बाद मैंने प्रयोगशाला में अपना कार्य आरम्भ किया। डॉ० साहब से निकटता बढ़ाने का यह सुनहरा अवसर था। वे अपने निवास से प्रयोगशाला तक हमेशा साइकिल से ही आते थे तथा साइकिल को प्रयोगशाला में

एक किनारे पर दीवार के सहारे खड़ा कर देते थे। मुझे आश्चर्य होता था कि एक प्रोफेसर स्तर का आदमी आज भी साइकिल से ही यातायात करता है जबकि उस वक्त सातवें दशक के अंतिम चरण में स्कूटर या कार जुटाना कोई मुश्किल काम नहीं था। डॉ० साहब साइकिल से ही विज्ञान परिषद्, वहां से प्रकाशक तक, वहां से फिर वापस विश्वविद्यालय तक का पूरा दैनिक यातायात जो कि प्रायः १५-२० किलोमीटर से कम नहीं होता था साइकिल द्वारा ही पूरा करते थे। डॉ० साहब की इस सादगी से तो मैं प्रभावित था ही, एक दिन मैंने आदरवश उनकी साइकिल इससे पहले कि वे उसे उठायें मैंने उठाकर प्रयोगशाला से नीचे सड़क पर उतार दी। डॉ० साहब बिगड़ पड़े। बोले, क्या आप मुझे पंगु बना देना चाहते हैं। मैं अभी अपने कार्य स्वयं करने में सक्षम हूं। मैं उनके अनायास रोष से स्तब्ध रह गया। उस जमाने में रिसर्चगाइड एक शोधछात्र के लिये कितना महत्वपूर्ण था और किस प्रकार अन्य प्रयोगशालाओं में विद्यार्थी अपने गुरुओं की सेवा में तल्लीन रहते थे, मुझे मालूम था। अतः डॉ० साहब का मुझे इस प्रकार टोकना मेरे लिये जीवन की एक महत्वपूर्ण शिक्षा थी। छोटे से दो वाक्यों में जीवन की सार्थकता का संदेश था। उनके अधीन शिक्षा का मेरे लिये यह तीसरा मील का पत्थर था।

मेरा शोधकार्य चलता रहा तथा पूरे वर्ष डॉ० साहब से संपर्क कभी कभी होता। मैं अपने प्रयोगों के परिणाम उन्हें दिखाता, वे बार बार यही कहते आप इसे दुबारा कर लीजिये। दुबारा वही प्रयोग करने पर समय तो अधिक लगता था पर एक बार फिर वही परिणाम मिलने पर आत्मविश्वास बढ़ता था और शोध कार्य पूरा होने तक हर प्रयोग को दुबारा करने की आदत सी बन गई जो कि आज तक काम आ रही है। शोधकार्य पूरा होने के बाद समय आया शोधनिबंध लिखने का। प्रयोग करना तथा परिणामों की तालिका बनाना तो एक दैनिक प्रक्रिया से बन गये थे परंतु इन्हें क्रमबद्ध कर संपूर्ण शोध अध्ययन को एक निबंध के रूप में रूपांतरित करना एक टेढ़ी खीर था जिसके लिये मुझे एक माह के गुप्त वास में जाना पड़ा। किसी प्रकार काट पीट कर एक माह में मैंने अपना शोध निबंध पूरा लिख लिया। मैं सोचने लगा कल निबंध डॉ० साहब को सौंप कर कम से कम एक सप्ताह तक चैन की नींद सोऊंगा। मैं दूसरे दिन सायं डॉ० साहब के पास गया तथा उन्हें अपना शोधनिबंध निरीक्षण के लिये प्रस्तुत किया। डॉ० साहब ने इतना ही कहा- छोड़ जाइये। उनके पास निबंध छोड़ कर मैं घर वापस चला आया तथा यह सोच कर अत्यंत राहत महसूस की, चलो, अब हफ्ते भर की छुट्टी। लेकिन आदतवश मैं दूसरे दिन प्रयोगशाला चला गया। डॉ० साहब अंदर अपने कक्ष में बैठे थे। उन्हें बैठा देख मैं सीधा उन्हीं के पास चला गया। मैं कुर्सी में बैठा ही था कि उन्होंने मेरा निबंध मुझे वापस कर दिया। मैं कुछ समझ नहीं पाया। मैंने उलट फेर कर अपने निबंध को देखा। एक एक पृष्ठ डॉ० साहब की लाल रोशनाई से चिन्हांकित था। यहां तक कि एक एक अर्धविराम व पूर्ण विराम भी चिन्हांकित थे, पूरा निबंध शब्द दर शब्द देखा गया था। मैं स्तब्ध तथा आश्चर्यचकित तो था ही, गुरु के आशीर्वाद से सराबोर भी था। मैंने कभी कल्पना नहीं की थी कि मेरा निबंध मुझे दूसरे दिन ही वापस मिल जायेगा क्योंकि मुझे मालूम था कि साधारणतया शोध पर्यवेक्षक से निबंध वापस मिलने में १ या २ माह ही नहीं कभी कभी वर्ष भी लग जाता है। मैं अपने सोच में खो ही गया था कि गुरु जी बोले- क्यों भई क्या हो गया है। कहां खो गये हो ? मैंने अपने हृदय की बात बोल ही दी। क्या सर ! आप रात भर यह निबंध ही जांच कर रहे थे ? इसके लिये इतना कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता थी ? मेरी बात सुन कर डॉ० साहब ने मुझे उनसे मेरी पहली मुलाकात का स्मरण कराया तथा बोले- इस शोध अध्ययन

में मेरी ओर से तुम्हारे लिये यही शिक्षा है। मुझे मालूम है कि तुम सरकारी अधिकारी हो तुम्हें अपने सेवा स्थान पर वापस लौटना है। इसलिये तुम्हारा निबंध जांचने में मैंने कम से कम समय लिया। मैं अपने सौभाग्य पर ईश्वर को धन्यवाद देने लगा तो मुझे कबीर का यह दोहा याद आया

गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागों पांव।
बलिहारी गुरु आपकी गोविन्द दियो बताय।।

मैंने गुरु के पांव पकड़ लिये। जीवन के अन्य अनुभवों के अनुसार मेरे लिये यह विलक्षण अनुभव था। एक अलौकिक शिक्षा थी। आज मेरे पास भी विद्यार्थी याचना लेकर आते हैं तो मुझे डॉ० साहब की इस शिक्षा का स्मरण हो आता है। वही मेरे व्यवहार में उतरता भी है। एक शिष्य के लिये इससे अच्छी शिक्षा क्या हो सकती है ! अनुपस्थित होते हुये भी गुरु उसके मार्गदर्शन के लिये उपस्थित रहता है।

हमें डॉ० साहब के उपदेशों से अधिक उनके आचरण से शिक्षा मिलती है इसीलिये उनके साथ दो वर्ष का निकट संबंध जीवन भर का संपर्क बन गया। मैं इन दो वर्षों को अपने जीवन का सबसे अमूल्य समय मानता हूं क्योंकि इस अवधि में मुझे केवल शिक्षा ही नहीं बल्कि मेरे व्यक्तित्व के आध्यात्मिक विकास का अवसर भी मिला जिसका श्रेय परोपकारी, सहज, कर्मठ व सरल व्यक्तित्व वाले परम गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी को ही जाता है।

विभागाध्यक्ष
पर्यावरण विज्ञान संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधार संस्थान
नई दिल्ली-११००१२

हिन्दी विज्ञान लेखन के वट वृक्ष

रामचन्द्र मिश्र

प्रयाग में कई वर्षों पूर्व एक संगोष्ठी के दौरान जब डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी का मैंने चरणस्पर्श किया तो वे विनम्रता से यों झुक गये कि वह दृश्य मेरे मानस पटल पर सदा के लिये अंकित हो गया। उनके सरल, सहज एवं मृदुल स्वभाव से स्वतः यह निष्कर्ष निकल आया कि एक विज्ञानी को अच्छा मनुष्य होना कितना आवश्यक होता है।

मैं स्वयं डॉ० मिश्र जी का न तो शिष्य रहा हूं न सहयोगी और न ही उनसे मेरा कोई निकट का संबंध रहा है। उनके बहुआयामी अवदान पर कुछ लिखूं, इसके लिये मैं अपने को योग्य नहीं पा रहा हूं। हां, उनसे संबंधित अगर मैं कोई विचार व्यक्त कर सकूं तो उसका आधार सिर्फ हिन्दी विज्ञान लेखन ही हो सकता है जिसमें मेरा छोटा सा अवदान है।

हिन्दी विज्ञान लेखक यह जानते हैं कि इस क्षेत्र में उच्चतम कीर्तिमान स्थापित करने वाले सर्वाधिक पुरस्कृत हस्ताक्षर डॉ० शिवगोपाल मिश्र ही हैं। उन्हें हम विज्ञान मार्तंड कहें या विज्ञान भास्कर या विज्ञान भूषण कहें, यह सारे मुकुट उन पर शोभायमान होते हैं। गंभीर अध्येता एंव सुप्रसिद्ध विषय विशेषज्ञ तथा प्रतिष्ठित शोधकर्ता व प्राध्यापक होने के साथ साथ वे विलक्षण और तेजस्वी हिन्दी विज्ञान लेखक हैं। यह असामान्य किन्तु अनुकरणीय बात है। मेरे लिये एक गहन विचारणीय प्रश्न सिर्फ यह है कि राष्ट्रीय संदर्भ में इस विलक्षण तथ्य का कोई महत्व है भी या नहीं ? नजरअंदाज हुये इस तीक्ष्ण प्रश्न का उत्तर हमें देना ही होगा।

देश में आज जन-जन में वांछित साक्षरता फैलाने और उन्हें विज्ञान के आलोक से आलोकित करने के गहन राष्ट्रीय दायित्व की पूर्ति हेतु लोकप्रिय विज्ञान लेखन की उपादेयता सर्वविदित एवं निर्विवाद है। पश्चिमी देशों में उच्च्य तकनीकी प्रगति का गुर वहां की जनता में मौजूद वैज्ञानिक साक्षरता है जो मूलतः लोकप्रिय विज्ञान के प्रसार प्रचार से हासिल हो सकी है। यह तथ्य सर्वदा अनुकरणीय है।

इक्कीसवीं सदी में जब सारी मानव क्रियायें विज्ञान पर सर्वाधिक आधारित होंगी, ऐसे में वर्तमान और भावी सभ्यता के अंदर विज्ञान को एक संस्कृति के रूप में फैलाना आवश्यक होगा। वस्तुतः स्वयं डॉ० मिश्र जी ने अपनी एक पुस्तक में लोकप्रिय विज्ञान लेखन के विविध पक्षों का पहली बार एक गहन शास्त्रीय विवेचन किया है और जब भी देश को इस विषय में किसी जिज्ञासा का समाधान ढूंढने की आवश्यकता होगी उनका यह विवेचन मार्गदर्शक साबित होगा। निस्संदेह डॉ० मिश्र जी हिन्दी विज्ञान लेखन के वट वृक्ष के रूप में देश को उपलब्ध हैं।

विदित है कि भारत एक धर्मपरायण देश है जो विश्व में एक वैज्ञानिक शक्ति के रूप में उभर आया है। वस्तुतः धर्म और विज्ञान के बीच कोई अंतर्द्वन्द नहीं है। दोनों सत्य की खोज करते हैं, एक आंतरिक जगत की और दूसरा वाह्य जगत की। भारत के संबंध में एक विचित्र समस्या यह है कि यहां के बहुतेरे धार्मिक विश्वास बहुधा अंधविश्वास की जड़ों से पोषण पाते हैं। इसीलिये लोकप्रिय विज्ञान द्वारा सही वैज्ञानिक साक्षरता कायम करना राष्ट्रीय महत्व का उद्देश्य बन जाता है। साथ ही वैज्ञानिक

साक्षरता द्वारा राष्ट्र निर्माण में विज्ञान को सन्नद्ध करने के लिये एक प्रभावी लोकशक्ति भी पैदा होती है। इन तथ्यों को कितनी मान्यता दी जाती है, यह अवश्य विचारणीय है।

यह बड़े हर्ष की बात है कि भारत सरकार द्वारा समय समय पर कई हिन्दी साहित्यकारों को पद्मश्री व पद्मभूषण जैसी राष्ट्रीय उपाधियों द्वारा सम्मानित किया जाता रहा है। भला बतायें कि ऐसा कोई सम्मान किसी हिन्दी विज्ञान साहित्यकार को क्यों नहीं दिया जा सका है ? विज्ञान साहित्य क्या कोई साहित्य नहीं है या इसकी कोई उपादेयता नहीं है ? अथवा क्या हिन्दी विज्ञान लेखन में कोई वट वृक्ष नहीं है ? विज्ञान से सरोकार न रख कर साहित्य में समस्त प्रासंगिकता एवं पूर्णता क्या लाई जा सकेगी ? आखिरकार विज्ञान लेखकों की सहभागिता अस्वीकारने का कोई कारण है भी या नहीं ?

जाहिर है कि उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर स्वाभाविक हैं, अज्ञात नहीं हैं। इसीलिये उभरते हुये विज्ञान लेखकों को कर्मठता का पाठ पढ़ाने के लिये डॉ० मिश्र सदैव तत्पर रहे हैं। वह वैज्ञानिकों से आह्वान करते हैं कि वे लोकप्रिय विज्ञान के क्षेत्र में स्तरीय एवं प्रामाणिक साहित्य तैयार करें जिससे प्रयोगशाला में उत्पन्न ज्ञान जन-जन तक पहुँचे तथा इसके द्वारा राष्ट्रीय विकास हेतु मानव संसाधन की आवश्यकताओं की पूर्ति को बल मिले। यह कार्य जन-जन की भाषा में होना आवश्यक है। पूरे देश में प्रसिद्ध राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से विज्ञान का प्रसार होने पर दोहरा मकसद पूरा होता है, विज्ञान एवं हिन्दी दोनों की श्रीवृद्धि। अपनी तमाम पुस्तकों, लेखों आदि द्वारा इस दोहरे मकसद की पूर्ति में डॉ० मिश्र जी का अवदान सराहनीय है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि समाज में वैज्ञानिक तीक्ष्णता पैदा करने और मानव संसाधन विकास के व्यापक उद्देश्य की पूर्ति हेतु डॉ० मिश्र जैसे कर्मठ हिन्दी विज्ञान साहित्यकारों की महती आवश्यकता है। सरकार को देर सबेर इस तथ्य को उचित मान्यता देनी ही होगी, इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। डॉ० मिश्र का सम्मान समस्त हिन्दी विज्ञान लेखकों का सम्मान होगा।

विज्ञान लेखन के वट वृक्ष डॉ० शिवगोपाल मिश्र को मैं पुनः प्रणाम करता हूं और उनके दीर्घायु होने की हार्दिक कामना करते हुये यह इच्छा प्रकट करता हूं कि लोकप्रिय विज्ञान लेखन के क्षेत्र में अगले जन्म में उनके जैसा वट वृक्ष बन सकूं।

"दूरस्थोऽपि न दूरस्थो यो यस्य हृदये स्थितः"

(चाणक्य)

मुझे और मेरे जैसे कई लोगों को तथा विशेषतः डॉ० मिश्र जी के तमाम शिष्यों को उनके स्नेह के जो शब्द मिले हैं, उनके जवाब में सिर्फ इतना ही कहता हूं कि,

सांसों पर अवलंबित काया
अब चलते चलते चूर हुई
दो स्नेह शब्द मिल गये मिली
नवस्फूर्ति, थकावट दूर हुई
पथ के पहचाने छूट गये
पर साथ साथ चल रही याद
जिस जिस से पथ पर स्नेह मिला
उस उस राही को धन्यवाद!

(सुमन)

"जीवेत शरदः शतम् डॉ० शिवगोपाल मिश्रः"

बी-६०, आई.आई.टी.
मुम्बई-४०००७६

जीवेत शरदः शतम्

श्याम सरन अग्रवाल

पुरानी यादों से छेड़छाड़ भी एक दिलचस्प अहसास दे जाती है यानी पड़े-पुराने ढेर से अनायास कुछ यादों को उठाकर किया जाना स्मृति मंथन एक सुखद, अजब अनुभूति दे जाता है।

आज की डाक में आई सामग्री ने कुछ ऐसी ही एक लघु छलांग लगवा दी तो बोरियत न जाने कहाँ से किनारा कर गई। हमारे प्रिय सजन का अभिनंदन सोचा जाये और हम पर कोई हरकत न हो, यह संभव नहीं और बस वक्त की चितवन पर पड़ी झिलमिल चिलमन को जो तनिक खिसकाया तो तीस वर्ष पूर्व का बीता दौर ताजा हो आया।

यह ६ का अंक भी कमाल का है, पूर्णांक तो है ही, वृहत्तम भी है। ६ के आगे संख्या दो, तीन, चार कितने ही अंकों में चले, सब का अंतिम योग ६ या ६ से नीचे ही रहेगा। इस कमाल ने कुछ भिन्नतः हमें भी प्रभावित तो किया ही है। देखिये न, हम कहने जा रहे हैं कि बात सन् ६३ की याने ६+३=६, और मित्रवर के नामाक्षर भी हैं SHIV GOPAL.....६

हम भी कभी जवान थे। जिस सन् १९६३ का जिक्र कर रहा हूँ वह आलम था शिवगोपाल जी की जवानी का जिसे हम उस समय १६ वर्ष पीछे छोड़ आये थे। उस दौर में जिक्र है एक अपराह्न का जब कि आगरा फोर्ट के प्लेटफार्म पर रसायनाचार्य शिवगोपाल जी और लोकप्रिय विज्ञान लेखक हम 'विक्रम' रूपी दो ट्रेनें क्या रुकीं, जुड़ भी गयीं। ऐसी कि प्रीत की वह डोर आज भी दमदार है, एक ने खींची तो दूसरा उसकी बाँहों में।

आगरा फोर्ट की वह प्रीत-सगाई तीन दशकों की सुदीर्घ विज्ञान लेखन सम्पादन की सहयात्रा के रूप में मासिक 'विज्ञान' के पाठकों द्वारा सराही गई। आज भी वही भावना बरकरार है। ईमानदारी पूर्ण स्वीकृति यह भी कि मैंने अपनी विज्ञान लेखन प्रवृत्ति को जिस सान-चकरी पर सदाबहार पाया, वह सान-चकरी थी प्रिय शिवगोपाल जी की सतत् प्रेरणा।

मेरे शीर्ष मित्र शिवगोपाल जी की विज्ञान को समर्पित कर्मठता और अटूट लगन की साक्षी देंगे 'विज्ञान' के सुदीर्घ फाइलों के बोलते पृष्ठ, 'भारत की सम्पदा' का प्रथम खण्ड और वर्तमान में 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका'।

आज तो ८६वें आयु सोपान की मझदार से प्रिय श्रेष्ठ शिवगोपाल मिश्र के निमित्त आपके मनोनीत अभिनन्दन ग्रन्थ हेतु मेरी पुनरपि अन्तरतम की बधाइयाँ एवं मिश्र जीवेत् शरदः शतम् ....

अल्लाह करे ज़ोदे क़लम और ज़ियादा ....

शुभमस्तु।

६८, अस्टिस्टेंट लाइन
बिरला नगर, ग्वालियर (म.प्र.)

सरलता, सादगी, संकल्प की त्रिमूर्ति

बृजमोहन गुप्त

पहली ही मुलाकात में उन्होंने मन मोह लिया। सम्पूर्ण सूर्यग्रहण खग्रास के बाद की बात है। अचानक दो भद्र पुरुष मेरे कमरे में दाखिल हुये। नमस्कार। मैं हूं शुकदेव प्रसाद। इलाहाबाद से आया हूं। इससे पहले कभी मुलाकात नहीं हुई। सोचा दिल्ली आये हैं तो मिल लें। नाम सुनते ही अनजाना चेहरा पहचाना सा लगने लगा। न जाने कितने लेख तो पढ़े हैं। साथ में कौन है ? श्वेतकेशी चेहरे पर हल्की सी मुस्कान। चश्मे के पीछे से झांकती चमकती आंखें। बुशशर्ट पैंट में सादगी की मूर्ति। देखते ही प्रणाम करने की इच्छा बलवती हो गई। परिचय पूछने की हिम्मत नहीं हुई।

आकाशवाणी ने पहली बार किसी प्राकृतिक घटना सम्पूर्ण सूर्यग्रहण का आंखों देखा हाल सीधे ही प्रसारित किया था। दिल्ली, नीम का थाना, भिंड, इलाहाबाद और डायमंड हार्बर की पूरी पट्टी पर विषयविशेषज्ञ आंखों देखा हाल सुनाने के लिये उपस्थित थे। इलाहाबाद में यह दायित्व श्री शुकदेव प्रसाद के पास था। वे चकित थे। दिल्ली में तो शायद कोई जानता नहीं। फिर चुनाव कैसे हुआ ? बातचीत विज्ञान लोकप्रियरण पर चलने लगी और विज्ञान परिषद् प्रयाग की चर्चा भी हुई। मुझे आश्चर्य था कि लगभग सत्तर साल से ज्यादा समय बीत जाने के बावजूद परिषद् सक्रिय है। शाम ढल रही थी। दिल्ली की चार्टर्ड बसें प्रेम के सारे बंधन तोड़ने को मजबूर करती थीं। शालीनतावश सभी उठ खड़े हुये। प्रसारण भवन की लिफ्ट से उतरकर गलियारे तक बातें चलती रहीं। विदा का समय आया तो लगा बुजुर्गवार का परिचय जान ही लूं। अरे! आप डॉ० शिवगोपाल मिश्र को नहीं जानते ? श्री शुकदेव प्रसाद चकित हो गये। नाम सुनते ही मैं नतमस्तक हो गया।

दूसरी मुलाकात पं० सुधाकर पांडेय के यहां हुई। नागरी प्रचारिणी सभा के दिल्ली कार्यालय में जमावड़ा था। बच्चों के लिये विश्वकोश तैयार करने की योजना पर चर्चा होनी थी। श्री जयप्रकाश भारती, डॉ० हरिकृष्ण देवसरे और कई अन्य बाल साहित्य विशेषज्ञ वहां थे। कई मुद्दे थे। ठोस सुझाव डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने दिये। वैज्ञानिक शब्दावली के आधार पर प्रविष्टियों का चुनाव हो, ऐसा आग्रह था। साथ में लिखित योजना थी। यह बात और है कि मन में एक दुराग्रह भी था विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बाल साहित्य के बारे में भला क्या जानते होंगे ? हाल ही जब भारतीय बाल विज्ञान साहित्य पर कुछ लिखने का मन हुआ तो एक मित्र ने याद दिलाया, क्या आपने डॉ० शिवगोपाल मिश्र की पुस्तक पढ़ी है ? लखनऊ से जब मंगाकर उसे पढ़ा तो मन प्रसन्न हो गया। बाल विज्ञान साहित्य पर इतनी सामग्री एक जगह कहीं और नहीं मिलती।

भारतीय विज्ञान लेखक संघ (इस्वा) के वार्षिक अधिवेशन में डॉ० मिश्र से फिर मुलाकात हुई। कहीं कोई बदलाव नहीं। चेहरे पर वही चिर-परिचित मुस्कान। वे एक सत्र की अध्यक्षता कर रहे थे।

संचालन का काम मेरे जिम्मे था। सूचना के भूमंडलीकरण के बाद हमारे देश में उपग्रह चैनलों की बाढ़ और ऐसे में मुद्रित माध्यमों की भूमिका की चर्चा जब आपे से बाहर होने लगी तो डॉ० मिश्र ने सही राह दिखाई। माध्यमों की चकाचौंध से अधिक महत्वपूर्ण है विषयवस्तु। विज्ञान को सहजता और रोचकता से जन-जन तक पहुंचाने के लिये विज्ञान परिषद् जैसी संस्थाओं को निरंतर सक्रिय रखने की आवश्यकता है, इस संदेश को भला कौन भूल पायेगा ?

विज्ञान लेखकों को प्रोत्साहित करने का अवसर डॉ० मिश्र कभी नहीं छोड़ते- विज्ञान कथा लेखन का मामला हो या विज्ञान लेखकों के प्रशिक्षण का। वे संगोष्ठियां, कार्यशालायें और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने से कभी नहीं घबराते। विज्ञान लेखकों से निरंतर सम्पर्क बनाये रखने की कला में वे सिद्धहस्त हैं। 'विज्ञान प्रगति' में स्टीफन हाकिंग की आइंस्टाइन को चुनौती विषय पर जब मेरा लेख प्रकाशित हुआ तो अचानक मिश्र जी का प्रशंसात्मक पत्र पाकर मैं भावविभोर हो उठा। अन्य विज्ञान लेखकों के भी ऐसे ही अनुभव रहे हैं।

तीर्थराज प्रयाग का संभवतः यह नैसर्गिक गुण है कि वहां केवल गंगा, यमुना और सरस्वती जैसी नदियों का संगम नहीं होता। संस्कृति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की त्रिवेणी भी वहां बहती है। सरलता, सादगी और संकल्प की त्रिमूर्ति डॉ० शिवगोपाल मिश्र भी शायद इसीलिये प्रयाग में बसे हैं। वे शतायु हों, यही कामना है।

उपनिदेशक
कर्मचारी प्रशिक्षण संस्थान
आकाशवाणी
किंग्जवे, नई दिल्ली-११०००९

विज्ञान प्रयाग

डॉ० मनोज पटैरिया

सन् १९७८ की बात है। तब मैं इण्टरमीडियेट का विद्यार्थी था। एक दिन बाजार से कुछ सामान लेने जाना पड़ा। एक परचून की दुकान में देखा कि दुकानदार एक पत्रिका के पन्ने फाड़कर पुड़िया बना रहा है। जिज्ञासावश गौर से देखने पर पता चला कि उस पत्रिका का नाम 'विज्ञान' है। मैंने उस पत्रिका के और पृष्ठ न फाड़ने का अनुरोध किया और कहा कि वह उस पत्रिका का जो भी उचित मूल्य समझे ले ले और वह पत्रिका मुझे दे दे। इस प्रकार पहली बार मुझे 'विज्ञान' पत्रिका देखने और पढ़ने का मौका मिला। वह विज्ञान का कोई पुराना अंक था। पत्रिका के पन्ने उलटने पर पता चला कि उसके सम्पादक डॉ० शिवगोपाल मिश्र हैं। मुझे ठीक से याद नहीं कि मैंने 'विज्ञान' में छपने के लिये कोई लेख भिजवाया था या नहीं लेकिन १९७९ में जब हम कुछ विद्यार्थियों ने मिलकर विज्ञान परिषद् महोबा का गठन किया था, तब मैंने डॉ० शिवगोपाल मिश्र को एक पोस्टकार्ड भेजा और उनसे विज्ञान परिषद् प्रयाग का संविधान और नियमावली भेजने का अनुरोध किया, ताकि उसी के अनुरूप विज्ञान परिषद् महोबा का स्वरूप निर्धारित किया जा सके अथवा उसे विज्ञान परिषद् प्रयाग की एक शाखा के रूप में बनाया जा सके। लेकिन उस पत्र का बहुत दिनों तक कोई जवाब नहीं आया। १९८४ में जब मैं 'विज्ञान प्रगति' के वरिष्ठ संपादक सहायक के पद हेतु साक्षात्कार के लिये दिल्ली आया तब साक्षात्कार के दौरान डॉ० शिवगोपाल मिश्र से पहली बार आमना सामना हुआ।

बाद में पता चला कि वह चयन समिति के अध्यक्ष थे। उन्होंने तरह तरह के प्रश्न किये। जैसे- आपकी विज्ञान परिषद् क्या काम कर रही है ? इससे मुझे लगा कि शायद ये विज्ञान परिषद् महोबा या मुझे पहले से जानते हैं। उन्होंने एक और प्रश्न पूछा कि आप आंवले का मुरब्बा कब खिलायेंगे ? तब मुझे लगा कि इन्होंने शायद आंवले का मुरब्बा बनाने की मशीन के आविष्कार से संबंधित लेख भी पढ़ा है। उन्होंने यह भी कहा कि आप जैसे व्यक्ति को इतने छोटे पद पर काम करने में बहुत मुश्किलें आयेंगी और अधिक बड़े पद पर नियुक्त करना हमारे वश में नहीं है। इस प्रकार मैने 'विज्ञान प्रगति' में कार्य भार संभाला। समय बीता और करीब ६ महीने निकल गये। उन्हीं दिनों कुछ विभागीय फेरबदल के चलते मेरा तबादला 'विज्ञान प्रगति' से 'भारत की सम्पदा' में कर दिया गया। इस पर डॉ० शिवगोपाल मिश्र की बहुत तीखी प्रतिक्रिया हुई और इस संबंध में उन्होंने हमारे विभागाध्यक्ष को एक पत्र भी लिखा। इसी बीच डॉ० मिश्र दिल्ली आये और उन्होंने अलग से मुझसे बात की। अब मेज के उस पार वाली दूरी नहीं थी। उनसे यह अनौपचारिक मुलाकात काफी महत्वपूर्ण रही।

आमतौर पर बहुत कम लोग ऐसे मिलते हैं, जो आपके कार्य के महत्व को समझें और भविष्य के लिये दिशानिर्देश भी दें कि आगे क्या कुछ करना चाहिये। डॉ० मिश्र ने तीनों काम बड़ी जिम्मेदारी से किये। उन्होंने हंसते हुये कहा कि इलाहाबाद में उन्होंने लोगों से मेरे बारे में कह रखा है कि ये दिल्ली में एक भूत बिठा आये हैं। उन्होंने ही बताया कि उनके अनुसार भूत ऐसे व्यक्ति को कहते हैं जो बहुत सारा काम करता हो, जो सहज रूप से सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकते।

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती के वह काफी स्नेही रहे हैं। एक बार जब स्वामी जी दिल्ली पधारे

तो उनसे उन्होंने मेरा परिचय कराते हुये ही वही भूत वाली बात दोहराई। तब स्वामी जी ने हंसते हुये कहा- कि इस भूत में विज्ञान पत्रकारिता का वर्तमान और भविष्य भी समाया हुआ है। कहना न होगा कि उन्हीं दिनों मेरे मन में विज्ञान पत्रकारिता पर एक किताब लिखने की योजना साकार होने लगी। डॉ० शिवगोपाल मिश्र से मैंने इस बारे में बातचीत की और उनके विचार जानने की कोशिश की। यह सुनकर वे रोमांच से एकदम उछल पड़े और पीठ थपथपाकर कहा कि यह काम जितनी जल्दी हो सके पूरा करो। वे इलाहाबाद लौट गये। कुछ दिनों बाद मैंने उन्हें पुस्तक की रूपरेखा बनाकर भेजी। जल्दी ही उनका पत्र आया जिसमें उन्होंने कुछ महत्वपूर्ण सुझाव लिखे थे। किताब १६६० में छपी, जिस पर उन्हें खासी प्रसन्नता हुई।

१६६० में एक बार फिर मुझे 'विज्ञान प्रगति' के सहायक सम्पादक हेतु चुना गया तब डॉ० मिश्र मेरे साथ थे जिन्होंने राहत की सांस ली और आशा जताई कि विज्ञान पत्रकारिता को इससे लाभ होगा।

डॉ० मिश्र अत्यन्त सहज और सरल स्वभाव वाले परम स्नेही व्यक्ति हैं, जो विशेष तौर पर हिन्दी में विज्ञान लेखन हेतु न केवल अपनी जिम्मेदारियों को समझते हैं, महसूस करते हैं, बल्कि दूसरों को भी इसके लिये प्रेरित करते हैं, मीठी डांट लगाते हैं, सचेत करते हैं और मार्गदर्शन भी करते हैं। इसके साथ ही उनमें लोगों को पहचानने की क्षमता है लेकिन कभी कभी थोड़ी चूक हो जाती है। १६६१ के अंत में राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद् में आ गया। तब डॉ० मिश्र का हर्षातिरेक बधाई पत्र मिला जिसमें उन्होंने एक बार फिर मुझे विज्ञान लेखन की दिशा में काम करते रहने की प्रेरणा दी।

सन् १६८४ से लेकर अब तब अनगिनत बार हम लोगों ने विज्ञान लेखन, विज्ञान पत्रकारिता, विज्ञान संचार और इससे जुड़े अन्य विषयों, व्यक्तियों और संस्थाओं के बारे में चर्चायें, परिचर्चायें और मीमांसायें कीं। मजा आता है जब डॉ० मिश्र और अन्य समानधर्मी मित्रों के साथ खुलकर चर्चा होती है। उनसे बात करके सहज ही यह आभास हो जाता है कि हिन्दी में विज्ञान लेखन के लिये उन्हें कितनी चिंता, उत्कटता, उत्कंठा और आतुरता है। प्रबल इच्छाशक्ति जैसी गुणवत्ताओं का सार्थक संगम एक ही व्यक्ति में विरले ही मिलता है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र न जाने कैसे इन सभी गुणों के साथ सामंजस्य मिला पाते हैं। वह नये और युवा विज्ञान लेखकों के लिये सीखने और अनुकरण करने योग्य हैं। सहिष्णुता उनमें कूट कूट कर भरी है। एक ही व्यक्ति में इतने सारे गुणों के संगम के कारण ही उनके लिये इस विचार प्रवाह का शीर्षक 'विज्ञान प्रयाग' मेरे विचार से उपयुक्त होगा। जैसा कि हम जानते हैं कि प्रयाग का अर्थ संगम होता है। स्नेह और जिम्मेदारी के वह धनी हैं। सारनाथ की विज्ञान लेखक कार्यशाला के दौरान चार पांच विशेषज्ञ एक ही गेस्टहाउस में ठहरे थे। एक दिन मेरी तबियत कुछ खराब हो गई। मैंने चिकित्सक को दिखाकर दवाई भी ले ली और अपने कमरे में सोने चला गया। तभी डॉ० शिवगोपाल मिश्र आये और उन्होंने हिदायत दी कि कमरा अन्दर से बन्द मत करना। तब मैं उनका मतलब नहीं समझा लेकिन रात में मेरी दो तीन बार नींद खुली और मैंने पाया कि डॉ० साहब वहीं आसपास हैं। यह संवेदनशीलता और जिम्मेदारी का उत्कृष्ट उदाहरण है।

वह बहुत स्पष्टवादी हैं और पुरातनपंथी विचारों के आलोचक। सत्यनिष्ठा, कर्तव्यपरायणता और शालीनता तथा प्रसन्नता उनके आभूषण हैं। हिन्दी विज्ञान लेखन के वह भीष्म पितामह माने जाते हैं। हिन्दी विज्ञान लेखन के क्षेत्र में उनका अनन्य योगदान है जिसका दीर्घकालीन महत्व रहेगा। डॉ० मिश्र को दीर्घजीवी होने के लिये हार्दिक शुभकामनायें, ताकि वह लंबे समय तक हिन्दी विज्ञान लेखन के आकाश में सूर्य की तरह प्रकाशमान होकर ज्ञान विज्ञान की रश्मियां चहुं ओर फैलाते रहें।

वरिष्ठ वैज्ञानिक
एन.सी.एस.टी.सी., नई दिल्ली

मेरे प्रेरणास्रोत प्रो० शिवगोपाल मिश्र

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

डॉ० पाण्डेय ने मुझे आदरणीय प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी के विषय में कुछ लिखने के लिये कह कर अजीब सी स्थिति में डाल दिया है।

व्यक्तिगत रूप में जो अपने निकट हो अथवा जिससे अति दूरी हो दोनों तरह के व्यक्तियों के विषय में लिखना कठिन लगता है, फिर प्रो० मिश्र जी तो मेरे इतने आत्मीय हैं कि उनके विषय में लिखते समय समझ में ही नहीं आ रहा है कि कहाँ से शुरू करूँ। अतएव शुरू से ही शुरू करता हूँ।

'विज्ञान' पत्रिका के तत्कालीन सम्पादक डॉ० शिव प्रकाश जी (१९७३-१९७९) से मेरा परिचय था। विज्ञान में एकाध लेख भी प्रकाशित हो चुके थे। फिर भी मैंने डॉ० मिश्र का केवल नाम ही सुना था, परिचित नहीं था।

विज्ञान लेखक शुकदेव प्रसाद जो उस समय जीव विज्ञान के विद्यार्थी थे और मेरे पास प्रायः आया करते थे उन्हीं ने ही आग्रहपूर्वक मेरा परिचय डॉ० शिवगोपाल मिश्र से करवाया।

पहली मुलाकात में ही मैं डॉ० मिश्र से अत्यन्त प्रभावित हुआ। उन्होंने बड़े ही स्नेह और आत्मीयता से बात की और 'विज्ञान' पत्रिका और विज्ञान परिषद् से मुझे जोड़ लिया।

'विज्ञान' के अतिरिक्त विज्ञान की अन्य पत्रिकाओं के लिये लेख लिखने के लिये मुझे बराबर प्रोत्सहित करते रहे। यही नहीं, 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादन में भी वह सदैव दिशानिर्देश करते रहे।

अब तो डॉ० मिश्र जी का और मेरा सम्बंध पारिवारिक हो गया है। मेरी पत्नी श्रीमती मंजुलिका लक्ष्मी को भी उन्होंने विज्ञान लेखन से जोड़ लिया है। अनेक नये पुराने हिन्दी विज्ञान रचनाधर्मी उनके ऋणी हैं। वे बहुतों के प्रेरणास्रोत हैं।

वैसे प्रो० मिश्र और मेरा विषय अलग-अलग है। वे मृदा विज्ञान के ख्यातिप्राप्त शोधकर्मी हैं और मैं वनस्पति विज्ञान का मात्र एक अध्यापक। फिर भी उनके शोध और लेखन को मैं जहाँ तक समझ पाया हूँ उसके आधार पर मुझे कहने में संकोच नहीं कि डॉ० मिश्र श्रेष्ठ मृदाविज्ञानी, विशिष्ट हिन्दी साहित्यकार, विज्ञान लेखक और प्राचीन इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान हैं। इस प्रकार उनके शोध और लेखन में विविधता पायी जाती है।

प्रो० मिश्र का व्यक्तित्व बहुआयामी है। जो लोग इन्हें निकट से नहीं जानते हैं वे संभवतः उनके व्यक्तित्व के एकाध पक्ष से ही परिचित हों। हिन्दी साहित्यकार उन्हें साहित्य का व्यक्ति समझते है, प्राचीन इतिहास से संबंधित विद्वान उन्हें प्राचीन इतिहास के विशेषज्ञ के रूप में जानते हैं, मृदाविज्ञानी, मृदा रसायनज्ञ और हिन्दी विज्ञान लेखक उन्हें मात्र एक लब्धप्रतिष्ठ लेखक के रूप में। वैसे इनमें से किसी एक ही क्षेत्र को डॉ० मिश्र ने चुना होता, तो भी ऐसी ही ख्याति अर्जित की होती।

हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं पर उनका पूर्ण अधिकार है, किन्तु हिन्दी से उन्हें विशेष

अनुराग है।

बातचीत और लेखन में उनकी सादगी की स्पष्ट झलक दिखती है। आप सरल-सहज व्यक्ति हैं, मृदुभाषी हैं पर साथ ही सपाटबयानी आपकी विशेषता है। विज्ञान परिषद् के लिये पूर्णतः समर्पित हैं। परिषद् पर जब भी संकट आता है, उससे आप चिंतित होते हैं और जब कुछ अच्छा काम होता हे तो प्रसन्नता छलक पड़ती है।

सच पूछिये तो मैं आपके व्यक्तिगत गुणों से अत्यंत प्रभावित हुआ हूँ। इलाहाबाद की तपती दोपहरी हो अथवा शिद्दत की सर्दी या बरसात का मौसम, डॉ० मिश्र पसीने से लतफत, हाँफते काँपते पानी से भीगे परिषद् अवश्य ही पहुँच जाते हैं।

सादगी की तो आप प्रतिमूर्ति ही हैं। कपड़ों पर प्रेस है या नहीं, जूते में पालिश है या नहीं, कभी ध्यान नहीं देते। संभवतः यह सादगी उन्होंने अपने गुरू नीलरत्न धर से सीखी है।

पिछले ३५-३६ सालों के सम्पर्क में मैंने उन्हें लेक्चरर से रीडर और रीडर से प्रोफेसर होते देखा है।

अनेक शोध पत्र, लेख और पुस्तकें प्रशंसित, चर्चित और पुरस्कृत हुई हैं किन्तु ख्याति उन्हें दूषित नहीं कर पायी है। जैसे वे पहले थे वैसे ही आज भी हैं।

परिषद् में तो हम-साथ साथ रहे ही हैं, मुझे विज्ञान लेखन के संबंध में दिल्ली, मैसूर आदि सुदूर शहरों के लिये लम्बी यात्राओं में साथ रहने का अवसर मिलता रहा है। वे दूसरों की छोटी-छोटी जरूरतों का ध्यान रखते हैं। जब वे लिख नहीं रहे होते हैं तो अनेक रोचक संस्मरण सुनाते हैं अथवा किसी पुस्तक या विज्ञान के किसी सामयिक विषय पर चर्चा करने लगते हैं। समय को बेकार नहीं जाने देते।

विश्वविद्यालय की सेवा से मुक्त होने के बाद भी वे विज्ञान परिषद् की गतिविधियों में यथावत् सक्रिय हैं।

ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि वे डॉ० मिश्र को लम्बी आयु दें, अच्छा स्वास्थ्य दें ताकि वे परिषद्, हिन्दी विज्ञान लेखन और देश की सेवा करते रहें, हम सभी को दिशानिर्देश देते रहें और हम सभी के प्रेरणास्रोत बने रहें।

पूर्व विभागाध्यक्ष
वनस्पति विज्ञान
सी.एम.पी. महाविद्यालय
इलाहाबाद, उ०प्र०

जिन्होंने मुझे राष्ट्रभाषा में शोध पत्र लिखने की प्रेरणा दी

डॉ० केशव कुमार

प्रो० मिश्र से मेरा परिचय दिसम्बर १९९२ में हुआ, जब मैं विज्ञान परिषद् प्रयाग का सदस्य बनने हेतु कार्यालय में गया। मिश्र जी विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका में प्रकाशनार्थ आये हुये शोधपत्रों का अवलोकन कर रहे थे। उन्होंने बड़ी आत्मीयता के साथ मेरा परिचय पूछा तथा चिकित्सा विज्ञान से संबंधित मेरे शोधपत्रों को हिन्दी में लिखने के लिये मुझे प्रेरित किया।

इसके पूर्व मैं अंग्रेजी भाषा में अपने शोध पत्र लिखा करता था तथा चिकित्सा विज्ञान से संबंधित अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होने वाली शोध पत्रिकाओं में अपने शोध पत्रों को प्रकाशनार्थ भेजा करता था। प्रो० मिश्र के सहज एवं आकर्षक व्यक्तित्व ने मुझे इस बात के लिये प्रेरित किया कि क्यों न चिकित्सा विज्ञान से संबंधित शोधपत्र अपनी राष्ट्रभाषा में लिखे जायँ।

मैंने अंग्रेजी में लिखे गये अपने शोधपत्रों का हिन्दी में अनुवाद प्रारम्भ किया। इस कार्य में प्रो० मिश्र ने मुझे अपना अमूल्य योगदान दिया, मेरा उत्साहवर्धन किया। दिसम्बर १९९२ में ही उन्होंने मेरे हिन्दी भाषा में लिखे गये एक शोधपत्र को 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत करके मेरा साहस बढ़ाया। इसके बाद लगातार मेरे द्वारा हिन्दी भाषा में लिखे गये चिकित्सा विज्ञान से संबंधित शोधपत्र 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत हुये।

प्रायः यह देखा जाता है कि चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन एवं अध्यापन अंग्रेजी भाषा के माध्यम से होने के कारण चिकित्सा वैज्ञानिकों द्वारा शोधपत्र अंग्रेजी भाषा में ही लिखे जाते हैं। ऐसे बहुत ही कम चिकित्सा वैज्ञानिक हैं जो चिकित्सा विज्ञान से संबंधित शोधपत्रों को हिन्दी में लिखने का कष्ट उठाते हैं। अमेरिका, जापान तथा रूस जैसे देशों में चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन-अध्यापन उनकी राष्ट्रभाषा में किया जाता है और इन देशों में चिकित्सा विज्ञान से संबंधित शोधपत्र भी उनकी राष्ट्रभाषा में ही लिखे जाते हैं। वर्तमान में यह परम आवश्यक है कि भारतवर्ष में भी चिकित्सा विज्ञान से संबंधित अध्ययन एवं अध्यापन यहाँ की राष्ट्रभाषा हिन्दी में आरम्भ किया जाये तथा चिकित्सा विज्ञान से संबंधित शोधपत्र चिकित्सा वैज्ञानिकों द्वारा हिन्दी में ही लिखे जायँ।

प्रो० मिश्र ने अंग्रेजी भाषा में भी कई पुस्तकें लिखी हैं तथा अनेक शोधपत्र देश-विदेश की पत्रिकाओं में भी प्रकाशित करवाये हैं परन्तु अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति इनका अनन्य प्रेम है जो न केवल इन्हें हिन्दी में पुस्तकें लिखने तथा शोधपत्र प्रकाशित करने के लिये प्रेरणा देता है अपितु दूसरे लेखकों को भी ऐसा करने के लिये सतत् प्रेरित करता है। मैंने देखा है कि अपना अमूल्य समय देकर प्रो० मिश्र निरन्तर विज्ञान परिषद् के कार्यालय में 'विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका' के सम्पादन कार्य में लगे रहते हैं। वे आगन्तुक वैज्ञानिकों को हिन्दी में शोधपत्र लिखने के लिये प्रेरित करते हैं। प्रो० मिश्र के अथक परिश्रम का ही परिणाम है कि 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का प्रकाशन १९५८ से लगातार सुचारु रूप से चल रहा है।

आज राष्ट्र को प्रो० मिश्र जैसे कर्मठ तथा राष्ट्र भाषा प्रेमी विद्वानों की अत्यन्त आवश्यकता है। जो राष्ट्रभाषा का उत्थान करके अपने राष्ट्र के उत्थान में सहायक हो सकें। मैं प्रो० मिश्र जैसे लगनशील, परिश्रमी वैज्ञानिक की दीर्घायु होने तथा सदैव स्वस्थ रहने की कामना करता हूं तथा ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि प्रो० मिश्र जैसा व्यक्तित्व इस देश को हमेशा प्रदान करता रहे।

रीडर, एनाटमी विभाग
चिकित्सा विज्ञान संस्थान
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-५

आचार्य शिवगोपाल मिश्र : मेरी दृष्टि में

मंजुलिका लक्ष्मी

आचार्य शिवगोपाल मिश्र जी के अभिनन्दन में मेरे द्वारा कुछ लिखा जाये यह प्रारम्भ में नितान्त असंगत प्रतीत हुआ क्योंकि मुझे लगा कि उनके वृहदाकार व्यक्तित्व का आकलन कर मेरा कुछ लिखना एक मूर्खतापूर्ण दुस्साहस से अधिक कुछ और नहीं। विशेष तौर पर तब जब कि वह जिस विषय के विद्वान हैं मैं उसका क,ख,ग भी नहीं जानती। किन्तु जैसे सूर्य को स्पर्श किये बिना भी समय-समय पर उसकी सुखद गरमाहट और उसके तेजोमय स्वरूप का अनुभव तो होता ही है, वैसे ही अप्रत्यक्ष रूप से विज्ञान परिषद् की गतिविधियों से न्यूनाधिक जुड़े रहने के कारण उनके व्यक्तित्व की गरिमा को दूर और निकट से देखा है।

यदि चन्द शब्दों में डॉ० मिश्र को व्याख्यायित करने का दायित्व आ पड़े तो मैं उन्हें अनथक परिश्रम और चिरस्फूर्ति का मूर्तिमान स्वरूप कहूँगी। उनकी कार्यक्षमता अपार है। यही कारण है कि साहित्य और विज्ञान दोनों के क्षेत्र में उन्होंने शोध स्तर से स्थायी महत्व के कार्य किये हैं। यही नहीं, अपनी निरन्तर प्रेरणा से उन्होंने दूसरे नवलेखकों और विद्यार्थियों से भी महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करवाये। डॉ० मिश्र की नीति रही है कि एक पल भी व्यर्थ गंवाये बिना अपनी पूरी क्षमता से अपने हिस्से का कार्य भलीभाँति सम्पादित करना। पिछले दो दशकों से विज्ञान परिषद् में सम्पन्न गोष्ठियों, कार्यशालाओं और अन्यान्य छोटी-बड़ी वैचारिक बैठकों के मूल प्रेरणा डॉ० शिवगोपाल मिश्र ही रहे हैं यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी। मृदा रसायन उनका शोधपरक कार्य अवश्य रहा है किन्तु उसके समानान्तर विज्ञान परिषद् जैसी एक सम्मानित वैज्ञानिक संस्था को भी निरन्तर स्फूर्तिवान तथा गतिशील रखने का श्रेय भी एक सीमा तक डॉ० मिश्र को ही है। संस्थाओं की यात्रा को सामूहिक सहयोग की आवश्यकता होती है फिर भी उस दीप को निरन्तर प्रज्ज्वलित रखने के लिये उसे स्नेहाप्लावित करने का कार्य किसी एक निपुण के ही हाथों में होता है और वर्तमान में यह उत्तरदायित्व डॉ० मिश्र ने सहर्ष अपनी बढ़ती वय के बावजूद अपने ऊपर ले लिया। उनकी यह निष्ठा और कर्मठता दोनों ही स्पृहणीय है।

सामान्यतः देखने में आता है कि अपनी छोटी-मोटी दैनन्दिन कठिनाइयों के कारण लोग किसी काम को हाथ में लेने से ही कतराते हैं या उससे बच निकलने का कोई समुचित बहाना ढूँढ निकालते हैं। किन्तु डॉ० मिश्र के सम्बन्ध में यह भी एक बड़ी प्रशंसनीय बात है कि उन्होंने अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयों को कभी भी अपने कार्य के राह में नहीं आने दिया।

वर्षों पहले की एक बात याद आती है। डॉ० मिश्र और उनकी विदुषी पत्नी (डॉ० रामकुमारी मिश्र) अपनी पुत्री के मस्तिष्क की शल्य-चिकित्सा करवाकर मद्रास से लौटे थे। उनसे वार्तालाप के बीच

यह पता लगा कि ऐसी कठिन परीक्षा के क्षणों में भी वहाँ उन्होंने अपने एक माह के प्रवास के दौरान हिन्दी भाषी क्षेत्र के प्रतिनिधि के रूप में विद्वत्जनों की गोष्ठी में कुछेक व्याख्यान दिये। उनकी पत्नी से यह सुनकर मन ही मन उनकी सराहना किये बिना न रह सकी। कठिन रोग से जूझती बेटी की चिकित्सा के दौरान अपना मानसिक संतुलन बनाये रखकर ऐसे व्याख्यानों में रुचि ले पाना एक असाधारण संयम की अपेक्षा रखता है। ऐसी ही असाधारण क्षमताओं के लिये वन्दनीय हैं डॉ० शिवगोपाल मिश्र।

अत्यन्त प्रसन्नता का अवसर है कि वे अपने कार्यशील और सोद्देश्य जीवन के सात दशक पूरे करने जा रहे हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि वे आने वाले अनेकानेक वर्षों तक स्वस्थ, निरोग और प्रेरणास्पद बने रहकर अपने सान्निध्य में आने वालों का मार्गदर्शन करते रहें और उनके कृतित्व के प्रकाश से सभी देश कालों में लोक लाभान्वित होता रहे। उनके सहज विलक्षण व्यक्तित्व की असाधारणता को कोटिशः अभिनंदन।

५ई/४, स्टाफ क्वार्टर्स
लिडिल रोड, जार्ज टाउन
इलाहाबाद-२११ ००२

प्रो० शिवगोपाल मिश्र : अनेक गुणों का सम्मिश्र

डॉ0 डी.डी. ओझा

भारत के कोने-कोने में जहाँ हिन्दी में विज्ञान की पत्र-पत्रिकायें पहुँचती हैं, भला कौन नहीं परिचित होगा सप्तगुणों यथा- हिंदी, विज्ञान, मर्यादा, सरलता, सौम्यता, उदारता एवं सहकारिता के सम्मिश्र, प्रो० (डॉ०) शिवगोपाल मिश्र से, जिन्होंने अपने जीवन के पाँच दशक हिंदी में विज्ञान सेवा के लिये न्यौछावर कर अपना नाम अमिट कर दिया है। डॉ० मिश्र एक विलक्षण प्रतिभा के धनी हैं। एक बार कोई व्यक्ति उनके संपर्क में आता है तो वह उनके कुशल व्यवहार एवं सौम्यता से प्रभावित होकर उनसे निरंतर संपर्क बनाये रखने की चेष्टा करता है।

१३ सितंबर १९३१ को उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जिले के नरौली गांव में जन्मे प्रो० शिवगोपाल मिश्र प्रारंभ से ही बहुत ही प्रतिभाशाली एवं कुशाग्र बुद्धि के व्यक्ति रहे हैं। उन्होंने कठिन परिश्रम करके उच्च्य शिक्षा प्राप्त की है। अतः वे बचपन से ही इस बात से परिचित रहे हैं कि देहात के छात्रों को उच्च्व शिक्षा प्राप्त करने हेतु किन-किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है। उनकी सहृदयता, पितृतुल्य विद्यार्थी प्रेम तथा विषय में पारंगता जैसे गुणों ने उनकी लोकप्रियता में चार चाँद लगा दिये हैं।

यह स्वाभाविक तथा कटु सत्य है कि किसी महान विभूति से संबंधित संस्मरणों को लेखनीबद्ध करना जरा कठिन सा लगता है। मेरी भी यही स्थिति हो रही। इस ऊहापोह और सोच-विचार के दौर से गुजरते हुये मैं विचार कर रहा हूँ कि प्रो० मिश्र, जिन्होंने मुझे पुत्रवत् आत्मीय स्नेह दिया, मैं क्या लिखूं, क्या छोड़ूँ, कैसे और कितना लिखूँ ? बहुआयामी एवं विशिष्ट व्यक्तियों के बारे में लेखन कार्य दुष्कर हो जाता है।

डॉ० मिश्र ने अपने नाम (शिवगोपाल) को सार्थक भी किया है, क्योंकि 'शिव' का अर्थ कल्याणकारी होता है, उन्होंने अपने जीवन में विज्ञान को जनमानस तक पहुंचाने, उसके लोकप्रियकरण करने, विद्यार्थियों को हिन्दी में लिखने हेतु उत्प्रेरित करने एवं युवा विज्ञान लेखक तैयार करने के अनेकानेक कल्याणकारी कार्य किये हैं। 'गोपाल' यानी साहित्यिक रस प्रेमी अर्थात् हिन्दी साहित्य में विज्ञान सेवा अथवा विज्ञान के माध्यम से हिंदी साहित्य प्रेम, जैसे अनुपम कार्य, प्रो० मिश्र ने किये हैं तथा जीवनपर्यन्त करते ही रहेंगे।

विज्ञान के सिद्वहस्त लेखक एवं संपादक

प्रो० मिश्र ने अपने जीवन के पाँच दशक हिन्दी में विज्ञान लेखन (सृजनात्मकता) में बिताये हैं। मूलतः वे कृषि रसायन के आचार्य एवं शीलाधर शोध संस्थान के निदेशक पद पर भी आसीन रहे, परंतु जीवनपर्यन्त उन्होंने सृजनात्मक विज्ञान लेखन कर विज्ञान के अन्यान्य विषयों यथा-पर्यावरण-प्रदूषण, लोकप्रिय भौतिकी, लोकप्रिय रसायन, कृषि एवं सागर विज्ञान आदि विषयों को जनसाधारण के लिये विपुल आलेखों एवं पुस्तकों के माध्यम से उपलब्ध करवाया है तथा विज्ञान के गूढ़ रहस्यों को उजागर किया है। निस्संदेह, यह उनकी विशाल बहुविषयी विद्वता का परिचायक है। विज्ञान की ऐसी कोई पत्रिका नहीं होगी जिसमें कि उनके लेख प्रकाशित नहीं हैं। यद्यपि डॉ० मिश्र के संपूर्ण प्रकाशित लेखों की सूची तो नहीं है परंतु इतना जरूर है कि उन्होंने कई सौ आलेख एवं दो दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित की हैं। यह उनके हिंदी एवं विज्ञान के अनुराग का ही फल है।

जैसा कि वर्णित किया जा चुका है, डॉ० मिश्र सन् १९५० से ही हिंदी प्रेमी बन चुके थे तथा

इसी वर्ष वे महाकवि 'निराला' के संपर्क में आये। उन्होंने सूफी साहित्य, लोक साहित्य एवं प्राचीन पांडुलिपियों का अध्ययन करके अनेक आलेख प्रकाशित किये तथा 'बिहारी के कवित्त' एंव 'सतकवि गिरा विलास' नामक रीतिकालीन ग्रंथ के संपादन का कार्य भी किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने श्रील प्रभुपाद के संपूर्ण साहित्य का भी हिन्दी अनुवाद किया है। इस प्रकार विज्ञान में ही वरन् भक्ति साहित्य के सृजन में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

विज्ञान के लोकप्रियकरण, सरलीकरण तथा उसमें रोचकता लाने एवं गूढ़ रहस्यों को समझाने में प्रो० मिश्र की अहम भूमिका रही है। 'पुस्तकायन' के माध्यम से उन्होंने विज्ञान के विविध विषयों पर अति सरल भाषा में बालोपयोगी साहित्य का न केवल स्वयं वरन् अन्य लेखकों से भी लेखन करवाकर भावी पीढ़ी के लिये साहित्य प्रकाशित करवाया है। मुझे भी इस योजना के अंतर्गत दो पुस्तकें लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उल्लेखनीय बात यह है कि विज्ञान परिषद् के माध्यम से प्रकाशित इन पुस्तकों में से अधिकांश पुस्तकें भारत सरकार के एन०सी०ई०आर०टी० द्वारा पुरस्कृत हुई हैं। इसी श्रृंखला में प्रो० मिश्र ने प्रभात प्रकाशन की योजना अनुसार विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय प्रदूषण का श्रृंखलाबद्ध प्रकाशन करवाया तथा लोकोपयोगी साहित्य यथा- रसायन, भौतिकी, पृथ्वी, सागर, अंतरिक्ष एवं मानव संबंधी रोचक तथ्यों को पुस्तकाकार रूप देकर प्रकाशित करवाया। मैंने भी प्रो० मिश्र के आदेशानुसार दो पुस्तकों का इस श्रृंखला में लेखन कार्य किया।

संभवतः डॉ० मिश्र देश के प्रथम वैज्ञानिक होंगे जो विगत ४३ वर्षों से 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का सफल संपादन कर इसको गौरवान्वित कर रहे हैं तथा हिंदी को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचाने का सफल प्रयास कर रहे हैं। यह हिन्दी की प्रथम शोध पत्रिका भी है।

टीम भावना के उत्प्रेरक

आज के कलिकाल में व्यक्ति स्वयं के लिये तो कुछ भी कर सकता है किंतु समष्टि के लिये या संस्था के लिये अथवा अपने कनिष्ठों के लिये बहुत कम लोगों की भावना होती है। प्रो० मिश्र का नाम इस कार्य में भी अग्रगण्य है। आज की विषम परिस्थितियों में टीम भावना को लेकर चलना बहुत ही दुष्कर कार्य है जिसमें त्याग, क्षमाशीलता एवं उदारता अति आवश्यक होती है। डॉ० मिश्र अपने शोधार्थियों को अपने शोध कार्य के अतिरिक्त हिंदी में विज्ञान संबंधी आलेख लिखने हेतु उत्प्रेरित करते रहते हैं। जहाँ कहीं भी उन्हें वैज्ञानिक संगोष्ठियों/व्याख्यान आदि कार्य हेतु आमंत्रित किया जाता है, वे पहले हिंदी में विज्ञान लेखन अथवा प्रादेशिक भाषाओं में विज्ञान लेखन के पक्षधर होते हैं।

विज्ञान परिषद्, प्रयाग जो देश की प्रतिष्ठित एवं प्राचीनतम पंजीकृत वैज्ञानिक संस्था है, उसके वे विगत ४५ वर्षों से स्थाई स्तम्भ हैं तथा कालांतर में भी बने रहेंगे। डॉ० मिश्र इस संस्था के उन्नयन में सदैव प्रयत्नरत रहते हैं तथा आज जो आप 'विज्ञान' पत्रिका का रूप देख रहे हैं, उन्हीं के प्रयास का फल है। इसका संपादन भी सर्वोत्कृष्ट है।

हर्ष का विषय है कि प्रो० मिश्र एवं अन्य मूर्धन्य विद्वानों के प्रयास से विज्ञान परिषद्, विज्ञान कर्मियों एवं विज्ञान लेखकों का राष्ट्रीय स्तर का लोकप्रिय मंच बन गया है। डॉ० मिश्र के अनन्य प्रेम एवं निष्ठा से आज विज्ञान परिषद् प्रयाग की कई शाखायें खुल चुकी हैं। उसमें एक जोधपुर शाखा भी है, जिसमें शताधिक सभ्य हैं तथा यह शाखा हिंदी में विज्ञान को जनमानस तक पहुंचाने में सक्रियता से कार्य कर रही है।

मैं भी अपने आपको धन्य मानता हूँ कि मुझे ऐसे वरेण्य सरस्वती पुत्र का आत्मीय स्नेह, मार्गदर्शन मिला जिन्होंने मेरे जैसे अल्पज्ञ के लेखन को परिष्कृत किया। मुझे डॉ० (श्रीमती) मिश्र का भी बहुत स्नेह मिला। मैं आशा करता हूँ कि कालांतर में भी वे मुझे अपनी कृपा का पात्र बनाये रखेंगे।

वैज्ञानिक, भू-जल विभाग
'गुरुकृपा' ब्रह्मपुरी
हजारी चबूतरा, जोधपुर-३४२ ००१

प्रात: स्मरणीय आदरणीय डॉ० साहब

डॉ0 अरविन्द मिश्र

प्रोफेसर शिवगोपाल जी..... जी नहीं, मैं उन्हें अपने प्रिय सम्बोधन, डॉ० साहब, से ही संबोधित करूंगा क्योंकि डॉ० साहब व्यक्तित्व और कृतित्व के उस शिखर पर हैं जहां विशेषण गौण हो जाते हैं। डॉ० साहब का संस्पर्श पाकर विशेषण अर्थगौरव पाते हैं किन्तु उनके समक्ष बहुत बौने से हो जाते हैं। सूर्य को दीपक दिखाने सरीखा ही है उन्हें प्रोफेसर या अन्य किसी विशेषण से विभूषित करने का प्रयास करना किन्तु परम्परा के अनुसार उन्हें संबोधित करने के लिये किसी सम्मानसूचक शब्द का सहारा तो लेना ही होगा.... तो डॉ० साहब चलेगा। मैं विगत दो दशकों से उन्हें यही संबोधन देता रहा हूं और उनका सहज स्नेह पाता रहा हूं।

यह मेरा सौभाग्य है कि विगत दो दशकों से कुछ ज्यादा ही समय से मैं डॉ० साहब की स्नेहिल छत्रछाया में रहा हूं। मैं इसलिये भी अपने को धन्य मानता हूं कि डॉ० साहब ने दिक्काल की विषमताओं के बावजूद मुझे सदैव याद रखा है। विभिन्न वैज्ञानिक पर्व-त्योहारों पर जिम्मेदारियां भी सौंपी हैं और निरन्तर कुछ नया, कुछ धांसू, करने को उत्साहित किया है। मुझे सदैव ऐसा लगता रहा है कि वे किसी वैज्ञानिक अश्वमेध यज्ञ की तैयारी में जुटे हैं और कोई बड़ा कार्यदायित्व मुझे भी सौंपने वाले हैं। इन पंक्तियों को लिखते समय भी यही मनोभाव प्रबल है।

कर्मठ व्यक्तित्व

अंग्रेजी की एक मशहूर कहावत 'लिव इन डीड्स नाट इयर्स' डॉ० साहब पर शब्दशः चरितार्थ होती है। जो कोई भी इनके वृहद अन्तहीन से कृतित्व के अपरिमित विस्तार की ओर निहारता है ठगा सा रह जाता है। दर्जनों छात्रों से डाक्टरेट कराना, पचासों पुस्तकों का प्रणयन, सैकड़ों शोधपत्र, असंख्य रेडिया वार्तायें लिख, 'भारत की सम्पदा' जैसे विशद ग्रन्थ में सम्पादन सहयोग और यही नहीं इस्कॉन द्वारा श्रीलप्रभुपाद की प्रकाशित विश्वप्रसिद्ध पुस्तकों का खण्डवार हिन्दी अनुवाद। और इतना सब एक ही व्यक्ति द्वारा मात्र कुछ दशकों में। अकल्पनीय किन्तु सच। डॉ० साहब का यह विशद रचना संसार यह बताता है कि उन्होंने कितना कर्मप्रधान जीवन जिया है और पल पल का सदुपयोग किया है। डॉ० साहब के व्यक्तित्व का यह पहलू अत्यन्त ही अनुकरणीय है। कदाचित यही कारण रहा है कि डॉ० साहब सदैव नवोदित लेखकों को कठोर श्रम हेतु प्रेरित करते हैं। थोड़ा डांटते डपटते भी हैं, किन्तु स्नेह व मंगलकारी भावना के साथ। वे लोकप्रिय विज्ञान लेखन को भी कांटों भरी राह मानते हैं। उनका सदैव नारा रहा है श्रम एव जयते।

वैज्ञानिक ऋषि

भारतीय जीवनदर्शन में त्याग को सर्वोपरि स्थान मिला है। डॉ० साहब का जीवन त्याग से भरा है। भौतिक सुख-सुविधाओं का मोह तो जैसे उन्हें स्वप्न में भी नहीं रहा है। सादा जीवन और उच्च विचार की प्रतिमूर्ति डॉ० साहब 'कर तल भोजन तरु तल वास' का ही अनुसरण किया है। उच्च पद और सुविधासम्पन्नता के बावजूद भी उन्होंने कुछ वर्षों पूर्व तक साइकिल नहीं छोड़ी। हमेशा

भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति और डॉ० साहब

भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति (भाविकलेस) का जन्म डॉ० साहब के ही अभिभावकत्व में हुआ। भाविकलेस के संस्थापक अध्यक्ष प्रो० राजीव रंजन उपाध्याय जी द्वारा आहूत समिति के पहले अधिवेशन (१६६७) में डॉ० साहब सदल बल (बिना मानदेय और मार्ग व्यय के) फैजाबाद पहुँचे थे और पहले अधिवेशन को गरिमामंडित किया था। उनका यह स्नेह, औदार्य भला कभी भूला जा सकेगा ! हिन्दी साहित्य में उत्तरोत्तर और निरन्तर अपेक्षित होती इस विधा की प्राणप्रतिष्ठा के लिये डॉ० साहब प्राण-प्रण से जुट गये और हमें हर तरह से प्रोत्साहित किया। वे आज भी समिति के संरक्षक हैं और उनका मार्गनिर्देश हमें मिलता रहता है।

समिति के दूसरे अधिवेशन में धनाभाव एक प्रमुख समस्या थी। अपनी चिन्ता मैंने डॉ० साहब से जतायी तो उन्होंने फौरन हमें आमन्त्रित किया कि यह अधिवेशन विज्ञान परिषद् के संयुक्त तत्वावधान में कराया जाये। वहां सभी सुविधायें समिति को सहज ही उपलब्ध हो गईं। यही नहीं, कार्यक्रम के दौरान ही डॉ० साहब ने निर्देश दिया कि मैं कार्यालय से एक हजार रुपये भी प्राप्त कर लूं, जिससे विविध व्ययों का भुगतान हो जाये। मैं उनकी इस अहैतुकी कृपा से अभिभूत था। समिति के अर्थाभाव के दिनों मैं स्वयं विज्ञान परिषद् की आर्थिक स्थिति को दरकिनार करते हुये उनका यह आर्थिक सहयोग कभी भूल नहीं सकता।

विश्वविद्यालय विज्ञान परिषद् या अन्य स्थलों पर वे साइकिल से आते जाते रहे हैं। पुत्र आशुतोष के अमेरिका जाने और डालर की सुविधासम्पन्नता के बावजूद भी उन्होंने अपनी जीवनशैली में कोई परिवर्तन नहीं किया है। वही सादापन, साधारण कपड़े, ऋषितुल्य जीवन। इनका अभीष्ट भौतिक सुख-सुविधायें नहीं बल्कि बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय अनवरत कुछ नया करते रहने की है। अपनी लेखनी के माध्यम से उन्होंने जनता-जनार्दन की सेवा की है। वे चिन्तन और लेखन के उच्चतर सोपानों तक पहुंचने के सदैव लालायित दीखते हैं। वे ऋषि परम्परा के ही एक अग्रणी, आधुनिक वैज्ञानिक ऋषि हैं।

शास्त्रीय दृष्टि

मानव जीवन की अनेक कलात्मक अभिव्यक्तियों में लेखन भी एक है। यह वृत्ति भी बहुत कुछ प्रकृतिप्रदत्त होती है और सतत् अभ्यास से इसमें निखार लाया जा सकता है। लेकिन चाहे जितना भी अभ्यास कर ले, हर कोई गोस्वामी तुलसीदास तो नहीं हो सकता। लेखन के पार्श्व में शायद गहरे संस्कारों की भूमिका है। यह सभी के वश की बात नहीं। डॉ० साहब में एक अप्रतिम लेखकीय व्यक्तित्व सत्ता की मौजूदगी के साथ ही वह दृष्टि भी है जिससे वे अच्छे बुरे लेखन में विभेद करते हैं। उन्होंने कई बार कुछ लेखकों की रचनाओं के बारे में बड़ी बेबाक टिप्पणियां की हैं- उनसे कहिये कि यह लेख कहीं और भेजें, 'विज्ञान' लायक नहीं है यह। डॉ० साहब सृजनात्मक लेखन की दुनिया में आज हमारे शिखरपुरुष हैं, प्रातःस्मरणीय, वन्दनीय और आराध्य।

मुझे उनका स्नेहाशीष मिलता रहा है, यह मुझे रोमांचित और गौरवान्वित करता रहता है। डॉ० साहब शतायु हों, यही कामना है।

सचिव, भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति
ए-२/२१, संजय अपार्टमेन्ट
चौकाघाट, वाराणसी

विज्ञान एवं साहित्य के अप्रतिम साधक : प्रो० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 हरिनारायण दुबे

मनुष्य यदि बचपन से ही अपनी विद्या तथा समाज दोनों के प्रति सचेत होकर नित नवीन चेतना के साथ साधना में रत हो जाय, तो उसका जीवन सफल एवं रचनात्मक माना जाता है। प्रो० मिश्र बाल्यकाल से ही विज्ञान जैसे दुरूह विषय में निष्णात होने के साथ साथ अंग्रेजी, हिन्दी एंव संस्कृत भाषाओं के अध्ययन में गहरी रुचि विकसित करते रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में जनसामान्य तक वैज्ञानिक विषयों के ज्ञान को पहुंचाने की महती आवश्यकता महसूस की जाने लगी थी। राष्ट्र की इस आकांक्षा की सेवा में वे विद्वान विशेष योगदान नहीं कर सके अथवा कर सकते थे, जो मात्र अंग्रेजी भाषा तक ही अपने ज्ञान को प्रकट कर सकते थे। इस राष्ट्रीय जनाकांक्षा को सर्वप्रथम इलाहाबाद विश्वविद्यालय के मनीषी एवं सन्त प्रोफेसर सत्य प्रकाश सरस्वती, पूर्व अध्यक्ष एवं प्रोफेसर, रसायन शास्त्र विज्ञान ने गहराई से समझा था। उन्होंने हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रकाशन का कार्य शुरू किया। प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी ने अपने गुरु सत्यप्रकाश सरस्वती के सपनों को साकार करते हुये वैज्ञानिक शोधों को हिन्दी भाषा के माध्यम से आजन्म जन-जन तक पहुँचाने तथा विज्ञान एवं राष्ट्रभाषा हिन्दी दोनों की सेवा करने का दृढ़ संकल्प लिया।

प्रो० मिश्र जी ने विज्ञान के क्षेत्र में हो रही नित नूतन खोजों से सम्बन्धित स्तरीय शोध पत्रों को विगत तीस-चालीस वर्षों से हिन्दी में प्रकाशित करके विज्ञान की दुनिया में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है। उनकी सेवाओं को ध्यान में रखकर उन्हें प्रदेश एवं देश की सरकारों एवं अकादमियों ने अनेक बार पुरस्कृत किया है। विज्ञान संकाय में स्थित विज्ञान परिषद् आज भी उनके निर्देशन में विज्ञान प्रसारण का केन्द्र बना हुआ है। शीलाधर मृदा शोध-संस्थान के निदेशक के रूप में उनकी वैज्ञानिक शोधोपलब्धियां विज्ञान जगत में सदा अमर रहेंगी।

प्रो० मिश्र जितनी गहरी पैठ विज्ञान के विषयों में रखते हैं, उतनी ही पैठ साहित्य एवं इतिहास जैसे विषयों में भी रखते हैं। एक तरफ उनका गहरा सम्बन्ध कविवर निराला जी से था, तो दूसरी ओर स्व० प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी एवं स्व० वासुदेव शरण अग्रवाल से रहा है। उनके अनेक शोध लेख प्राचीन भारतीय इतिहास एवं कला से सम्बन्धित हैं।

प्राचीन इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

विलक्षण प्रतिभा के धनी हैं डॉ० मिश्र

डॉ0 भुवनेश्वर सिंह गहलौत

किसी भी ऐसे विशिष्ट व्यक्ति के बारे में लिखना बहुत कठिन होता है जिसका व्यक्तित्व बहुआयामी हो और आप उसे अधिक समय से न जानते हों। विज्ञान के प्रचार-प्रसार तथा उसे विविध तरीकों से लोकप्रिय बनाने में गत ८६ वर्षों से कार्य कर रही संस्था विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ० शिवगोपाल मिश्र ऐसी ही हस्ती हैं। सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कारविजेता तथा दर्जनों मानक ग्रंथों के रचयिता शुकदेव प्रसाद तथा अमृत प्रभात हिन्दी दैनिक में अपने वरिष्ठ सहकर्मी रामधनी द्विवेदी से मैंने डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के बारे में काफी सुन रखा था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में प्रोफेसर के पद से अवकाश ग्रहण करने के बाद पूरी तरह से विज्ञान लेखन के लिए समर्पित डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से जब मैं मिला तो उन्हें मैंने उससे कहीं बढ़कर पाया जितना मैंने उनके बारे में सुना था।

विज्ञान परिषद् की जब स्थापना हुई थी तब ऐसी संस्थाओं को चलाना अधिक कठिन नहीं था किंतु वर्तमान में प्रतिभाओं को पहचान करके उन्हें विज्ञान लेखन के लिए प्रेरित करना, नौकरशाही के युग में अपने स्वाभिमान की रक्षा करते हुए संस्था के लिए वित्तीय सहायता जुटाना तथा रचनात्मक कार्यों से विमुख राजनेताओं से पटरी बिठाकर उन्हें विज्ञान के प्रसार में सहयोग के लिए प्रेरित करना आसान नहीं है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने अपने सतत प्रयासों से विज्ञान परिषद् में जान फूंक दी है। वे छोटे पैमाने पर ही सही उचित अवसरों पर गोष्ठियों-कार्यशालाओं का आयोजन कराते हैं और विज्ञान परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' के माध्यम से विज्ञान की जटिल तथा गंभीर जानकारियों को पाठक तक पहुँचाते हैं। इस कार्य को भले ही उनके निर्देश पर कोई दूसरा करता हो किंतु उसके पीछे मुख्य भूमिका तो उन्हीं की है। उनकी संगठनात्मक सूझबूझ, संस्थापरक अंतरदृष्टि तथा आयोजन-संयोजन संबंधी विशेषता अद्वितीय है।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र में अहंकार रंचमात्र भी नहीं है। अपने पौत्र की अवस्था वाले युवकों से वे उनके स्तर पर बात करते हैं। आत्म प्रशंसा से उन्हें सख्त परहेज है। वे मजाक करते हैं किंतु किसी का मजाक नहीं उड़ाते। आलोचना वे तभी करते हैं जब वह अपरिहार्य हो जाती है। किसी की कमियां बताकर उसे सुधारने का प्रयास करना वे आलोचना नहीं मानते। सत्तर वर्ष की अवस्था में भी विज्ञान परिषद् के 'ज्ञान मंदिर' में लगातार कई घंटों तक पठन-पाठन में व्यस्त रहकर रचनात्मक कार्य करते हुए उन्हें कभी भी देखा जा सकता है। वे छोटे बड़े सभी को उचित स्नेह और सम्मान देते हैं जिससे उसे यह कभी नहीं लगता कि उसकी उपेक्षा हो रही है। डॉ० मिश्र की विशेषता है कि वे अपने किए और दिए को गाते और सुनाते नहीं हैं। विज्ञान परिषद् के प्रति उनका समर्पण एक जुनून की शक्ल ले चुका है जहाँ वे अपने व्यक्तिगत सबंधों का दोहन भी विज्ञान परिषद् के लिए करने से नहीं हिचकिचाते हैं। विज्ञान परिषद् के विकासपथ पर आने वाली बाधाओं को वे चुनौती के रूप में लेते हैं।

अपनी सूझबूझ से उन्होंने कई बार विज्ञान परिषद् को वित्तीय संकट के भँवर से बखूबी सुरक्षित निकाला है। वे अकारण किसी से अपनी निष्ठा नहीं झाड़ते। विज्ञान परिषद् के लिए बनायी विकास योजना में बहुत कुछ उनकी इच्छानुसार नहीं होता फिर भी वे निराश नहीं होते। डॉ० मिश्र अपने आलोचकों के प्रति सजग तो रहते हैं किंतु मुखर नहीं होते।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र पर स्व० डॉ० नीलरत्न धर तथा स्वामी सत्यप्रकाश के गुणों का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। विज्ञान के साथ ही वे हिन्दी के भी उत्कृष्ट आलोचक हैं। निराला सहित अन्य कवियों तथा विधाओं पर इनके कई ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। समय के पाबंद डॉ० मिश्र को मैंने कई बार बीमारी की अवस्था में भी कार्य करते हुए देखा है। विज्ञान परिषद् का कार्य निर्बाध रूप से चलता रहे इसके लिए उनका ध्यान द्वितीय पंक्ति को तैयार करने तथा उसे मांज़ने पर भी लगा रहता है।

फतेहपुर जैसे पिछड़े जिले से इलाहाबाद आकर अपने पैर जमाना और फिर शीर्ष पर पहुँचना यह दर्शाता है कि डॉ० मिश्र 'सेल्फमेड मैन' हैं। वे सिद्धहस्त लेखक, आदर्श शिक्षक, मृदा विज्ञानी, रसायनज्ञ तथा विलक्षण प्रतिभा के धनी विद्वान हैं। इन सबसे बढ़कर वे अत्यन्त मिलनसार, सुहृदय तथा मददगार इंसान हैं। उनके संपर्क में एक बार आने पर उन्हें भूल पाना संभव नहीं होता। विज्ञान परिषद् को विकास पथ पर ले जाने के लिए वे हर पल लगे रहते हैं। वे चापलूसी, जी-हुजूरी और घटिया दर्जे की सिफारिश से दूर रहकर मेहनत के कठिन कार्य का अनुसरण करते हैं। ईश्वर से कामना है कि डॉ० मिश्र शतायु हों, स्वस्थ रहें और इसी तरह हमेशा विज्ञान के प्रचार-प्रसार में एक निष्काम कर्मयोगी की तरह लगे रहें।

वरिष्ठ पत्रकार
इलाहाबाद

जो अभी वैसे ही हैं

दर्शनानन्द

डॉ० शिवगोपाल मिश्र की जितनी प्रशंसा की जाए वही थोड़ी लगती है। वर्ष १६६४ में विज्ञान वैचारिकी अकादमी इलाहाबाद की ओर से 'डॉ० शिवगोपाल मिश्र स्नेह मंजूषा' का सम्पादन शुकदेव प्रसाद जी ने किया था। इस पुस्तक में मुझे भी मिश्र जी की प्रशंसा करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है (पृष्ठ २६-२८)।

अब प्रोफेसर (डॉ०) गिरीश पाण्डेय ने अवगत कराया है कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है। साथ ही उन्होंने यह भी इच्छा प्रकट व्यक्त की कि मैं भी इस ग्रंथ में एक आलेख प्रस्तुत करूँ।

समझ में नहीं आ रहा है कि अब मैं क्या लिखूँ। वही पूर्णरूपेण विज्ञान परिषद् को समर्पित, वही सादगी, वही चेहरे पर मुस्कान। हंसते रहेंगे, हंसाते रहेंगे, काम भी करते रहेंगे। गोष्ठियों में व्याख्यान देते समय भी हंसाते व मुस्कुराते ही रहते हैं। लगता है कि बातचीत कर रहे हैं।

मिश्र जी की वह बात नहीं भूलती जब कि कुछ वर्षों पूर्व एक बार आपने आम विकास सम्बंधी एक लेख 'विज्ञान' में प्रकाशित होने के सम्बंध में प्रेमचन्द्र जी को सुनाते हुए यह कह कर हंसाया था कि जब कोयल कू-कू बोलेगी तब आम वाला लेख छपेगा। फिर वह लेख 'विज्ञान' मई-जून १६६२ अंक (पृष्ठ ३३-४०) में प्रकाशित हुआ।

दिल्ली के प्रकाशक 'पुस्तकायन' द्वारा बाल विज्ञान माला की पुस्तकें विज्ञान परिषद् के माध्यम से प्रकाशित होने की योजना के अंतर्गत 'रंग-बिरंगे फल' मिश्र जी की ही कृपा से प्रकाशित होने के पश्चात् आपकी ही कृपा से और आप की ही इच्छानुसार दूसरी पुस्तक प्रकाशित होने के लिए मैंने 'फलों का राजा आम' पर सामग्री तैयार की जिसे भी मिश्र जी ने बड़ी रुचिपूर्वक अंतिम रूप दिया। इस बार अभी तक कोयल नहीं बोली, जबकि उसकी कई ऋतुएं बीत चुकी हैं। इस योजना के अंतर्गत पुस्तक लिखने की प्रेरणा डॉ० शिवगोपाल मिश्र के अतिरिक्त स्व० स्वामी सत्य प्रकाश जी ने भी दी थी।

डॉ० मिश्र विज्ञान परिषद् के प्रति इतने अधिक समर्पित हैं कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र का अर्थ विज्ञान परिषद् लगता है। विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा ही मुझे डॉ० गोरख प्रसाद स्मृति प्रथम पुरस्कार तथा विज्ञान वाचस्पति की उपाधि से सम्मानित किया गया। इनके चिन्ह जो मेरे पास हैं, डॉ० शिवगोपाल मिश्र की याद दिलाते रहते हैं।

हिन्दी में विज्ञान लेखन को उच्च स्तर पर पहुँचाने वाले, असंख्य शोध एवं सामान्य लेखों व पुस्तकों के रचयिता, हिन्दी में प्रकाशित विज्ञान शोध पत्रिका के सम्पादक, समय-समय पर हिन्दी में विज्ञान कार्यशालाओं, गोष्ठियों/संगोष्ठियों के प्रबंधक/आयोजक, महान अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक, मृदा विज्ञानी, विषय-विशेषज्ञ, अनेक विशिष्ट पुरस्कारों से सम्मानित, व्यवहार-कुशल, मृदुल, सरल स्वभाव वाले सभी के शुभाकांक्षी, आदर, सम्मान देने वाले व्यक्तित्व के डॉ० शिवगोपाल मिश्र अभी भी वैसे ही हैं। ऐसे ही वे बने रहें, यह मेरी हृदय से आदर के साथ कामना है।

पूर्व उपनिदेशक (उद्यान)
इलाहाबाद मण्डल
सी-६७, गुरुतेग वहादुर नगर (करेली हाउसिंग स्कीम), इलाहाबाद

विज्ञान और हिन्दी के क्षितिज का मिशनरी

प्रेमानंद चंदोला

इस विशेष 'अभिनन्दन ग्रन्थ' के संपादक और योजनाकारों, रचनाकारों, निर्माताओं में से एक- प्रो० गिरीश पाण्डेय का आग्रह/आदेश कुछ भी कहिये- यह था कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र अपने जीवन के सत्तर वसंतों के द्रष्टा हो रहे हैं, अतः इस अवसर पर उन्हें अभिनंदित करने का प्रस्ताव है। निस्संदेह ही उत्तम योजना लगी। मन गुनने लगा कि जो व्यष्टि सारी समष्टि का ध्यान रखता रहा है, स्वार्थ से ऊपर उठकर परमार्थ न सही, निज भाषा की प्रशस्त राह के हितार्थ सदैव प्रयासरत रहा है और विज्ञान के व्यापक क्षेत्र में हिन्दी कार्य संस्कृति का निश्छल मिशन लेकर चला हो, उस विशिष्ट नायक का तूर्यनाद अवश्य ही होना चाहिये।

विचारों के इसी ऊहापोह में डूबा था, लेकिन विचारधारा आगे बढ़ी नहीं। कारण भीषण गरमी की शुष्कता, राजधानी की रुक्षता और मस्तिष्क की उदासीनता। योजनाकारों के अनुस्मारक भी आये फिर भी दिमाग टस्स। संस्मरण लेखन हेतु अनुकूल मौसम, प्रकृति से तादात्म्य और सरस लेखन की बलवती प्रेरणा की एड़ लगानी जरूरी है। लेकिन वर्षा की बौछार शुरू हुई नहीं कि टपटप रिमझिम की प्राकृतिक लय बजने लगी और पुलकित तन, तरंगित मन और अभिप्रेरित मस्तिष्क के इशारे पर लेखनी चलने लगी। इसी का परिणामी उत्पाद है नाचीज का पुजापा रूपी आलेख। इसमें यह ध्यान रखना भी जरूरी था कि पूर्व प्रकाशित 'षष्ठिपूर्ति वाले अभिनन्दन ग्रन्थ' में वर्णित भावों, विचारों, संकल्पनाओं की पुनरावृत्ति न हो, वरना पुनरुक्ति दोष रसभंग कर देगा, जायका बिगड़ जायेगा और मौलिकता का आनंद तिरोहित हो जायेगा।

व्यक्तित्व के रूप रंग

आलेख का आरंभ तो हो गया है किंतु अब विचारणीय यह है कि कहां से शुरू करूं और कैसे शुरू करूं और किस तरह निर्वहन करते हुये इसे अंतिम परिणति तक पहुँचाऊं। हर व्यक्ति के व्यक्तित्व के अनेक पहलू अलग-अलग तरह से उजागर होते हैं। ये वस्तुनिष्ठ ही होते हैं लेकिन कुछ सीमा तक प्रेक्षक या प्रभावित व्यक्ति के हिसाब से व्यक्तिनिष्ठ भी हो सकते हैं। अनेक व्यक्तियों के कथ्य के आधार पर ही व्यक्तित्व विशेष के प्रति सामान्य धारणा बनती है और फिर साधारणीकरण होता है। कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के तीन रूप होते हैं- व्यक्तित्व का एक रूप वह है जैसा कि व्यक्ति अपने बारे में सोचता है, दूसरा वह रूप है कि विभिन्न लोग उस व्यक्ति के बारे में क्या सोचते हैं और तीसरा रूप वही है जैसा कि वास्तव में वह व्यक्ति होता है। इस प्रकार इन पक्षों के संकेतों-अनुसंकेतों के इर्द-गिर्द घूमते हुये, इनके आधार पर ही कहने वालों को कथ्य की सामग्री मिलती है। सामग्री की ये मदें, गुण, लक्षण और विशेषतायें ही व्यक्तित्व में परिलक्षित होती हैं। इनसे ही व्यक्ति जाना जाता है

और उसकी पहचान होती है।

व्यक्तित्व वर्णन में तटस्थ संश्लेषणात्मक और विश्लेषणात्मक दोनों शैलियों का प्रयोग अपेक्षित है, अभी नीर-क्षीर विवेक के अनुसार यह प्रस्तुति संतुलन रख पाती है। सार्थक ही जा सकती है। उत्साह का अतिरेक, बढ़ा चढ़ा कर बात करना, आसमान पर रख देना अथवा छिद्रान्वेषण करते रहना, गौण मदों को महत्व देना, सच्चाई को नकारना, अशालीनता के निचले स्तर तक उतरना आदि ऐसे कारक हैं जो वर्णना को इष्टतम युक्तिसंगत और संतुलित नहीं रहने देते। इन दोषों से बचना सही मायने में जरूरी है वरना सब कुछ बेमानी हो जाता है।

विज्ञान के क्षेत्र में, विज्ञान तथा अनुप्रयुक्त विज्ञान के विद्यार्थी का तो शिक्षण-प्रशिक्षण ही ऐसा होता है कि वह पहले प्रेक्षण करता है, फिर प्रयोग करता है और इन प्रेक्षणों तथा प्रयोगों की श्रृंखला के आधार पर अपने सामान्यीकृत निष्कर्ष निकालता है। विज्ञान का अध्येता अथवा प्रस्तोता सत्य की धुरी के निकट ही विचरता है और अतिरंजन अथवा अतिभंजन की सीमा तक जाना उसका कर्म नहीं होता। सत्य को ग्रहण करके आत्मसात् करना और उसे उकेरते हुये उद्घाटित करना ही उसका ध्येय, परम उद्देश्य होता है। इसका पालन ही उसका कर्तव्य बन जाता है।

यह एक विज्ञानी का अभिनंदन-ग्रन्थ है तो क्या ! इसमें भी साहित्यिक गरिमा का पुट होना चाहिये। बात तभी बनेगी जब एक वैज्ञानिक के परिप्रेक्ष्य में प्रयुक्त सामग्री सरस साहित्य का अंश बने, तभी विज्ञान के योगदानियों की भूमिका सराही जा सकती है। विज्ञान की इबारत को लोग नीरस मानते हैं, अतः हम सबका प्रयास होना चाहिये कि इस पुरानी धारणा को झुठला सकें और कुछ अच्छा दिखला करके फिर इठला सकें। अपने अल्प साहित्यानुरागी अनुभव और शब्दों के एक अदने सिपाही यानी शब्द क्षेत्र, कोश क्षेत्र, के एक भिक्षु के नाते प्रकट कर रहा हूं कि विज्ञान की रचनाओं, कृतियों, ग्रंथों को हम उच्चस्तरीय सरस साहित्यिक दस्तावेजों की श्रेणी में रखे जाने की चेष्टा करें, ताकि विज्ञानकर्मी भी अपनी ग्रीवा ऊंची करके फख़्र कर सकें। शब्दपुंज, शब्दावली तथा वाक्यावली के ललित क्रमचयन और संयोजन से ही साहित्यिक अथवा वैज्ञानिक पाठ्य-सामग्री का निर्माण होता है। हमारा प्रयोजन यही है कि विज्ञान के ग्रंथ भी विशुद्ध साहित्य के समांतर टिक सकें और स्थापित हो सकें।

इस शब्दजाल या शब्दों के ताने-बाने के माध्यम से मेरी यह अभिव्यक्त करने की आकांक्षा है कि विज्ञान के लेखक प्रेरित होकर इस दिशा में अग्रसर होकर इस उद्देश्य की ओर ललकें। विज्ञान के लेखकों, रचनाकारों तथा संपादकों में ऐसा करने की पूरी क्षमता है, बस विचारशील व साहित्यानुरागी बनकर रचना को साहित्यिक शैली में ढालने की कोशिश में लगे रहना। हमारी पुरानी पीढ़ी, हमारे अग्रज ऐसी मिसालें विरासत में बहुत कुछ दे भी गये हैं। हमें उनसे प्रेरणा लेनी होगी और परचम लहराते हुये इस दिशा में आगे बढ़ना होगा। लेकिन इसमें तनिक अधिक परिश्रम, सब्र और मनन-चिंतन अपेक्षित है। पर कठिन कुछ भी नहीं। तभी आलेखकों, निबंधकारों, कृतिकारों, संस्मरण उकेरकों, संपादकों, संपादन मंडल के सदस्यों की प्रतिभा को झलकने का अवसर मिलेगा।

भूमिका लंबी हो गई है। अब विषय में प्रवेश किया जाये। मुखड़े के बाद अब मुख्य काया की बारी है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र के व्यक्तित्व और कृतित्व पर ही अभिनंदन ग्रन्थ का आइना घूमेगा और इन छवियों का अंकन करने वाले व्यष्टि अनेक होंगे जो उनसे रूबरू होकर अपना मंतव्य प्रकट करेंगे। तभी ग्रंथ के माध्यम से इनकी संपूर्ण तस्वीर सामने आयेगी। अपने वक्तव्य में मैं श्रद्धेय मिश्र जी के

व्यक्तित्व के कुछ पक्षों से संबंधित अनुभवों, उनके स्वभाव, प्रकृति, उनके शैक्षिक कार्यकलापों तथा उनकी संस्थागत व अकादमिक गतिविधियों को मजमून बनाकर लफ़्ज़ों में बांधने की कोशिश करूंगा। सार-सार की बात ही करना चाहूंगा कि पन्नों की रंगाई ठोस सामग्री से हो। निस्सार बातों से पन्ने भरना व्यर्थ होगा। आसमान में हवाई बातें करने के बजाय जमीन से जुड़े रहना श्रेयस्कर होगा।

मिश्र जी के बाल्यावस्था से युवावस्था से होकर प्रौढ़ावस्था तक से व्यष्टिगत पहलुओं का अवलोकन करें तो मोटे तौर पर क्रमशः पुत्र रूप, विद्यार्थी रूप, सहपाठी रूप, सखा रूप, शिष्य रूप, सहयोगी रूप, मित्र रूप, बंधु रूप, शिक्षक अथवा गुरु रूप, नागरिक रूप, पति रूप, पिता रूप, लेखक रूप, संपादक रूप, संरक्षक रूप, आचार्य रूप, निदेशक रूप, मिशनरी रूप, प्रबंधक रूप, संस्था संचालक रूप सामने आते हैं। ज़ाहिर है कि लेखनी इन रूपों की ही परिक्रमा करेगी।

उन्हें जैसा मैंने जाना

सार रूप में एक शब्द में व्याख्यायित किया जा सकता है कि शिवगोपाल जी एक व्यक्ति नहीं बल्कि स्वयं में एक संस्था हैं। स्वभाव से उदारमना हैं। मैंने उन्हें कभी उत्तेजित और प्रतिक्रियान्वित होते हुये नहीं देखा। तर्कों के दौरान धीर प्रशांत और गंभीर ही पाया। बातचीत और विचार-विमर्श में कड़वी बात को नजरअंदाज कर वे बड़े मजे में बिना किसी को ठेस पहुंचाये अपनी बात सहज रूप से व्यक्त कर देते हैं। वैसे विश्लेषणात्मक चपलता और चतुराई भी उनका एक गुण है। उच्छृंखल, अपरिपक्व तथा विरोधी व्यक्तियों और निंदकों की उक्तियों के गरल को चुपचाप पी जाने की क्षमता भी उनमें है। इस तरह उनका व्यक्तित्व, शिवत्व, गोपालत्व से लेकर विविध आयामों का मिश्र रूप है। यथा नाम तथा गुण वाली उक्ति उन पर पूरी तरह से चरितार्थ होती है।

अब पहले आत्मा पीछे परमात्मा या पहले घर की फिर बाहर की बात करें। दांपत्य जीवन और गृहस्थ जीवन की चर्चा करें। इससे पहले वाले जीवन के रूपों का अवलोकन चूंकि मैंने नहीं किया, इसलिये उस बारे में कुछ भी कहने के लिये मैं अक्षम हूँ क्योंकि अनभिज्ञ हूं। पुरुष प्रधान समाज में होते हुये भी वे निस्संदेह पत्नीभक्त हैं और सच्चे जीवनसाथी हैं। अपनी विदुषी पत्नी का ध्यान तो नित्य रखते ही हैं किन्तु अस्वस्थ पत्नी की देखभाल वे तन-मन-धन से करते हैं। अक्टूबर, २००० की बात है जब विज्ञान परिषद् में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की इंजीनियरी विषयक शब्दावली कार्यशाला चल रही थी। उनकी पत्नी घर में फिसल कर गिर पड़ी थीं तो फोन आते ही वे तुरंत चल पड़े थे, सेवा सुश्रुषा में लगे रहे और दूसरे दिन विज्ञान परिषद् कार्यशाला में नहीं आये। उस आपातकाल की प्राथमिकता पत्नी की परिचर्या थी।

आदर्श पति के अतिरिक्त वे आदर्श पिता भी हैं। विस्तार में स्पष्टता से बताने के लिये सुपात्र तो बेटा चि० आशुतोष और पुत्रियां हैं लेकिन अपनी इस अवस्था में भी उनकी कुशलक्षेम के लिये वे कष्ट की परवाह किये बिना दूर दराज समुद्र पार तक भी चले जाते हैं प्रत्यक्ष देखने के लिये। बच्चों के साथ मित्रवत् रहते हुये स्नेह वात्सल्य उड़ेलते हैं। पुराने घरों में तो पिता का डर या झिझक और दूरी भी बनी रहती थी। यहां ऐसी कोई बात नहीं।

क्योंकि गुरु भी कभी शिष्य रहे थे, इसलिये इस सिलसिले को उन्होंने उदारता से चलने दिया। प्राचीन गुरु-शिष्य परंपरा के वे कायल रहे हैं। अपने गुरुओं स्वामी सत्य प्रकाश, प्रो० नील रत्न धर, प्रो० राम दास तिवारी प्रभृति के वे परम प्रिय शिष्य रहे हैं। उनके प्रति शिष्यत्व वे निष्ठा, श्रद्धा व

आत्मीयता से अंत तक निभाते रहे। मुझे अच्छी तरह याद है कि स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी जब विज्ञान परिषद् परिसर के 'ऋतंभरा' आश्रम में रहते थे तो वे तन्मयतापूर्वक उनका ध्यान रखते थे। उनके अंतिम दिनों में तो बहुत अधिक सेवा करनी पड़ी किंतु उसे वे हंसी खुशी से कर्तव्य समझकर करते थे। गुरु का आदेश ब्रह्म वाक्य की तरह शिरोधार्य करते हुये बखूबी निभाते थे। आज के जमाने में तो ये अब किताबी कथाओं की बातें हैं। गुरुजन भी इन्हें बहुत मानते थे और आशीषते थे।

उधर गुरु के नाते मिश्र जी शिष्यों का भी ध्यान रखते रहे और उनके कल्याण के लिये सदा तत्पर रहे हैं। मिश्र जी के शिष्य भी भारी संख्या में निकलते रहे और उनकी छत्रछाया में प्रगति कर रहे हैं। इस अभिनंदन ग्रन्थ की व्यवस्था और संपादन का श्रेय भी उनके शिष्यों में से एक प्रो० डॉ० गिरीश पाण्डेय, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, नरेन्द्र नगर, फैजाबाद को जाता है। विज्ञान परिषद् में ही कई अपरिपक्व युवाओं को प्रशिक्षण देकर उन्हें दीक्षा देकर उनका उद्धार किया है। 'विज्ञान' मासिक के संपादन का कार्य सिखाकर और विज्ञान साहित्य देकर कई शिष्यों को लेखन में निष्णात होने के लिये अनुप्रेरित किया। दौड़ने के लिये उन्हें जमीन मुहैया की। प्रसंगतः दिमाग में आ रहा है कि मिश्र जी के अधिकांश शिष्य तो गुरुभक्त रहे, सुपात्र रहे, गुणी रहे किंतु जाने क्यों पावन प्रयाग की भूमि में भी कुछ शिष्य अपने अति अहं के कारण या अन्य किसी कारण, अपात्र या गुणहीन निकले- हो सकता है कि मेरी धारणा भ्रांत हो। खैर, फिर भी शिवगोपाल मिश्र जी 'क्षमा बड़ेन को चाहिये छोटन को उत्पात' वाले दोहे को मानते हुये इसे नजर-अंदाज कर देते हैं। विशाल हृदयता का परिचय देते हैं। गुरु-शिष्य की अटूट श्रृंखला में कहीं खोट आ जाय तो इस परंपरा का सिलसिला रुकता थोड़े ही है, परंपरा की सुगंध तो फैलती रहती है। अपवाद तो होते ही हैं।

विज्ञान परिषद् के समापवर्तक (सार्व गुणांक)

डॉ० मिश्र के लिये कितना सुखद रहा है कि जहां उनकी अध्ययन भूमि रही है वहीं उनकी अध्यापन भूमि, कर्म भूमि, साधना भूमि और सुयश भूमि भी रही है अर्थात् प्रयाग। बहुत कम लोगों को यह सब नसीब हो पाता है। यहीं उनके शिक्षण, लेखन, संपादन, प्रबंधन, निर्देशन आदि गतिविधियों का चरम उत्कर्ष हुआ और उन्हें अंजाम मिला। रसायन के प्राध्यापक पद से लेकर आचार्य पद तक शिक्षक के नाते इलाहाबाद विश्वविद्यालय उनकी कर्मस्थली रही। लेकिन इसके अलावा शैक्षिक, लेखकीय, संपादकीय, प्रबंधकीय कार्यकलापों की एक अन्य कर्मस्थली या साधना स्थली से भी वे संबद्ध रहे। इन क्रियाकलापों के इस प्रसिद्ध केंद्र का नाम है 'विज्ञान परिषद्' जिसे विज्ञान के नामी गिरामी तपोपूतों, वैज्ञानिक ऋषियों ने स्थापित किया था। सबसे पुरानी हिंदी पत्रिका 'विज्ञान' की गंगोत्री यही संस्था है और हिंदी में शोध पत्र विषयक एकमात्र उच्चस्तरीय त्रैमासिक पत्रिका अनुसंधान पत्रिका की यमुनोत्री भी यही रही है। यही नहीं, सरस्वती की प्रतीक यानी विविध सारस्वत गतिविधियों की पुनीत अंतःसलिला भी यहीं बहती है।

डॉ० मिश्र अकेले नहीं, विभिन्न विद्वान सदस्यों की टोली को साथ लेकर चलते हैं- विज्ञान और हिंदी का मिशन पूरा करने के लिये। यूनिवर्सिटी में अध्यापन के उपरांत उनकी दैनंदिनी रही कि वे नियमित रूप से विज्ञान परिषद् आते रहे हैं। यूनिवर्सिटी में तो छुट्टियां होती हैं लेकिन यहां तो छुट्टियां भी नहीं होतीं। यहां तो छुट्टी में काम और अधिक करना होता है। व्यक्तिगत संपर्क से इस संस्था के लिये धन जुटाने, गोष्ठियों का आयोजन करने, पत्रिकाओं के नियमित प्रकाशन और भवन-न्यास

अनुरक्षण के लिये मिश्र जी पं० मदनमोहन मालवीय जी की भांति लगे रहते हैं। उनके सत्प्रयासों से ही परिषद् का भव्य प्रेक्षालय तथा अतिथि गृह निर्मित हुआ है। आये दिन विभिन्न संस्थाओं द्वारा इस प्रेक्षालय की मांग रहती है और जो आय का भी एक साधन है।

विचार करने पर पाता हूं कि इतने वर्षों की लंबी अवधि से इस परिषद् की गतिविधियां कैसे अबाध गति से चल रही हैं ? यहां के कर्णधार तो अंतरालों पर चुने और बदले जाते हैं। परिषद् के अध्यक्ष, प्रधानमंत्री, पत्रिका के संपादक, उपसंपादक आदि बदलते रहे हैं। परिषद् का कार्यालय है, कर्मचारी हैं। कैसे इनका पर्यवेक्षण होता है ? इन सूक्ष्मताओं पर शायद ही किसी ने गौर किया हो। परिषद् की अनुसंधान पत्रिका के नियमित संपादक के नाते और एक निष्ठावान व समर्पित सेवी, तथा मिशनरी के रूप में डॉ० शिवगोपाल मिश्र ही परिषद् के खिदमतगार और समापवर्तक या सार्व गुणांक रहे हैं जिनके दमखम पर यह संस्था जीवंत, शैक्षिक कार्यकलापों का सक्रिय केंद्र और सुचर्चित बनी हुई है। वे अब तक इसके प्रधानमंत्री, विज्ञान के संपादक भी रहे हैं लेकिन किसी पद पर न रहते हुये भी वे इसकी बागडोर सँभालते रहे और अपने अप्रतिम परिश्रम, पुरुषार्थ और पुण्यकार्य का परिचय देते रहे हैं। उनमें इस वय में भी ऊर्जा है, युवकों जैसा उत्साह और कर्म करने की उमंग है। सेवानिवृत्ति से पहले तो वे पढ़ाने के बाद शाम को परिषद् आते रहे किंतु अब सेवानिवृत्ति के बाद दोपहर से लेकर शाम तक नित्यप्रति इस विज्ञान मंदिर में कार्यरत रहते हैं। यह परिसर वैज्ञानिकों, विज्ञान सेवियों, लेखकों, संपादकों, विद्वानों, अध्यापकों आदि का मिलन-स्थल या संगम भी है जहां संबद्ध इकाइयां बौद्धिक अवगाहन करती हैं।

डॉ० मिश्र की सूझबूझ से आजकल विज्ञान परिषद् में कुछ पाठ्यक्रम भी चल रहे हैं जिनके माध्यम से अनेक युवा प्रशिक्षित होकर लाभान्वित हो रहे हैं। नई परियोजनाओं से संस्था में नई स्फूर्ति आती है और जीवंतता बनी रहती है वरना संस्थायें भी मृत होने लगती हैं। विज्ञान परिषद् पर निश्चित रूप से ऐसे निस्वार्थ साधक की पूरी छाप है और तभी उसकी क्रियाशीलता में निरंतर प्रवाह बना हुआ है।

अंत में, परिषद् के वर्तमान प्रधानमंत्री, पूर्व आचार्य, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, पूर्व निदेशक, शीलाधर संस्थान, अग्रणी विज्ञान लेखक, अनुभवी संपादक, कुशल संस्था प्रबंधक, पथ प्रदर्शक, जुझारू व्यक्तित्व, सहृदय व्यष्टि, विज्ञान मनीषी और विज्ञान तथा हिंदी के क्षितिज के मिशनरी परम आदरणीय डॉ० शिवगोपाल मिश्र को करबद्ध प्रणाम। ईश्वर उन्हें स्वस्थ व निरोग रखें और लंबी आयु दें- यही कामना है।

ई-१, साकेत, एम.आई.जी. फ्लैट
नई दिल्ली- ११० ०१७

विज्ञान शिरोमणि प्रोफेसर डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० विष्णुदत्त शर्मा

विज्ञान परिषद् की स्थापना सन् १६१३ में हुई। संसार परिवर्तनशील एवं चलायमान है। संयोग की बात है कि स्थापना वर्ष का दहाई अंक और इकाई अंक दहाई होकर जो वर्ष बना है उसमे आविर्भूत हुये विज्ञान भूषण प्रो० (डॉ०) शिवगोपाल मिश्र। यही नहीं, यदि स्थापना वर्ष को ऐसे ही स्वीकार करें तो वह प्रो० मिश्र की जन्म तिथि कहलाई। अर्थात् प्रो० मिश्र जी का जन्म १३ सितम्बर, सन् १६३१ को यमुना नदी के किनारे नरौली ग्राम, जिला फतेहपुर में हुआ तथा कार्यस्थली बनी गंगा नदी किनारे इलाहाबाद। इस प्रकार प्रो० मिश्र जी को बचपन से आज तक प्राकृतिक स्रोत प्रवाहित जल का ही सामीप्य मिला। अतः आपका जीवन प्रवाहमय है। आप विगत अनेक वर्षों से विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री हैं।

वर्ष १६६४ से मैं 'विज्ञान प्रगति' का नियमित लेखक रहा। संयोगवश प्रो० मिश्र जी की नियुक्ति वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, दिल्ली में हो गई और सौभाग्यवश मेरा परिचय प्रो० मिश्र जी से हुआ तो प्रथम दृष्टि में ही मैं उनके सादा जीवन से प्रभावित हुआ। वर्ष १६७०-७२ में आपने वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान नई दिल्ली के गौरव ग्रन्थ Wealth of India का हिन्दी रूपांतर 'भारत की संपदा' के सम्पादन एवं प्रकाशन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है आपके निर्देशन में मैंने 'भारत की सम्पदा' के लिए अनुवाद कार्य किया और इस प्रकार प्रो० मिश्र जी के संपर्क में आकर मुझे उनके व्यक्तित्व को समझने तथा कृतित्व को जानने का अवसर मिला।

साधारणतया, जब किसी व्यक्ति की समीक्षा की जाती है तो पांच वकार के दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाता है। संस्कृत की एक सूक्ति में कहा गया कि–

विद्यया वपुषा वाचा वस्त्रेण विनयेन च।
एतैः पंच वकारेण नरो प्राप्नोति गौरवम्।।

अर्थात् विद्या, वपुषा (शरीर), वाचा (वाणी), वस्त्रेण (वस्त्र) और विनयेन (विनय) आदि पांच वकारों के आधार पर व्यक्ति की पहचान स्वतः बन जाती है।

जहां तक विद्या का प्रश्न है, प्रो० मिश्र जी के विषय में वर्णन करना सूर्य को दीपक दिखाना है। प्रो० मिश्र जी हिमालय रूपी ज्ञान की वह संजीवनी हैं, जिसको प्राप्त करना सरल नहीं है। यह इलाहाबाद नगर तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय का सौभाग्य है जहां प्रो० मिश्र जी जैसे उद्भट विद्वान का मार्गदर्शन है। आपने कृषि रसायन विशेषज्ञ डॉ० नीलरत्न धर के निर्देशन में अम्लीय एवं क्षारीय मृदाओं की निर्माण प्रक्रिया पर अनुसंधान करके इलाहाबाद विश्वविद्यालय से डी.फिल. की उपाधि प्राप्त की। विगत ४६ वर्षों से अध्यापन तथा अनुसंधान कार्य में रत शोधार्थियों, विद्यार्थियों एवं विज्ञान लेखकों

का आप निर्देशन करते आ रहे हैं। शीलाधर मृदा शोध संस्थान, इलाहाबाद के निदेशक पद से आप सेवा निवृत्त हुये हैं। आप नेशनल एकेडमी ऑफ साइंस के फेलो भी हैं अतः आपकी विद्वता स्वयंसिद्ध है।

आप इकहरे शरीर के व्यक्ति हैं जिसमें स्वस्थ मन विराजमान है, जो इस बात का द्योतक है कि प्रो० मिश्र जी का तन स्वस्थ है क्योंकि संयम व नियम से रहने वाले व्यक्ति का ही तन एवं मन स्वस्थ होता है। अतः प्रो० मिश्र जी संयमी एवं नियमानुसार जीवन व्यतीत करने वाले हैं।

मानव धर्म शास्त्र का निर्देश है-

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम।

अतः प्रो० मिश्र जी की वाणी इतनी मधुर और सरल है कि उपर्युक्त गुण उनमें कूट-कूट कर प्रकृति ने भर दिया है। उत्तम प्रकति वाले व्यक्तित्व में निम्न अवगुणों के लिये कोई स्थान नहीं है। यह मान्यता संत कवि तुलसीदास जी की है-

काम क्रोध मद लोभ परायन।
निर्दय कपटी कुटिल मलायन।।

मानस, ७,३८ (३)

अतः मैं शत प्रतिशत आश्वस्त हूं कि प्रो० मिश्र जी में उपर्युक्त अवगुण लेशमात्र भी नहीं हैं। मैंने आपको कभी किसी पर क्रोधित होते नहीं देखा तथा किसी के साथ कपटपूर्वक बातें करते नहीं देखा। जिस प्रकार भगवान श्रीराम वन आगमन की सूचना पर मलिन नहीं हुये और राज्याभिषेक की सूचना पर हर्षित नहीं हुये इसी प्रकार मैंने प्रो० मिश्र जी को अनेक हृदयविदारक घटनाओं एवं सुखद क्षणों में एकसमान पाया है। प्रो० मिश्र जी ईर्ष्या करने वालों के प्रति भी सहृदय की भावना रखते हैं। आपके व्यक्तित्व की जितनी भी प्रशंसा की जाये वह कम है।

प्रो० मिश्र जी का रहन-सहन एवं वेश-भूषा सादा जीवन उच्च्य विचार को पूर्णतया चरितार्थ करती है। प्रो० मिश्र जी के अन्दर विनय की वह भावना है कि आज विज्ञान परिषद् उत्तरोत्तर प्रगति पर है तथा गौरवान्वित है। आपकी विनयशीलता के ही कारण प्रत्येक शोधार्थी, कर्मचारी एवं अधिकारी निर्भीक विचार-विमर्श कर प्रगति पथ पर है।

आचारः कुलमाख्याति देशमाख्याति भाषणम्।
सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम्।।

अर्थात् आचरण से व्यक्ति के कुल का परिचय मिलता है, बोली से देश का पता लगता है, आदर सत्कार से प्रेम तथा शरीर को देखकर व्यक्ति के भोजन का पता लगता है।

जहां तक कृतित्व का प्रश्न है- प्रो० मिश्र जी ने हिन्दी माध्यम से विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में अहम भूमिका निभाई है। विगत अनेक वर्षो से प्रो० मिश्र न केवल 'विज्ञान' पत्रिका का अपितु हिन्दी में प्रकाशित 'वैज्ञानिक अनुसंधान पत्रिका' का संपादन, संचालन एवं मार्गदर्शन करते आ रहे हैं। आपकी पादप रसायन, फास्फेट और जैव उर्वरक नामक तीन पुस्तकें उत्तर प्रदेश शासन द्वारा पुरस्कृत हो चुकी हैं। सन् १६७८ में आपको 'विज्ञान सरस्वती' सम्मान से अलंकृत किया जा चुका है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य के क्षेत्र में महामहिम राष्ट्रपति डॉ० शंकर दयाल शर्मा द्वारा सन् १६६३ में आपको आत्माराम पुरस्कार से राष्ट्रपति भवन में अलंकृत किया जा चुका है।

बाल विज्ञान सीरीज में छपी आपकी ऊर्जा, लोकोपयोगी रसायन विज्ञान तथा भौतिकी के नोबेल

पुरस्कार विजेता आदि पुस्तकें बहुचर्चित हैं। ग्रामोपयोगी विज्ञान के अन्तर्गत 'गांव के कचरे के नये उपयोग' लोकप्रिय पुस्तक है।

बाल साहित्य में 'मिट्टी का मोल' एवं 'धातु जगत की सैर' आदि प्रकाशित हो चुकी है। हाई स्कूल और इण्टरमीडियेट स्तर की आपके द्वारा लिखी गई कृषि एवं विज्ञान की अनेक पुस्तकें छात्रों में बहुत लोकप्रिय रही हैं। विश्वविद्यालय रसायन, कृषि जैव रसायन, जीवाणु की कहानी, आदि कई पुस्तकें हिन्दी अनुवाद के रूप में प्रकाशित हो चुकी हैं। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली के गौरव ग्रन्थ Wealth of India का हिन्दी रूपांतर 'भारत की संपदा' के कुछ खण्ड आपके निर्देशन में अनूदित एवं प्रकाशित हुये। आपकी रचनाओं में विज्ञान और साहित्य का सुंदर समन्वय और उपयुक्त सामंजस्य पाया जाता है।

आपने हिन्दी में विज्ञान साहित्य लिखने के साथ साथ ललित साहित्य में भी कई ग्रन्थ लिखे हैं। इनमें से दो पुस्तकें 'सत्यवती' और 'मधुमालती' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुकी हैं।

आपने विज्ञान परिषद् प्रयाग के माध्यम से हिन्दी में विज्ञान लेखन के स्तरीय विकास तथा लेखक निर्माण में उल्लेखनीय योगदान दिया है, विज्ञान के नवोदित लेखकों को अनेक प्रकार से प्रोत्साहित किया है। आप रसायन की भाषा में सच्चे उत्प्रेरक हैं। हिन्दी में विज्ञान लेखन की दिशा में आप जैसे समर्पित वैज्ञानिक की हिन्दी सेवायें अनुकरणीय एवं सराहनीय हैं। आपके उत्तम स्वास्थ्य तथा दीर्घजीवी होने की प्रभु से कामनायें हैं। विज्ञान परिषद् परिवार आपका सदैव ऋणी रहेगा। आप जैसे समर्पित वैज्ञानिक का अभिनंदन है।

५/४८, वैशाली
गाजियाबाद-२०१ ०१०
उत्तर प्रदेश

मेरे प्रेरणा स्रोत : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

काशीनाथ तिवारी

सन् १९६७ में तत्कालीन राजकीय कृषि महाविद्यालय कानपुर से कृषि रसायन में स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद इसी महाविद्यालय में प्रवक्ता के पद पर कार्य करना प्रारम्भ किया। इस समय शिक्षण कार्य के साथ ही मैं अपने पी.एच.डी. शोध कार्य हेतु किसी सामयिक विषय की तलाश में था। इसी बीच प्रो० मिश्र ही प्रायोगिक एवं थीसिस परीक्षा हेतु कानपुर आये। प्रो० मिश्र हमारे पूज्य गुरुदेव ए.एन. पाठक के घनिष्ठ मित्र एवं शुभचिन्तक हैं। पूज्य गुरुदेव ने इसी समय मेरा परिचय प्रो० मिश्र से कराया। इसके बाद मुझे पूज्य गुरुदेव प्रो० पाठक जी की ही तरह प्रो० मिश्र के स्नेह, मार्गदर्शन एवं कृपा का सहज लाभ जीवन के हर क्षेत्र में मिलता रहा। तभी मैं प्रो० मिश्र की सादगी, स्पष्टवादिता एवं विज्ञान के क्षेत्र में उनके योगदान से प्रभावित हुआ। मैंने अपने शोध का विषय 'मिट्टी और पौधों में जिंक का आचरण' चुना तो उस समय मैं उत्तर प्रदेश और देश में जिंक पर कार्य करने वाले वैज्ञानिकों एवं शोधकर्ताओं के सम्पर्क में आया। प्रो० मिश्र के निर्देशन में सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर पहले से ही कार्य चल रहा था, इसकी मुझे जानकारी थी। इलाहाबाद आकर मैंने प्रो० मिश्र की प्रयोगशाला में हो रहे शोधकार्य को निकट से देखा और समझा। उस समय जिंक जैसे तत्व पर कार्य करना आज जैसा आसान नहीं था। प्रो० मिश्र ने मेरा उत्साहवर्धन एवं मार्गदर्शन किया। सौभाग्य से प्रो० मिश्र मेरी थीसिस के परीक्षक भी रहे। थीसिस के कई शोधपत्र मानक जर्नलों में प्रकाशित किये। प्रो० मिश्र से हमें हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में विज्ञान लेखन हेतु प्रेरणा एवं सम्बल प्राप्त हुआ। मुझे अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही भाषाओं में प्रकाशित लेखों के लिये सर्वश्रेष्ठ लेख के रूप में कई बार पुरस्कृत किया गया। यह सब पूज्य गुरुदेव प्रो० पाठक एवं मिश्र जी के मार्गदर्शन, प्रोत्साहन एवं आशीष का ही फल रहा है।

हिन्दी में पुस्तक लेखन की प्रेरणा भी मुझे प्रो० मिश्र जी से ही मिली। सर्वप्रथम भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, दिल्ली ने मुझे 'उर्वरक और खाद' नामक पुस्तक लिखने को कहा। प्रो० मिश्र के मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन से मैंने पुस्तक की पाण्डुलिपि यथासमय तैयार कर ली। संयोग ही था कि इस पुस्तक की पाण्डुलिपि के पुनरीक्षक भी प्रो० मिश्र ही रहे। उनके पैने एवं निष्पक्ष सम्पादन तथा ढेर सारे उपयोगी सुझावों से पुस्तक की सार्थकता बढ़ गयी। फिर तो मैंने कई पुस्तकें हिन्दी में लिख डालीं। कुछ पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद भी किया।

प्रो० मिश्र के बहुआयामी व्यक्तित्व में मैंने कुशल शिक्षक, प्रशिक्षक, सफल विज्ञान लेखक एवं निष्पक्ष, निडर व कुशल प्रशासक के रूप देखे हैं। उनकी सरलता, सहृदयता व स्पष्टवादिता प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

प्रो० मिश्र के व्यक्तित्व एवं कृषि रसायन के क्षेत्र में उनके मान्य एवं ठोस योगदान के फलस्वरूप उनकी ख्याति से अत्यन्त प्रभावित होने के कारण मैंने अपने ज्येष्ठ पुत्र (डॉ०) अशोक तिवारी को जो कि इस समय कृषि विभाग, उ०प्र० लखनऊ में कार्यरत है, प्रो० मिश्र के निर्देशन में पीएच.डी. करने के लिये प्रेरित किया। मेरा यह विश्वास है कि प्रो० मिश्र ने सीमित सुविधाओं में कृषि रसायन विषयक शोध के क्षेत्र में जितना योगदान दिया है वह विरले ही कर सकते हैं। यह उनके कठोर परिश्रम, दृढ इच्छाशक्ति एवं आत्मबल, अनूठी कार्यशैली, कर्तव्यों के प्रति पूर्ण समर्पण, अधिकारों का निष्पक्षता, निडरता एवं पूर्ण कुशलता के साथ निर्वहन तथा छात्रों एवं स्नेही स्वजनों के प्रति उनकी निस्वार्थ सहृदयता के कारण ही संभव हुआ है।

लिखने को तो बहुत कुछ है परन्तु अब यही लिखकर कि ईश्वर प्रो० मिश्र को स्वस्थता, प्रसन्नता एवं दीर्घायु दें ताकि मानवता, विज्ञान एवं विज्ञान लेखन की सेवा पूर्ववत् पूरे मनोयोग से करते रहें।

निदेशक
पोटाश एवं फास्फेट इंस्टीट्यूट् ऑफ कनाडा
इण्डिया प्रोग्राम
सेक्टर १६, डुण्डाहेड़ा, गुड़गांव-१२२ ०१६
हरियाणा

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० श्याम लाल काकानी

विज्ञान को हिन्दी में लोकप्रिय बनाने के लिये डॉ० शिवगोपाल मिश्र, कृषि रसायनज्ञ एवं मृदा विज्ञानी ने विज्ञान परिषद् एवं अन्य संस्थाओं के माध्यम से उल्लेखनीय योगदान किया है। डॉ० मिश्र ने कई नवोदित विज्ञान लेखकों को प्रेरित किया। विज्ञान परिषद् द्वारा प्रकाशित 'विज्ञान' मासिक को विपरीत परिस्थितियों में भी अनवरत प्रकाशित किया एवं उसे लोकप्रिय बनाने में आपका नेतृत्व अविस्मरणीय रहा।

डॉ० मिश्र से सर्वप्रथम मेरा परिचय १९८६ में इलाहाबाद में विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित अखिल भारतीय विज्ञान लेखक सम्मान समारोह में हुआ। मैंने उन्हें सहृदय, सरल एवं स्नेही पाया। विज्ञान लेखक के रूप में मेरा संपर्क उनसे १९६८ से ही था।

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि डॉ० मिश्र पर अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। मैं इस अवसर पर अपनी शुभकामनायें प्रेषित करते हुये डॉ० मिश्र के दीर्घायु और स्वस्थ जीवन की कामना करता हूं और आशा करता हूं कि वे हिन्दी में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के क्षेत्र में प्रेरणादायक नेतृत्व प्रदान करते रहेंगे।

प्राचार्य (से०नि०)
४जी-४५, शास्त्री नगर,
भीलवाड़ा-३११००१ (राजस्थान)

बहुमुखी प्रतिभा के धनी : प्रो० शिवगोपाल मिश्र

सत्येन्द्र सिंह

निःसन्देह प्रो० मिश्र एक विराट व्यक्तित्व हैं। जो भी उनके सम्पर्क में आया वह उत्प्रेरित हुये बिना नहीं रहा। प्रो० मिश्र से मेरा सर्वप्रथम सम्पर्क वर्ष १९९२ में ७ अगस्त को 'विकास' संस्था द्वारा आयोजित सामाजिक उत्प्रेरकों के लिये विज्ञान लेखन कार्यशाला में हुआ। मेरे आमंत्रण को सहज स्वीकारते हुये प्रो० मिश्र जी विज्ञान परिषद् से ५-६ किमी० दूर मुट्ठीगंज में कार्यशाला स्थल तक पहुंचे और अपने विद्वतापूर्ण भाषण से प्रतिभागियों सहित हम सभी को लाभान्वित किया। सममुच, मैंने प्रो० मिश्र के विषय में जैसा सुना था उससे कहीं अधिक व्यावहारिक और विद्वान पाया। तब से आज तक मैं लगातार उनके सम्पर्क में हूं।

इसके पश्चात् इलाहाबाद, प्रतापगढ़, फतेहपुर, जौनपुर इत्यादि स्थानों पर आयोजित विज्ञान लेखन एवं पत्रकारिता प्रशिक्षण कार्यशालाओं में मुख्य स्रोत वैज्ञानिक के रूप में मेरे आग्रह को स्वीकारते हुये उन्होंने प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सक्रिय सहयोग करके नवोदित विज्ञान लेखकों एवं पत्रकारों का मार्गदर्शन किया।

वर्ष १९९६ में राज्यस्तरीय बाल विज्ञान कांग्रेस का आयोजन विज्ञान परिषद् में हुआ। इस अवसर पर प्रो० मिश्र का भरपूर सहयोग एवं मार्गदर्शन हमें प्राप्त हुआ। प्रो० मिश्र ने इस समारोह के उद्घाटन एवं समापन दोनों सत्रों की अध्यक्षता भी की एवं प्रतियोगियों को प्रमाण-पत्र भी वितरित किये। अपने भाषणों में प्रो० मिश्र सदैव हिन्दी में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता पर अत्यधिक बल देते रहे हैं। प्रो० मिश्र का मानना है कि हिन्दी में विज्ञान की शिक्षा बहुत आवश्यक है। इसके अभाव में हम रटी-रटाई जानकारी हासिल कर मात्र परीक्षा पास कर सकते हैं, वास्तविक ज्ञान नहीं।

प्रो० मिश्र को मेरी ओर से कोटिशः बधाई एवं अभिनन्दन।

विकास
एच.डी. ८६, ए.डी.ए. कालोनी
नैनी, इलाहाबाद-८

शत शत अभिनन्दन

डॉ0 विद्याविन्दु सिंह

आदरणीय डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी एक समर्पित हिन्दी सेवी व्यक्तित्व हैं। आपका विषय विज्ञान रहा है पर विज्ञान को सरल, सुबोध, सहज भाषा के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाने के लिये डॉ० मिश्र सतत् जागरूक हैं। साहित्य और संस्कृति के प्रति आपका समर्पण भाव आपसे अन्य सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक कार्य कराता रहा है।

विज्ञान परिषद् में सक्रिय रहते हुये डॉ० मिश्र ने रत्नकुमारी स्मृति न्यास की ओर से भी कई महत्वपूर्ण कार्य किये। पूज्य स्वामी सत्य प्रकाश जी के आप अनन्य भक्त और प्रिय रहे। आप कई व्याख्यान मालाओं के सूत्रधार रहे। ये व्याख्यान प्रबुद्धजनों द्वारा निरन्तर सराहे गये। एक प्रकरण मुझे सदैव स्मरण रहेगा। एक बार डॉ० मिश्र जी ने इलाहाबाद में व्याख्यान हेतु मुझे आमन्त्रित किया। उस तिथि पर कार्यालयी व्यस्तता के अपरिहार्य कारणों से मेरा पहुंच पाना कठिन था यद्यपि पहले मैं स्वीकृति भेज चुकी थी। मैंने क्षमा मांगते हुये सूचित किया कि मैं नहीं आ सकूंगी और अनुरोध किया कि मेरे स्थान पर किसी और का व्याख्यान रख दें।

सारी तैयारी हो चुकी थी। डॉ० मिश्र ने कहला भेजा कि यह व्याख्यान आपके नाम आवंटित है। आप चाहें तो इलाहाबाद आकर व्याख्यान दें या आपकी सुविधानुसार लखनऊ या इलाहाबाद में पुनः आयोजित किया जायेगा परन्तु वक्ता नहीं बदला जायेगा। उनके उदार स्नेह के प्रति मैं नतमस्तक थी।

हुआ भी यही कि वह व्याख्यान 'लोक साहित्य में महाभारत' विषय पर लखनऊ में आयोजित हुआ और सफल कार्यक्रम के रूप में इसकी चर्चा हुई। डॉ० सरला शुक्ला ने इस कार्यक्रम की अध्यक्षता की थी।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी हिन्दी संस्थान से सदैव भावनात्मक स्तर पर जुड़े रहे। संस्थान द्वारा प्रकाशित की जाने वाली विज्ञान की पुस्तकों के सम्पादन, प्रकाशन में आपका निरन्तर सहयोग रहा। आप यहां के सम्माननीय सदस्य भी रहे।

संस्थान का पुस्तक भण्डार विज्ञान परिषद् के भवन में ही किराये पर था। वहां रहते हुये आपने बराबर अपना संरक्षण प्रदान किया। संस्थान द्वारा सम्मानित होते हुये भी और आज भी हिन्दी के प्रति आपका अनुराग है। आपके आत्मीय सौजन्य और सरल आत्मीय व्यवहार से सभी प्रभावित होते हैं। ऐसे विद्वान मनीषी और सहृदय मानव का अभिनन्दन हम सभी के लिये प्रसन्नता का विषय है।

मेरी हार्दिक शुभकामनायें हैं कि डॉ० मिश्र स्वस्थ रहें एवं शतायु हों और निरंतर साधना में रहते हुये विज्ञान अध्येताओं का मार्ग प्रशस्त करते रहें। इस अवसर पर मैं उनका शत् शत् अभिनन्दन करती हूं।

उपनिदेशक
उ०प्र० हिन्दी संस्थान
४५, गोखले विहार मार्ग, लखनऊ

निष्ठा, त्याग तथा स्नेह की प्रतिमूर्ति

विश्वमोहन तिवारी

छोटी सी अवधि की भेंट में कैसे कोई व्यक्ति एक ओर तो अपने निश्छल व्यवहार से तथा निस्वार्थ हिन्दी सेवा से, तथा दूसरी ओर अपनी तीक्ष्ण बुद्धि, विशाल ज्ञान भंडार तथा सुस्पष्ट दृष्टि से किसी को भी प्रभावित कर सकता है इसके एक दुर्लभ उदाहरण हैं डॉ० शिवगोपाल मिश्र।

सर्वप्रथम उनसे मेरी भेंट १५ फरवरी २००१ को हुई। इसके पहले 'विज्ञान' मासिक पत्रिका के अगस्त २००० के अंक में उन्होंने मेरी पुस्तक 'आनंद पंछी निहारन का' (नेशनल बुक ट्रस्ट) पर डॉ० मनोज पटैरिया द्वारा लिखित समीक्षा प्रकाशित की थी। इसी संदर्भ में मैंने जब उनसे बात की और अनुरोध किया कि यदि वे चाहेंगे तो पक्षियों पर रंगीन पारदर्शियों की सहायता से, जैसे मैं व्याख्यान देता हूं वैसा विज्ञान परिषद् के तत्वावधान में भी देना चाहूंगा। उन्होंने मेरे अनुरोध को सहर्ष और सहज ही स्वीकार किया तथा १६ फरवरी २००१ का दिन निश्चित किया गया।

जब मैं १५ फरवरी को इलाहाबाद पहुंचकर उनसे मिला, तब उन्होंने बतलाया कि मेरा व्याख्यान स्वामी सत्यप्रकाश व्याख्यान माला के अंतर्गत रखा गया है। मैंने उनसे विनम्रतापूर्वक कहा, यह तो आप मुझे कहीं बड़ा सम्मान दे रहे हैं। तब उन्होंने मुस्कुराते हुये अपने शांत एवं मृदु स्वर में कहा, "मैंने तो जो उचित समझा है, वही किया है।" फिर उन्होंने मुझे विज्ञान परिषद् का संक्षिप्त परिचय दिया, विशेषकर दो पत्रिकाओं के नियमित प्रकाशन के कार्यों के उदाहरण दिखलाये। 'विज्ञान' पत्रिका एक लोकप्रिय विज्ञान पत्रिका है जो १६१५ से प्रकाशित हो रही है। इसके संपादक का तथा अब परिषद् के प्रधानमंत्री के रूप में निर्देशन का सर्वाधिक लंबी अवधि का कार्य स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती के बाद डॉ० मिश्र जी का ही है। हिंदी में विज्ञान संचार के तो वे 'अर्जुन' कहे जा सकते हैं। विज्ञान परिषद् की दूसरी पत्रिका 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' तो वैज्ञानिकों के मौलिक अनुसंधानात्मक लेखों का प्रकाशन करती है। यह १६५८ से लगातार प्रकाशित हो रही है। यह अतिशयोक्ति न होगी कि इस अति दुष्कर प्रकाशन का लगातार सफल कार्यान्वयन डॉ० मिश्र की निस्वार्थ सेवा तथा हिंदी निष्ठा के बल पर हो रहा है। १६ फरवरी के स्मृति व्याख्यान की गोष्ठी के लिये डॉ० मिश्र ने इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध झा परिवार के ले० कर्नल देवकान्त झा को अध्यक्ष बनाया। मैं डॉ० मिश्र की इस सोच का कायल हुआ कि विज्ञान को सम्मान देते हुये उन्होंने रक्षा विभाग को भी सम्मान दिया, जो साधारणतया नहीं होता। प्रारंभ में मैंने कहा था कि छोटी सी अवधि में भी डॉ० शिवगोपाल निश्छल व्यवहार, निस्वार्थ हिंदी सेवा, तीक्ष्ण बुद्धि, विशाल ज्ञान भंडार तथा सुस्पष्ट दृष्टि से किसी को भी प्रभावित किये बिना नहीं रहते। अब दो दिनों जब मैंने उनके हृदय में स्नेह का झरना झरझर बहता देखा तो उन्होंने मेरे दिल और दिमाग दोनों में अपना स्थान बना लिया।

एयर वाईस मार्शल (से.नि.)
ई १४३/२१, नोएडा-२०१३०१

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० चन्द्रशेखर पाण्डेय

डॉ० शिवगोपाल मिश्र से मेरा परिचय १९६० के दशक के पूर्वार्द्ध का है जव प्राथमिक अनुसंधान पूर्ण कर मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में प्रवक्ता के रूप में नियुक्ति मिली। उस समय न केवल रसायन विभाग वरन् सभी विभागों में ख्यातिप्राप्त शिक्षकों की कमी नहीं थी। अपने ही गुरुजनों के साथ बी.एससी. की प्रयोगशालाओं में नये विद्यार्थियों को जो मुझसे आयु में कुछ ही वर्ष छोटे थे, विश्लेषणात्मक प्रयोगों को समझाना तथा उनकी कठिनाइयों का समाधान करना एक चुनौती भी था और आत्मसंतुष्टि की अनुभूति भी देता था। मुझे कृषि विज्ञान की कुछ कक्षाओं को भी कार्बनिक रसायन पढ़ाना पड़ता था। तभी मैंने डॉ० मिश्र को जाना। उसके उपरांत हमारी शोध प्रयोगशाला में, जिसके मुखिया डॉ० पूर्णचन्द्र गुप्त हुआ करते थे, डॉ० मिश्र तथा कई अन्य सहयोगी और मित्र एक मेज के चारों ओर दिन में प्रायः एक बार तो अवश्य मिलते थे। इस मेज तथा गोष्ठी को आज भी डॉ० गुप्त अपनी उपस्थिति से अलंकृत करते हैं। डॉ० मिश्र कुर्सी में एक विशेष अंदाज से बैठते हैं, पूरे शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़कर। उनकी स्वाभाविक हंसी उनके सरल तथा निर्मल हृदय का प्रतिविम्ब है।

डॉ० मिश्र के साथ मुझे कई गोष्ठियों में कार्य करने का सौभाग्य मिला है। मैंने देखा है कि वे कितनी शीघ्रता यथा यथेष्टता से लेखों का सम्पादन करते हैं। उनकी अनुभवी दृष्टि से निकलने के बाद लेखों का स्वरूप ही परिमार्जित हो जाता है। हिन्दी में विज्ञान लेखन को सम्मान दिलाने वाले मनीषियों में डॉ० मिश्र का उच्च स्थान है। 'विज्ञान' तथा 'विज्ञान परिषद्' से वह जब से जुड़े हैं कभी विलग नहीं हुये और कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी निस्वार्थ भाव से, उनकी उन्नति की ओर सजग रहे हैं। आज विज्ञान परिषद् जानी मानी और उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर संस्था है जिसमें डॉ० शिवगोपाल मिश्र की विशेष भूमिका है। सी.एस.आई.आर. द्वारा प्रकाशित 'भारत की सम्पदा' के संपादन में डॉ० शिवगोपाल मिश्र का अति विशिष्ट योगदान रहा है।

डॉ० मिश्र मृदा विज्ञान के विशेषज्ञ हैं। दीर्घ काल तक उन्होंने इन विषयों के शिक्षण तथा अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य किया है। उनके विद्यार्थी आज अनेक कृषि विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थाओं में उच्च पदों पर सुशोभित हैं। शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान, जो इस विषय में अनुसंधान के लिये सम्पूर्ण भारत में अग्रणी है, उसके निदेशक पद पर रह कर उन्होंने शोध कार्य को आगे बढ़ाया है।

अपने विषय तथा हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार के क्षेत्रों में उपलब्धियों के अतिरिक्त डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व की एक और विशेषता है उनकी सहृदयता और अभिन्नतापूर्ण व्यवहार जिसके कारण वह सभी के प्रिय रहे हैं। मैंने उनके साथ कई कार्यक्रमों में भागीदारी की है जहां विज्ञान और हिन्दी भाषा के सम्बन्ध ा में चर्चायें हुईं। मैंने जोधपुर, शिमला, मैसूर, ऊटी इत्यादि स्थानों में इन कार्यक्रमों के दौरान साथ साथ भ्रमण भी किया है और उनके सरल, निश्छल तथा सर्वप्रिय व्यक्तित्व को निकट से जाना है।

मैं डॉ० शिवगोपाल मिश्र की सात दशक पूर्ति के अवसर पर उन्हें हृदय से बधाई देता हूँ तथा यह कामना करता हूं कि वे दीर्घजीवी हों तथा हिन्दी भाषा के माध्यम से विज्ञान की जो सेवा करते आ रहे हैं उसमें और भी आयाम जोड़ें।

एमेरिटस फेलो (यू.जी.सी.) रसायन विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला-१७१००५

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : मेरे प्रेरणा स्रोत

डॉ0 ओम प्रभात अग्रवाल

डॉ० शिवगोपाल मिश्र हिन्दी में विज्ञान के क्षेत्र में समर्पित व्यक्तित्व हैं। एक ऐसा व्यक्तित्व जिसने अपना समस्त जीवन विज्ञान में हिन्दी के प्रवेश, प्रचार और प्रसार के लिये होम कर दिया। न केवल प्रचुर साहित्य लेखन के द्वारा उन्होंने हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की श्रीवृद्धि की बल्कि 'विज्ञान परिषद्' संस्था, 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' शोध जर्नल एवं 'विज्ञान' मासिक पत्रिका के माध्यम से नई पीढ़ी को भी निरंतर प्रेरित किया हिन्दी के लिये कार्य करने तथा हिन्दी में गंभीर वैज्ञानिक तथा लोक रुचि विज्ञान संबंधी साहित्य के प्रकाशन के लिये। मैं यह बात दावे के साथ कह सकता हूं क्योंकि मेरे भी प्रेरणास्रोत वे ही रहे हैं।

हिन्दी से मुझे सदैव से प्रेम रहा है। कह सकते हैं कि जुनून की हद तक। १६६२ में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में मैंने अध्यापन का उत्तरदायित्व संभाला। अपने कर्तव्य-निर्वाह के दौरान रसायन शास्त्र के नये से नये आयाम मेरे सामने खुलने लग गये और उन पर कुछ लिखने की इच्छा भी सुगवुगाने लगी। १६७४ की बात है मैंने अपना पहला लेख लिखा- 'अति भारी तत्व' और उसे 'विज्ञान' में प्रकाशित कराने का मन बनाया।

इलाहाबाद आया तो विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में डॉ० साहब से भेंट की। वे उस समय से भी पूर्व से ही विज्ञान परिषद् में अत्यधिक सक्रिय थे। कुछ डरते डरते और अत्यंत संकोच के साथ मैंने उन्हें अपना लेख दिया और प्रकाशन संबंधी इच्छा प्रकट की। डॉ० साहब ने सबसे पहले तो अपने मृदु व्यवहार से मुझे प्रकृतिस्थ किया और फिर उत्साहवर्धन के लिये मेरे सामने ही लेख को आद्योपांत पढ़ कर उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की। वादा भी किया कि उसे 'विज्ञान' में छपाने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे। जनवरी १६७५ के अंक में अपनी इस रचना को मुख्य लेख के रूप में छपा देखकर मेरी बाछें खिल गईं और मुझमें लेखन के प्रति एक नया उत्साह और आत्मविश्वास जाग्रत हुआ। फिर तो जब भी इलाहाबाद जाता, डॉ० साहब से अवश्य मिलता। वे मेरे लेखों की प्रशंसा करने और विज्ञान परिषद् में अधिकाधिक सक्रिय होने के लिये प्रेरित करते। मैं धीरे धीरे परिषद् से जुड़ने लगा। पहले आजीवन सभ्य बना। फिर वाह्य अंतरंगी भी बन गया। वे परिषद् द्वारा आयोजित गोष्ठियों में मुझे बराबर निमंत्रित करते रहे। १६८३ में मुझे 'गोरख प्रसाद पुरस्कार' मिला और १६८६ में परिषद् द्वारा लेखन के लिये विशेष सम्मान। मैं इस सबका श्रेय उनसे मिलने वाली सतत प्रेरणा, शुभकामनाओं एवं सहयोग को ही देता हूं।

उन्हीं की प्रेरणा से अमृत जयंती वर्ष में रोहतक में (मैं महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक आ गया था) मैंने परिषद् की शाखा की स्थापना भी की और बहुत सारे आजीवन सभ्य बनाये। रोहतक

शाखा के उद्‌घाटन के अवसर पर वे स्वयं नगर में पधारे। इस अवसर पर उनका भाषण निश्चय ही रोहतक शाखा के सदस्यों के लिये मार्गदर्शक रहा।

३ मई १९८८ को हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के तत्वावधान में उसके ४४वें वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर इलाहाबाद में जब मैंने 'विज्ञान की उच्च शिक्षा का माध्यम अविलंब हिन्दी/प्रादेशिक भाषायें हो जानी चाहिये' विषय पर एक गोष्ठी के आयोजन का निर्णय लिया गया तो अध्यक्ष पद के लिये मेरे सामने डॉ० मिश्र का कोई विकल्प न था। डॉ० साहब ने भी मेरा मान रखते हुये यह दायित्व सहर्ष स्वीकार किया। अपने अध्यक्षीय भाषण के अंत में उन्होंने कहा कि भविष्य में हमारे जो भी सम्मेलन, गोष्ठियां या परिषदें आयोजित हों, वे माध्यम के विषय में बहस के लिये न हों, अपितु किसी विशेष शीर्षक पर उपलब्ध साहित्य की विवेचना के लिये या नये साहित्य के सृजन को ले कर हों। उनके ये शब्द मेरे लिये प्रकाशस्तंभ सिद्ध हुये और मैंने अगले ही वर्ष ७-८ अप्रैल १९८९ को सम्मेलन के ही तत्वावधान में विज्ञान क्षेत्र में हिन्दी माध्यम की सर्वप्रथम शोध गोष्ठी 'संकुल रसायनःविभिन्न आयाम' का अत्यंत सफल आयोजन किया जिसमें सभी शोधपत्र हिन्दी में ही प्रस्तुत किये गये। एक बार पुनः मान्यवर डॉ० साहब ने मेरा हाथ पकड़ कर सहारा दिया। न केवल इस गोष्ठी के लिये उन्होंने विज्ञान परिषद् का सभागार उपलब्ध कराया, बल्कि गोष्ठी में सम्मिलित सभी शोधपत्रों को 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' के एक विशेष अंक में स्थान देकर गोष्ठी के प्रतिभागियों को हिन्दी में कार्य करने के लिये समुचित प्रोत्साहन दिया। इसके बाद तो हिन्दी माध्यम की ऐसी शोधा गोष्ठियां धीरे धीरे आम होने लगीं। १९९१ में द्रव्यों की ठोसावस्था, १९९३ में गणित शोध गोष्ठी और फिर कई अन्य। कह सकते हैं कि एक प्रवाह आरंभ हो गया जिसके मूल में डॉ० साहब का वह वक्तव्य ही था।

विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी में कार्य करने की दिशा में डॉ० साहब मेरे और मेरे जैसे अनेकों के लिये निश्चित रूप से प्रेरणास्रोत और आदर्श पुरुष रहे हैं। मैं उनके दीर्घ जीवन की कामना करता हूं।

श्री वेंकटेश भवन
४४५-बी, देव कालोनी
रोहतक-१२४००१

कर्मयोगी प्रो० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 जगदीप सक्सेना

आदरणीय डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के साथ जुड़े अपने अनुभवों/संस्मरणों को कलमबद्ध करना मेरे लिये बेहद कठिन काम साबित हो रहा है। वजहें एक दो नहीं, कई हैं। इलाहाबाद शहर का मूल निवासी होने और इलाहाबाद विश्वविद्यालय का छात्र होने के नाते मैंने डॉ० मिश्र के कई रूपों का निकट से अनुभव किया है। उनके हर रूप को देखा और सराहा है। इसलिये दिक्कत यह है कि क्या भूलूँ, क्या याद करूं।

विश्वविद्यालय में मेरा विभाग (प्राणि विज्ञान) और रसायन विभाग निकटतम पड़ोसी हैं इसलिये डॉ० मिश्र को साइकिल पर सवार आते जाते देखना रोजमर्रा की बात थी। उस समय मैं एम.एससी. कर रहा था। रसायन विज्ञान में एम.एससी. कर रहे दोस्त अकसर डॉ० मिश्र की चर्चा करते और बताते कि उन्हें हिन्दी से खास लगाव है। उस समय विज्ञान लेखन में मेरी कोई खास दिलचस्पी नहीं थी इसलिये डॉ० मिश्र से दूरदर्शनी संबंध ही बना रहा। पीएच.डी. करने के दौरान अपने गुरु डॉ० आशीष कुमार माइती की प्रेरणा से हिन्दी में विज्ञान लेखन के क्षेत्र में कदम रखा तो स्वाभाविक तौर पर विज्ञान परिषद् से संपर्क हुआ। विज्ञान परिषद् का प्रांगण भी मेरे लिये नया नहीं था। मेरा घर वहां से मुश्किल से एक किलोमीटर की दूरी पर था। बचपन में हम बच्चे अक्सर सुबह घूमते हुये या स्कूल जाते समय बगीचे में घुस जाया करते थे। चुपके से कोई फूल तोड़ते और सामने कंपनी बाग में फुर्र हो जाते।

उस समय सपने में भी नहीं सोचा था कि इसी प्रांगण में किसी ऐसे पुष्प सरीखे व्यक्तित्व से भेंट होगी जिसकी सुगंध जीवन भर हिन्दी में विज्ञान लेखन के लिये प्रेरित करती रहेगी। मैं बात कर रहा हूं आरदणीय डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी की जो उस समय तक विज्ञान परिषद् और 'विज्ञान' पत्रिका दोनों के ही प्राण बन चुके थे। यह बात है सन् १९७९-८० की। जब अपनी प्रारम्भिक अनगढ़ रचनाओं के साथ डॉ० मिश्र से भेंट की तो एक बार तो ऐसा लगा कि जैसे डरा रहे हों, बच्चू, इस रास्ते पर चलना आसान नहीं है, संभल कर कदम बढ़ाना। पर शायद यह हमारी भूल थी। डॉ० मिश्र तो हमें सही रास्ता दिखा रहे थे। आने वाली बाधाओं से चेता रहे थे। अभी यह संबंध ज्यादा पनप भी नहीं पाया था कि नौकरी के चक्कर में दिल्ली आना पड़ा। इस बीच जब भी इलाहाबाद जाता, शाम को विज्ञान परिषद् के सांध्यकालीन सत्संग में शामिल हो जाता। डॉ० मिश्र और आदरणीय प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव जी वहां नियमित रूप से विराजमान दिखायी देते जबकि हमारे जैसे छुटभैये आते-जाते रहते। प्रसाद के रूप में इंडियन प्रेस चौराहे का जायकेदार समोसा और चाय मिलती और मिलती ढेर सारी उपयोगी जानकारियां, अनुभव व ज्ञान की बातें। साथ ही हिन्दी में विज्ञान लेखन के क्षेत्र में कुछ कर

गुजरने की प्रेरणा भी हासिल होती। इस बैठकी के दौरान हम लोगों के साथ गप शप करते हुये भी डॉ० मिश्र अपना ढेरों काम निपटा देते। वे विज्ञान परिषद् में आयी चिट्टियों का जवाब लिख डालते, लेखों का संपादन कर लेते, प्रूफ भी देख लेते और समय पर उठकर घर की ओर भी चल देते। तभी मुझे एहसास हुआ कि समय का सही उपयोग एक बड़ी कला है जिसमें डॉ० मिश्र को महारत हासिल है। तभी यह गुत्थी सुलझने लगी कि डॉ० मिश्र ने इतना ढेर सारा काम कैसे किया और आज भी कैसे करते हैं।

समय अपनी रफ्तार से गुजर रहा था और मैं दिल्ली की आपाधापी भरी जिंदगी के बीच विज्ञान लेखन के क,ख,ग, से थोड़ा आगे निकलने की कोशिश में जुटा। मन में बार बार ख्याल आता कि इलाहाबाद में डॉ० मिश्र व उनके साथी व शिष्य आवश्यक सुविधायें न होने पर भी जोरदार काम कर रहे हैं जबकि हम लोग सुविधासम्पन्न होते हुये भी कुछ खास नहीं कर पा रहे हैं। यह विचार हमेशा कुछ करने के लिये उकसाता रहता। इसी बीच डॉ० मिश्र ने भारतीय भाषाओं में बाल विज्ञान लेखन कार्यशाला में शामिल होने का निमंत्रण भेजा। कार्यशाला विज्ञान परिषद् में होनी थी और आयोजन का पूरा जिम्मा डॉ० मिश्र में संभाल रखा था। मैं यह सुअवसर कैसे चूक सकता था। एक कुशल आयोजक और प्रशिक्षक के रूप में डॉ० मिश्र से यह मेरी पहली मुलाकात थी। आयोजन के दौरान उन्होंने हर क्षण का कुशल उपयोग किया और हम जैसे लापरवाह प्रतिभागियों से भी काम करवा लिया। आयोजन से जुड़ी तमाम व्यस्तताओं के बावजूद देश भर से आये विज्ञान लेखकों की मेहमाननवाजी में डॉ० मिश्र ने कोई कसर नहीं छोड़ी। वे छोटे बड़े सभी के साथ कुछ इस तरह घुल मिल गये जैसे हम सब उनके निजी निमंत्रण पर उनके घर आये हों। इस बीच उनकी सादगी भी हम सभी को प्रभावित करती रही।

धीरे धीरे डॉ० मिश्र से संबंध प्रगाढ़ होने लगे। कभी दिल्ली में मुलाकात होती तो कभी इलाहाबाद में। जब भी मिलता उनकी कर्मठता देर तक याद रहती और अपने आलसीपन पर कोफ्त होती। इस बीच डॉ० मिश्र को कुछ पारिवारिक झंझावातों का सामना करना पड़ा। आम आदमी होता तो अंदर तक टूट जाता और मुंह ढांप कर घर पर पड़ जाता, पर डॉ० मिश्र के माथे पर मैंने कभी भी शिकन नहीं देखी। तमाम पारिवारिक कर्तव्यों का तत्परतापूर्वक निर्वाह करते हुये भी वे हिन्दी में विज्ञान लेखन को धर्म की तरह निभाते रहे। जहां तक मेरी जानकारी है, कभी ऐसा नहीं हुआ कि उनकी निजी समस्याओं के कारण विज्ञान परिषद् का कोई काम उपेक्षित पड़ा रह गया हो। इसी बीच राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् ने हिन्दी में विज्ञान लेखन एवं पत्रकारिता को बढ़ावा देने के लिये देश भर में लघु अवधि की कार्यशालायें आयोजित करने का सिलसिला शुरू किया। ऐसी ही एक कार्यशाला का आयोजन विज्ञान परिषद् ने भी किया। अधिकारिक तौर पर इस कार्यशाला का आयोजन इलाहाबाद की 'विकास' नामक संस्था कर रही थी, पर सारी जिम्मेदारी डॉ० मिश्र ने ओढ़ रखी थी। मेरा सौभाग्य था कि इसमें मुझे विशेषज्ञ के रूप में आमंत्रित किया गया। मेरे साथ दिल्ली से सी.एस. आई.आर. के श्री रणकिशोर सहाय जी और एनसीईआरटी के श्री मनकापुरे जी भी पधारे थे। डॉ० मिश्र तो थे ही। कार्यशाला खूब जमी और युवा छात्रों व लेखकों ने बड़ी सुंदर रचनायें तैयार कीं। मेरे विचार से इसका पूरा श्रेय डॉ० मिश्र को जाता है जिन्होंने प्रतिभागियों को अलग-अलग विधाओं में विज्ञान लेखन के अचूक मंत्र बताये। डॉ० मिश्र के सान्निध्य में मुझे एहसास हुआ कि खुद लिखने और दूसरों को लेखन के गुर बताने के बीच कितना अंतर है और यह कार्य कितना कठिन भी है। पर डॉ०

मिश्र यह दुरूह कार्य बेहद सहजता से सम्पन्न करते हैं। इसके बाद कई बार डॉ० मिश्र के साथ कार्यशालाओं में सहभागिता का सुअवसर मिला। प्रतापगढ़, बाराबंकी और हाल में दतिया की मुझे खास याद है। कार्यशालाओं के दौरान भी डॉ० मिश्र समय को अपने हाथ से नहीं जाने देते थे। उनके लिखने पढ़ने का मसाला हमेशा उनके साथ रहता है। हम लोग जो समय सैर-सपाटे में गंवाते हैं, डॉ० मिश्र उसी में न जाने कितना ठोस काम कर डालते हैं। जहां तक मुझे याद है कि बाराबंकी में डॉ० मिश्र ने चार दिनों की कार्यशाला के दौरान अनुवाद का ढेर सारा काम निपटा दिया। इस बीच उन्हें एक अन्य पारिवारिक दुख झेलना पड़ा। फिर भी वे विचलित नहीं हुये। हिन्दी में विज्ञान लेखन के धर्म पर उन्होंने कोई आंच नहीं आने दी। डॉ० मिश्र की यह अति-सहनशीलता सचमुच आश्चर्यचकित करती है। मैंने आज तक उन्हें कभी भी अपने निजी दुखों की चर्चा करते हुये नहीं देखा सुना। पर हां, वे हिन्दी में विज्ञान लेखन के स्तर को लेकर जरूर दुखी दिखायी देते हैं। डॉ० मिश्र को यह चिंता बराबर सालती रहती है कि आजादी के कोई ५४ वर्ष बाद भी हिन्दी में विज्ञान लेखन को अंग्रेजी की तथाकथित साइंस राइटिंग की तुलना में दोयम दर्जे का माना जाता है। डॉ० मिश्र को हिन्दी में साहित्यकारों द्वारा विज्ञान संबंधी रचनाओं की उपेक्षा भी काफी अखरती है।

कार्यशालाओं के दौरान डॉ० मिश्र की एक अन्य विशेषता भी सभी को आकर्षित व प्रभावित करती है और वह है सहजता एवं सरलता। वे कभी भी अपनी विद्वता को युवा प्रतिभागियों पर थोपते नहीं, बल्कि उनके स्तर पर जाकर उन्हें विज्ञान लेखन के लिये उकसाते हैं, रास्ता दिखाते हैं और कई बार तो उंगली पकड़ा कर चलना भी सिखाते हैं। कार्यशाला में उनकी मौजूदगी प्रतिभागियों को लाभान्वित करने के साथ ही हम जैसे आरामपरस्त विशेषज्ञों को भी काफी राहत देती है। हाल में दतिया स्टेशन पर उतरने तक मुझे नहीं मालूम था कि डॉ० मिश्र वहां पधारे हैं इसलिये कार्यशाला को लेकर चिंता थी। पर सर्किट हाउस में जैसे ही डॉ० मिश्र के दर्शन हुये एक पल में सारा बोझ उतर गया। उनकी उन्मुक्त हंसी ने रास्ते की थकान के साथ ही सारी चिंतायें भी धो डालीं। कार्यशाला के दौरान जब भी समय मिलता, वे अपने शिष्य देवव्रत द्विवेदी के साथ विज्ञान परिषद् के काम काज में जुट जाते। पर इसका अर्थ यह नहीं कि डॉ० मिश्र स्वभाव से रूखे सूखे हैं। उनकी विनोदप्रियता, ठहाकेदार हंसी और एक से एक रस भरी बातें आप चाहकर भी भुला नहीं पायेंगे। आज भी मैं और मेरे मित्र श्री लीलाधर काला (वे भी दतिया में थे) डॉ० मिश्र की बातों को दतिया की बतियाँ कहकर याद करते हैं और ठहाके लगाते हैं।

मेरे विचार से डॉ० मिश्र एक कर्मयोगी हैं जिन्हें कोई भी विपदा, झंझावात या मुश्किल हिन्दी में विज्ञान लेखन के धर्म से विचलित नहीं कर सकती। उनके शिष्यों द्वारा उनका अभिनन्दन प्रशंसनीय व सराहनीय है। इस मंगल अवसर पर यदि हम उनके जीवन का पासंग भर भी ग्रहण कर सके तो शायद हमारा जीवन भी सार्थक हो जाये। इसी कामना के साथ डॉ० मिश्र को शत् शत् नमन और दीर्घायु होने की शुभकामनायें। स्वस्थ और सक्रिय तो वे रहेंगे ही, कर्मयोगी जो ठहरे।

६८, वसुंधरा अपार्टमेन्ट
सेक्टर-६, रोहिणी
दिल्ली-११००८५

विज्ञान लेखन के शलाका पुरुष

डॉ0 राजीव रंजन उपाध्याय

विज्ञान एवं साहित्य सृजन के सामंजस्य, मातृभाषा हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य लेखन के पुरोधा, महाकवि पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के प्रिय, विज्ञान के जटिल दुरूह और नीरस तथ्यों को सहजता, सरलता एवं स्पष्टता के साथ लिपिबद्ध करने हेतु विख्यात, अनेक पुरस्कारों से सम्मानित, अक्षर जननी की सार्थकता को सिद्ध करने वाले, सहज सौम्य एवं निश्छल व्यक्तित्व युक्त प्रो० डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के विषय में उनके प्रिय शिष्य प्रो० गिरीश पाण्डेय से सुना करता। परन्तु उनसे मिलने का अवसर मुझे ३० मार्च १९९४ को जोधपुर राजस्थान की रक्षा प्रयोगशाला में आयोजित हिन्दी विज्ञान लेखन की कार्यशाला में प्राप्त हुआ।

रक्षा संस्थान के अतिथि भवन में प्रथम संध्या को भोजनोपरान्त सभी प्रतियोगियों से परिचय और बातें हो रही थीं। उसी समय डॉ. गिरीश पाण्डेय ने मुझे बताया कि डॉ० शिवगोपाल जी ने मुझे याद किया है। उनके साथ मैं उस वृक्ष के समीप जा पहुंचा जिसके नीचे सीमेन्ट निर्मित पट्टिका पर डॉ० मिश्र विराजमान थे। मुझे देखकर औपचारिकता समाप्त करने के बाद उन्होंने कहा मैंने प्रेमघन-सर्वस्व भाग १ और २ जो साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा प्रकाशित की गई है को देखा है- पढ़ा है। आप 'प्रेमघन' से किस प्रकार संबंधित हैं ? मेरा उत्तर सुनकर कि 'प्रेमघन जी मेरे प्रपितामह थे, उन्होंने कहा, तब तो आपको हिन्दी में और लिखना चाहिये। आपकी 'वैज्ञानिक लघु कथायें' और 'आधुनिक विज्ञान कथायें' मैंने देखी हैं। उस दिशा में, विज्ञान कथाओं के लेखन की दिशा में, अभी बहुत कुछ करना बाकी है। वार्ता यहीं पर रुक गयी- कोई आ गया था। उसी संगोष्ठी के दूसरे दिन संध्या को जब उनसे पुनः भेंट हुई तो आपने फैजाबाद की, हम लोगों द्वारा, विज्ञान परिषद् प्रयाग की शाखा में आजीवन सदस्यों की संख्या में वृद्धि करने का सुझाव दिया। उन्हें इस दिशा में प्रयास करने का आश्वासन मैंने दिया। इस भेंट के उपरान्त विज्ञान परिषद् प्रयाग की मुख्य पत्रिका 'विज्ञान' में मैंने विज्ञानसम्मत लेखों का लिखना प्रारम्भ कर दिया। प्रो० मिश्र जी से संपर्क की सहजता का प्रारम्भ हो गया था और विज्ञान परिषद् प्रयाग में आयोजित कार्यक्रमों में आने जाने का सिलसिला भी।

'भारतीय विज्ञान कथा लेखन समिति' फैजाबाद की स्थापना वर्ष १९९५ में हुई और इसके प्रथम अधिवेशन में जिसका आयोजन फैजाबाद में १३-१४ सितम्बर १९९७ में किया गया था, प्रो० मिश्र जी अपने शिष्यों के साथ पधारकर अपना महत्वपूर्ण वक्तव्य ही नहीं दिया, वरन् अधिवेशन को अगले वर्ष विज्ञान परिषद् प्रयाग में आयोजित करने की स्वीकृति देकर समिति से संबद्ध सभी सदस्यों को अभिभूत कर दिया तथा परोक्ष में विज्ञान कथा लेखन को संबल प्रदान किया।

विज्ञान परिषद् प्रयाग में भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति का आयोजन १४ नवम्बर १९९८

को प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी की अध्यक्षता में आयोजित किया गया था। प्रो० मिश्र ही कुछ समय पूर्व हुई पारिवारिक क्षति के उपरान्त भी व्यथित हृदय से अधिवेशन में गये और उसका उद्घाटन करने के उपरान्त असह्य मानसिक पीड़ा के कारण चले गये। उनका इस अवसर पर आ जाना ही समिति के सदस्यों को तोषदायक लगा। इस अधिवेशन से पढ़े गये समस्त आलेखों को आपने 'विज्ञान' पत्रिका में स्थान देकर हम सभी विज्ञान कथाकारों को प्रोत्साहित किया।

विज्ञान कथा लेखकों का तीसरा अधिवेशन 'संचार माध्यमों के लिये विज्ञान कथा लेखन' सारनाथ, वाराणसी में १६-२२ फरवरी २००० को आयोजित हुआ। प्रो० मिश्र जी विज्ञान कथा लेखक समिति के संरक्षक एवं मार्गदर्शक के रूप में अधिवेशन में आये तथा हम सभी को यह तथ्य प्रकट कर चकित कर दिया कि हिन्दी की प्रथम विज्ञान उपन्यासिका अथवा दीर्घवृत की कथा 'आश्चर्य वृत्तांत' साहित्याचार्य पं० अम्बिका दत्त व्यास द्वारा लिखित कथा उन्हीं के समाचार पत्र 'पीयूष प्रवाह' में १८८४ से १८८८ के मध्य प्रकाशित हुई थी। सामान्यतः यह माना जाता था कि हिन्दी की प्रथम विज्ञान कथा सरस्वती में १९०० में प्रकाशित हुई थी। यह तथ्य प्रो० मिश्र जी की शोधपरक दृष्टि तथा विज्ञान साहित्य के प्रत्येक आयाम को समृद्ध करने की सद् इच्छा का द्योतक है। इसी भावना का दर्शन उनके सारनाथ अधिवेशन में पढ़े गये लेख 'हिन्दी साहित्य में विज्ञान कथा' में होते हैं। "मुझे प्रसन्नता है कि डॉ० राजीव रंजन उपाध्याय जो स्वयं कथाकार हैं उन्होंने विगत वर्षों से भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति की स्थापना की है और उससे भी बढ़कर प्रसन्नता इस बात की है कि गत वर्ष विज्ञान परिषद् के सहयोग से अपने द्वितीय सम्मेलन के उपरान्त राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् के सहयोग से विज्ञान कथा पर यहां सारनाथ में कार्यशाला का आयोजन हुआ है। यह सुअवसर है कि इस मंच से विज्ञान कथा लेखन पर सार्थक विचार विमर्श होगा।"

विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र की लेखनी द्वारा श्रीवृद्धि करने वाले प्रो० मिश्र जी शतायु हों, यही सर्वतोभद्र मंगलकामना है।

अध्यक्ष
भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति
परिसर कोठी काके बाबू
देवकाली मार्ग, फैजाबाद-२२४००१

सूक्ष्ममात्रिक तत्त्ववेत्ता : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 पद्माकर पाण्डेय

विज्ञान परिषद् प्रयाग से सूचना प्राप्त हुई कि परम आदरणीय डॉ० शिवगोपाल मिश्र के सत्तरवें जन्म दिवस पर एक स्मारिका प्रकाशित कर उन्हें सम्मान प्रदान करने का निर्णय लिया गया है। मेरा सौभाग्य है कि ऐसे महान पुरुष हेतु मुझे अपने विचार रखने हेतु चुना गया। बड़ा ही कठिन कार्य लगा। यदि एक दो बातें हों तो बड़ा ही सरल कार्य होता परन्तु डॉ० मिश्र जिनमें गुणों की भरमार हो उसमें से कुछ विचार रखूँ यह बड़ा ही कठिन कार्य लगा। उस दिन से बड़े ही असमंजस में रहा कि कहाँ से शुरू करूँ और कहाँ समाप्त करूँ। जिस महान पुरुष के साथ एक लम्बे समय तक परिवार के सदस्य के रूप में रहा उसके बारे में क्या लिखूँ और क्या नहीं, यह कहना अनुचित होगा।

मैंने बी.एससी. (कृषि) के बाद एम.एससी. (कृषि रसायन) में प्रवेश लिया। उसी समय की बात है जब डॉक्टर साहब के सम्पर्क में पहली बार आया और वह भी विद्यार्थी के रूप में। डॉ० साहब की प्रतिभा, चेहरे की चमक, सादगी देखकर मैं पहले दिन ही उन पर मोहित हो गया। एक आदर्श पुरुष के सारे गुण उनमें स्पष्ट झलक रहे थे। उसी दिन से मैंने उन्हें अपना गुरु गोविन्द मान लिया और मन में बसा लिया कि यदि डी.फिल करूँगा तो इन्हीं के साथ, अन्यथा नहीं। एम.एससी. कक्षा में उस समय कुल ६ छात्र थे। एम.एससी का छात्र होते हुये डॉ० साहब के बहुत समीप आना संभव नहीं हो सका। कारण, डॉ० साहब की व्यस्तता जिसमें शोध छात्रों का निर्देशन, विज्ञान परिषद् के मुख्य कार्यकारी का भार तथा लेखन कार्य। समय धीरे-धीरे बीतता रहा। विद्यार्थी के रूप में जिस बात ने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया वह उनकी पढ़ाने की शैली के साथ समय की पाबन्दी और सभी छात्रों के साथ समानता का व्यवहार। कक्षा में उनका व्याख्यान इतना स्पष्ट होता था कि यदि ध्यान से सुना जाय तो शायद बाद में पढ़ने की आवश्यकता नहीं होती थी।

सन् १९७१ में मैंने एम.एससी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। उस समय आगे डी.फिल. करने का विचार आया। लेकिन जैसा कि पहले ही ठान चुका था कि यदि डी.फिल. करूँगा तो डॉ० साहब के साथ अन्यथा नहीं। मन में डर था कि यदि डॉ० साहब ने स्वीकार नहीं किया तो क्या होगा। वह दिन मुझे अच्छी तरह याद है जब डॉ० साहब दिल्ली से लौट रहे थे। ठीक से याद नहीं आ रहा है शायद डॉ० साहब कुछ समय के लिये भारत सरकार में वरिष्ठ विशेषज्ञ के रूप में नियुक्त थे। मैंने एक वरिष्ठ अनुसंधान छात्र डॉ० पी.सी. मिश्र से अपनी जिज्ञासा बताई। उन्होंने बताया कि डॉ० साहब इलाहाबाद में बहुत कम समय के लिये ही उपलब्ध हैं क्योंकि आजकल दिल्ली में कार्यरत हैं। उन्होंने सलाह दिया कि वे दिल्ली से वापस आ रहे हैं। मन में शंका थी कि पता नहीं कितने दिन डॉ० साहब इलाहाबाद में रहेंगे और उनकी व्यस्तताओं के कारण भेंट नहीं हो सकी तो फिर प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। यह अवसर मैं गंवाना नहीं चाहता था। अतः स्टेशन जाकर डॉ० साहब से मिलने का निर्णय किया। स्टेशन पर प्रणाम करते ही उन्होंने तुरन्त पहचानते हुये कहा- पद्माकर जी ! क्या कर रहे हो ?

डॉ० साहब की विशेषता है कि वे सभी को उनके पहले नाम से ही पुकारते हैं जिससे बड़ा ही स्नेह और आत्मीयता झलकती है। मैंने अवसर का लाभ उठाते हुये तुरन्त स्पष्ट रूप से अपनी बात प्रकट कर दी कि मैं आपके मार्ग निर्देशन में शोध कार्य करना चाहता हूँ। उन्होंने उस समय इतना ही कहा कि भई शोध कार्य में काफी मेहनत करनी पड़ती है। शायद यह मेरी परीक्षा थी। लगभग २-३ माह के बाद मैं फिर उनके घर पर मिला। मेरी निष्ठा और लगन देखकर मुझे देखते ही बोले- अपना कार्य शुरू कर दो। मुझे आशा ही नहीं थी कि परीक्षा में मैं इतनी जल्दी उत्तीर्ण हो जाऊँगा। इसके बाद गुरु जी के आशीर्वादों से मैं अपने कार्य में सफलता प्राप्त करता आगे बढ़ता रहा। कुछ ही महीनों में मुझे सी.एस.आई.आर. का जे.आर.एफ. भी मिल गया। मुझे सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर कार्य करने का अवसर मिला। यह मेरे लिये गर्व की बात रही। गुरु जी सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक हैं। आज भी ऐसा कोई शोध पत्र जो सूक्ष्ममात्रिक तत्वों से सम्बन्धित हो और उसमें गुरु जी के कार्य का सन्दर्भ न हो, असम्भव है।

मैं यहाँ गर्व के साथ कहना चाहूँगा कि मुझे शोध कार्य में कोई समस्या नहीं आई। मैंने सुन रखा था कि शोध कार्य में बड़ी दिक्कत आती है और लगभग ५-६ साल का समय लग जाता है। उस समय कुछ ऐसे छात्रों को भी जानता था जो ७-८ साल से कार्य कर रहे थे और थीसिस पूरी नहीं कर पाये थे। गुरु जी के सफल निर्देशन और मेरे कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप मेरा कार्य पूरे तीन वर्ष में ही सम्पन्न हुआ। यह सब गुरु जी के आशीर्वादों से ही संभव हो सका। ऐसे गुरु को शत् शत् प्रणाम।

मैंने गुरु जी से कुछ ऐसी बातें सीखीं जो आज भी मुझे सफलता का रास्ता दिखा रही हैं। गुरु जी का कहना था कि शोध परिणाम कैसा भी हो, वह एक विशेष खोज है। एक बार की घटना है कि सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर कीलेट्स का प्रभाव देख रहा था। परिणाम मुझे बहुत ही तंग कर रहे थे। बार-बार करने पर भी जो आँकड़े प्राप्त हो रहे थे उसका Interpretation मैं नहीं कर पा रहा था। गुरु जी से बताया तो उन्होंने कहा कि अनुसन्धान का परिणाम कुछ भी हो वह बहुत ही महत्वपूर्ण खोज है। यदि पहले से ही पता हो तो वह नई खोज क्या हुई। वह शोध कार्य अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त शोध पत्रिका 'प्लाण्ट एण्ड सॉयल' में प्रकाशित हुआ जिससे मेरा बहुत ही उत्साह बढ़ा।

गुरु जी की सदैव से ही सलाह रहती थी कि शोध परिणाम यथासमय प्रकाशित होते रहने चाहिए। विलम्ब होने से कोई दूसरा वैज्ञानिक कार्य कर उसका श्रेय ले सकता है। अतः मेरी डी.फिल. जमा होते समय तक लगभग १५ शोधपत्र विभिन्न शोध पत्रिकाओं में छप चुके थे। फलस्वरूप मुझे अपनी थीसिस लिखने में बहुत ही आसानी हुई।

गुरु जी की सफलता का राज कड़ी मेहनत है। प्रयोगशाला में मैंने उनको कभी खाली बैठे नहीं देखा। सदैव कुछ न कुछ लिखते पढ़ते तथा शोध छात्रों को निर्देशित करते ही पाया। उन्होंने हम सबको यही सिखाया कि कभी खाली मत बैठो। कुछ न कुछ जरूर करते रहो। इसी में सफलता है।

गुरु जी को मैंने सदैव ही प्रसन्नचित्त पाया। गलतियाँ करने पर भी उनको क्रोधित होते नहीं देखा। ईश्वर उन्हें सदैव प्रसन्नचित्त रखें और दीर्घायु दें जिससे हम लोगों को उनका आशीर्वाद सदैव मिलता रहे। परम आदरणीय श्रद्धेय गुरु जी की सत्तरवीं वर्षगाँठ पर मेरी हार्दिक शुभकामनायें एवं अनेकों बधाइयाँ।

उपमहाप्रबंधक (तकनीकी)
राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक
लखनऊ

प्रो० मिश्र जी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ0 जगदीश सिंह चौहान

श्री शिवगोपाल मिश्र के नाम से मैं तब से परिचित हूँ जब इनके चेहरे पर एक लम्बी दाढ़ी हुआ करती थी। मेरा अपना मानना है कि दाढ़ी इन्होंने शौकिया तो नहीं ही रखी होगी क्योंकि यदि यह शौकिया होती तो एक बार मुड़ाने के बाद फिर रख सकते थे। इससे ऐसा लगता है कि मिश्र जी ने किसी संकल्प को लेकर दाढ़ी रखी होगी और जब वह संकल्प पूरा हो गया तो दाढ़ी मुड़वा दी और फिर कभी नहीं रखी। इस एक तथ्य से मिश्र जी के दृढ़निश्चयी व्यक्तित्व होने की एक झलक परिलक्षित होती है।

अध्ययन के लिये मिश्र जी ने अपना क्षेत्र मृदा रसायन चुना। उसी में स्नातकोत्तर उपाधि ग्रहण की और उसी विषय में देश के महान वैज्ञानिक प्रो० नीलरत्न धर के मार्गदर्शन में डी०फिल० की उपाधि प्राप्त की।

विज्ञान के साथ-साथ हिन्दी के प्रति भी आपकी विशेष रुचि थी। हिन्दी से लगाव के कारण ही आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'साहित्य रत्न' की उपाधि प्राप्त की। विज्ञान तथा हिन्दी के इसी मेल ने मिश्र जी द्वारा विज्ञान को हिन्दी के माध्यम से लोगों तक पहुँचाने में अहम भूमिका निभाई है।

पठन-पाठन में मिश्र जी की सदैव रुचि रही है। अनेक विद्यार्थियों ने आपके मार्गदर्शन में शोधकार्य करके डॉक्टरेट की उपाधियाँ प्राप्त कीं और अपने जीवनयापन की ओर अग्रसर हुये। अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय शोध-पत्रिकाओं में आपके शोध-पत्र प्रकाशित हुये हैं जिनकी संख्या ३०० तक होगी।

विभिन्न विषयों पर मिश्र जी ने अनेकानेक पुस्तकें भी लिखी हैं जिन्हें शिक्षित समाज में सराहा गया है। कई पुस्तकों पर आपको पुरस्कार भी प्राप्त हुये हैं जिनके लिये आप साधुवाद के पात्र हैं। आपके द्वारा हिन्दी में लिखी गई पुस्तकों को पढ़कर यह अनुमान लगाना कठिन हो जाता है कि आपको विज्ञान का ज्ञान अधिक है या हिन्दी का। हिन्दी में विज्ञान प्रचार एवं प्रसार में मिश्र जी का योगदान अतुलनीय है। इसी से वे आज देश में हिन्दी विज्ञान लेखक के रूप में अधिक जाने माने जाते हैं।

हिन्दी में अपने विशेष ज्ञान के कारण ही, भारत सरकार ने आपको 'भारत की सम्पदा' (Wealth of India) नामक सन्दर्भग्रंथ के हिन्दी में अनुवाद के सम्पादन का दायित्व सौंपा। इस पद पर वे लगभग २ वर्ष तक 'कौंसिल ऑफ साइंटिफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्च' (सी.एस.ई.आर.), नई दिल्ली में रहे और इसके सम्पादन का दायित्व बखूबी निभाया।

विज्ञान परिषद् से वे कब सम्बद्ध हुये, यह मुझे ज्ञात नहीं है लेकिन मेरा अनुमान है कि श्रद्धेय स्वामी सत्यप्रकाश के सम्पर्क में आने के बाद ही वे इससे जुड़े होंगे और जब एक बार जुड़ गये तो आज भी जी-जान से जुड़े हुये हैं। विज्ञान परिषद् को आज जो स्वरूप प्राप्त है उसमें मिश्र जी का बहुत बड़ा योगदान है। ऐसा लगता है कि उन्होंने इसे ही अपना कार्यस्थली बना लिया है। विज्ञान परिषद् के

सुचारु रूप से कार्य करने में अनेक समस्यायें (अधिकतर वित्तीय) आने पर भी वे विचलित नहीं हुये और यही प्रयत्न करते रहे कि यह संस्था आगे बढ़ती रहे। परिषद् का मुख-पत्र 'विज्ञान' का अब तक अनवरत छपते रहना भी मिश्र जी के सहयोग का ही प्रतिफल है। सन् १९५८ से प्रकाशित हिन्दी में वैज्ञानिक शोध-पत्रिका 'विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका' के प्रकाशन में भी उनका बड़ा योगदान रहा है। प्रारम्भ से ही आप इस पत्रिका के प्रबन्ध सम्पादक हैं।

मुझे विज्ञान परिषद् में लाने का श्रेय मिश्र जी को ही है। पहले विश्वविद्यालय का सत्र नियमित हुआ करता था और ग्रीष्मकालीन अवकाश लगभग ढाई महीने का हुआ करता था जिसमें मैं जनपद मैनपुरी में अपने गाँव जाया करता था। एक बार मैं जब गांव से लौटकर आया तो मुझे बताया गया कि मैं 'विज्ञान' पत्रिका का सम्पादक चुन लिया गया हूँ। हिन्दी लेखन का अधिक ज्ञान न होते हुये भी मैंने यह दायित्व स्वीकार किया और अपनी योग्यता व सामर्थ्य के अनुसार लगभग ८ वर्षों तक इसे निभाया। तभी से आज तक मैं परिषद् से किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ हूँ।

पहले कृषि रसायन की पढ़ाई रसायन विभाग में ही हुआ करती थी। बाद में प्रो० धर की इच्छा के सम्मानार्थ इस विषय के अध्ययन का स्थानान्तरण शीलाधर मृदा विज्ञान अनुसंधान संस्थान में हो गया, जिसके निदेशक स्वयं प्रो० धर थे। प्रो० धर की अस्वस्थता के कारण संस्थान के निदेशक का कार्य मिश्र जी ही देखते थे और बाद में वे इसके विधिवत् निदेशक भी बने। अपने अथक परिश्रम व सूझ-बूझ से मिश्र जी ने यह दायित्व भी विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने तक भलीभाँति निभाया।

नौकरी से अवकाश ग्रहण करने के बाद मिश्र जी विज्ञान परिषद् के प्रति पूर्णतया समर्पित हो गये और आज भी वे उसी लगन से परिषद् के स्वरूप को उजागर करने और इसकी प्रगति के लिये प्राणपण से जुटे हुये हैं। विज्ञान परिषद् के विभिन्न पदों पर कार्यरत रहने से परिषद् के क्रियाकलापों पर उनकी अच्छी पकड़ है और वे इसका भरपूर लाभ परिषद् को दिला रहे हैं।

विज्ञान परिषद् के क्रियाकलाप विविध प्रकार के हैं और इन सबका एक ही उद्देश्य है कि विज्ञान का हिन्दी में प्रचार व प्रसार हो। इसके लिये समय-समय पर हिन्दी में विज्ञान लेखन के लिये गोष्ठियाँ, अनेक सामयिक विषयों पर कार्यशालायें, अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा पुस्तक लेखन का कार्यक्रम आयोजित होता रहता है। इसके अतिरिक्त हिन्दी में विज्ञान के प्रचार में रुचि रखने वाले कतिपय विशिष्ट व्यक्तियों या उनके परिजनों द्वारा प्रदत्त धनराशि से उनकी स्मृति में स्मृति व्याख्यानमालाओं का प्रतिवर्ष आयोजन होता है। हिन्दी लेखन के लिये कुछ पुरस्कार भी दिये जाते हैं। परिषद् के इन सभी क्रियाकलापों के सुचारु रूप से संचालन में भी मिश्र जी का योगदान सराहनीय है।

मिश्र जी स्वभावतः नम्र, सहृदय एवं मृदुभाषी हैं। उनकी उपलब्धियों से स्पष्ट संकेत मिलता है कि वे कितने कर्मठ, कर्तव्यनिष्ठ व अपने दायित्व के प्रति समर्पित व्यक्ति हैं। मेरी भगवान से यही प्रार्थना है कि मिश्र जी स्वस्थ, प्रसन्न और दीर्घायु हों। विज्ञान परिषद् को उनकी सदैव आवश्यकता बनी रहेगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

एमेरिटस प्रोफेसर, रसायन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद-२११००२

प्रोफेसर शिवगोपाल मिश्र

डॉ० श्रीमती कृष्णा मिश्रा

अक्टूबर माह सन् १९६५ की बात है, जब मैंने रसायन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रो० रामदास तिवारी जी की प्रयोगशाला में शोध सहायक के रूप में प्रवेश लिया था। तब प्रथम बार मेरा परिचय प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी से हुआ। उस समय वह कृषि रसायन के प्रवक्ता थे तथा उनकी गणना रसायन विभाग के श्रेष्ठ वक्ताओं में की जाती थी।

सन् १९६८ में रसायन विभाग में मेरी प्रवक्ता के रूप में नियुक्ति हुई तथा प्रारम्भ में मुझे कृषि रसायन की कुछ कक्षायें पढ़ाने हेतु दी गईं। कृषि रसायन मेरा विषय कभी नहीं रहा था, अतः मुझे सहायता की आवश्यकता थी। स्वामी सत्यप्रकाश जी ने मुझे श्री मिश्र जी से सहायता लेने को कहा। मुझे उनसे भरपूर सहायता एवं सहयोग प्राप्त हुआ। हम सभी उस समय उन्हें स्वामी सत्यप्रकाश जी से तथा विज्ञान परिषद् से अंतरंग रूप से जुड़ा मानते थे।

डॉ० मिश्र की प्रेरणा से मैंने उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी के लिये 'उच्च बहुलक' तथा 'संश्लिष्ट औषधियां' नामक पुस्तकें लिखीं। वे पुस्तक लेखन के समय उपयोगी सुझाव भी देते रहे।

प्रो० मिश्र हिन्दी माध्यम से विज्ञान को जन साधारण तक पहुंचाने के प्रयास में प्रारम्भ से ही जुटे रहे। सन् १९५८ से वे 'विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका' के संपादक रहे तथा उन्होंने अनेक वर्षों तक 'विज्ञान' नामक मासिक पत्रिका का सफल संपादन किया। विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित अनेक व्याख्यान श्रृंखलाओं का उन्होंने संग्रह किया। उन्होंने हिन्दी साहित्य पर तथा अनेक वैज्ञानिक विषयों पंर अनेक सुविख्यात पुस्तकें लिखी हैं। उन्होंने धार्मिक तथा वैज्ञानिक साहित्य का हिन्दी में अनुवाद भी किया। प्रो० मिश्र ने नोबेल पुरस्कार विजेता लिनस पाउलिंग की विख्यात पुस्तक 'कालेज केमिस्ट्री' तथा थिमैन की 'लाइफ आफ बैक्टीरिया' नामक पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद किया। वे कई धार्मिक संस्थाओं से जुड़े रहे हैं, विशेषतया इस्कॉन से जो हरे कृष्ण संचेतना के लिये अंतर्राष्ट्रीय सोसाइटी है। उन्होंने श्रील प्रभुपाद के समस्त ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद भी किया है। हिन्दी के माध्यम द्वारा जटिल वैज्ञानिक विषयों को जन साधारण तक पहुंचा कर प्रो० मिश्र जी ने जो समाज सेवा की है वह अतुलनीय है।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी की पत्नी डॉ० श्रीमती रामकुमारी मिश्र से भी मेरा संपर्क रहा है। वह बहुत ही सुलझी हुई विदुषी महिला हैं। प्रो० मिश्र जी का पुत्र तथा मेरा पुत्र एक ही स्कूल के विद्यार्थी थे तथा दोनों को ही पठन पाठन में पारितोषिक मिलते थे। इसी कारण विशेषतया श्रीमती मिश्र से प्रायः स्कूल में संपर्क होता था। मिश्र जी की ज्येष्ठ पुत्री मेरी छात्रा रही है। इनके पांचों बच्चे पढ़ने में सर्वश्रेष्ठ रहे हैं। घर के वातावरण का बच्चों पर प्रभाव तो पड़ता ही है। जब माता पिता दोनों ही कर्मठ हों तो बच्चों को वही संस्कार मिलते हैं।

एक मध्यवर्गीय कृषक के घर में जन्म लेकर इतनी उपलब्धियां प्राप्त कर इस बुलन्दी तक पहुंचना ही प्रो० मिश्र की कर्मठता का द्योतक है। प्रो० मिश्र तथा श्रीमती मिश्र ने समाज को बच्चों के रूप में पांच सुयोग्य नागरिक दिये हैं, इससे महत्वपूर्ण योगदान देश के लिये क्या हो सकता है? चालीस से अधिक छात्रों ने आपकी छत्रछाया में शोधकार्य करके डी.फिल, डी.एससी. की उपाधियां प्राप्त की हैं। इन छात्रों के माध्यम से प्रो० मिश्र जी ने जो समाज सेवा की है वह सभी के लिये आदर्श है।

अवकाशप्राप्त प्रोफेसर, रसायन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

मेरे सर्वश्रेष्ठ गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० अशोक कुमार गुप्ता

परम श्रद्धेय मेरे गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से मेरी पहली मुलाकात अपने डी.फिल. के सम्बन्ध में हुई। उनकी शैक्षणिक दक्षता एवं कृषि रसायन विषय के स्तम्भ के रूप से तो मैं उन्हें अपने स्नातकोत्तर छात्र जीवन के समय १६७० से ही परिचित हो गया था यद्यपि इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पढ़ने का मुझे सौभाग्य नहीं मिला। मैं तो इलाहाबाद कृषि संस्थान में एम.एससी. जीव रसायन का छात्र था किन्तु मेरे कई सहपाठी एम.एससी. कृषि रसायन के छात्र थे और उनसे प्रायः प्रतिदिन मिलना होता था। कभी-कभी उन्हीं के साथ मैं प्रोफेसर एन.आर. धर की विशेष कक्षाओं में लेक्चर सुनने जाया करता था। विश्वविद्यालय की बास्केटबाल टीम में मेरा चयन हो जाने के कारण मैं प्रायः प्रतिदिन शाम को विज्ञान संकाय के बास्केट बाल मैदान में कक्षाओं के बाद, अभ्यास के लिये साइकिल से जाया करता था। मिश्र जी की प्रयोगशाला के सामने अपनी साइकिल खड़ी कर अपने साथियों के साथ मैदान में खेलने आ जाता। अतः डॉ० मिश्र जी के बारे में, उनकी विद्वता एवं दक्षता के बारे में मित्रों से सुनता रहता था। मेरे मन में उनके प्रति आदर एवं सम्मान बढ़ता ही गया। एम.एससी. करने के बाद मेरा एक निकटतम मित्र, पद्माकर पाण्डेय उनके साथ शोध कार्य करने लगा। उसे देख मैं भी उनके साथ शोध करने के लिये लालायित था, किन्तु डॉ० मिश्र के विशाल व्यक्तित्व के कारण उनके सामने जाने से भी घबराता था। किन्तु मेरी यह इच्छा बलवती होती गई कि मैं डॉ० साहब के मार्गदर्शन में ही अपना शोध कार्य करूँ। पर स्नातकोत्तर उपाधि के तुरन्त बाद कृषि संस्थान में मेरी नियुक्ति हो जाने के कारण कुछ शिथिलता आ गई और ऊहापोह में मेरे तीन बहुमूल्य वर्ष व्यतीत हो गये। डॉ० पी.सी. मिश्र उन दिनों मेरे विभाग में एक योजना में मृदा विज्ञान के विषय विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत हो गये। उनसे मैंने अपनी इच्छा प्रकट की। उन्होंने डॉ० मिश्र से मेरा परिचय करवा कर मेरी झिझक समाप्त कर दी। मैंने पहली मुलाकात में ही पाया कि वह तो अत्यन्त ही सरल, स्पष्टवादी एवं सहृदय व्यक्ति हैं। शिक्षक होने के नाते उन्होंने मुझे अन्य शोध छात्रों की अपेक्षा अधिक सम्मान व महत्व दिया। बस क्या था! अब तो मैं उनके व्यक्तित्व से और अधिक प्रभावित हो गया। उन्होंने 'स्पून फीडिंग' न कर मुझे अपने शीर्षक चयन व निर्धारण तथा प्रयोगों की खुली छूट दे दी जिससे मेरी कठिनाइयाँ तो बढ़ीं पर सीखने व विषय को जानने का भरपूर अवसर मिला। उन्होंने प्रयोगशाला की चाभी मुझे दे दी जिससे समय का कोई प्रतिबन्ध नहीं रहा। अतः मैं रात्रि ६.०० बजे तक प्रयोगशाला में काम करता रहता। प्रतिभा के धनी डॉ० साहब ने मेरे कठिन दिखने वाले शोधकार्य को अपने निर्देशन से अत्यन्त सरल बना कर मेरी सारी कठिनाइयों को आसान कर दिया। अपने शोध कार्य के समय में ही मैं मात्र शोध ा छात्र न रहकर उनके परिवार से भी जुड़ गया तथा अल्प समय में ही उनका प्रिय बन गया। डॉ० साहब की लड़कियों को मैं अपनी सगी बहनें मानकर उनकी शादियों में अपने अनुभव के अनुरूप कार्य

करता रहा जिससे डॉ० साहब मुझ पर पूर्णतः निर्भर रहते और अपने पुत्र के समान प्यार व स्नेह करने लगे। डॉ० साहब के साथ एक बार मैसूर तक की सैर का सौभाग्य मिला। डॉ० साहब अत्यन्त परिश्रमी एवं पठन-पाठन के प्रति समर्पित हैं। पठन-पाठन, लेखन जैसे उनकी मुख्य दिनचर्या हैं जिससे मैं बहुत प्रभावित हुआ। डॉ० साहब की दूसरी पुत्री के ऑपरेशन के सम्बन्ध में मैं मद्रास तक उनकी सहायता करने गया। वहाँ मैंने देखा कि ऑपरेशन के दिन भी तनावग्रस्त माहौल के बावजूद डॉ० साहब का नियमित पठन-लेखन कार्य दैनिक परिचर्या की तरह चलता रहा। इससे मैं बहुत प्रभावित हुआ और मन में उन्हीं की तरह मेहनत करने की ठान ली, पर अभी मैं उनका दशमांश भी नहीं कर पाया हूँ।

डी.फिल. की थीसिस जमा करते ही डॉ० साहब ने मुझसे कहा कि अब खाली हो गये हो, विज्ञान के लिये कुछ लिखते क्यों नहीं। शिक्षक होने के बावजूद हिन्दी में लिखना मेरे लिये दुष्कर कार्य था पर उन्होंने जोर देकर मुझसे एक लेख लिखवाया। पहला लेख छपते ही मुझे अपार प्रसन्नता हुई और मेरा साहस खुल गया। उन्हीं की प्रेरणा से मैंने कई निबन्ध विज्ञान व अन्य वैज्ञानिक पत्रिकाओं में लिखे। यही नहीं, उन्हीं की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से चार पुस्तकों का लेखक भी बन गया। अपने व्यस्त अध्यापन कार्य व अन्य सामाजिक कार्यों के बावजूद मैंने डॉ० साहब के निर्देशन में डी.एससी. के लिये पंजीकरण करवा लिया और संस्थान के कार्यों में व्यस्तता के कारण लगभग १३ वर्षों के शोध के बाद अपनी थीसिस पूरी कर पाया।

डॉ० साहब अपने छात्रों से विशेष स्नेह रखते हैं और एक पिता की भांति उनकी प्रगति के लिये चिंतित रहते हैं। मैं अपने को सबसे अधिक सौभाग्यशाली समझता हूँ क्योंकि मुझे तो डॉ० साहब से सबसे अधिक स्नेह मिला है। अभी भी उनके घर में कोई निर्माण कार्य हो, कोई भी आयोजन हो या कोई समस्या हो तो अपने पुत्र की भाँति मशविरा लेना तथा मेरे ऊपर भरोसा रखना उनका प्रेम दर्शाता है।

डॉ० मिश्र एक महान आदर्शवादी, सादा जीवन व सरल स्वभाव में विश्वास रखने वाले हैं। डॉ० साहब भौतिक सुख सुविधाओं से वंचित रह कर आडम्बर एवं विलासिता रहित मितव्ययी जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति हैं। अपने चाटुकारों पर डॉ० साहब ने कभी विश्वास नहीं किया। डॉ० साहब विज्ञान परिषद् के प्रति समर्पित हैं और इस अवस्था में भी विज्ञान परिषद् के कार्यकलापों को विस्तार दिये हुये हैं और निरन्तर इसकी प्रगति के लिये चिन्तन-मनन करते रहते हैं। डॉ० साहब की लेखन क्षमता भी अद्वितीय है। वे हिन्दी के माध्यम से विज्ञान के प्रचार प्रसार में निरन्तर लगे रहते हैं। कृषि रसायन के क्षेत्र में उनके कार्य सर्वविदित हैं। सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की फसलोत्पादन में भूमिका में डॉ० साहब के योगदान की जितनी सराहना की जाय, कम है।

डॉ० साहब के सानिध्य में रहकर जो कुछ मैं सीख पाया, बन पाया व शैक्षणिक उपलब्धि प्राप्त कर सका उसके लिये मैं डॉ० साहब का चिरऋणी रहूंगा।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुर्साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवै नमः।।

प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, जीव रसायन
एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग, इलाहाबाद
एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट (डीम्ड वि०वि०)
नैनी, इलाहाबाद- २११००७

परम आदरणीय डॉ० मिश्र जी

प्रो0 ईश्वर चन्द्र शुक्ल

हिन्दी द्वारा विज्ञान की सेवा करने वाले सुप्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक प्रो० (डॉ०) शिवगोपाल मिश्र से मेरा परिचय इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मेरी प्रवक्ता पद पर नियुक्ति के उपरांत ही हुआ। बात प्रारम्भिक दिनों की है, स्व० स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी विभागाध्यक्ष थे तथा अपने सरल स्वभाव के कारण सभी को प्रिय थे। उन्होंने विभाग में ही एक कार्यक्रम चलाया जिसके अंतर्गत ग्लास ब्लोइंग का प्रशिक्षण प्रत्येक शोध छात्र एवं अध्यापक को दिलाना था। उत्सुकतावश मैंने भी वह कार्य सीखने का मन बनाया। उन दिनों श्री घटक हमारे विभाग के ग्लास ब्लोअर थे तथा अत्यन्त कुशलता से कार्य करते थे। डॉ० मिश्र ने भी यह कार्य सीखने का संकल्प लिया। अतः हम लोगों की पहली भेंट वहीं पर हुई। भेंट तो उसके पहले भी होती थी लेकिन वहाँ पर अधिक निकटता आई तथा सम्पर्क में निरंतरता आ गई। इस कार्यक्रम को उन दिनों किसी वरिष्ठ अध्यापक ने सीखना उचित नहीं समझा अतः कुछ ही लोग उसमें जाते थे। उस समय मैंने देखा कि मिश्र जी में नई चीज सीखने की भी जिज्ञासा प्रबल थी। कुछ दिनों बाद यह कार्यक्रम बंद हो गया। इसके उपरांत हम दोनों में निकटता बढ़ती गई। अधिकतर हम लोग प्रायोगिक कक्षाओं में साथ ही साथ बैठते तथा विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श करते।

शनैः शनैः डॉ० मिश्र की ख्याति वैज्ञानिक चिंतन को हिन्दी द्वारा व्यक्त करने वाले वैज्ञानिक के रूप में होने लगी। प्रो० सत्यप्रकाश के निकट रहने के कारण प्रो० मिश्र को अपने कार्य में आगे बढ़ने का अवसर मिला। १६७० में वे सी.एस.आई.आर. नई दिल्ली द्वारा चलाये जा रहे 'वेल्थ ऑफ इण्डिया' के हिन्दी अनुवाद के सम्पादन हेतु दिल्ली चले गये। वहां पर उन्होंने उल्लेखनीय तथा सराहनीय कार्य किया। लेकिन सरकारी सेवा उन्हें अधिक आकर्षित नहीं कर सकी और वे इलाहाबाद पुनः वापस आ गये।

हिन्दी का उनका प्रेम केवल विज्ञान तक ही सीमित नहीं है। साहित्यिक क्षेत्र में भी उन्होंने कुछ उल्लेखनीय पुस्तकें लिखी हैं। डॉ० मिश्र बहुमुखी प्रतिभा के धनी तथा मनीषी प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। साधारण वेशभूषा तथा सरल स्वभाव उनकी पहचान है। उन्होंने अध्यापन के क्षेत्र में अपने विषय को रोचक बनाकर प्रस्तुत करने का महारत प्राप्त कर रखा है। कोई भी विद्यार्थी अपनी कक्षा में बैठकर जब उनका व्याख्यान सुनता था तो उसे विषय की दुरूहता का आभास ही नहीं होता था। संभवतः वे ऐसे प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने कृषि विज्ञान को स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर हिन्दी में पढ़ाने की परम्परा डाली।

कहा जाता है कि विश्वविद्यालय स्तर पर बिना शोध के अध्यापन अपूर्ण रहता है इसीलिए डॉ० मिश्र ने शोध की स्वस्थ परम्परा भी स्थापित की। कृषि विज्ञान के क्षेत्र में उन्होंने विभिन्न विषयों पर

शोध-पत्र प्रकाशित किये तथा अनेक छात्रों को डी.फिल. तथा डी.एससी. की उपाधियां प्राप्त करने हेतु अपने संरक्षण में लेकर उनका मार्गदर्शन किया। भारत के विभिन्न प्रतिष्ठानों में प्रो० मिश्र के छात्र मिल जायेंगे। प्रायः देखा जाता है कि शोध छात्र उपाधि पाने के उपरांत अपने पर्यवेक्षक से अधिक संपर्क नहीं रखते और न ही कोई विशेष सम्मान प्रदान करते हैं। लेकिन प्रो० मिश्र इसके अपवाद हैं। जो भी उनके छात्र मिलेंगे वे पहले से अधिक सम्मान प्रदान करेंगे तथा उनके गुणों की प्रशंसा करेंगे। कभी-कभी तो मुझे भी उनके कारण ही सम्मान प्राप्त हुआ है।

विज्ञान परिषद् से उनके जुड़ने का सिलसिला १९५२ से शुरू हुआ। इस समय विज्ञान परिषद् उन्हीं के प्रयास से नये आयाम स्थापित कर रही है। वे एक अच्छे लेखक तो हैं ही साथ ही साथ प्रेरणादायक भी हैं। अंग्रेजी भाषा से हिन्दी में उनके द्वारा किया गया अनुवाद मूल लेखन के समान प्रतीत होता है। अनेक वैज्ञानिक लेखकों ने उन्हीं से प्रेरणा तथा निर्देश लेकर ख्याति प्राप्त की है। मैंने स्वयं भी डॉ० मिश्र की प्रेरणा से ही हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया था। कई बार तो आदरणीय मिश्र जी ने मुझे कतिपय विषय देकर विज्ञान में लेख लिखने हेतु प्रेरित किया। विज्ञान परिषद् द्वारा प्रकाशित 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' को छापने तथा उसको अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लाने के लिये विगत ४२ वर्षों से उन्होंने सराहनीय प्रयास किया है। सत्तर के दशक में एक साक्षात्कार में किसी अभ्यर्थी से विशेषज्ञों ने यह कहा कि आपका शोध-पत्र तो विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका में छपा है, अतः उसका अंतर्राष्ट्रीय स्तर नहीं हो सकता। इस पर अभ्यर्थी ने शोध-पत्र की प्रति दिखाते हुये कहा था कि आप भाषा और संस्थान न देखकर शोध-पत्र का स्तर देखकर तय करें। कहना न होगा कि जब चयन समिति के सदस्यों ने शोध-पत्र पढ़कर देखा तो वे प्रसन्न हो गये। इस समय इस अनुसंधान पत्रिका का संक्षेपण विभिन्न देशों में किया जा रहा है। आपको यह जानकर गर्व होना चाहिए कि यह पत्रिका हिन्दी भाषा में विश्व की सर्वप्रथम विज्ञान अनुसंधान पत्रिका है। वह दिन दूर नहीं जब इसको विश्वस्तर की सर्वश्रेष्ठ अनुसंधान पत्रिका के रूप में जाना जायेगा।

आदरणीय मिश्र जी का नाम विज्ञान परिषद् का पर्याय बन गया है। जितने भी कार्यकलाप होते हैं सभी का संपादन एवं संचालन उन्हीं की छत्र-छाया में होता है। जब भी आप परिषद् में जायें तो परिषद् परिवार में वयोवृद्ध प्रहरी की भांति उन्हें चिंतन एवं लेखन में व्यस्त पायेंगे। यदि विज्ञान परिषद् स्वामी सत्यप्रकाश का शरीर था तो आदरणीय मिश्र जी उसके प्राण हैं। मिश्र जी का व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली है कि विरले लोग ही उनके सामने टिक पाते हैं। प्रत्येक कार्य को करने की क्षमता के कारण उन्हें कोई दबाव में नहीं ले सकता। उन्होंने कभी ऐसा नहीं लगने दिया कि अमुक व्यक्ति के असहयोग से विज्ञान परिषद् को कोई क्षति हो सकती है।

विश्व स्तर के वैज्ञानिकों को परिषद् से जोड़ने का श्रेय उन्हीं को है। सभी विषयों पर व्याख्यान दिलाना, कार्यशालाओं का आयोजन कराना, लेखन, प्रशिक्षण देना तथा वैज्ञानिक चेतना फैलाने वाले अनेक कार्यक्रमों का संचालन डॉ० मिश्र स्वयं ही करते हैं। सीमित साधनों के रहते हुये भी 'विज्ञान' एवं 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' पत्रिका का संपादन डॉ० मिश्र की बुद्धि एवं प्रयत्नों द्वारा ही संभव हो रहा है। लेकिन अब समय आ गया है जब परिषद् को सक्षम उत्तराधिकारियों की आवश्यकता है। डॉ० मिश्र के समय में ही अधिक से अधिक लोग आकर उनसे प्रेरणा तथा प्रशिक्षण लेकर इस दायित्व को पूरा कर सकते हैं।

मैंने डॉ० मिश्र को विषम परिस्थितियों में भी प्रसन्न रहते देखा है। पारिवारिक उलझनों में फंसे होने पर भी वे विज्ञान परिषद् के प्रति सदैव समर्पित रहे हैं। अपनी बेटी के स्वास्थ्य सुधार में उन्होंने लाखों रुपये व्यय किये तथा कई बार चिकित्सा हेतु इलाहाबाद से बाहर भी रहे। परन्तु विज्ञान परिषद् की चिन्ता उन्हें वहां भी घेरे रही। समय पर पत्रिका का प्रकाशन, उसका स्तर तथा राष्ट्रीय स्तर पर अन्य पत्रिकाओं के समक्ष बनाये रखने में उन्होंने कोई समझौता नहीं किया। प्राचीन युग में ऋषि एवं तपस्वी जो कार्य करते थे वही कार्य डॉ० मिश्र कर रहे हैं। समाज के लिये निःस्वार्थ समर्पित व्यक्तित्व के दर्शन डॉ० मिश्र में ही होते हैं। अनेक पुरस्कार तथा सम्मान पाने के उपरान्त भी डॉ० मिश्र की सहजता एवं सरलता पर प्रभाव नहीं पड़ा है।

शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक के रूप में उन्होंने अथक परिश्रम किया। प्रो० धर जब अस्वस्थ रहने लगे तथा प्रशासनिक कार्यों को करने में विवशता दिखाने लगे तब यह उत्तरदायित्व प्रो० मिश्र को दिया गया। आपने विलक्षण सामंजस्य स्थापित करके अध्यापन तथा शोध दोनों को गति प्रदान की। वहां की प्रयोगशालाओं में सुधार करवाया तथा शोध छात्रों पर अंकुश लगाकर उनके स्तर को उच्च्च बनाने का प्रयास किया। प्रत्येक वर्ष ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिकों को बुलाकर उनके भाषण दिलवाना, छात्रों को उनसे सम्पर्क स्थापित करवाना तथा उच्चस्तरीय शोध हेतु आवश्यक परामर्श दिलाने का कार्य सफलतापूर्वक कराते रहे। अपने कार्यकाल में उन्होंने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा कृषि मंत्रालय से धन प्राप्त किया तथा उसका सदुपयोग प्रयोगशालाओं के सुधार तथा पुस्तकालय के नवीनीकरण हेतु किया। अपनी पूरी क्षमता तथा विद्वत्ता का प्रयोग करते हुये उन्होंने संस्थान को गरिमा प्रदान की।

प्रो० मिश्र की लिखी पुस्तकें ऐसे विषयों पर हैं जो कि सामान्य लोगों के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। कठिन विषयों को सरल भाषा में जनसामान्य हेतु प्रस्तुत करने की कला में उन्हें दक्षता प्राप्त है। विज्ञान के प्रत्येक अंक में प्रस्तुत समीक्षायें अधिकतर डॉ० मिश्र द्वारा ही प्रस्तुत की जाती हैं। इसे देखकर आकलन किया जा सकता है कि बड़ी-बड़ी पुस्तकों का सार कुछ ही पंक्तियों में लिखने की उनकी विलक्षण क्षमता है। विज्ञान में छपने वाले सामयिक लेख उनके अध्ययनरत रहने तथा जागरूकता के प्रतीक हैं। विज्ञान की प्रत्येक विधा-कृषि, पर्यावरण, औषधि, प्रदूषण, कीट-पतंगों, जैव यौगिकों, मानव का विकास, भूगर्भ, सागरीय खोज, खनिजों आदि अनेक विषयों पर उनके सारगर्भित लेख मिल जायेंगे।

मैं ऐसे विज्ञान मनीषी को शत-शत नमन करता हूँ तथा युवा लेखकों को उनसे प्रेरणा लेने की सलाह देता हूं।

पूर्व विभागाध्यक्ष
रसायन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद-२११००२

उत्कृष्ट कर्मयोगी एवं विशिष्ट मार्गदर्शक : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल'

मैं जब जुलाई १६६२ में कुलभास्कर आश्रम में एक अध्यापक के रूप में नियुक्त हुआ तो मुझे अपनी अभिरुचि, संकल्पना, संस्कार एवं स्वभाव के अनुरूप तीर्थराज प्रयाग में आजीविका प्राप्त होने के अभूतपूर्व आत्मिक संतोष का अनुभव हुआ। विद्यालय में परंपरागत रूप से सभी अध्यापक प्राचार्य जी के साथ मध्याह्न चाय-पान के समय एकसाथ बैठते तथा विद्यालय के अतीत एवं भविष्य की योजनाओं पर परिचर्चा होती। उन्हीं चर्चाओं के क्रम में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में कार्यरत डॉ० शिवगोपाल मिश्र के विद्यालय के प्रारंभिक दिनों में विशिष्ट योगदान की भी चर्चा आई। वरिष्ठ अध्यापक उनकी योग्यता, अध्यापन अभिरुचि, साहित्यिक एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों, मिलनसार एवं हंसमुख स्वभाव तथा उनके निश्छल व सरल व्यक्तित्व आदि विशिष्ट मानवीय गुणों की सराहना करते थे। सारी बातें सुनकर अनजाने में ही संभवतः भवितव्यतावश मेरी अभिरुचि डॉ० मिश्र के प्रति बीज रूप में प्रस्फुटित हो गई।

मेरी साहित्यिक अभिरुचि के कारण प्रयाग के विभिन्न साहित्यिक मंचों से जुड़ने की मेरी आकांक्षा भी पूरी हो गई। मेरे साहित्यिक मित्रों में एक अग्रज स्व० कैलाश कल्पित जी भी डॉ० मिश्र के संस्मरण सुनाते। कल्पित जी ने बताया कि वे और डॉ० मिश्र लगभग नित्य ही साथ-साथ अपनी-अपनी साइकिलों से दारागंज में महाकवि पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जी के दरबार में हाजिर होकर वहाँ की साहित्यिक गतिविधियों में भाग लेते। कल्पित जी तब बहादुरगंज में रहते थे और डॉ० मिश्र वहीं पास ही शहराराबाग की गली में। कल्पित जी से ही यह ज्ञात हुआ कि डॉ० मिश्र का विवाह प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ० उदय नारायण तिवारी जी की पुत्री रामकुमारी जी से हुआ था। इस विवाह की पृष्ठभूमि की संरचना एवं मध्यस्थता सुप्रसिद्ध साहित्यकार महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने की थी। डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी की प्रतिभा, निश्छल, सरल, कर्मठ एवं सद्भावपूर्ण व्यक्तित्व से सांकृत्यायन जी प्रभावित थे। उनकी विशेष संस्तुति के फलस्वरूप यह विवाह सम्पन्न हुआ।

डॉ० उदय नारायण तिवारी जी से मेरे एक सम्बन्धी डॉ० रमानाथ शर्मा, जो प्रयाग विश्वविद्यालय में ही भाषा विज्ञान के प्रवक्ता के रूप में कार्यरत थे, पूर्ण परिचित थे। उन्हीं के साथ मैं डॉ० तिवारी के अलोपीबाग स्थित आवास पर एक-दो बार दर्शनार्थ गया भी था। वहाँ भी डॉ० शिवगोपाल मिश्र के कुलभास्कर आश्रम से जुड़ने की चर्चा चली थी। यह सब मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि एक अनजान व्यक्ति के प्रति, जिससे मैं तब तक पूर्णरूप से अपरिचित था, मेरे सम्बन्धियों एवं हितैषियों से इतने सारे संस्मरण डॉ० मिश्र के बारे में सुनने को मिले कि मेरी उत्कण्ठा एवं अभिरुचि उस व्यक्ति के साक्षात्कार के लिए अनजाने में ही दिनोंदिन बढ़ती गई। मेरे सौभाग्य एवं प्रारब्ध से अन्ततः वह दिन अनायास ही आ गया।

मुझे अपने डी.फिल. शोध कार्य के लिये मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में कृषि विज्ञान विज्ञान संकाय के अंतर्गत ही है। अतः विज्ञान संकाय में कार्यरत किसी कृषिविज्ञानी की खोज के अंतर्गत डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से सम्पर्क करने के लिए मेरे मित्रों ने संस्तुति की। डॉ० मिश्र जी मेरे अन्तरमन में पहले से ही रचे-बसे थे। अतः डॉ० रमेश चन्द्र तिवारी व डॉ० डी.पी. शर्मा के सुझाव के अनुसार मैं आर.सी. द्विवेदी को साथ लेकर डॉ० मिश्र से मिला और उनसे अपना मन्तव्य निवेदन किया। डॉ० मिश्र ने जोरदार ठहाकों के साथ कुलभास्कर आश्रम की प्रगति व अपने पूर्व परिचितों के बारे में जानकारी प्राप्त की। बातचीत के दौरान अपनी पैनी निगाहों से मेरा निरीक्षण परीक्षण करके, मेरी कार्य योजना आदि की जानकारी लेकर मुझे स्वीकृति दे दी। मुझे सुविधा प्रदान करने के लिए विज्ञान परिषद्, विज्ञान संकाय, पुस्तकालय, कार्यालय आदि में स्वयं जाकर सबसे परिचय कराया और सभी सुविधायें प्रदान कीं। इस प्रकार मेरा शोध कार्य आगे बढ़ा।

अपने शोध कार्य के दौरान मैंने अनुभव किया कि डॉ० मिश्र की हिन्दी और अंग्रेजी भाषा तथा कृषि विज्ञान के सभी विषयों पर अद्भुत पकड़ है। उनकी स्मरण शक्ति अपार है। वे एक विशिष्ट शोधकर्ता, मार्गदर्शक, उत्कृष्ट लेखक, अत्यन्त सफल अनुवादक एवं श्रेष्ठ सम्पादन विशेषज्ञ हैं। उनके वैज्ञानिक शोध-पत्रों, लेखों, साहित्यिक एवं वैज्ञानिक ग्रन्थों, अनुवादित पुस्तकों आदि की एक लम्बी श्रृंखला है। अपने शोध छात्रों के कल्याण में वे सतत् संलग्न रहते हैं। वे अपनी शैली के अद्भुत वक्ता हैं। स्पष्ट, सपाट, सरल एवं सूत्रवत् बात करने में उनका कोई सानी नहीं है। बिना विशेष भूमिका के सीधे सीधे ढंग से अपना पक्ष रखने एवं अपनी बात मनवा लेने में वे बड़े ही कुशल हैं। उनका हँसमुख, सरल के साथ ही साथ व्यंग्य कटाक्षपूर्ण व्यवहार किसी को मर्माहत करने अथवा हानि पहुँचाने के लिये नहीं बल्कि सजग, सचेत और सक्रिय होने के लिए गुरुदण्ड के रूप में कभी-कभार प्रयुक्त होता है। उनका सहयोगी भाव सर्वोपरि रहता है। वे स्वयं जिस चीज का संकल्प ले लेते हैं, जब तक उसका उद्देश्य पूर्ण नहीं हो जाता तब तक चैन से नहीं बैठते। मुझे अपने शोधगुरु के विविध उत्कृष्ट गुण का स्मरण कर अत्यन्त गौरव का अनुभव होता है। वे एक उद्भट विद्वान, अद्भुत कर्मयोगी, परम सहृदय एवं सुयोग्य सहयोगी, उत्कृष्ट शोधकर्ता, विशिष्ट मार्गदर्शक तथा हिन्दी के अनन्य सेवी, सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक व लेखक हैं। अपने शोध कार्य के क्रम में ही मुझे 'भारत की सम्पदा' में उनके अनुपम योगदान का पता चला। 'इस्कान' की अनेक पुस्तकों का उन्होंने हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत कर हिन्दी भाषा, भारतीय धर्म, संस्कृति एवं सभ्यता की अपूर्व सेवा की है।

डॉ० मिश्र की मेरे ऊपर व्यक्तिगत अनुकम्पा सदा से रहती आयी है। वे अपनी क्षमता, सहूलियत एवं सुविधा के अनुरूप हर प्रकार का सहयोग करने को सदा तत्पर रहते हैं।

डॉ० मिश्र राग-द्वेष से रहित, बड़े निश्छल स्वभाव के व्यक्ति हैं। अपने से कपटपूर्ण व्यवहार करने वालों का सब कुछ जानते हुये भी सहयोग कर उन्हें लाभान्वित करने में वे पीछे नहीं रहते।

अनुपम साहित्यिक प्रतिभा के धनी, डॉ० मिश्र मेरे कवित्व गुण के परम प्रशंसक हैं। जहां और जब भी उन्हें अवसर मिलता है मेरी कवितायें वे पूरे मनोयोग से सुनते और दूसरों को भी सुनवाते हैं। विशेषकर विज्ञान परिषद् के विविध आयोजनों में मेरी सरस्वती वंदना एवं राष्ट्रभाषा वंदना के कार्यक्रम रखवाने में वे कभी नहीं चूकते।

डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व में मैं गीता के स्थितप्रज्ञ एवं त्रिगुणातीत अवस्था तथा एक पूर्ण योगी और भक्त गुणों का सम्यक एवं समग्र दर्शन का आदर्श प्रतिरूप पाता हूँ। उनकी ज्ञान गम्भीरता,

कार्यकुशलता तथा अनेक विपरीत परिस्थितियों के बीच भी एक आदर्श, सादा एवं सरल जीवनवृत्ति देखकर मुझे आश्चर्य, गौरव एवं परम संतोष का अनुभव होता है। अपने व्यक्तिगत नाम, प्रशंसा एवं स्वागत से वे निर्लिप्त रहना अधिक पसन्द करते हैं। किसी भी प्रकार की भेंट स्वीकार करना उन्हें नागवार लगता है। ऐसी परिस्थिति होने पर वे शालीनता व मर्यादापूर्वक अपनी अस्वीकृति प्रदान करने में संकोच नहीं करते। इस संबंध में एक दो घटनाओं का विवरण देना मैं आवश्यक समझता हूं।

मेरे शोध कार्य के दौरान बहुत सारा गाजर, शलजम व चुकन्दर पैदा हुआ। कहीं बेचने की अपेक्षा मैंने अपने पड़ोसियों, परिचितों, सहयोगियों तथा कर्मचारियों के यहां भिजवाया तथा कुछ विज्ञान परिषद् में डॉ० मिश्र को सौंपकर कहा कि इसको विज्ञान परिषद् के सहयोगियों को दे दें। डॉ० मिश्र ने उनको देखकर आकार प्रकार व गुणों की प्रशंसा तो खुले दिल से की किन्तु उन्हें विज्ञान परिषद् में बाँटने से साफ इंकार कर दिया। स्वयं लेने का तो सवाल ही नहीं उठता। मुझे संकोचवश सब लौटा कर विद्यालय के कर्मचारियों में बांटना पड़ा।

डॉ० मिश्र के शोध छात्रों का अपने गुरू के प्रति यह सद्भाव बना कि शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान में, जिसके वे उस समय निदेशक भी थे, डॉ० मिश्र के शोध छात्रों के नाम का एक शिलापट्ट लग जाय। जब डॉ० मिश्र के समक्ष यह प्रस्ताव रखा गया तो उन्होंने साफ मना कर दिया। कुछेक वर्षो बाद जब शोध छात्रों ने पुनः जोरदार शब्दों में इस प्रस्ताव को अनेक विभागों एवं स्वयं शीलाधर संस्थान में लगे शिलापट्टों का उदाहरण देते हुये रखा तो डॉ० साहब ने पुनः अस्वीकार करते हुये कहा कि कुछ लोग अच्छा नहीं मानेंगे या अन्यथा लेंगे। किन्तु जब सभी शोध छात्रों ने मुझे नेतृत्व सौंपकर सबसे बात करने को तथा उद्देश्य को कार्य रूप में परिणत करने पर जोर दिया तब डॉ० मिश्र ने कहा- ठीक है बात करके देखो। मैं तब तत्कालीन विभागाध्यक्ष, डीन, कुलसचिव तथा कुलपति जी से भी मिला और इस कार्य को संपादित करने का अनुरोध किया। सबने डॉ० मिश्र के शीलाधर संस्थान में योगदान की सराहना की एवं शिलापट्ट लगाने की संस्तुति की।

डॉ० मिश्र के सम्मान में अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करने की बात हम सभी शिष्यों ने बहुत पहले उठायी थी। सारी योजना बन गयी। शोध छात्र आर्थिक सहयोग देने को तत्पर थे किन्तु डॉ० साहब मना करते रहे। अंततः अब सब के संकल्प से यह कार्य पूरा होने जा रहा है। यह ईश्वर की महती कृपा एवं हम सब शोध छात्रों का अपने गुरु के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने का परम सौभाग्य है।

डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व को उजागर करने वाले उपर्युक्त मात्र कुछ दृष्टान्त हैं। वे तो गागर में सागर के समान हैं। उनके सम्बन्ध में जितना भी लिखा जाये वह समुद्र में बूंद जैसा ही होगा। उनका व्यक्तित्व सूर्य के समान तेजवान और परम कल्याणी है। उपरोक्त कथन तो सूर्य को दीपक दिखाने के अनुरूप श्रद्धा व भाव का एक तुच्छ प्रयास मात्र है। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह डॉ० मिश्र को स्वस्थ, सक्रिय एवं स्वयंसेवी भाव से मानवता एवं जीवमात्र का इसी प्रकार कल्याण करने की शक्ति एवं सामर्थ्य सतत प्रदान करते हुये उन्हें शतायु होने का वरदहस्त प्रदान करें।

! ऊँ तत्सत् !

अवकाशप्राप्त विभागाध्यक्ष
पशुपालन एवं दुग्ध विज्ञान विभाग
कुलभास्कर आश्रम स्नातकोत्तर महाविद्यालय
इलाहाबाद (उ०प्र०)

बलिहारी गुरु आपनो ....

प्रो० रमेश चन्द्र तिवारी

श्रद्धेय डॉ० साहब का मैं पहला डी.फिल छात्र था। मैंने सन् १९६१ में प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.एससी. परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उस समय गुरु जी अस्थाई प्रवक्ता थे। मेरी हार्दिक इच्छा डी.फिल. करने की थी किन्तु संरक्षक के लिये कृषि रसायन में कोई स्थाई अध्यापक न होने से पंजीकरण सम्भव नहीं था। मुझे राजकीय विद्यालय में अस्थाई नियुक्ति भी मिल गई थी। मैंने तत्कालीन रसायन विभाग के विभागाध्यक्ष स्व० प्रो० एस. घोष से विनती की तो उन्होंने अपने संरक्षकत्व में मेरा डी.फिल. में पंजीकरण कर दिया और कहा कि "डॉ० मिश्र जब स्थाई हो जायेंगे तब तुम्हें उनके संरक्षकत्व में स्थानान्तरित कर दिया जायेगा।" वैसे ही हुआ। मैं पहला छात्र था। न प्रयोगशाला थी और न कोई सामग्री। शून्य से आरम्भ करना था। मेरी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। डॉ० साहब ने कहा कि हिन्दी में कुछ लेख लिखो तो प्रकाशित होने पर पारिश्रमिक से तुम्हें कुछ पैसा मिल सकता है। गुरु ही का आशीष और परमात्मा की कृपा। मैंने हिन्दी में लिखना आरम्भ कर दिया। मुझे याद है पहला लेख मैंने लिखा था- 'पेट्रोलियम से प्रोटीन'। सामग्री डॉ० साहब ने दी थी। जाँचते समय उन्होंने उस आलेख को पूरा पुनः लिख दिया था। हाथ पकड़कर लिखना सिखाने जैसी दशा थी। मैं तो यह स्वीकारता हूँ कि माता-पिता ने केवल पैदा किया किन्तु हमारे जीवन-यापन के मूल स्तम्भ आदरणीय गुरु जी रहे। मिट्टी के ढूहे को एक स्वरूप उन्होंने ही दिया। गुरु जी की कार्यशैली तो मैंने और किसी में देखी ही नहीं। वे अच्छे भविष्यद्रष्टा जैसे हैं। अद्वितीय चिंतन और भावी सोच-समझ तथा योजनाबद्ध कार्य करना तो कोई डॉ० मिश्र से सीखे। वे धुन के पक्के, लगनशील एवं अति सहज स्वभाव, पारदर्शी चरित्र, बिना फल की कामना, केवल कर्म में विश्वास रखने वाले, 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' के ज्वलंत प्रमाण हैं।

धीरज तो गजब का

श्रद्धेय गुरु जी का व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन अत्यन्त उथल-पुथल वाला रहा किन्तु उनकी ठठाकर हँसी के अतिरिक्त कभी माथे पर शिकन नहीं देखी। स्व० स्वामी सत्यप्रकाश जैसे मनीषी के प्रति गुरु जी का सम्मानपूर्ण व्यवहार भी अनुकरणीय है। कभी कभी प्रयोगात्मक शोध कार्य करते समय अत्यन्त उलझन व्यक्त करने पर मुझे राय देते थे, 'डॉ० मनहरन नाथ जी से विश्लेषण की बारीकी जानो। जहाँ समस्या हो निःसंकोच पूछो, तभी कुछ हो पायेगा। यह अनुसंधान है, धीरज रखोगे तभी सफलता मिलेगी। बारम्बार दुहराना होगा। जल्दीबाजी में शोध नहीं किया जा सकता।'

निरन्तर कुछ करते रहने की प्रेरणा देने के स्रोत

पत्र एवं टेलीफोन से कभी-कभी कहते थे कि "लिखना पढ़ना बन्द हो गया है क्या ?" अभिप्राय था हिन्दी लेखन का। जितना उन्होंने सिखाया और प्रेरणा देते रहे मैंने कुछ किया नहीं। घर, गृहस्थी और आलस्य ने दबोच रखा था, कैसे करता ? इससे स्वयं को ग्लानि होती है कि समय व्यर्थ क्यों गंवा दिया ? हानि-लाभ जीवन-मरण जस अपजस विधि हाथ की बैसाखी लेकर चला किन्तु "God helps

those who help themselves" की गुरु जी की जीवनशैली का कुछ अंश भी प्राप्त नहीं कर सका, यह मुझे जीवन-पर्यन्त कचोटता रहेगा।

गुरु जी की पैनी-परख

अपने शिष्यों को परखने और उनके गुणों को उभारने की अनोखी क्षमता है गुरु जी में। उसी के अनुसार वे शिष्यों को आगे बढ़ने की राह सुझाते रहते हैं। जिसने लाभ नहीं उठाया वह उसका दुर्भाग्य है। मैं भी अपने को उसी श्रेणी में पाता हूँ।

सादगी एवं त्याग की प्रतिमूर्ति

एक विचारगोष्ठी में सम्मिलित होने हम लोग जयपुर गये थे। मेरे साथ में मेरे बड़े भाई भी थे। एक दिन गोष्ठी में जाने के पूर्व 'पिंक सिटी' में उन्होंने हम लोगों के साथ फुटपाथ पर पराठा-चाय का नाश्ता किया। कहने लगे, "इसे भी तो आदमी ही खाते हैं।" मेरे भ्राता आज भी डॉ० साहब की इस सादगी पर आश्चर्य करते हैं। मैं दिल्ली गया था। उन दिनों डॉ० साहब 'भारत की सम्पदा' का प्रकाशन करने में व्यस्त थे। 'भारत की सम्पदा' का प्रकाशन हम लोगों को गौरव प्रदान करता है। मुझे ऐसा लगता है कि डॉ० साहब निष्काम-भाव आत्मसात् कर चुके हैं जो उनकी जीवनशैली के त्याग, योग, तपस्या, सहयोग का परिणाम है। इसे योगी ही प्राप्त कर पाते हैं।

स्वयं एक ग्रंथालय हैं

डॉ० साहब के मस्तिष्क में कई 'संगणक फ्लापी' लगी हुई हैं जो अनवरत उपयोग में आ रही हैं। इनकी प्रोग्रामिंग भी सटीक है तथा कभी पुरानी नहीं हो रही है। इसका लाभ शिष्यों एवं राष्ट्र को मिल रहा है। ऐसे मनीषी अमर रहते हैं। उनके विचार, उनके मार्गदर्शक प्रकाशन अमर रहते हैं, उनकी उपयोगी रचनायें अमर रहती हैं और उनकी जीवन-शैली सबको सफल जीवन जीने की प्रेरणा देती रहती है।

उनकी दृश्य-अदृश्य उपलब्धियों एवं अनुभवों को सूचीबद्ध करना कठिन ही नहीं, असम्भव है। बच्चों के साहित्य से लेकर जनोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन, सूचनाप्रद लेखों की प्रकाशित सामग्री तथा विचारगोष्ठियों के माध्यम से वैचारिक आदान-प्रदान का अनुभव जो डॉ० साहब के द्वारा प्राप्त हुये हैं उन्हें कौन सूचीबद्ध कर सकता है !

मनोरंजन एवं कलाप्रेमी

इतने गंभीर चिन्तक, विचारक एवं व्यस्त जीवन बिताने वाले व्यक्ति से हल्के-फुल्के मनोरंजन एवं गीत-संगीत में रुचि लेने की बात अत्युक्ति लगती है। किन्तु मैंने डॉ० साहब को एक सम्पर्की, विज्ञान परिषद् में आने वाले नवयुवक से कई बार 'भय भंजना वंदना सुन हमारी' गीत को अनुरोध करके सुनते देखा सुना है। वे बताते हैं कि रात्रि १० बजे से ११.३० बजे तक आकाशवाणी के विविध भारती एवं उर्दू सर्विस के गाने बहुधा सुनता हूँ। वे थियेटर और सिनेमा देखने में भी रुचि रखते रहे हैं।

मेरा मानना है कि मेरी जन्मकुंडली के ग्रहों का संचालन ऐसा अच्छा हुआ कि डॉ० मिश्र जैसे गुरु से सानिध्य, उनकी कृपा एवं आशीष पाकर जीवन-यापन कर पा रहा हूँ। वैसे अपनी आत्मकथा लिखूं तो कोई भी यही निर्णय देगा की मेरे जीवन का पूरा आधार श्रद्धेय गुरु कृपा से ही सम्भव हुआ है।

एक वाक्य का प्रभाव

सन् १९६० में मैं एम.एस-सी. प्रथम वर्ष का छात्र था। वार्षिक परीक्षा के लगभग ४५ दिन पूर्व मुझे 'मियादी' ज्वर हो गया। लगभग २१ दिन तक ज्वर रहा। शरीर सूखकर कमजोर हो गया था। मैंने परीक्षा में सम्मिलित न होने की सोची। मेरे बड़े भाई मुझे साइकिल पर बिठाकर डॉ० साहब के घर

ले गये कि यह बता दिया जाये कि रुग्णता के फलस्वरूप मैं इस वर्ष परीक्षा नहीं दे पाऊंगा। मेरे ऐसे विचार पर डॉ० साहब का वाक्य था, "क्या यह निश्चित कह सकते हो कि तुम्हें इसी समय अगले वर्ष यह ज्वर नहीं होगा ? जब ठीक हो तो परीक्षा में बैठो।" मैंने प्रातः कांपते हाथों से परीक्षा दी, और दीवार के सहारे पैर पर पुस्तक रख कर पढ़ा। गुरु जी के एक वाक्य के सहारे मैंने परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और प्रथम स्थान भी पाया।

गुरु-ऋण को चुकाने के लिये मुझे कई जन्म लेने पड़ेंगे। दीप की तरह स्वयं जलकर अनवरत प्रकाश बिखेरने वाले डॉ० साहब जैसे व्यक्ति विरले ही मिलेंगे। उनकी रचनायें एवं उनके आशीष हम जैसे शिष्यों के मार्गदर्शक रहेंगे। परमब्रह्म परमेश्वर गुरु जी को स्वस्थ एवं चिरायु बनाये यही सदा प्रार्थना करता हूँ। किसी ने मुझसे पूछा था गुरु जी के बारे में। मैंने इतना ही कहा था, "बलिहारी गुरु आपनो ....।" गुरु जी की कृपा का लाभ जीवनपर्यन्त मिलता रहे इसके लिये "गुरुहिं प्रणाम मनहि मन कीन्हा" का सहारा लेता रहा हूं।

मृदा विज्ञान विभाग
कृषि विज्ञान संस्थान
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी-५

कोई समझौता नहीं

डॉ0 सरजू प्रसाद पाठक

जून १९७४ में मेरा स्थानान्तरण आजमगढ़ से इलाहाबाद हो गया। मेरा स्थानान्तरण सहायक निदेशक (भूमि परीक्षण) क्षेत्रीय भूमि परीक्षण प्रयोगशाला, इलाहाबाद के पद पर हुआ। इस प्रयोगशाला में भी श्याम किशोर दीक्षित एवं श्री जे०पी० पाठक पूर्व से ही कार्यरत थे। श्री जे०पी० पाठक ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से ही एम.एससी. किया था। दोनों ही कर्मचारी मेरे गुरुदेव डॉ० शिवगोपाल मिश्र से भली भांति परिचित थे। उक्त दोनों भाइयों ने मेरे कार्यभार ग्रहण करने के कुछ समय उपरान्त मुझे नेक सलाह दी कि यहां डॉ० मिश्र बहुत अच्छे प्रोफेसर हैं उनके निर्देशन में आप पीएच.डी. भी कर लें। मैंने कुछ समय पश्चात् डॉ० साहब से भेंट की तथा पीएच.डी. करने की इच्छा व्यक्त की। डॉ० साहब ने बड़ी कृपा करे शोधकार्य के निर्देशन की अपनी सहमति भी दे दी।

मैंने तत्संबंधी प्रार्थनापत्र कुल सचिव, इलाहाबाद विश्वविद्यालय की सेवा में ९.१०.७४ को प्रेषित किया तथा कुलसचिव महोदय ने अपने पत्रांक ४४८३ दिनांक ५.४.७५ द्वारा मुझे डी.फिल. में प्रवेश की अनुमति प्रदान की।

मैंने ६.७.७५ को कृषि निदेशक महोदय, उ०प्र० को डी.फिल. करने की स्वीकृत प्रदान करने हेतु प्रार्थना पत्र प्रेषित किया। परन्तु कृषि निदेशक महोदय ने मुझे डी.फिल करने की स्वीकृति प्रदान नहीं की। उधर मैंने शोधकार्य प्रारम्भ कर किया था, यहां प्रारम्भ से ही अवरोध उत्पन्न हो गया। कृषि निदेशक का अनापत्ति प्रमाण पत्र प्रेषित करना अनिवार्य था। मेरे बॉस डॉ० यशपाल सिंह ने ढाढ़स बंधाया कि निराश न हो अपना शोधकार्य जारी रखो। कृषि निदेशक की स्वीकृति देर सबेर प्राप्त हो जायेगी। कृषि निदेशक की स्वीकृत प्राप्त हुई मैंने विश्वविद्यालय का समस्त शुल्क १९७६ के अन्त तक जमा कर दिया।

मेरे शोधकार्य से राजकीय कार्य एवं कार्यालय के समय में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं पड़ा। मैं कार्यालय ठीक १० बजे पहुँच जाता था तथा सायं को ५ बजे के उपरान्त ही कार्यालय छोडता था।

मै अपने गुरुदेव एवं मार्ग निदेशक डा० शिवगोपाल मिश्र का आभारी ही नही ऋणी भी हूं जिनकी कृपा के बिना शोध कार्य के सम्पन्न होने की कल्पना भी नही की जा सकती थी । विश्वविद्यालय की रसायन प्रयोगशाला की एक चाबी मेरे पास रहती थी । मै भोर में लगभग ६ बजे प्रयोगशाला में पहुँच जाता था तथा ९-४५ तक कार्य करने के उपरान्त सीधे कार्यालय पहुँचता था । सायं को पुनः कार्यालय में समय के उपरान्त दो तीन घंटा प्रयोगशाला में जाकर प्रयोग करता था। अवकाश के दिनों में भोर से लेकर देर रात्रि तक प्रयोगशाला में कार्य करता था तथा दोपहर का भोजन भी प्रयोगशाला में ही आ जाता था।

शोधकार्य तो १६७८-७६ में ही पूरा हो गया था तथा अधिकांश थीसिस जुलाई १६७६ तक लिख भी गई थी परन्तु उसकी जांच शोध निदेशक द्वारा होनी शेष थी। इस मध्य मेरा स्थानान्तरण आगरा हो गया तथा मैं ३१.७.७६ को कार्यमुक्त हो गया। अब समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया। मैं माह में कम से कम एक बार तो इलाहाबाद ३-४ दिनों के लिये डॉ० साहब से अवश्यक दिशानिर्देश प्राप्त करने आता ही था।

थीसिस की जांच एवं सुधार का कार्य

डॉ० साहब ने इंगित किया था कि थीसिस की जांच एवं सुधार का कार्य आगरा में आकर ही करेंगे। डॉ० साहब ने वर्ष १६७६-८० में आगरा पधार कर मेरी थीसिस की चेकिंग का कार्य सम्पन्न किया, तब मुझे आभास हुआ कि उनमें कार्य करने की कितनी क्षमता है। आगरा आकर थीसिस चेक करने की भी पृष्ठभूमि इस प्रकार है :

संभवतः १६७६ की ही घटना है। मैं आगरा में कार्यरत था। डॉ० साहब की सबसे बड़ी पुत्री सौ० शुभा हेतु सुयोग्य वर देखकर मुझे अपनी संस्तुति देनी थी। संभावित वर डाक्टर थे जो कि डाक तार विभाग के अस्पताल आगरा में नियुक्त थे। मैंने वर को अस्पताल एवं उनके निवास पर देखकर अपनी संस्तुति दी थी तथा वर के साथ साथ ही इलाहाबाद गया जहां वर कन्या को एक दूसरे को देखकर सहमति देना था। डॉ० साहब संभावित वर के स्वागत हेतु रेलवे स्टेशन पंहुचे थे। आश्चर्य यह कि मैं तथा वर महोदय टैक्सी से डॉ० साहब के आवास पहले पहुंचे। विवाह तय हो गया। डॉ० साहब मुझे लगन या तिलक की रस्म में वर के पैत्रिक निवास राजापुर, जहां गो० तुलसीदास द्वारा हस्तलिखित रामायण की प्रति अभी भी है, मुझे भी ले गये। इसके उपरान्त मैं सौ० शुभा के विवाह समारोह में भी सम्मिलित हुआ। उक्त के अतिरिक्त उनकी दूसरी पुत्री बबली के विवाह समारोह में भी सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

मैंने अपनी थीसिस अप्रैल १६८० में विश्वविद्यालय मे प्रेषित कर दी। मेरी मौखिक परीक्षा १०.६.८० को सम्पन्न हुई थी तथा उप कुलपति महोदय ने मुझे १६८० के दीक्षान्त समारोह में डी.फिल की उपाधि प्रदान की।

डॉ० साहब ऊपर से कोमल, अन्दर से कठोर

मुझे विश्वास था कि थीसिस तो डॉ० साहब लिख देंगे तथा जरूरी हुआ तो आंकड़ों में थोड़ा परिवर्तन करने की भी अनुमति दे देंगे। सोचा था कि जी हुजूरी, चापलूसी एवं उनकी निजी सेवा भी कार्य सिद्ध होनें में सहायक होगी परन्तु उक्त सोच के सब कुछ विपरीत घटित हुआ। मैं न तो एक डेटा में फेर बदल कर सका और न ही एक पैरा डॉ० साहब ने स्वयं लिखाया। हां, उनका मार्गनिर्देशन तो पग पग पर था। उसके बिना तो कुछ भी संभव न था। एक बार मैंने उन्हें बताया कि मेरा जो निष्कर्ष निकला है उसका तो कोई संदर्भ मिलता ही नहीं। उन्होंने कहा कोई बात नहीं, तुम्हारा निष्कर्ष ही संदर्भ बन जायेगा। शोधकार्य में अधिक सामग्री न होने पर भी डॉ० साहब के निर्देशन में इस प्रकार विश्लेषण किया गया कि यह एक अच्छा शोधग्रन्थ हो गया तथा इसके कई लेख प्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुये।

संभवतः डॉ० साहब का ऐसा स्वभाव एवं व्यवहार रहा है कि प्रत्येक शोधकार्यकर्ता अपने को उनके अति निकट एवं विश्वसनीय पाता था। इसमें शिष्य का योगदान बहुत कम था। यह उन्हीं का

स्नेह एवं प्यार एवं शिष्य पर विश्वास था कि शिष्य गुरुदेव से निकटता महसूस करता था। मैं भी इसका अपवाद न था।

पारिवारिक शुद्धता

ऐसा मेरा विचार है कि डॉ० साहब संभवतः अपने घर के वातावरण, आचार विचार को यथासंभव शुद्ध रखना चाहते थे जिससे कि बच्चों में अच्छे संस्कार विकसित हों। संभवतः यही कारण था कि डॉ० साहब के पारिवारिक संबन्ध कतिपय परिवारों तक ही सीमित रहे जिससे कि वातावरण प्रदूषण से बचा रहे। मैं अपने को भाग्यशाली मानता हूं कि मेरे डॉ० साहब से पारिवारिक सम्बन्ध भी रहे। मेरा भी सीमित दायरा है तथा कम परिवारों से पारिवारिक संबन्ध हैं। मुझे आभास है कि वर्तमान समाज में कितनी गंदगी है तथा मूल्य-आधारित गुणों का प्रायः लोप हो गया है।

संभवतः १६७७-७८ की घटना है। डॉ० साहब का परिवार, मैं एवं श्री जे०पी० पाठक (डॉ० साहब का एक अन्य शिष्य) दुधवा नेशनल पार्क देखने गये थे। दुधवा पार्क के तत्कालीन निदेशक डॉ० रामलखन सिंह डॉ० साहब के शिष्य रहे थे। श्री जे०पी० पाठक उस समय लखीमपुर में ही कार्यरत थे। हम लोग अपने वाहन से गये थे। पार्क के निरीक्षण भवन में विश्राम किया था। इस अवसर पर हम लोगों ने घड़ियाल के अंडे एवं विभिन्न आयु वर्ग के घड़ियालों की नर्सरी देखी। बड़ा ही रोमांचक दृश्य था।

जून १६८३ में मेरी ज्येष्ठ पुत्री सौ० शशि का विवाह बहराइच से सम्पन्न हुआ। बहराइच में मेरा कनिष्ठ भ्राता श्री श्याम सुन्दर पाठक, सहायक अभियन्ता के पद पर कार्यरत थे। उन्हीं के आवास से विवाह के समस्त कार्यक्रम हुये। मैं भी परिवार सहित आगरा से बहराइच पहुंच गया था। डॉ० साहब बड़ी कृपा कर एवं महान कष्ट उठाकर उक्त अवसर पर बहराइच पधारे थे।

डॉ० साहब में प्रतिकूल परिस्थितियों एवं कष्टों से जूझने का अदम्य साहस है

डॉ० साहब का पारिवारिक जीवन ऊपर से देखने में सब कुछ अच्छा ही अच्छा लगता है। पति पत्नी इलाहाबाद विश्वविद्यालय पदों पर आसीन रहे तथा अच्छा जीवनयापन हेतु पर्याप्त धन भी प्राप्त हो जाता था। अपना निजी मकान है। परन्तु विधाता को कुछ और ही मंजूर था। पूर्व जन्मो कें संस्कारों का खेल है। डॉ० साहब की दूसरी पुत्री से अनिष्ट पुत्री सौ० रीनू संभवतः १६७७-७८ से ही सिर दर्द से पीड़ित थी। दो बार डॉ० साहब ने मद्रास जाकर उसका इलाज कराया। शुद्ध कमाई का पर्याप्त धन व्यय हुआ। ऊपर से कष्ट भी क्योंकि रीनू सहित कम से कम तीन लोगों का मद्रास आने जाने, मद्रास में रुकने के खर्च के अतिरिक्त इलाज में पर्याप्त धन व्यय हुआ। कल्पना नहीं की जा सकती कि डॉ० साहब की शुद्ध कमाई में बच्चों की पढ़ाई का खर्च वहन करते हुये किस प्रकार धन संचित किया होगा। शुद्ध कमाई में तो कुछ बचत करना कठिन होता है। इतना उत्तम इलाज कराने के उपरान्त भी सौ० रीनू की आंखों की ज्योति न बच सकी। डॉ० साहब के परिवार में वह सबसे सुन्दर एवं कुशाग्र बुद्धि की थी। उसने आंख की रोशनी कम होते हुये भी इलाहाबाद विश्वविद्यालय से डी.फिल की उपाधि प्राप्त की तथ वर्तमान समय में इलाहाबाद में सेवारत है। रीनू के कष्ट की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। मैं तो अपने गुरुद्रेव को देखता हूं कि परमात्मा ने इन्हें इतना धैर्य एवं साहस दिया है कि मन मलिन किये बिना यह सब सहन कर सके।

प्रकृति को इतने से ही संतोष नहीं हुआ। डॉ० साहब के ऊपर संकट का पहाड़ तब टूटा जब

उनके बड़े दामाद डॉ० विजय हिन्द पाण्डेय का आकस्मिक देहावसान हो गया। उक्त दोनों घटनाओं का प्रभाव क्षणिक या तात्कालिक न होकर दीर्घ समय तक प्रभावित कर सकता है। मालिक से प्रार्थना है कि डॉ० साहब को इन विषम परिस्थितियों को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

बाहर से कोई यदि डॉ० साहब से मिलने आता है तो वह अनुमान नहीं लगा सकता कि उन्हें कोई पारिवारिक समस्या है। प्रसन्नमुद्रा में उसका स्वागत करते हैं। मुझे तो विश्वास है कि डॉ० साहब में कोई दैवी शक्ति है जिसके कारण विषम एवं भयावह परिस्थिति को भी वह सहजता से वहन कर लेते हैं।

हमारे गुरुदेव में कोई आडम्बर, दिखावट, प्रलोभन आदि कुछ भी नहीं है। मूल्य-आधारित गुण विधाता ने उनमें कूट-कूट कर भरे हैं। जैसा कि मैं उन्हें निकट से पाता हूं वह सदा सच बोलते हैं दम्भ अभिमान से परे हैं। छल, कपट, चाटुकारिता से उन्हें परहेज है। वे बहुत ही सामान्य, प्रकृति के अनुरूप व्यक्ति हैं। चरित्रवान, अनुशासन प्रिय व्यक्तित्व हैं। मैंने शायद ही कभी उन्हें नाराज होते हुये देखा होगा। वे विज्ञान एवं हिन्दी साहित्य के प्रकांड पंडित हैं। डॉ० साहब शासन, समाज किसी संस्था द्वारा सम्मानित किये जाने की ओर कभी लालायित नहीं हुये, और न ही प्रयासरत रहे। संभवतः उनका उद्देश्य रहा होगा कि कार्य ही पूजा है। अन्यथा विज्ञान की कितनी पुस्तकें जो कि शोध स्तर की हैं, उनके द्वारा लिखी गयीं, यदि कोई उनका अवलोकन एवं मूल्यांकन करता तो मान्यता एवं प्रसिद्धि में डॉ० साहब शासन स्तर पर पराकाष्ठा पर होते।

ऊपर से सरल, सहज हैं, उतने ही अपने विषय में अटल हैं। विषय एवं सिद्धान्त से वह कभी समझौता नहीं करते। मुझे तो अपने शोध से यह अनुभव हुआ कि सब वस्तुयें अपनी जगह परन्तु सिद्धान्त एवं विषय से कोई समझौता नहीं है। "जैसा तुम ने शोध में पाया वैसा का वैसा ही लिख दो यदि शोध में वास्तविकता है तो मान्यता अवश्य मिलेगी।"

३७, खलील शर्की
शाहजहाँपुर-२४२००१

जैसा मैंने उन्हें देखा और अनुभव किया

डॉ0 जे.पी. पाठक

कर्मयोगी डॉ० मिश्र

मैंने सबसे पहले सन् १९७१ में डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी को हिन्दू छात्रावास के वार्डन के रूप में देखा था। वे छात्रावास के प्रांगण में खड़े-खड़े कुछ लिख रहे थे। मैं स्नानागार से अपने सम्बन्धी श्री चिन्तामणि त्रिपाठी के कमरे में वापस लौट रहा था। तब मैं कृषि स्नातक मात्र था और उत्तर प्रदेश राज्य सरकार की राज्य सेवा प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने आया था। डॉ० मिश्र के दर्शन से मुझे बड़ा ही विलक्षण सहारा मिला। उन दिनों मेरे सम्मुख स्नातकोत्तर शिक्षा पाने की ललक थी क्योंकि स्नातक शिक्षा के बाद उत्तर प्रदेश सरकार के कृषि विज्ञान संस्थान के निदेशक ने मुझे बलिया जिले के रतसर नामक कस्बे में स्थित विज्ञान मंदिर नामक प्रयोगशाला में मृदा विश्लेषक के पद पर नियुक्त कर दिया था और वहीं से इलाहाबाद आया करता था। सन् १९७२ में हमारी प्रयोगशाला क्षेत्रीय भूमि परीक्षण प्रयोगशाला में बदल गई और मार्च १९७२ में गोरखपुर की क्षेत्रीय भूमि परीक्षण प्रयोगशाला से स्थानान्तरित होकर क्षेत्रीय भूमि परीक्षण प्रयोगशाला इलाहाबाद आ गया। वहां आने के बाद स्वेच्छा से स्नातकोत्तर कक्षा में प्रवेश लेने के लिये कृषि विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा आवेदन आमंत्रित किये गये और इस प्रकार मैंने स्नातकोत्तर कक्षा में प्रवेश पाने हेतु अनुमति के लिये आवेदन किया और मुझे अनुमति मिल गयी। उस अनुमति पत्र को लेकर मैं डॉ० मिश्र से मिला। इस साक्षात्कार में भी कोई बातचीत नहीं हुई। अनुमति पत्र को देखते ही उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार को पत्र लिखा कि वे मुझे एम.एससी. रसायन में प्रवेश हेतु एक प्रार्थना पत्र की प्रति दे दें। इसके बाद मैं यह पत्र लेकर विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार से मिला जिन्होंने मुझे एक प्रार्थना पत्र मंगाकर दे दिया। इस प्रकार मुझे प्रवेश मिल गया जो डॉ० मिश्र के अंतरंग सानिध्य से मुझे जोड़ सका। उन दिनों विश्वविद्यालय में त्रैमासिक या अर्धवार्षिक परीक्षायें नहीं हुआ करती थीं। अतः स्वयं के मूल्यांकन के आधार पर ही अपनी मेधा और क्षमता का आकलन करना होता था। दोनों वर्षों में डॉ० मिश्र का मौन सानिध्य मिलता रहा और इस प्रकार मैं स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर सका।

ध्यानयोगी डॉ० मिश्र जी

वे १९८० के दिन थे जब डॉ० मिश्र ने मुझे अपनी ज्येष्ठ पुत्री के विवाह में आने के लिये पत्र लिखा था। यह पत्र मुझे दिल्ली में डॉ० एस.पी. पाठक ने दिया था जो उन दिनों क्षेत्रीय भूमि परीक्षण प्रयोगशाला आगरा में सहायक निदेशक पद पर कार्यरत थे। मैं उनके आगरा स्थित आवास से होता हुआ उनके साथ इलाहाबाद आया।

जब वैवाहिक कार्य पूर्ण हो गया और बारात विदा हो गयी तो डॉ० मिश्र से डॉ० एस.पी. पाठक

ने मेरे लिये कहा कि इनके पास समय है और ये लखीमपुर खीरी उत्तर प्रदेश की जनपद स्तर की भूमि परीक्षण प्रयोगशाला में अध्यक्ष के पद पर कार्यरत हैं अतः लखीमपुर में पायी जाने वाली विभिन्न मिट्टियों पर शोधकार्य कर सकते हैं। इसे डॉ० मिश्र ने स्वीकार कर लिया और वे मेरे लिये निश्चित की जाने वाली शोध परियोजना की इस यात्रा के निरीक्षण हेतु स्वयं डॉ० एस.पी. पाठक के साथ लखीमपुर आये। डॉ० मिश्र की इस यात्रा के समय मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे डॉ० मिश्र जीवन की समस्त मर्यादाओं से ऊपर उठ चुके हैं। वे किसी ऐसी सत्ता पर निर्भर करते हैं जो किसी सत्ता पर निर्भर नहीं करती है। इस प्रकार मुझे उनके द्वारा नियोजित परियोजना पर कार्य करने की अनुमति प्रदेश के कृषि विभाग द्वारा मिल गई। १९८२ में शोध के लिये इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा पंजीकृत कर लिया गया। मेरा स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण यह कार्य १९९३' में पूर्ण हो पाया।

ज्ञान और विज्ञान के पूर्णयोगी डॉ० मिश्र

ज्ञान और विज्ञान से सम्बन्धित जो अनुभूति मैं डॉ० मिश्र से संजो सका हूं बड़ी ही विचित्र है क्योंकि जब मैं उनके सानिध्य में आया तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि जो ज्ञान विज्ञान की सामर्थ्य उनके पास है वह मेरे लिये किसी प्रकार पराई नहीं हो सकती है। मुझे अपने शोध काल के आरम्भ के पूर्व उनके सानिध्य में यह अनुभूति धुंधली सी थी परन्तु इसमें दिनोंदिन प्रखरता बढ़ती गयी। यही कारण था कि मुझे पुस्तकों के सन्दर्भ आदि के लिये विवश नहीं होना पड़ा। मुझे आशा है कि उनकी आत्मसत्ता के सानिध्य में हम सभी के अबोध सत्य में निरन्तर विस्तार होता रहेगा।

अन्त में उनके दीर्घ जीवन की कामना करते हुये प्रार्थना करता हूं कि उनके पूर्ण कल्याण पर ईश्वरीय कृपा करुणा की निरन्तर वृष्टि होती रहे। अस्तु

उपसम्भागीय कृषि प्रसार अधिकारी
मंझनपुर, जनपद-कौशाम्बी

‘शिव’ स्वरूप मेरे गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 प्रेमचन्द्र मिश्र

बात मेरे विश्वविद्यालय के प्रवेश के वर्ष १९६२ की है। इसी वर्ष मैं इलाहाबाद एग्रीकल्चर इन्स्टीट्यूट, नैनी, इलाहाबाद से बी.एससी. (कृषि) पास करके इलाहाबाद विश्वविद्यालय में एम.एससी. (कृषि रसायन) में प्रवेश के लिये रसायन विभाग के चक्कर लगाया करता था। (ज्ञातव्य हो कि उन दिनों एम.एससी. (कृषि रसायन) की कक्षायें रसायन विभाग में ही चला करती थीं)। नम्बर अच्छे थे, प्रवेश के प्रति आश्वस्त था। एक दिन पता चला कि दो प्रवेशार्थी जिनके नम्बर मुझसे काफी कम थे आरक्षण सुविधा के अन्तर्गत नम्बरों में कुछ प्रतिशत की बढ़ोत्तरी के हकदार बनकर मेरिट सूची में मुझसे ऊपर पहुंच गये हैं। सीट दो बाकी थी, प्रवेशार्थी मुझसे दो ऊपर थे। यह बात जब मैंने डॉ० मिश्र से कही तो उन्होंने आश्वस्त किया कि प्रवेश मिल जाएगा।

कक्षायें शुरू हुई। मनोयोग से पढ़ाई में जुटा रहता था। किन्तु पहले वर्ष डॉ० मिश्र के नजदीक नहीं जा पाया। मुख्य बाधा थी मेरा क्रिकेट प्रेम। डॉ० मिश्र क्रिकेट के अत्यन्त खिलाफ थे। साल बीता एम.एससी. (कृषि रसायन) प्रथम वर्ष का परिणाम आया। मेरिट में मेरा प्रथम स्थान था।

विश्वविद्यालय में मेरा दूसरा वर्ष १९६३ की जुलाई-अगस्त रहा होगा जब हम एम.एससी. कृषि रसायन के दूसरे वर्ष का पहला क्लास अटेन्ड करने पहुंचे थे। डॉ० मिश्र से मेरा सामना हुआ एवं प्रणाम करने पर ऐसा पुत्रवत् स्नेह मिला कि मन में समाया सारा डर उड़नछू हो गया और हम शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु उनको प्रायः प्रतिदिन घेरे रहते। कितने भी व्यस्त रहे हों, अथवा थके-हारे, उन्होंने न तो हमें कभी निराश किया और न ही कभी डांटा। पुत्रवत् स्नेह एवं उत्साहवर्धन ही मिलता रहा जिसमें निरन्तर बढ़ोत्तरी होती गयी और इस स्नेह-सागर में गोते लगाते हम एम.एससी. (कृषि रसायन) पास करके उनके साथ शोध छात्र के रूप में स्नेह पाने लगे।

उनका सादगी भरा जीवन

डॉ० साहब के सादा जीवन की असली झांकी तो वर्ष १९६४ के बाद ही देख पाया। डी०फिल० डिग्री में प्रवेश लेने के बाद उनकी चिन्ता थी कि हमें छात्रवृत्ति के रूप में आर्थिक सहायता मिल जाये। उनका आशीर्वाद एवं भावना काम आई और हमें स्कालरशिप मिल गई। शोध कार्य का प्रारम्भ मृदा नमूने एकत्र करने से होना था। एक जीप किराये पर ली गई। हम तीन-चार शोध छात्र एवं डॉ० मिश्र स्वयं चिलचिलाती धूप में बलिया, मिर्जापुर, बनारस, इलाहाबाद आदि जिलों से मिट्टी के नमूने एकत्र करने निकल पड़े। नमूने एकत्र करने में हमें स्वयं खेत से नमूना निकालना होता था। फावड़ा-खुरपी से खुदाई करते समय जब भी डॉ० मिश्र ने यह देखा कि हम थक रहे हैं तो बिना देर किये हमारे हाथ

से फावड़ा छीनकर स्वयं खुदाई करने लगते थे। ऐसा था उनका काम के प्रति समर्पण, हमारे प्रति स्नेह तथा सादगी भरा व्यवहार। इस नमूना एकत्र करने की यात्रा में न जाने कितने अवसर ऐसे आये जब दिन भर न ठीक से पेटपूजा हो सकी और सोना भी पड़ा कुयें की जगत पर। किन्तु दूसरे दिन की आगे की यात्रा उसी प्रेम एवं उत्साह से शुरू होती थी डॉ० साहब की और उनका पूरा प्रभाव रहता था हम पर। डी०फिल० का कार्य चल रहा था और वह पड़ाव आ गया जहां प्रयोगशाला के परिणामों को लिपिबद्ध करना था। उसी दौरान एक वाकया याद आ रहा है। वर्ष १९६७ मई जून का महीना था। मैं अपनी दिनभर की लिखाई शाम को डॉ० साहब को उनके घर सुधार हेतु दिखाया करता था। उन दिनों उनका परिवार अलोपीबाग में रहता था। विश्वविद्यालय से चलकर डॉ० साहब अलोपीबाग से खाना खाकर अशोकनगर अपने निवास आते और मैं अपनी सारी लिखाई उनके देखने हेतु रखता था। साइकिल चलाने की थकान को छोड़कर वे तुरन्त लिखा गया कार्य देखने बैठ जाते थे। एक दिन वे समय से नहीं पंहुचे। मैंने अनुमान लगाया कि १० बज गये हैं, अब डॉ० साहब नहीं आयेंगे। मैं सोने की व्यवस्था बनाकर लेट गया। लगभग ११ बजे रात्रि दरवाजा खटका। खिड़की से झांका तो देखा कि डॉ० साहब खड़े हैं। अन्दर आते ही बोले कि अलोपी बाग से चला तो आनन्द भवन चौराहे के पास साइकिल पंक्चर हो गयी। कोई रिक्शा अशोकनगर के लिये नहीं मिला, पैदल आना पड़ा इसीलिये देर हो गयी। लाओ, कुछ लिखा है ? और बिना किसी विलम्ब के कागजों में खो गये। मैं नतमस्तक था उनकी सादगी एवं काम के प्रति समर्पण पर। ज्ञातव्य है कि साइकिल पंक्चर स्थल से अलोपीबाग (डॉ० साहब की ससुराल) की दूरी अशोकनगर से आधी से भी कम है। कोई दूसरा होता तो उधर ही पलट जाता इतनी रात में।

मेरे पूज्य गुरुदेव

विश्वविद्यालय आने के बाद मैंने डॉ० साहब के सानिध्य में एक लम्बा अरसा बिताया। इसी दौरान डी०फिल० की डिग्री मिली। डॉ० साहब की ही शिक्षा एवं काम के तरीके का प्रभाव पड़ा और मैं लेखक बन गया। उन्हीं की प्रेरणा से 'विज्ञान' पत्रिका से लेकर कृषि की जानी मानी पत्रिकाओं में मेरे लेख छपे एवं पुरस्कृत हुये। उनका हमेशा यही प्रयास रहा करता था कि उनके शिष्य उत्तरोत्तर प्रतिभा के धनी होते रहें। अपने छात्रों के प्रति वे हमेशा चिन्तित रहते थे, खास कर उनके बारे में जिन्हें नौकरी मिलने में देर होती थी।

परम आदरणीय डॉ० साहब को शुरू से ही मैं शिव समान मानता एवं देखता रहा हूं। उसका कारण यह रहा कि कितने ही लोग स्वार्थवश उनके निकट आये और लाभ उठाकर चलते बने। ऐसे ही हैं हमारे गुरु जिनमें ताप के साथ शीतलता भरी पड़ी है जिसकी छाया का लाभ हम आज भी उठा रहे हैं।

डॉ० मिश्र वन्दनीय हैं। हमारी प्रार्थना है कि वे स्वस्थ रहें एवं उनका आशीर्वाद हमें लम्बे समय तक मिलता रहे।

मोतीलाल नेहरू फारमर्स ट्रेनिंग
इन्स्टीट्यूट, फूलपुर, इलाहाबाद

भारत के महान मृदा वैज्ञानिक : प्रोफेसर शिवगोपाल मिश्र

डॉ० उमाशंकर मिश्र

सन् १६८७ में जब मैंने शीलाधर मृदा शोध संस्थान (इलाहाबाद विश्वविद्यालय) में एम.एससी. कृषि एवं मृदा विज्ञान के प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया तो मन में एक सहज उत्सुकता थी कि संस्थान के निदेशक से मिलूं। उनके नाम से तो परिचित था ही, जब प्रथम दिन संस्थान के प्रांगण में पहुंचा तो एक चपरासी से पूछा कि निदेशक महोदय कब आयेंगे। वह बोला देखो आ रहे हैं। मैं उनकी सादगी एवं व्यक्तित्व में जो सहज आकर्षण था, उससे बहुत प्रभावित हुआ। मुझे उनके निकट आने का सौभाग्य उस समय प्राप्त हुआ जब मैं एम.एससी. की थीसिस का कार्य कर रहा था। यह कार्य मेरे लिये एक प्रकार से नया भी था, क्योंकि इसके पहले इस संस्थान में इस विषय पर कोई कार्य नहीं हुआ था। मैं निदेशक महोदय से मिला। वे बोले कि तुम फार्म में जाकर ८ से १० स्थानों का मृदा दशाओं के आधार पर चुनाव करके वहां की मृदा में पाये जाने वाले केंचुओं की संख्या का पता लगाओ। इस प्रकार उनके सहज एवं सरल मार्गदर्शन के द्वारा कार्य सम्पन्न हुआ और वे मुझे 'केंचुओं का पंडित' कहकर पुकारने लगे। एम.एससी. थीसिस का साक्षात्कार लेने के लिये उनके प्रिय शिष्य प्रो० एन. पंडा कुलपति सम्बलपुर विश्वविद्यालय उड़ीसा से आये। वे वर्मीकल्चर पर हुये कार्य को देखकर बहुत खुश हुये और बोले, गुरु जी, हमारे यहां भी इस पर कार्य चल रहा है। मैं इस पर कुछ साहित्य भेजूंगा। कृपया आप इस पर और कार्य कराइयेगा।

जब मैंने डी.फिल. के लिये गुरु जी से निर्देशन की प्रार्थना की तो वे बोले किस टॉपिक पर कार्य करना है ? तो मैंने वर्मीकल्चर के काम को ही आगे बढ़ाने की इच्छा व्यक्त की। उनकी सहमति के साथ मैंने कार्य प्रारम्भ किया। इस तरह उनके पूर्ण सहयोग एवं मार्गदर्शन के द्वारा दिसम्बर १६६३ में मेरा शोध कार्य पूरा हो गया।

गुरु जी हिन्दी द्वारा 'विज्ञान' पत्रिका के माध्यम से विज्ञान को भारत के कोने कोने तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। वे इस 'विज्ञान' पत्रिका के कार्य पिछले कई दशकों से देखते चले आ रहे हैं। साथ ही साथ कई कृषि पत्रिकाओं एवं विज्ञान पत्रिकाओं के सम्पादन मण्डल के सदस्य भी हैं जिनको समय समय पर मार्गदर्शन देते रहे हैं। विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे शोध कार्यों को हिन्दी के माध्यम द्वारा जन जन तक पहुंचाने का कार्य करने वाली हिन्दी में प्रकाशित 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का सम्पादन पिछले कई दशकों से गुरु जी कर रहे हैं। यह पत्रिका आज भी विश्व हिन्दी सम्मेलनों और हमारी संसद में हिन्दी की लाज रखने के लिये मानी जाती है। इसके अतिरिक्त गुरुजी ने विज्ञान की दो दर्जन से अधिक पुस्तकें हिन्दी में लिखी हैं जिससे हिन्दीभाषी क्षेत्रों के छात्र, शिक्षक, किसान एवं समाज के सभी वर्गों के लोग अधिक से अधिक लाभ ले सकें। गुरु जी का मातृभाषा के

प्रति लगाव है जिसके प्रचार-प्रसार में वे लगे रहते हैं।

गुरु जी के मार्गदर्शन में ४२ छात्रों ने विभिन्न क्षेत्रों में शोध कार्य किया जो आज भारत के कृषि विश्वविद्यालय, महाविद्यालय और कृषि संस्थानों में फैले हुये हैं और ऊंचे ऊंचे पदों को सुशोभित करते हुये समाज का मार्गदर्शन कर रहे हैं। गुरु जी एक कृषक परिवार से जुड़े होने के कारण कृषि क्षेत्र को ही अपना कर्म क्षेत्र मानते हैं। इसलिये उनका जो भी शोध कार्य रहा है वह कृषि के विभिन्न पहलुओं से जुड़ा रहा और उसमें भी उन्होंने मुख्य रूप से मिट्टी को ही शोध का केन्द्रबिन्दु चुना क्योंकि सम्पूर्ण भूमण्डल में जो भी जन जीवन दिखाई दे रहा है वह बिना मिट्टी के सम्भव नहीं है। उन्होंने जो भी शोध कार्य अपने छात्रों को शुरू कराया, उसमें इस बात का विशेष ध्यान रखा कि मिट्टी को स्वस्थ कैसे बनाया जाये। मुख्य रूप से फसलों के आवश्यक तत्वों जिसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक तथा सूक्ष्म तत्वों का अध्ययन, मृदा में पाये जाने वाले भारी धातुओं का अध्ययन, मृदा प्रदूषण का अध्ययन, पेस्टीसाइड का अध्ययन, सीवेज स्लज का अध्ययन, अम्लीय एवं क्षारीय मृदा का अध्ययन, मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवों का अध्ययन, वर्मीकल्चर एवं वर्मीकम्पोस्ट के क्षेत्र में शोध कार्य करके विशेष कर किसानों को लाभ पहुंचाया। इस तरह वे मिट्टी को स्वस्थ रखते हुये अधिक से अधिक फसलोत्पादन प्राप्त करके देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये भोजन की व्यवस्था में सहयोग कर रहे हैं।

गुरु जी का व्यवहार, कार्य शैली, कार्य करने की क्षमता, अदम्य साहस, निर्भीकता, धैर्य, हिन्दी भाषा प्रेम, अत्यन्त सादा जीवन और विचार समाज के लिये प्रेरणास्पद हैं। कश्मीर से कन्याकुमारी तक फैले हुये उनके शिष्यगण अपने को ऐसे महान गुरु का शिष्य कहने में गर्व अनुभव करते हैं।

'तस्मै श्री गुरुवे नमः'

प्रवक्ता
मृदा विज्ञान विभाग
कृषि एवं पशु विज्ञान संकाय
महात्मा गांधी ग्रामोदय वि०वि० चित्रकूट
सतना, मध्य प्रदेश

डॉ० मिश्र एक प्रेरक व्यक्तित्व

डॉ० सुशीला राय

डॉ० शिवगोपाल मिश्र का व्यक्तित्व मेरे लिये सदा अजस्र प्रेरणा स्रोत बना हुआ है। डॉ० साहब से मेरा प्रथम परिचय सन् १६८३ में रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर के पुस्तकालय में 'विज्ञान' मासिक पत्रिका के एक अंक के माध्यम से हुआ था। मैंने आपका सरल, सारगर्भित लेख पढ़कर अपने पति डॉ० रामगोपाल से आपके विषय में पूछा तो उन्होंने अपने रसायन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अपने छात्र जीवन (१६६०-१६६६) के डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व से जुड़े संस्मरण सुनाये। उस समय विज्ञान संकाय के सदस्य एवं शोध छात्र डॉ० मिश्र की ओजस्विता एवं कर्मठता के प्रशंसक थे। विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित जनोपयोगी लेखों के पढ़ने से मुझे ये आभास हुआ कि यह पत्रिका ही मेरी अभिव्यक्ति का मंच बन सकती है। पुनश्च मैंने पत्रिका में प्रकाशनार्थ लेख भेजना प्रारम्भ किया और डॉ० मिश्र व प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव जी से पत्राचार होता रहा। एक के बाद एक मेरे अनेक लेख विज्ञान, वैज्ञानिक, विज्ञान वीथिका, आविष्कार, स्वास्थ्य और पर्यावरण, विज्ञान गंगा, प्रतियोगिता दर्पण आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगे। परिणामस्वरूप १६८६ में मुझे परिषद् द्वारा डॉ० गोरख प्रसाद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस प्रशस्ति से मेरा मनोबल और बढ़ा। सन् १६६० में मुझे विज्ञान परिषद् प्रयाग के मुख्यालय में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। डॉ० मिश्र ने नवोदित लेखिका के रूप में स्वामी सत्य प्रकाश सरस्वती जी से मेरा परिचय कराया। स्वामी जी के साथ लगभग एक घंटे तक विविध विषयों पर चर्चा होती रही जिसका मुझे शीघ्र पूर्ण लाभ मिला। स्वामी जी ने मिश्र जी से परामर्श कर मुझे १६६२ की डॉ० रत्नकुमारी व्याख्यानमाला का व्याख्यान देने के लिये आमंत्रित किया। मुझे संकोचग्रस्त देख डॉ० मिश्र ने मेरा मनोबल बढ़ाया एवं प्रेरणादायक शब्द कहे जिसके फलस्वरूप मैंने सफलतापूर्वक 'जलदाय एवं स्वच्छता से जुड़ी समस्याएं एवं उनके निराकरण में महिलाओं का योगदान' विषय पर परिषद् सभागार में १६ अक्टूबर १६६२ को व्याख्यान दिया।

डॉ० मिश्र की पुत्री सुश्री विभा मिश्र के जोधपुर प्रवास के दौरान डॉ० साहब का आना जाना होता रहा जिसका मुझे असीम लाभ मिला। डॉ० मिश्र ने मुझे रसायन विज्ञान की करामातों से जुड़े विषय पर एक जनोपयोगी पुस्तक लिखने का सुझाव दिया। प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित मेरे द्वारा लिखित पुस्तक 'रासायनिक तथ्य विचित्र किन्तु सत्य' पर्याप्त चर्चा का विषय बनी रही और रक्षा मंत्रालय भारत सरकार द्वारा इस पुस्तक को राष्ट्रीय स्तर का तृतीय पुरस्कार प्रदान करने के लिए चुना गया।

पिछले ५-६ वर्षों से मैंने प्रयोगशाला के हिन्दी अधिकारी के रूप में गृह पत्रिका 'मरु तरंग' का सम्पादन तथा प्रकाशन किया है एवं कई कार्यशालायें तथा संगोष्ठियाँ आयोजित की हैं। डॉ० मिश्र ने

कई गोष्ठियों में भाग ले कर मेरा मार्गदर्शन किया है। गृह पत्रिका के प्रारम्भिक प्रकाशनों में भी अमूल्य सुझाव दिये हैं।

डॉ० साहब की पुत्री विभा मिश्र के नेत्रहीन विकास संस्थान में अध्यापिका के रूप में कार्यरत होने के दौरान मुझे डॉ० साहब और उनकी पत्नी डॉ० (श्रीमती) रामकुमारी मिश्र के निकट आने का भी अवसर मिला। अनेक बार डॉ० साहब के परिवार का मेरी सास व पुत्रवधू सहित सम्पूर्ण परिवार उनके स्नेह का पात्र बना। जोधपुर मे डॉ० साहब के आवागमन से विज्ञान परिषद् प्रयाग के स्थानीय सभ्यों के साथ अनेक गोष्ठियां सम्पन्न हुईं जिसके फलस्वरूप परिषद् की एक सशक्त स्थानीय शाखा का गठन हुआ और इस शाखा में उपसभापति के रूप में कार्य करते हुये मुझे गर्व है कि लगभग १५० आजीवन सभ्यों के साथ हम सभी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में विज्ञान लेखन से जुड़े हुये हैं। हमारे कार्य को प्रशस्ति स्वरूप दर्जनों राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। इन सभी उपलब्धियों के लिये मैं इस अभिनंदन ग्रन्थ के माध्यम से नवलेखकों को प्रोत्साहित करने वाले इस महापुरुष के प्रेरक व्यक्तित्व को नमन करती हूं और ईश्वर से प्रार्थना करती हूं कि वे इन्हें दीर्घ जीवन प्रदान करें ताकि वे विशेषकर महिलाओं को विज्ञान लेखन के क्षेत्र में प्रेरणा देते रहें।

वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी
रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर-३४२०११

शिक्षा के लिये समर्पित एक व्यक्तित्व : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 विनोद कुमार गुप्त

ग्रीष्मावकाश में इलाहाबाद आने पर विज्ञान परिषद् गया। मेरे गुरु श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने स्नेहपूर्वक कहा, चलो ऊपर डॉ० मिश्र जी के पास चलते हैं। जून की गर्मी में जब सब कूलर में आराम करते हैं डॉ० मिश्र को मैंने परिषद् के प्रथम तल पर स्थित अपने कक्ष में पुस्तकों के बीच कार्य में तल्लीन पाया। लगभग पन्द्रह वर्षों के बाद मैं डॉ० मिश्र को देख रहा था। वैसे ही शान्त, सौम्य और अपने कार्य में संलग्न। श्री श्रीवास्तव ने मेरा परिचय कराते हुये कहा, आप....... मुझे याद आ गया. .... मेरी ओर देखते ही उन्होंने कहा।

क्यों जी ! आज कल कुछ लिख पढ़ नहीं रहे हो क्या ? मिलते ही एक शिक्षक की तरह उन्होंने जानना चाहा। हाल ही में बिलासपुर में आयोजित राष्ट्रीय पुस्तक मेले में विज्ञान के विविध विषयों पर डॉ० मिश्र की पुस्तकें देख कर मन हर्ष से भर आया। कौन कहता है कि हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन का कार्य नहीं हो रहा है ? डॉ० मिश्र का स्मरण आते ही मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय के रसायन शास्त्र विभाग में एक शोधार्थी के रूप में बिताये गये दिनों की याद आ गयी। मैं डॉ० कृष्ण बहादुर की प्रयोगशाला में था और उसके निकट की प्रयोगशाला डॉ० मिश्र की थी। बीच में एक दीवाल तो थी लेकिन डॉ० साहब के मृदु स्वभाव के कारण कभी महसूस नहीं किया। मृदा विज्ञान के क्षेत्र में एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक व विभाग के वरिष्ठ प्राध्यापक होने के बावजूद जब वे स्नेहपूर्वक व्यक्तिगत बातें करते तो हमें उन पर गर्व होता। डॉ० साहब का सरल व्यवहार, सहज रूप सभी को आकर्षित करता है। डॉ० बहादुर के साथ अक्सर आप प्रयोगशाला में आते अथवा बुलाये जाते तो टी-क्लब में गहन बौद्धिक चर्चायें होतीं। उन चर्चाओं का प्रभाव हम सब शोध छात्रों पर होता था। यह बात अत्यन्त महत्व की है कि एक ओर प्रो० मिश्र ने मृदा विज्ञान के क्षेत्र में गहन अध्ययन किया तो वहीं दूसरी ओर उन्होंने महत्वपूर्ण वैज्ञानिक जानकारियों को सामान्य जन तक पहुंचाने के कार्य को अत्यन्त आवश्यक समझा। उनका सरल बोधगम्य हिन्दी भाषा में सृजनात्मक वैज्ञानिक लेखन का कार्य आज भी निर्बाध गति से चल रहा है। छात्रों व लेखकों के लिये वे एक प्रेरणा स्रोत रहे हैं। डॉ० मिश्र प्रयाग विश्वविद्यालय की गौरवशाली परंपरा के वाहक हैं। वे एक अच्छे शिक्षक, वैज्ञानिक व सृजनशील रचनाकार हैं जिसने अपना सर्वस्व विज्ञान के अध्ययन व अध्यापन को समर्पित कर दिया है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि डॉ० मिश्र चिरायु हों ताकि इसी प्रकार वे विज्ञान की सेवा करते रहें।

सहायक प्राध्यापक, प्राणि विज्ञान विभाग
सी.एम.डी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बिलासपुर-४९५००१

गुरु का गुरुत्व

डॉ0 अजय कुमार

गुरु शब्द महानता का द्योतक है। गुरु की छवि त्यागमयी, निश्छल, प्रेम से सराबोर मनुष्य की है जो अपने शिष्य के लिये हमेशा अच्छा सोचता है। हर अच्छे-बुरे वक्त में हमेशा अपने शिष्य की सुख-सुविधा का ध्यान रखता है। जीवन के हर मोड़ पर दिशा निर्देश देने वाले गुरु का उसके छात्र के जीवन में क्या महत्व होता है इसे नापने का कोई पैमाना नहीं है। सादगी और सेवा के प्रतिमूर्ति हमारे गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र ऐसे ही व्यक्तित्व के धनी हैं और उनके साथ व्यतीत हर क्षण को शब्दों में व्यक्त कर पाने में मैं अपने को असमर्थ पाता हूं। अगर कुछ सामने आता है तो उनका शील, सदाचार, ज्ञान और सत्कर्मनिष्ठा से सम्पन्न उनकी विनम्रता और विवेकपूर्ण व्यवहार।

प्रो० मिश्र अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त सुप्रसिद्ध कृषि रसायनज्ञ व मृदा वैज्ञानिक हैं जिनके शोध कार्यों ने उन्हें प्रभूत प्रतिष्ठा प्रदान की है। वह एक उच्च कोटि के सफल अध्यापक रहे हैं जिनके शिष्य बड़ी संख्या में देश विदेश की विशिष्ट संस्थाओं से जुड़े हैं। वे हिन्दी भाषा के अनन्य हितैषी रहे हैं और हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की रचना के लिये जीवन के आरम्भ से अब तक समर्पित हैं। उनके निर्देशन में बहुत बड़े परिमाण में हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की रचना हुई। इसके लिये उन्हें विशिष्ट राजकीय एवं राष्ट्रीय सम्मानों से नवाजा जा चुका है।

प्रो० मिश्र योजनाबद्ध ढंग से कार्य करने वाले कर्मठ और सूझ-बूझ के धनी व्यक्ति हैं। वे जो कार्य हाथ में लेते हैं उसे पूरा करके ही दम लेते हैं। मेरा उनसे पहला परिचय सन् १९९६ में उस समय हुआ जब मेरा स्थानान्तरण इफको फूलपुर इकाई की अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशाला से मोती लाल नेहरू फारमर्स ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट फूलपुर में निर्माणाधीन जैव उर्वरक उत्पादन इकाई को सुसज्जित कर संचालित करने के लिये हुआ। यहां पर हमें संस्थान के उप प्रधानाचार्य डॉ० प्रेमचन्द्र मिश्र के साथ कार्य करने का मौका मिला, जिनकी हमारे ऊपर हमेशा से विशेष कृपा रही है और उन्हीं के उत्साहवर्धन और शोध के लिये आश्वासन से ही हमारी लालसा पुनः बलवती होने लगी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सन् १९७८ में जैव रसायन से स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त करने के दौरान ही मैं प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी की गरिमा से अवगत था लेकिन इसके तुरन्त बाद इफको फूलपुर इकाई में गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशाला में नियुक्ति के कारण शोध की लालसा मन में धरी की धरी रह गयी। आखिर वह शुभ दिन आ गया जब डॉ० प्रेमचन्द्र मिश्र जी ने हमको प्रो० मिश्र के आवास २५, अशोक नगर ले जाकर शोध की हमारी इच्छा से उनको अवगत कराया। प्रो० मिश्र ने शोध विषय के सम्बन्ध में मुझसे चर्चा की तथा उपयोगी जीवाणुओं पर सहमति बनने के बाद मुझे विषय से सम्बन्धित संदर्भ एकत्र करने की बात कह डाली और यहीं से शुरू हुआ उनकी शीतल छाया का लाभ और

में उनका शिष्य बन गया।

शोध के दौरान मुझे प्रो० मिश्र से जो स्नेह सौहार्द मिला, शैक्षणिक एवं व्यक्तिगत कठिनाइयों के समाधान में उनकी जो सहायता मिली और उनके व्यक्तित्व से जो कुछ सीखने को मिला, उसे कभी भी भुलाया नहीं जा सकता।

प्रो० मिश्र अपने जीवन के हर क्षण का उपयोग करते हुये विज्ञान के हर विषय पर स्वयं हिन्दी में लेख, पुस्तक, समीक्षा लिख कर हिन्दी साहित्य में विज्ञान की मौलिक एवं अनूदित पाठ्यपुस्तकें तथा लोकोपयोगी विज्ञान साहित्य निर्माण करने की दिशा में हमेशा प्रयत्नशील रहे। उन्होंने सदैव अपने शिष्यों को भी लेख लिखने को प्रेरित किया। उनकी ही प्रेरणा से हमारा लेख 'टर्मिनेटर बीज से उत्पादन संकट' 'विज्ञान' के मार्च १९९९ अंक में प्रकाशित हुआ। उसी लेख से प्रभावित होकर आई.आई.टी. मुम्बई से डॉ० रामचन्द्र मिश्र जी ने मुझे पत्र द्वारा ट्रेटर बीज के ऊपर एक लेख अपनी 'क्षितिज़' पत्रिका के बायोटेक्नोलोजी विशेषांक में प्रकाशित करने के लिये भेजने का आग्रह किया। इस तरह हमारा दूसरा लेख आई.आई.टी. मुम्बई से प्रकाशित 'क्षितिज' पत्रिका में प्रकाशित हुआ। बाद में 'विज्ञान' में प्रकाशित हमारे लेख टर्मिनेटर बीज से उत्पन्न संकट पर हमको विज्ञान परिषद् द्वारा वर्ष १९९९ के डॉ० गोरख प्रसाद विज्ञान लेखन पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र के विज्ञान और हिन्दी के क्षेत्र के क्रिया-कलापों की चर्चा के साथ उनके व्यक्तिगत स्वभाव की चर्चा न करना उनके गुरुत्व का अधूरा चित्रण है। प्रो० मिश्र एक वैज्ञानिक होने के साथ ही साथ दिखावे व धार्मिक आडम्बरों से बहुत दूर हैं। परन्तु परिवार के प्रत्येक व्यक्ति की धार्मिक आस्था को हमेशा महत्व देते हैं और अपनी अत्यन्त व्यस्तता के बावजूद परिवार के साथ धार्मिक अनुष्ठान, गंगा स्नान, मंदिरों में देवी देवता की पूजा-अर्चना में बराबर का हिस्सा लेना उनके विशाल हृदय का दर्शन कराता है।

जीवन में सादगी, विनम्रता, कर्मनिष्ठा और सभी के प्रति स्नेह ही प्रो० मिश्र के जीवन के आदर्श हैं। किसी से मतभेद होने के बावजूद उन्होंने कभी भी अपने दिल में नाराजगी नहीं रखी और जल्द ही साफ करके भुला दिया।

जीवन के सात दशक पूर्ण करते हुये वे उसी चुस्ती, मुस्तैदी के साथ हिन्दी में विज्ञान लेखन के साथ-साथ विज्ञान परिषद् द्वारा प्रकाशित 'विज्ञान' तथा 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का संपादन कर उल्लेखनीय योगदान करते आ रहे हैं।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी के जीवन के सात दशक पूर्ण होने के अवसर पर प्रकाशित अभिनन्दन ग्रन्थ में लिखने का अवसर पाने पर मैं अपने को सौभाग्यशाली महसूस करता हूं।

प्रो० मिश्र जी की कार्य शैली, लेखन व सम्पादन के प्रति अथक प्रेम युवा पीढ़ी के लेखकों के लिये एक आदर्श है। मैं ईश्वर से उनके चिरायु होने की प्रार्थना करता हूं।

वरिष्ठ प्रयोगशाला अधिकारी
जैव-उर्वरक एवं ऊतक संवर्धन इकाई
कोरडेट, इफको, फूलपुर, इलाहाबाद

मिश्र जी : मेरे अभिन्न मित्र

डॉ० तेज नारायण चोजर

सन् १९५२ का जुलाई का वह दिन जब प्रो० नील रत्न जी धर की छत्रछाया में मृदा रसायन पर शोध करने हेतु इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पदार्पण किया, बड़ा ही सौभाग्यशाली सिद्ध हुआ क्योंकि उसी दिन आप लोगों के लिये अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त कृषि रसायनज्ञ व मृदा विज्ञानी तथा स्वनामधन्य वरिष्ठ विज्ञान लेखक/सम्पादक विज्ञान भूषण डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से प्रथम भेंट हुई। कौन सोच सकता था कि इतनी सादी वेषभूषा वाला पंडित (प्रो० धर के शब्दों में) यह सब बनेगा। उस समय भी बड़े केश, अस्तव्यस्त दाढ़ी व कमीज धोती वाला व्यक्ति देखने में तो असाधारण था ही, विज्ञान एवं साहित्य का मिश्रण भी अजीब सा था।

भगवान् की अनुकम्पा रही कि हमारी घनिष्ठता बढ़ती गई, साहित्य से मेरा लगाव, निराला जी की निकटता व बाद में दोपहर का भोजन भी हमारे मेस में ही खाने लगे अर्थात् दिन का अधिकांश भाग हम लोग साथ ही रहते थे। उनके ही कारण पूज्य निराला जी के अत्यन्त निकट पहुंच सका। जब उनका सुन्दर चित्र आटोग्राफ करने हेतु ले गया तो उन्होंने अंग्रेजी में 'ब्रेक डाउन द फेटर्स दैट बाइण्ड दी' लिख दिया। मेरे अनुरोध पर कि हिन्दी में इतना महान कवि अंग्रेजी में लिख रहा है तुरन्त ही मोती से अक्षरों में 'तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा पत्थर की फिर बह निकले गंगा जल धारा' लिख दिया- मैं तो धन्य ही हो गया। उनके स्वर्गवास के पश्चात् मिश्र जी ने बताया कि मेरी जिगर मुरादाबादी की पुस्तक मृत्यु के समय उनके पास ही मिली। फिर एक लेख उनके स्मृति अंक में छपा, 'वह प्रसाद जो मैं ग्रहण नहीं कर सका।' ऐसी अनेक घटनायें हैं।

शोध काल में नेशनल एकेडमी के कई अधिवेशनों में अलीगढ़, लखनऊ व सागर विश्वविद्यालय में उनके सामीप्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् १९५६ के पश्चात् हम लोग परिवार के सदस्यों की तरह ही रहे।

आज एक कम पचास वर्षों के बाद भी बराबर सम्पर्क में रहे। जब भी मैं इलाहाबाद गया तो सर्किट हाउस, जो उनके निवास के निकट ही है, अथवा उनके साथ ही रुकता था। वे भी जब लखनऊ आये तो आतिथ्य का सुअवसर प्राप्त हुआ, उनकी निकटता तथा उनके द्वारा विज्ञान एवं साहित्य के क्षेत्रों में अनेकानेक पुरस्कारों से प्रेरणा लेकर ही साहित्य एवं विज्ञान में मेरे लेख प्रकाशित हो सके तथा हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी द्वारा सीमेन्ट पर प्रकाशित पुस्तक सर्वप्रथम स्तरीय पुरस्कार अर्जित कर सकी।

उनके बड़े जामाता की हृदयविदारक दुर्घटना में स्वर्गवास के पश्चात् वे और श्रीमती मिश्र, जो स्वयं भी बड़ी साहित्यकार हैं, किस प्रकार उस दुःख को सहन कर सके यह उनके जीवन का दूसरा पहलू है। उनकी सभी पुत्रियां व पुत्र भी अध्ययन एवं जीवन में माता पिता का अनुकरण कर सके, यह प्रभु की अनुकम्पा ही थी।

प्रायः सोचता हूं कि इलाहाबाद से प्राप्त डी.फिल की उपाधि उनकी मित्रता से प्राप्त बड़प्पन के सामने कुछ भी नहीं है। भगवान् सदैव हमें इसी प्रकार निकट रखे।

१६६-सी, सेक्टर-बी
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४

प्रोफेसर शिवगोपाल मिश्र

डॉ० हरिश्चन्द्र गुप्त

यद्यपि प्रो० शिवगोपाल जी से मेरा परिचय केवल दो बार ही हुआ है, उन्होंने अपने सौजन्य की मुझ पर अमिट छाप छोड़ दी है। पहली बार मैं प्राचीनतम संस्था विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित स्व० गोरख प्रसाद स्मृति व्याख्यानमाला के अंतर्गत २१ मार्च, १९९८ को, जब मुझे श्रद्धेय गोरख प्रसाद जी के प्रति अपने श्रद्धामय उद्गार प्रकट करने का सुअवसर मिला तो उन्होंने परिषद् के प्रधानमंत्री के नाते उस दिन मेरे आतिथ्य में किसी प्रकार की कमी नहीं रखी, वरन् मेरे प्रयास से स्थापित गणित सांख्यिकी संस्थान प्रसार के उद्देश्य की पूर्ति में उन्होंने संस्थान के प्रकाशन 'गणित विविधा' को प्रचारित करने का भी आश्वासन दिया। हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय से प्रकाशित मेरी पुस्तक 'प्रायिकता' की भूमिका में समर्पण पंक्तियां :-

इस प्रायिकता पुस्तक को यदि आप पढ़ेंगे आद्योपांत,
तो निश्चय कुछ तथ्य मिलेंगे जो शिक्षाप्रद नये नितांत।
गुरु गोरख प्रसाद सुस्मृति में करूं समर्पित यह पुस्तक
हिन्दी में विज्ञान गणित हों श्रेय साधना पटु साधक।

से अब लगता है कि उन्हीं की दिवंगत आत्मा अब डॉ० मिश्र में समाहित हो जो उन्हें हिन्दी माध्यम द्वारा वैज्ञानिक साहित्य के सृजन एवं प्रचार प्रसार के लिये प्रेरित करती रही है। उनके अतिरिक्त स्व० स्वामी विज्ञानानंद (मूलनाम प्रो० सत्यप्रकाश) से भी मिश्र जी को प्रेरणा कुछ कम नहीं मिली। तभी निःस्वार्थ भाव से प्रो० मिश्र विज्ञान की सेवा में संलग्न हैं और १९१५ में आरंभ मासिक 'विज्ञान' पत्रिका तथा कुछ समय बाद से 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' के अनवरत प्रकाशन का कार्यभार संभाल रहे हैं।

दूसरी बार मिश्र जी से कुछ समय बाद ही मिलना हुआ, जब स्वतंत्रता की पचासवीं वर्षगांठ के अवसर पर विज्ञान परिषद् की अंतरंग सभा द्वारा अनुमोदित मुझे 'विज्ञान वाचस्पति' की उपाधि से सम्मानित करने वे स्वयं दिल्ली आये, क्योंकि वृद्धावस्था के दौर्बल्य के कारण मेरा इलाहाबाद जाना संभव नहीं था। वस्तुतः उनका यह कृत्य (doing good with vengeance) को चरितार्थ करता है। अब मैं उनकी दीर्घायु एवं हिन्दी माध्यम से सतत् विज्ञान प्रचार प्रसार में संलग्न रहे आने की शुभ कामना इन पंक्तियों से करता हूं :-

सुआयु शिव गोपाल मिश्र हों, सेवा में विज्ञान 'सुरत'
हिन्दी के माध्यम से उनसे, हो प्रचार अनुपम अविरत।

१५०, दीपाली, पीतमपुरा मार्ग
दिल्ली-३४

विलक्षण प्रतिभा के धनी : डॉ० मिश्र

डॉ0 सुप्रभात मुखर्जी

मुझे डॉ० मिश्र की स्नेहिल शीतल छाया में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यही नहीं, उन्होंने मुझे सहारा दिया है। जीवन की विषम परिस्थितियों में मैंने उन्हें अपने निकट पाया है। जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययनरत था तब म्योर कॉलेज के बरामदों में उन्हें आते-जाते देखा करता था। प्रणाम करने पर वे जिस तरह एक निश्छल, सरल मुस्कान से अभिवादन करते वह मैं कभी भूल नहीं सकता; क्योंकि उसमें एक अपनापन झलकता था। तब मैंने यह सोचा भी नहीं था कि एक दिन मुझे उनके साथ काम करने का अवसर मिलेगा, क्योंकि डॉ० मिश्र रसायन विज्ञान विभाग में उपाचार्य थे और मैं वनस्पति विज्ञान से एम.एस-सी. कर रहा था। परन्तु मेरी यह मान्यता है कि सामाजिक न्याय और खुशहाली जनसाधारण में वैज्ञानिक सोच की अभिवृद्धि पर ही निर्भर करती है, मुझे विज्ञान परिषद् प्रयाग की ओर खींच ले गयी और मैं विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में सम्मिलित होने लगा। कुछ समय पश्चात् मैं आजीवन सभ्य भी बन गया। मुझे डॉ० मिश्र के निकट आने का अवसर प्राप्त हुआ। एक दिन "जीवन में विज्ञान की अनिवार्यता" पर मेरे विचार जानने के पश्चात् डॉ० मिश्र ने मुझे "विज्ञान की अनिवार्यता" पर एक लेख लिखने को कहा और मैंने अपना हिन्दी में पहला लेख 'विज्ञान अनिवार्य क्यों? क्या? और कैसे?' लिखा। विभागीय कार्य की व्यस्तता के कारण लिखने का तो अधिक अवसर नहीं मिल पाता था परन्तु विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में मैं यथासम्भव अवश्य आया करता था और अपने विचार व्यक्त करता था। ऐसे ही एक दिन जब मैं विज्ञान परिषद् गया तो डॉ० मिश्र ने कहा कि मैं चाहता हूँ कि आप परिषद् के संयुक्त सचिव का दायित्व संभालें और मुझे डॉ० मिश्र के निर्देशन में कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। उन दिनों विज्ञान परिषद् की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी और ऐसा लगता था कि संस्था कैसे चलेगी परन्तु, मैंने कभी भी डॉ० मिश्र को अवसादग्रस्त नहीं देखा। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी वे रास्ता ढूँढ ही लेते थे। सबसे सहयोग प्राप्त करने की उनमें विलक्षण प्रतिभा है। बनावट और आडम्बर से वे कोसों दूर हैं। सच और वह भी कड़वा सच वे बड़े सहज भाव से बिना क्रोधित हुये कहते हैं जिसका दूरगामी प्रभाव होता है। डॉ० मिश्र के साथ रहकर मैंने यह भी देखा कि वे अपने से कनिष्ठ से और कम अनुभव रखने वालों की बातों को भी समुचित महत्व देते हैं और तथाकथित प्रभावशाली व्यक्तियों के दबाव में भी नहीं आते।

व्यक्तिगत तौर पर मैंने डॉ० मिश्र से बहुत कुछ सीखा है और मैं उनका आजीवन ऋणी रहूँगा। परमपिता परमात्मा से बस यही प्रार्थना है कि वह डॉ० मिश्र को स्वस्थ रखें और दीर्घायु प्रदान करें और उनकी विज्ञान सेवा की यह तपस्या चलती रहे।

विभागाध्यक्ष, वनस्पति विज्ञान
हे०न०ब० राजकीय महाविद्यालय
नैनी, इलाहाबाद

अद्भुत व्यक्तित्व के धनी : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० गोपाल पाण्डेय

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त सुप्रसिद्ध कृषि रसायनज्ञ व मृदा विज्ञानी तथा प्रसिद्ध विज्ञान लेखक डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी सात दशक पूर्ण कर रहे हैं, यह जानकर खुशी हुई कि इस उपलक्ष में एक अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित होने जा रहा है। मैं डॉ० गिरीश पाण्डेय जी के प्रति आभारी हूं जिन्होंने मिश्र जी के बारे में कुछ लिखने के लिये मुझे इस योग्य समझा। सकारात्मक सोच के धनी प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी के बारे में लिखना मेरे जैसे छोटे कद के वैज्ञानिक के लिये छोटे मुंह बड़ी बात होगी फिर भी कुछ लिखने के लिये हिम्मत जुटानी होगी।

डॉ० मिश्र जी के व्यक्तित्व से मैं हमेशा प्रभावित रहा। परम स्नेही मिश्र जी के दर्शन करने का प्रथम सौभाग्य मुझे उस समय मिला जब वे शीलाधर मृदा शोध संस्थान, इलाहाबाद के निदेशक थे। उन दिनों मुझे बायोवेद शोध एवं प्रसार केन्द्र, इलाहाबाद से निकलने वाली न्यू एग्रीकल्चरिस्ट पत्रिका का सम्पादन करने की जिम्मेदारी सौंपी गयी थी तब मुझे डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी की याद आयी। वैसे तो मैं मिश्र जी को पहले से ही जानता था तथा उनकी लेखनी के बारे में पूर्ण परिचित था। मेरी इच्छा थी कि मिश्र जी प्रधान सम्पादक की जिम्मेदारी ले लें तो इस पत्रिका का सम्पादन प्रभावी ढंग से होगा तथा यह पत्रिका वैज्ञानिकों के लिये उपयोगी सिद्ध हो जायेगी। इसी संदर्भ में मैं आग्रह करने हेतु शीलाधर मृदा शोध संस्थान गया तथा मैंने मिश्र जी से निवेदन किया कि आप न्यू एग्रीकल्चरिष्ट पत्रिका के प्रधान सम्पादन की जिम्मेदारी निभा लें तथा हमे मार्गदर्शन दें तो यह पत्रिका निश्चित रूप से लोकप्रिय हो जायेगी। काफी कोशिश के बाद मिश्र जी ने न्यू एग्रीकल्चरिस्ट पत्रिका के सम्पादक की जिम्मेदारी निभाने की सहमति प्रदान की।

आज न्यू एग्रीकल्चरिस्ट पत्रिका का विगत बारह वर्षों से अनवरत प्रकाशन होता आ रहा है तथा यह पत्रिका अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुकी है। मैं आज मिश्र जी के प्रति आभारी हूं जिन्होंने इस पत्रिका के प्रकाशन में अपना आशीर्वाद एवं सहयोग प्रदान किया।

विगत एक दशक से हमारा केन्द्र सदैव ही राष्ट्रीय स्तर पर संगोष्ठी करता चला आ रहा है। और इस संगोष्ठी में प्रत्येक वर्ष २००-२५० वैज्ञानिकों का आगमन होता रहता है। प्रत्येक वर्ष का उद्घाटन सत्र विज्ञान परिषद् में ही होता है। इतना बड़ा सहयोग हमें मिश्र जी की सकारात्मक सोच की वजह से मिलता रहता है।

अद्भुत व्यक्तित्व के धनी, महान वैज्ञानिक डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से मेरी मुलाकात ३ फरवरी २००१ को विज्ञान परिषद् इलाहाबाद में हुई। उन दिनों बायोवेद एवं शोध प्रसार केन्द्र की राष्ट्रीय संगोष्ठी विज्ञान परिषद् में चल रही थी कि मैं उन दिनों काफी परेशान था एक ग्रन्थ के प्रकाशन को लेकर। वैसे मैं अंग्रेजी में करीब आठ ग्रन्थों का सम्पादन तथा लेखन कर चुका था तथा ५० से ऊपर मेरे लेख तमाम पत्रिकाओं में छप चुके थे। चूंकि यह ग्रन्थ हिन्दी के माध्यम से लिखा गया था, मैं इसका प्रकाशन अच्छी जगह से कराना चाहता था। इस संदर्भ में मैंने डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से

आग्रह किया कि इस ग्रन्थ को प्रकाशन में मेरी मदद करें। इस पर मिश्र जी ने हँस कर कहा लिखते पढ़ते हो नहीं, पहले एक लेख तुम 'विज्ञान' पत्रिका के लिये लिखो तब देखेंगे। विज्ञान पत्रिका के लिये १२ पृष्ट का एक लेख एक महीने में तैयार करके मैं पुनः मिश्र जी से मिला। उस समय मुझे बहुत निराशा हुई जब उन्होंने कहा कि यह लेख विज्ञान पत्रिका में नहीं छप सकता है। दूसरा बना कर लाइये। तब देखा जायेगा। मैंने इस तरह कई बार लेख लिखा तथा कई बार काटने छांटने के बाद वह लेख 'विज्ञान' पत्रिका के प्रकाशन हेतु स्वीकृत किया गया। इसके बाद मेरे द्वारा हिन्दी मे लिखे गये ग्रन्थ को मिश्र जी ने अपनी संस्तुति के साथ उसे प्रकाशन हेतु शब्दावली आयोग, नई दिल्ली प्रेषित किया और वह स्वीकृत हो गया। इस प्रक्रिया में माननीय मिश्र जी को बहुत करीब से जानने तथा समझने का मौका मिला और मैंने यह महसूस किया कि जिस तरह से मिश्र जी विज्ञान के प्रति समर्पित हैं उस तरह का समर्पण बहुत कम लोगों में है। ऐसे लोगों की वजह से ही विज्ञान का प्रचार प्रसार हो रहा है।

उप निदेशक
बायोवेद शोध एवं प्रसार केन्द्र
१०३/४२, मोतीलाल नेहरू रोड, इलाहाबाद

जिन्होंने मुझे लिखना सिखाया

डॉ० अरुण कुमार सक्सेना

वरिष्ठ विज्ञान लेखक डॉ० मिश्र जी की पूर्ण तथा शीतल छाया विशेष रूप से मेरे ऊपर रही इसे मैं आज तक अनुभव करता हूं और आगे भी करता रहूंगा। १९६४ ई० में जब मैं डी.फिल. कर रहा था तो डॉ० मिश्र जी की प्रयोगशाला में वह उपकरण था जिससे मुझे कार्य करना था। उन्होंने बिना हिचक मुझे उस उपकरण पर कार्य करने की अनुमति प्रदान कर दी थी।

इसके अतिरिक्त उन्होंने ने मुझे हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक ढंग के लेखों का लिखना भी एक प्रकार से प्रेरणा देकर सिखाया था। जो भी कुछ मैं लिखता था वे अत्यन्त व्यस्त होने पर भी मेरे लेखों को सहर्ष देखकर उन्हें अच्छा रूप प्रदान कर देते थे।

उन्हीं की कृपा से मेरे लेखों ने बनारस से प्रकाशित वाले 'आज' मे भी अपना विशेष स्थान प्राप्त कर लिया था।

मैं जो भी नवीन शोध कार्य आरंभ करता हूं उसका पहला प्रिंट मैं पहले विज्ञान परिषद् में आपके प्रति सम्मान अर्पित करने हेतु भेजता हूं (बाद में अमेरिका आदि भेजता हूं)।

डिपार्टमेन्ट ऑफ फिजिक्स
एण्ड एस्ट्रोफिजिक्स
यूनिवर्सिटी ऑफ दिल्ली,
दिल्ली-११०००७

उदारमना डॉ० मिश्र

रामस्वरूप सिंह चौहान

मुझे डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से मिलने का सौभाग्य दिसम्बर १९९९ में हुआ जब उन्होंने '२१वीं सदी में जैव प्रौद्योगिकी के नये आयाम' विषय पर राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन किया था। डॉ० मिश्र जी एक सौम्य स्वभाव के हिन्दी पत्रकारिता को समर्पित व्यक्ति लगे। उनसे बातचीत में ही आभास हो गया कि विज्ञान के हिन्दी लेखन में इन्हें महारत हासिल है। मैं अपनी एक पुस्तक 'मानव को रोग सौंपते पशु' भी साथ ले गया था जो उन्हें भेंट की थी। उनकी उदारता व विज्ञान के लिये समर्पण इसी से झलकता है कि उन्होंने 'विज्ञान' पत्रिका के आगामी अंक में पुस्तक समीक्षा के अन्तर्गत सामान्य जन के लिये लेख प्रकाशित किया। डॉ० मिश्र के साथ मैं प्रयाग में दो दिन रहा। उस दौरान मुझे लगा कि इस उम्र में भी मिश्र जी सुबह से देर रात तक कार्य में जुटे हैं। सभी आगन्तुकों से मिलना, उनकी समस्या का निराकरण करना तथा सभी कार्यों की देख रेख करना जैसे उनके घर का काम हो। विज्ञान पत्रिका को उन्होंने जिस रोचक भाषा शैली में सम्पादित किया है वैसा उदाहरण हिन्दी लेखक के लिये अन्यत्र कहीं नहीं मिलता है।

डॉ० मिश्र के सानिध्य में रहने से ऐसा लगा कि किसी अपने वरिष्ठ परिवारीजन की छाया में रह रहे हैं। दो दिन के इस सम्मेलन में जैव प्रौद्योगिकी जैसे नवीनतम तथा कठिन विषय को हिन्दी के माध्यम से चर्चा में लाने का श्रेय डॉ० मिश्र जैसे व्यक्ति को ही जाता है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि उन्हें बहुत लम्बी उम्र दें। उम्र का सत्तरवां वर्ष तो पड़ाव है। उन्हें तो अभी हिन्दी विज्ञान लेखन में जगमगाते रहना है।

मेरी शुभकामनायें !

नेशनल फेलो
डिपार्टमेन्ट आफ पैथोलोजी
कॉलेज आफ वैटेरिनेरी साइंसेज
गोविन्द वल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
पन्तनगर

परिषद् के कर्मयोगी : परमादरणीय डॉ० मिश्र

चन्द्रभान सिंह

पूर्व कार्यालय प्रभारी स्व० पं० गंगाधर तिवारी के पश्चात् प्रो० पूर्ण चन्द्र गुप्त, प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग के कार्यकाल में डॉ० साहब के निर्देश पर मेरी नियुक्ति वर्ष १९८६ में हुई। प्रारम्भ में परिषद् का कार्य करने में मुझे अनेकानेक परेशानियां महसूस होती थीं किन्तु डॉ० साहब उन परेशानियों का निराकरण बड़ी सहजता एवं शालीनता से कर देते थे।

डॉ० साहब के सानिध्य में रहकर मैं उनके सात्विक जीवन, अदम्य साहस एवं कठोर परिश्रम से बहुत प्रभावित हुआ। शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक पद से अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् वे अपना पूरा समय विज्ञान परिषद् को देने लगे। उनकी सादगी का एक दृष्टान्त देना यहां समीचीन होगा। एक बार एक सज्जन डॉ० साहब से मिलने आये। उस समय आप परिषद् नहीं आये थे। मैंने उनको बताया कि डॉ० साहब परिषद् देर से आते हैं। इसके अनन्तर वह परिषद् कैम्पस में भ्रमण करने लगे। थोड़ी देर बाद डॉ० साहब साइकिल से आये और कार्यालय में बैठ गये। इसके पश्चात् मिलने वाले सज्जन आये और मुझसे पूछा कि क्या आपके प्रधानमंत्री जी आ गये हैं ? तो मैंने हां कहा। इस पर उन्होंने कहा कि जो व्यक्ति साइकिल से अभी आये हैं, क्या वही आपके प्रधानमंत्री हैं ? उसके प्रत्युत्तर में मैंने हां कहा। तक वह डॉ० साहब की अधिक उम्र एवं पद की गरिमा को सोचकर हतप्रभ हो गये। डॉ० साहब ने सादा जीवन उच्च विचार (Simple living and high thinking) को पूर्णतः चरितार्थ किया।

डॉ० साहब स्वतः कठोर परिश्रम करते हैं और सभी से कठोर परिश्रम की अपेक्षा भी रखते हैं। डॉ० साहब का कहना है कि मनुष्य को सुख और उन्नति प्राप्त करने के लिये सदा कर्म करना चाहिये। भाग्य के अधीन होकर कोई कार्य नहीं होता। परिश्रम करने पर भी यदि कार्य नहीं सिद्ध होता है तो देखना चाहिये कि कौन सी कमी मेरे अन्दर रह गई है जिसके कारण कार्य नहीं हो रहा है।

आपके प्रधानमन्त्रित्व काल में परिषद् का सर्वांगीण विकास हुआ। ४ व ५ दिसम्बर १९९६ को 'इक्कीसवीं सदी में जैव प्रौद्योगिकी के नये आयाम' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी हुई। इसके अतिरिक्त कई परियोजनायें जैसे- एनोटेटेड बिब्लियोग्राफी ऑफ पापुलर सांइस एण्ड टेक्नोलॉजी बुक्स इन हिन्दी, व्यावहारिक विज्ञान परिभाषा कोष, लोक कला माध्यमों में विज्ञान लेखन, विज्ञान पत्रकारिता- आपके निर्देशन में सम्पन्न हो चुके हैं। विज्ञान मासिक का स्तर ऊंचा उठाकर उसको प्रतियोगी पत्रिकाओं की श्रेणी में ला दिया है। अपने सतत प्रयास से 'विज्ञान' एवं 'अनुसंधान पत्रिका' को मिलने वाली अनुदान राशि में दुगुनी वृद्धि कराई है। जहां परिषद् को आर्थिक अभावों से गुजरना पड़ता था वहीं आज आर्थिक दृष्टि से परिषद् सबल हुआ है। राजनेताओं से सम्पर्क करके परिषद् में कम्प्यूटर की भी व्यवस्था आपने करवा दी है। इस प्रकार यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि आपका प्रधानमंत्रित्व काल परिषद् का स्वर्ण काल (The golden time of Vigyan Parishad) है। आपने अनेक पुस्तकें लिखीं हैं तथा पुरस्कार प्राप्त किये हैं। डॉ० साहब के विषय में निम्नांकित पंक्तियां लिखनी उपयुक्त होंगी-

'जयन्ति ते सुकृतिनः कर्तव्यनिष्ट कर्मपरायणाः।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम्।।

विज्ञान परिषद् प्रयाग
इलाहाबाद- २११००२

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : एक प्रेरणा बल

सन्त शरण मिश्र

आदरणीय मिश्र जी से मेरा व्यक्तिगत संपर्क विज्ञान कथा लेखकों के वार्षिक अधिवेशन के दौरान हुआ। यह बात लगभग छः-सात वर्ष पूर्व की है। डॉ० मिश्र का हिन्दी विज्ञान लेखन के प्रति समर्पण से मैं इतना प्रभावित हुआ कि उस तिथि से आज तक एक दर्जन से ज्यादा वैज्ञानिक लेखों को लिख सका जो लगभग प्रत्येक स्तर की पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुये। डॉ० मिश्र से मिलने से पहले मैं हिन्दी में विज्ञान लेखन बिल्कुल नहीं कर पाता था, न करने में रुचि थी, न ही समय निकाल पाता था। परन्तु उनके संपर्क, व्यक्तित्व एवं कृतित्व का मुझ पर इतना जादुई असर हुआ कि मैं अपने शिक्षण एवं शोध में न केवल उत्पादकता की दर बढ़ा सका अपितु उसके साथ हिन्दी विज्ञान लेखन तथा व्याख्यान देने में बढ़-चढ़ कर रुचि लेने लगा। ऐसा लगा जैसे अंकुरित होते बीज को पानी, प्रकाश तथा वायु की प्रचुर मात्रा मिल गयी हो।

डॉ० मिश्र का यह तर्क था कि विज्ञान का शोधपरक तकनीकी लेखन का पाठक वर्ग इतना सीमित है कि कुछ मौलिक तकनीकी पक्ष को छोड़कर अधिकतर विज्ञान लेखन वैज्ञानिक दृष्टिकोण बढ़ाने तथा सामाजिक व्यावहारिकता से न जुड़कर शोध ग्रन्थों तथा पत्रिकाओं के पन्नों की शोभा तक सीमित रह जाता है। विज्ञान की सामाजिक उपादेयता एवं लोकप्रियता पर प्रश्नचिन्ह न लगे, इसे वे उच्च कोटि के परम्परागत ज्ञान की मान्यता देते हैं। इस प्रकार विज्ञान के शोध एवं तकनीकीपरक लेखन को अंग्रेजी की तथाकथित ज्ञान की बलवेदी पर चढ़ा देते हैं। अंग्रेजी में विज्ञान लेखन करना ही स्तरीय लेखन है। ऐसी मानसिकता से ग्रसित लोग हिन्दी में विज्ञान लेखन को छोटा वर्ग मानते हैं।

दूसरी तरफ लोकप्रिय विज्ञान का हिन्दी में लेखन न केवल सामान्य पाठक वर्ग तक पहुंचता है बल्कि समाज में जागरूकता एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण के स्तर को बढ़ाता है। फलस्वरूप, समाज के लोगों का जीवन स्तर एवं जीवन पद्धति इससे प्रभावित होकर एक सकारात्मक रूप धारित करते हैं। इस प्रकार विज्ञान लेखन की सामाजिक उपादेयता काफी हद तक सिद्ध हो जाती है।

डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अंश मात्र को मैं समझ सका एवं जीवन में उतार सका, यह मेरा सौभाग्य है। उनके व्यक्तित्व के एक पहलू में इतनी शक्ति है तो उनका समग्र व्यक्तित्व न जाने कितना महान होगा। उनके संपूर्ण व्यक्तित्व पर प्रकाश डालना मुझ जैसे व्यक्ति की भाषा एवं शब्दज्ञान समर्थ नहीं है।

इन सात दशकों में डॉ० मिश्र के शोधकर्ता एवं संपादक के रूप में, लेखक, समालोचक एवं प्रकाशक के रूप में योगदानों को स्मरण करना, उन्हें एक जगह संगठित एवं संकलित करना एक बहुत बड़ा कार्य है जो शायद मेरे लिये मुश्किल भी है।

अन्त में मैं डॉ० मिश्र के स्वस्थ एवं दीर्घजीवी होने की ईश्वर से प्रार्थना करता हूं जिससे वे अपने गहन अनुभव एवं ज्ञान से वैज्ञानिक लेखकों, विशेष रूप से युवा वैज्ञानिकों एवं प्राध्यापकों को, इसी तरह प्रेरित करते रहें।

गणित एवं सांख्यिकी विभाग
डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय
फैजाबाद

डॉ० मिश्र

रवीन्द्र खरे

डॉ० शिवगोपाल जी विज्ञान लेखन के क्षेत्र में उस वट वृक्ष के समान हैं, जिसकी छाया तले न जाने कितने ख्यातिलब्ध विज्ञान कथाकार न केवल पल्लवित हुये बल्कि पुष्पित होकर विशाल वृक्ष बन गये। भारत के कण कण में आज भी शक्ति विद्यमान है जो ऐसे जाज्वल्यमान नक्षत्रों को जन्म देती चली आयी है जिनकी गौरवमयी गाथा न केवल उ० प्र० में वरन पूरे भारत देश में गुंजायमान हो रही है। ऐसी विभूतियों में डॉ० शिवगोपाल जी का नाम गणनीय है।

डॉ० शिवगोपाल जी मिश्र के सान्निध्य में रूबरू सर्वप्रथम दो वर्ष पूर्व राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की संचार परिषद् विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग नई दिल्ली के बैनर तले तथा लखनऊ की वायस संस्था द्वारा रायबरेली में विज्ञान लघु कथा एंव विज्ञान नाटक लेखन कार्यशाला में रिसोर्स पर्सन के रूप में चयनित होकर चार दिवसीय कार्यशाला में एक साथ चार दिन डॉ० मिश्र जी के साथ रहने का गौरव प्राप्त हुआ। पहले तो विश्वास ही नहीं हुआ कि 'विज्ञान' पत्रिका के लंबे समय तक संपादक के रूप में जुड़े रहे डॉ० मिश्र जी जिन्होंने पच्चीस वर्ष पूर्व मुझ जैसे नवागन्तुक लेखकों को उंगली पकड़ कर प्यार भरा सान्निध्य देकर विज्ञान कथाओं के ए.बी.सी.डी. से परिचित कराया हो..... उन्हीं मिश्र जी को जब मैंने अपना हिन्दी का ७६ लघु कथाओं का संग्रह 'तृप्ति' लघुकथा संग्रह दिखाया एवं मेरा विज्ञान लघुकथा तथा विज्ञान नाटक लेखन पर व्याख्यान/आख्यान सुन कार्यशला के दरम्यान मूक श्रोता की भांति पूरा व्याख्यान सुनते रहे, तदोपरान्त कंधे पर प्यार भरा हाथ रखकर बरबस बोले भाई रवीन्द्र जी इतनी छोटी छोटी विज्ञान लघुकथा कैसे लिख लेते हो ? हां इस बारे में मुझे विस्तार से बताना। जब मैंने उनका प्रश्न दोहराया कि आपको सर! मैं समझाऊं ? तो सहज होकर बोले अरे भाई! लेखन का उम्र से कोई लेना देना नहीं होता। जो मुझे नहीं मालूम तो मुझे अपने से उम्र में बहुत कम से भी जानकारी लेने में कोई संकोच या झिझक नहीं और बोले अगला प्रोग्राम जो मैं विज्ञान परिषद् के तले इलाहाबाद में विज्ञान कार्यशाला में विषय विशेषज्ञ के रूप में आमंत्रित करूंगा तो आइयेगा न ! तो मैंने बरबस ही कहा यह मेरे लिये एक स्वप्न के पूर्ण होने के समान होगा। तत्पश्चात् हमने अपने अपने अनुभवों को एक दूसरे से बांटा संजोया।

ठीक एक माह पश्चात् ही मुझे विज्ञान परिषद् इलाहाबाद एवं सेवा फाउण्डेशन इलाहाबाद द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित एवं राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् नई दिल्ली द्वारा समर्थित १० से १४ सितम्बर २००० तक लोक कला माध्यमों के लिये विज्ञान लेखन कार्यशाला में विषय विशेषज्ञ की हैसियत से नाटक तथा नौटंकी विधा पर विज्ञान लेखन हेतु आमंत्रण प्राप्त हुआ। इस आमंत्रण का जवाब प्रेषित कर पाता इसके पूर्व ही मुझे राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् नई दिल्ली द्वारा समर्थित तथा विज्ञान परिषद् इलाहाबाद द्वारा त्रि-मासिक विज्ञान लेखन प्रशिक्षण डिप्लोमा पाठ्यक्रम हेतु विज्ञान नाटक विधायें तथा लेखन पर दो व्याख्यान हेतु स्नेहामंत्रण प्राप्त कर डॉ० मिश्र का पूर्ण चेहरा

सामने आ गया। उन्होंने पत्र के माध्यम से स्वीकृति चाही थी....... मन बल्लियों उछलने लगा कि अब एक नहीं वरन् दो दो बार डॉ० मिश्र जी के सानिध्य में रहकर उनके गृह नगर इलाहाबाद जाकर विज्ञान परिषद् के अपने ही गेस्ट हाउस में रहकर कुछ सीख पाने की वर्षों की अभिलाषा पूर्ण हो जायेगी।

जितना ऊंचा नाम शोहरत पद प्रतिष्ठा के धनी डॉ० शिवगोपाल मिश्र धनी हैं उसके अनुरूप उनकी विज्ञान परिषद् की कल्पना और जबलपुर से रवाना हुआ तो इलाहाबाद जाकर सब कुछ बिलकुल उल्टा पाया कि इतना बड़ा विज्ञान का मूर्धन्य साहित्यकार क्या वास्तविक जिंदगी में इतना सहज हो सकता है विश्वास ही नहीं हो पा रहा था। इतना आत्मीय सम्मान, स्नेहिल ममत्व, अपनापन, जो कभी भी अपने घर पर भी आत्मीय जनों के बीच रहकर नहीं मिला वह पाकर धन्य हो गया।

डॉ० मिश्र जी के कृतित्व की बानगियों से विज्ञान परिषद् इलाहाबाद की लाइब्रेरी में संग्रहीत उनकी अनेक पुस्तकों से रूबरू होकर उनके साहित्य से परिचित हुआ तथा पूरे कार्यशाला के चार दिन वहीं विज्ञान परिषद् के अतिथि गृह में रहकर उनके सानिध्य सृजन पढ़कर तथा उनका दैनंदिन कार्यकलाप देखकर जानकर उनके व्यक्तित्व/कृतित्व को देखने/सुनने/समझने/परखने का अवसर मिला...... उनका सुबह सुबह विज्ञान परिषद् आना, पूरे दिन कार्यशाला में एक नवोदित जिज्ञासु कथा लेखक की भांति उपस्थित रहना, अपने अधीनस्थ कर्मियों को समय समय पर निर्देशित करना बड़ा ही अच्छा लगा।

डॉ० शिवगोपाल जी के कार्य पद्धति, श्रम व लगन देखकर लगा कि जो इंसान कार्य करना चाहे, तो उसके लिये उम्र की कोई सीमा नहीं होती। थकना तो जैसे उनकी शब्दकोष में है ही नहीं। चलना, चलना, बस सदा चलते रहना, काम करते रहना।

डॉ० मिश्र जी के साथ १४ सितम्बर २००० का वाकया और यहां खुलासा करना चाहूंगा। कार्यशाला के अंतिम दिन समापन सत्र प्रारंभ हो चुका था। मैंने विषय विशेषज्ञ की हैसियत से लोक कला माध्यमों के लिये विज्ञान लेखन विषयक आलेखों का ग्रेडेशन कर उन्हें मंचीय प्रस्तुतिकरण भी करा दिया था, तत्पश्चात् समापन सत्र हेतु अतिथि मंचासीन हो चुके थे। जैसे ही मिश्र जी को मेरे जबलपुर वापिस आने हेतु ट्रेन के आगमन की सूचना मिली तो मंच से उतरकर, विज्ञान परिषद् के हाल से बाहर आकर सड़क तक मारुति वैन तक स्वयं विदा करने आये जैसे कोई बहुत बड़ा साहित्यकार या वी.आई.पी. को विदा करने कोई जाता है तथा आंखों में प्यार व स्नेहमयी विदाई के क्षण को देखकर मन स्वतः व्यथित हो गया तथा आंखें नम हो गयीं। एक युगपुरुष, विज्ञान कथा प्रणेता, प्रख्यात कृषि रसायनज्ञ, मृदा विज्ञानी या विज्ञान कथाओं का पूरा का पूरा जीवंत इनसाइक्लोपीडिया के रूप में डॉ० शिवगोपाल जी मिश्र मुझ जैसे तुच्छ व्यक्ति को ससम्मान विदाई दे रहा है यह है एक बानगी उनके चट्टान सदृश्य व्यक्तित्व की।

उनके बारे में और अधिक कहना सूर्य को दीपक दिखाने सदृश्य है। मैं डॉ० शिवगोपाल जी मिश्र के स्वास्थ्य, कीर्तिमय यशस्वी जीवन की कामना करता हूं कि उनका नाम न केवल भारत में वरन् विश्व के संपूर्ण ब्रह्मांड में एक जाज्वल्यमान नक्षत्र के रूप में सदा सदा के लिये चमके दमके।

युनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया
तुलाराम चौक, जबलपुर

विज्ञानी लेखक एवं सम्पादक डॉ० मिश्र

डॉ० देवीदयाल पाण्डेय

स्वनामधन्य शिव अर्थात् महेश तथा गोपाल अर्थात् कृष्ण के गुणों का समन्वय रखने वाले परम आदरणीय गुरु जी को कोटिशः प्रणाम।

महाविज्ञानी, लेखक एवं सम्पादक डॉ० मिश्र जी का दर्शन करने का सौभाग्य मुझे वर्ष १९६१ में प्राप्त हुआ, जब मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विज्ञान विभाग के अन्तर्गत शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान में एम.एससी. कृषि रसायन विज्ञान में प्रवेश प्राप्त किया। संस्थान में प्रथम दिन सभी नवागन्तुक छात्र बड़े दबे सहमे थे, कारण गुरु जी के बारे में लोगों द्वारा ऐसा सुना गया था कि वे बड़े अनुशासनप्रिय तथा सख्त मिजाज के हैं। मैं तो गुरु जी को पहचानता भी नहीं था। हम दो तीन छात्र आपस में परिचय इत्यादि के उपरान्त संस्थान के बरामदे में खड़े थे, उसी समय सामान्य वेश धारण किये कंधे में झोला लटकाये गुरु जी का आगमन हुआ, तो मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि डॉ० मिश्र जी यही हैं। उनका सरल स्वभाव, सबसे साथ बातचीत करना, मुझे बड़ा अच्छा लगा।

शनैःशनैः समय व्यतीत होता गया, एम.एससी. प्रथम वर्ष में मैंने प्रथम स्थान प्राप्त किया तो गुरु जी का ध्यान मेरी तरफ खिंचा, क्योंकि अध्ययन, मेहनत को वे बहुत पसन्द करते थे। आगे मैंने एम.एससी. द्वितीय वर्ष में भी कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा गुरु जी के सानिध्य में शोध करने की इच्छा प्रकट की तो उन्होंने सहर्ष स्वीकृति प्रदान करते हुये मुझसे विषय चयन के बारे में पूछा। मैंने एम.एससी. के दौरान किये शोध पर आगे कार्य करने की इच्छा जाहिर की। शोध कार्य के दौरान संस्थान में चल रहे फील्ड कार्य का निरीक्षण गुरु जी स्वयं करते थे, यहां तक कि एक एक पौधे की ऊंचाई तक मापते थे। ऐसे में उनके शिष्यों द्वारा कार्य में तनिक भी त्रुटि नहीं रह पाती थी। मैं उनके द्वारा बताये गये गुर को अपने जीवन में सदैव अनुपालन करने का प्रयास करता रहता हूं।

मेरा शोध डॉ० मिश्र जी के विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण के उपरान्त चलता रहा, फिर भी वे नियमित रूप से जाड़ा, गर्मी, बरसात में भी संस्थान में आते एवं सभी शोधार्थियों के कार्यों का निरीक्षण करते थे। ऐसे में भला शोधार्थी उनके त्याग, उनकी लगन को देखते हुये कार्य के प्रति समर्पित क्यों नहीं होंगे ? संस्थान के अतिरिक्त डॉ० मिश्र विज्ञान परिषद् को भी अपना अमूल्य समय देते रहे हैं। मुझे याद है कि विज्ञान परिषद् में मैंने गुरु जी की प्रेरणा से बच्चों की तरह लेखन करना सीखा।

डॉ० मिश्र कभी भी किसी भी कार्य को तुच्छ नहीं समझते। मुझे आज भी अच्छी तरह स्मरण है कि विज्ञान परिषद् प्रयाग के अव्यवस्थित पुस्तकालय को वे शिष्यों के साथ स्वयं दिन भर व्यवस्थित करते थे। डॉ० मिश्र की सादगी के बारे में सभी को ज्ञात है।

शोध कार्य के अन्तिम चरण में गुरु जी कुछ अस्वस्थ हो गये थे, किन्तु उनकी कार्य करने की

प्रवृत्ति में मैंने तनिक भी गिरावट नहीं देखी। इस दौरान शोध कार्य की पांडुलिपि को अन्तिम रूप देने हेतु मुझे उनके निवास स्थान जाना पड़ता था, जहां मुझे उनमें एक अभिभावक एवं पिता का रूप देखने को मिला।

डॉ० मिश्र जी शैक्षिक परिवेश में शिक्षक के रूप में, सामाजिक परिवेश में समाजसेवी के रूप में, पारिवारिक परिवेश में मित्र के रूप में अपने को भलीभांति स्थापित करने में समर्थ हैं। मैं उनके सभी रूपों में दिये अमूल्य ज्ञान का आजीवन ऋणी रहूंगा।

डॉ० मिश्र के किये गये कार्य सर्वविदित हैं जिसके सम्मान में प्रदेश सरकार तथा भारत सरकार द्वारा उन्हें कई सम्मान/पुरस्कार दिये जा चुके हैं। किन्तु यहां यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि डॉ० मिश्र कभी भी पुरस्कार या सम्मान के लिये लालायित नहीं रहे। ऐसे निस्पृह, निःस्वार्थी, महाविज्ञानी की भला कौन कद्र नहीं करेगा ? आज हिन्दी में विज्ञान की लोकप्रियता साबित करने में डॉ० मिश्र का जो योगदान है वह भुलाया नहीं जा सकता।

लघु उद्योग, अनुभाग-दो
एनेक्सी भवन
उ०प्र० सचिवालय, लखनऊ

मेरे श्रद्धेय गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ0 अशोक तिवारी

परम पूज्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र का स्मरण होते ही मेरे मानस पटल पर एक उदात्त चरित्र, शील-स्वभाव, दयावान और क्षमा की मूर्ति परिलक्षित हो जाती है जिसकी ओर सहज ही लोग आकृष्ट होते हैं-

चारित्र्यं नरवृक्षस्य सुगन्धित कुसुमं शुभम्।
आकर्षणं तथैवान लोकानां रंजनं महत्।।

परम पूज्य डॉ० मिश्र का शिष्य बनने के पूर्व ही मैं उनकी विद्वता एवं व्यक्तित्व से परिचित था। डॉ० मिश्र का स्वभाव बहुआयामी है। सौभाग्यवश उच्च शिक्षा के लिये मुझे डॉ० मिश्र का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। विज्ञान परिषद् से प्रकाशित 'विज्ञान' पत्रिका के प्रत्येक अंक में डॉ० मिश्र के लेखों को पढ़ने का सौभाग्य मिला। डॉ० मिश्र बड़े ही साहित्यानुरागी और विज्ञान विषयों के बहुत अच्छे लेखक हैं। हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं पर उनका पूर्ण अधिकार है। डॉ० मिश्र जब बात करते हैं तो हमें ऐसा लगता है मानो हम किसी दूसरी दुनिया में पहुंच गये हों। साहित्य मनुष्य को किसी दूसरी दुनिया में ले जाता है इस बात का प्रत्यक्ष अनुभव पूज्य डॉ० मिश्र जी ने ही कराया।

प्रसिद्ध चिंतक और विचारक डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी विलक्षण प्रतिभा के धनी हैं। विज्ञान विषयों पर लिखी उनकी पुस्तकें और देश की विभिन्न मानक पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख छात्रों के लिये उपयोगी सिद्ध हुये हैं। डॉ० मिश्र जी की सरल आकृति के अनुरूप ही उनकी भाषा भी सरल है।

जिस प्रकार संतान के प्रारम्भिक जीवन पर माता की शिक्षा का अमिट प्रभाव होता है, उसी प्रकार शिष्य के भविष्य निर्माण में गुरु की शिक्षा का बहुत बड़ा हाथ रहता है। अपने शिष्य को वह जिस सांचे में ढालना चाहता है उसी में वह ढल जाता है। पूज्य डॉ० मिश्र एक ऐसे ही आदर्श गुरु हैं जिन्होंने अपने शिष्यों को ऐसी शिक्षा दी है कि उससे प्रेरणा ग्रहण कर वे आदर्श समाज का निर्माण कर सकें।

पूज्य डॉ० मिश्र अपने छात्रों को पिता का सा स्नेह देते हैं। उनकी सरल आकृति, मृदु व्यवहार, सादा जीवन व उच्च विचार व ज्ञान की अच्छी अच्छी बातों ने मुझे काफी प्रभावित किया है। डॉ० मिश्र ने पश्चिमी सभ्यता, विलासमय जीवन से दूर रहकर भारतीय ऋषियों की भांति सात्विक जीवन व्यतीत किया। जब भी मैं पूज्यनीय डॉ० मिश्र से मिलने गया, वे बड़े ही अपनेपन से मिले। क्रोध करने की तो बात ही क्या, तेज स्वर में भी बोलते डॉ० मिश्र को मैंने कभी नहीं देखा। मैंने अनुभव किया कि पूज्य डॉ० मिश्र में अत्यन्त कोमल व वत्सल पिता का ही नहीं, प्रत्युत माता का हृदय लहराता है। पूज्य डॉ० मिश्र ही की तेजस्विता और नियमनिष्ठा की भी बड़ी गहरी छाप मेरे हृदय पर पड़ी है। अत्यंत कड़ी मेहनत एवं लगन से काम करने की आदत आपके जीवन में प्रत्यक्ष देखने को मिली।

परम पूज्य डॉ० मिश्र मानव मात्र के प्रेमी व मानवता के सच्चे पुजारी हैं। गम्भीरता चरित्र का सबसे बड़ा गुण है तथा शिष्टाचार का आवश्यक अंग है, जो डॉ० मिश्र जी में स्पष्ट देखने को मिलती है। सादा जीवन और मुक्त हास यह है उनका व्यक्तित्व। कृत्रिमता उनके जीवन में कहीं नहीं है- न स्वभाव में, न व्यवहार में, न साहित्य में।

परम पूज्य डॉ० मिश्र एक आदर्श व्यक्ति हैं और आज मुझे इन शब्दों में उनके प्रति अपना आदर भाव प्रकट करते हुये बहुत हर्ष की अनुभूति हो रही है। ऐसे आदर्श गुरु को शत् शत् नमन्।

सहायक कृषि निदेशक
भूमि परीक्षण प्रयोगशाला (कल्चर)
आलमबाग राजकीय उद्यान परिसर, लखनऊ

बहुमुखी प्रतिभा के धनी : प्रो० शिवगोपाल मिश्र

बलराम यादव

परम पूज्य गुरुदेव डॉ० शिवगोपाल मिश्र जैसे ख्यातिप्राप्त मृदा वैज्ञानिक के व्यक्तित्व व कृतित्व के अनेक पहलू हैं। वे वैज्ञानिक शोध ग्रन्थों से लेकर आध्यात्मिक ग्रन्थों का अनुवाद, प्राचीन साहित्य ग्रन्थों का संकलन व संपादन, हिन्दी विज्ञान लेखन व कुशल सम्पादन का कार्य अपनी प्रकाण्ड विद्वता के पुरुषत्व से सम्पन्न करते रहे हैं। उनकी प्रतिभा की अजस्र निर्मल धारा विज्ञान व साहित्य की अनेक विधाओं को छूती हुई अनवरत आगे बढ़ रही है। ऐसे बहुमुखी प्रतिभा के धनी मृदा वैज्ञानिक ने जितनी ख्याति उच्चकोटि के वैज्ञानिक व साहित्यिक शोध ग्रंथों की प्रस्तुति से अर्जित की है उतनी ही तीव्र गति से हिन्दी विज्ञान लेखन के क्षेत्र में भी सारगर्भित निबन्ध प्रस्तुत किये हैं। उनका यह प्रयास आज सत्तर वर्ष की अवस्था में भी उसी जोश से जारी है, जैसे कोई अपने ही कर्म में लीन योगी हो।

इस महान योगी का प्रथम बार दर्शन करने का सौभाग्य उस समय प्राप्त हुआ जब मैं अग्रज डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय से अपनी परिस्थिति को बताते हुये परिषद् के प्रांगण में अपने साथ रखने का आग्रह किया।

मुझे अच्छी तरह याद है शाम के पांच बज रहे थे, विज्ञान परिषद् के सारे कार्य निपटा कर वे तेजी से परिषद् की सीढ़ियों से उतर रहे थे। चेहरे पर थकान का नामोनिशान नहीं था। ज्योंही घर जाने के लिये आगे बढ़े, मैंने भी थोड़ा आगे बढ़कर जल्दी से चरणस्पर्श किया। डॉ० साहब ने कहा, कहो पाण्डेय जी, इन्हीं से मिलवाना चाहते थे ? हां, तो तुम अपना नाम, क्या करते हो, आदि जल्दी से बता जाओ। मैंने अपना नाम व शिक्षा के विषय में बताया, तो डॉ० साहब ने कहा, कब से रहोगे ? हमने कहा जब से आप आज्ञा दें। तो तुरन्त माली से बोले, माली ! अब ये भी पीछे रहेंगे, इनका ख्याल रखना। इसके बाद डॉ० साहब आगे बढ़ गये। आज्ञा दे दी। मैं ऐसे परम उदार गुरुदेव का आजीवन आभारी रहूंगा।

विज्ञान परिषद् में आने से पूर्व जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में एम.ए. का अन्तिम वर्ष का छात्र था, और आये दिन विज्ञान परिषद् में आया करता था तभी से डॉ० साहब के व्यक्तित्व व कृतित्व के साथ उनके द्वारा की जा रही विज्ञान सेवा व मृदा वैज्ञानिक के रूप में किये कार्यों के विषय में सुनता आ रहा था। जितना सुनता उतना ही जानने की इच्छा मन में जाग्रत होती। समय-समय पर जब भी विज्ञान परिषद् आता तो कुछ न कुछ जरूर डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय से सुनता था। जिज्ञासा फिर भी बनी रहती।

विज्ञान परिषद् में रहते हुये विज्ञान परिषद् के सभागार में जब भी कोई व्याख्यान व संगोष्ठी होती तो वहीं उपस्थित हो जाता। विद्वानों से व्याख्यान सुनता और विज्ञान के प्रति रुचि जाग्रत हो जाती। ऐसी ही एक राष्ट्रीय स्तर की संगोष्ठी जब विज्ञान परिषद् के सभागार में ४-५ दिसम्बर १९९९ को दोदिवसीय वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग व जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित 'इक्कीसवीं सदी में जैव प्रौद्योगिकी के नये आयाम' विषय पर हुई तो उसमें

भाग लेने का अवसर मिला। इसी समय डॉ० साहब को नजदीक से देखने व उनकी विद्वता को समझने का अवसर मिला। मुझे याद आ रहा है कि एक बार २८ फरवरी को विज्ञान परिषद् के सभागार में 'विज्ञान दिवस' मनाया जा रहा था। इस अवसर पर मैं उपस्थित था, डॉ० साहब ने सभी युवाओं से कहा कि विज्ञान विषय पर कुछ बोलें, हम लोग सुनेंगे। अनेक युवा साथी बोले, अब हमारी बारी आने वाली थी। बड़े असमंजस की स्थिति में पड़ गया कि इतने बड़े वैज्ञानिक, विज्ञान लेखक, साहित्यकार, जिनकी अंग्रेजी के साथ साथ हिन्दी भाषा पर भी अटूट पकड़ है उनके सामने मैं क्या बोलूं। हाथ पांव कांपने लगे, परन्तु डॉ० साहब बीच-बीच में कहते बड़ा सुन्दर अवसर है ऐसा मौका बार बार इतने विद्वानों के बीच बोलने को नहीं मिलता, यह आज खुला मंच है, कुछ भी बोलो। फिर क्या था। साहस करके माइक के पास तक सावधानी से गया और जो भी विज्ञान के विषय में आता गया बोलता गया, परन्तु नजर उठाकर विद्वज्जनों की तरफ न देख सका। उधर देखा, जब तालियों की गड़गड़ाहट कानों तक सुनाई पड़ी।

एक बार भैया के साथ मुट्ठीगंज गया था जहां बाल विज्ञान लेखिका शकुन्तला सिरोठिया द्वारा डॉ० साहब को अभिषेकश्री सम्मान से सम्मानित किया जाना था। इस अवसर पर डॉ० नरेन्द्र सिंह गौर (मंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार) उपस्थित थे। इन्हीं के हाथों अभिषेकश्री सम्मान डॉ० साहब को दिया गया और मंत्री महोदय के मुख से भी गुरुदेव द्वारा की जा रही विज्ञान सेवा की गाथा सुनने का अवसर मिला।

अग्रज के सान्निध्य व प्यार में डॉ० साहब के द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में किये गये कार्यों का एक बिम्ब व चित्र मस्तिष्क में उभर कर आया और बार बार सोचता रहा कि ऐसे विराट पुरुष जो विज्ञान के अनेक विधाओं के ज्ञाता हैं उनकी शिष्यता न प्राप्त करना हमारा दुर्भाग्य है। अपने को स्वयं कोसता कि इण्टर तक विज्ञान का छात्र होते हुये भी बाद में परिस्थितिवश हमें उच्च शिक्षा के लिये साहित्य के क्षेत्र में उतरना पड़ा, जबकि पिता श्री की तीव्र इच्छा थी कि विज्ञान विषय में ही उच्च शिक्षा ग्रहण करूं। स्नातक, व परास्नातक की डिग्री हिन्दी विषय के साथ इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की। सोचता, काश ! पूर्ण शिक्षा विज्ञान विषय से ली होती, तो शायद ऐसे महान विद्वान का शिष्य होने का अवसर मिल जाता। परन्तु अब काफी देर हो चुकी थी, पश्चाताप करना ही शेष था। साहित्य विषय लेकर सिविल सेवा की तैयारी प्रारम्भ की।

सौभाग्य ने साथ दिया, जब समाचार में विज्ञापन पढ़ा कि राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार तथा विज्ञान परिषद् प्रयाग संयुक्त रूप से त्रैमासिक विज्ञान पत्रकारिता पाठ्यक्रम संचालित करने जा रहा है, जो विज्ञान परिषद् के प्रांगण में सम्पन्न होगा जिसका प्रशिक्षण-संयोजक डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय को बनाया गया था। इसके लिये न्यूनतम शैक्षिक योग्यता इण्टर विज्ञान रखी गयी थी। विज्ञापन पढ़कर हमारी खुशी का ठिकाना न रहा। त्रैमासिक विज्ञान पत्रकारिता कोर्स करने की लालसा मन में जाग उठी। प्रवेश के लिये फार्म लाया, उसे भरा और प्रवेश हो गया। तीन महीने अक्टूबर-दिसम्बर २००० तक चले इस विज्ञान पत्रकारिता पाठ्यक्रम का प्रशिक्षण डॉ० साहब ने स्वयं कठिन परिश्रम करके संचालित करवाया। साथ ही देश के ख्यातिप्राप्त विज्ञान लेखकों, विज्ञान पत्रकारों व विज्ञान पत्रिकाओं के सम्पादकों के व्याख्यान आयोजित हुये। डॉ० साहब की विद्वत्ता, उनके विज्ञान लेखन के कई दशकों के अनुभव सुनने का अवसर मिला। इसी प्रशिक्षण के दौरान डॉ० साहब का शिष्य बनने का गौरव प्राप्त हुआ।

गुरु जी ने प्रशिक्षण के बाद अलग अलग विषयों पर तुरन्त लेख लिखने को कहा। जब लेख चेक करते और मूल्यांकन अंक देते, साथ ही त्रुटियों पर टिप्पणी भी लिखते, वाक्य विन्यास जहां न बैठता वहां उसमें सुधार करते और जब लेख चेक करके वापस करते, तो बार बार सलाह देते और

पढ़ो......... पढ़ते रहो, शायद यही गुरुमंत्र है।

शिष्य के प्रति वात्सल्य पूरे प्रशिक्षण के दौरान झलकता रहा। हमेशा बड़े प्रेम व स्नेह से समझाते, बार बार सरल से सरल शब्दों में विषयवस्तु को समझने व लिखने की प्रेरणा देते। ऐसा लगता, मानो सारा ज्ञान आज ही उड़ेल देना चाहते हों। एक दिन की घटना याद आ रही है। ३-४ बजे अपरान्ह तक रोज क्लास चलता था। मैं ठीक तीन बजे क्लास में उपस्थित हो जाता था। एक दिन थकान के कारण दिन में सो गया। जब तीन बजकर दस मिनट तक क्लास में उपस्थित नहीं हुआ, तो गुरुदेव ने तुरंत चपरासी भेजा कि पीछे से बुला लाओ, चपरासी आया, आवाज दी ..... क्लास नहीं करना है ? डॉ० साहब बुला रहे हैं .... मैं जल्दी से उठा, मुंह धोया, कापी कलम लिया, कपड़ा पहनते हुये क्लास की तरफ बढ़ा। दरवाजे के पास गुरुदेव खड़े थे, एकाएक मुंह से निकला- सो गया था. .....। बोले- पता था। मैं मारे शर्म के पानी पानी हो गया। इसके बाद, कभी दिन में जब तक क्लास चलता रहा, नहीं सोया। यह शिष्य के प्रति गुरु का वात्सल्य नहीं तो क्या है ?

एक व्याख्याता के रूप में डॉ० साहब ने स्वयं विज्ञान पत्रकारिता से सम्बन्धित अनेक टापिकों पर स्वयं व्याख्यान दिये। वे अपने व्याख्यानों में विज्ञान लेखन कला की बारीकियों को बहुत संतुलित और सरल भाषा में बताते। ऐसा लगता कि विज्ञान के शब्द उनके अन्तर्मन से स्वतः प्रस्फुटित हो रहे हैं, जिस प्रकार से मधुमक्खियां नाना प्रकार के पुष्प रसों को एकत्र कर मधु का निर्माण करती हैं, उसी प्रकार विज्ञान पत्रकारिता के जटिल से जटिल विषयों को स्पष्ट शब्दों में लेखन शैली के विषय में चुन-चुन बारीकियों को समझाने की कोशिश करते ओर कहते- पढ़ो, और पढ़ो पढ़ने व लिखने से ही लेखन शैली में निखार आयेगा। स्वयं शब्दकोष पलटते रहो।

शायद इन्हीं सब दिशा निर्देशों का परिणाम था कि प्रायोगिक और सैद्धान्तिक दोनों में ही मैंने प्रथम श्रेणी प्राप्त की। साथ ही अच्छे लेखन के लिये हमें एक और साथी देवव्रत द्विवेदी को 'विज्ञान' मासिक पत्रिका का निःशुल्क एक वर्ष का सदस्य बनाते हुये एक वर्ष तक 'विज्ञान' के अंक देने की घोषणा की। प्रशिक्षण का संक्षिप्त परिचय विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री के पद से डॉ० शिवगोपाल मिश्र द्वारा दिया गया। एयर वाइस मार्शल श्री विश्वमोहन तिवारी की उपस्थिति में महामहोपाध्याय पं० गंगानाथ झा के पौत्र लेफ्टिनेंट कर्नल श्री देवकांत झा जी के कर कमलों द्वारा त्रैमासिक विज्ञान पत्रकारिता प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रमाण-पत्र विशिष्ट योग्यता के लिये दिलवाया गया। यह स्वर्णिम अवसर हमारे लिये अविस्मरणीय रहेगा।

अन्त में यही कहना चाहूंगा कि, प्रकृति ऐसे अनेक महान व्यक्तित्व गढ़े जो विज्ञानसेवी, हिन्दीप्रेमी, संस्कृतिपोषी, विद्वान, वैज्ञानिक हो, जिससे राष्ट्र और समृद्धशाली व कल्याणकारी बन सके। ऐसे गुरुदेव को शत्-शत् नमन् करते हुये उनकी दीर्घायु की कामना ईश्वर से करता हूं जिससे और मानव समाज समृद्ध होता रहे।

इस पथ का उद्देश्य नहीं है श्रान्त भवन में टिक जाना
किन्तु पहुंचना उस सीमा तक जिसके आगे राह नहीं है

-प्रसाद

भिटौरा, मनकापुर
गोण्डा (उ०प्र०)

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : एक बट-वृक्ष का चरित्र

डॉ० पृथ्वीनाथ पाण्डेय

कुछ ही वर्षों से मैं डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के सम्पर्क में आया हूँ। वैसे विज्ञान परिषद् और डॉ० मिश्र जी को वर्षों से जानता-समझता रहा हूँ। मेरा अपना संस्कार तमाम तमाम संस्कारों से बिल्कुल अलग हटकर है। डर लगता है कि किसी 'हैसियत' वाले व्यक्ति के पास आत्मीय भाव से पहुँचने पर भी निरपेक्ष रूप से जाने पर भी, वह सापेक्षता के सिद्धान्त वाली कसौटी पर कसने न लगें, बहीं पर मेरा इस व्यक्ति के प्रति मोह-भंग हो जाता है।

शुरू से हिन्दी विज्ञान-लेखन करता आ रहा हूँ। मेरी प्रकृति और प्रवृत्ति है कि किसी भी चुनौती से दो दो हाथ करने से नहीं चूकता। तब जाकर मेरी विज्ञान की ७५ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

समय लेकर सदाशयता की भावना के साथ डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के घर गया। तब मेरी स्थिति वही थी जैसी श्रीरामचन्द्र की सीता-स्वयंवर में धनुष उठाते समय थी- न हर्ष, न विषाद। मैं पूर्ण रूप से संतुलित था, क्योंकि कहीं कोई अपेक्षा न थी।

सहजता से दरवाजे खुले। सहजता से डॉ० मिश्र जी मिले- बहुत देर तक बातें हुईं। अत्यन्त शील, विनम्र और आत्मीय परिवेश पाया। तब मैं मात्र ३७ पुस्तकें लेकर गया था। उन्हें देखकर, कुछ पन्ने पलटकर डॉ० मिश्र जी ने हिन्दी में मेरे विज्ञान लेखन की योग्यता इन शब्दों में रेखांकित की, "अब तक आप कहाँ थे भाई ! नाम तो बहुत सुना था ?" ये सारे शब्द संवादप्रियता और सम्यक् दृष्टिबोध को चरमोत्कर्ष पर ले जाते हैं। और भी कई वैज्ञानिक बिन्दुओं पर मेरी वार्ता हुई। विज्ञान परिषद के पुस्तकालय के लिए उन्होंने मेरी कई पुस्तकें लीं। लगा, व्यक्ति का पद ही नहीं, उसका व्यक्तित्व महान है और मुखर भी। एक कुशल और निष्णात नेतृत्व करने की क्षमता है इनमें।

मेरे निःस्पृह भाव और विचार डॉ० मिश्र जी ने समझे। मैं मुखर होकर 'विज्ञान परिषद्' से जुड़ा। परिषद् का कर्मचारी कार्यक्रम की सूचना देने घर पर यथावसर आता रहा। तब मुझे लगा कि कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में 'विज्ञान परिषद्' को मेरी आवश्यकता है। चूँकि मेरे लेखन के और भी आयाम हैं, जिनके कारण विज्ञान परिषद् तक मेरे कदम पहुँचे हैं, इसलिए उन आयामों की उपेक्षा नहीं कर सका हूँ और न करूँगा। इस कारण मुझे 'विज्ञान परिषद्' से जिस रूप में सम्बद्ध होना चाहिए, उस रूप में नहीं हो पाया हूँ।

डॉ० मिश्र जी के व्यक्तित्व का सर्वाधिक सशक्त पक्ष उनकी सदाशयता और किसी की प्रतिभा के विकास के लिये यथासम्भव ऊर्जा देना रहा है। कुछ लोग जब कुछ भी नहीं थे तब उन्हें डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी की कृपा छाया मिली, उनका वरदहस्त मिला और वे एक चमत्कार के रूप में 'बहुत कुछ' हो गए।

एक लम्बे समय तक 'विज्ञान परिषद्' ने दारिद्य जीवन जिया है। आज डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के सतत् अध्यवसाय की परिणति परिषद् की समृद्धि और सम्पन्नता है। देश के सुदूर अंचलों के विभिन्न संकायों की वैज्ञानिक विभूतियां इस सभागार में समादृत हुई हैं। विज्ञान के अनेक विषयों- भाषा, शिल्पगत संस्कार, तकनीकी शब्दावलियां, पत्रकारिता (प्रिण्ट, इलेक्ट्रानिक) इत्यादि कार्यशालाओं का सफल आयोजन हुआ है। स्थानीय और बाहर के पत्रकारों, साहित्यकारों, भाषावैज्ञानिकों तथा शिक्षाविदों के ज्ञान और अनुभव का लाभ लिया गया है।

निःसन्देह हिन्दी में विज्ञान लेखन को उन्नत बनाने में डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी का श्लाघनीय योगदान है। पहले विज्ञान परिषद् का जो रूप था, उसकी कार्यप्रणाली थी, उसमें आज काफी अन्तर आ चुका है। आज हमें विज्ञान परिषद् का जो परिष्कृत और परिवर्द्धित संस्करण देखने-समझने को मिल रहा है, उसमें सर्वाधिक योगदान डॉ० मिश्र जी का है। आज विज्ञान परिषद् के पास अपनी प्रौद्योगिकी है, अपना विज्ञान संज्ञान है।

अनेक विद्यार्थियों को आज भी डॉ० मिश्र जी का सानिध्य प्राप्त है, किन्तु संवाद स्तर पर विद्यार्थियों से भी दोस्ताना अन्दाज में व्यवहार करते हैं। किससे किस प्रकार व्यवहार कर वांछित काम करा लिया जाए, यह कला डॉ० मिश्र जी में है। हाँ, शोषण की मनोवृत्ति उनमें दूर तक नहीं है, जिसे अपने कार्यों में, परिषद् के कार्यों में लगाते हैं, उससे अधिक उसका किसी न किसी रूप में 'सकारात्मक भुगतान' कर देते हैं और वह भी गुणात्मक रूप में।

विज्ञान परिषद् प्रयाग के सन्दर्भ में एक 'वट वृक्ष' का चरित्र आत्मसात् कर निदर्शन प्रस्तुत किया है। हिन्दी में विज्ञान के क्षेत्र में लेखन कार्य को प्रोत्साहन देने में अपनी जीवटता का सम्यक् परिचय दिया है। ऐसे विज्ञान पुरुष को हमारा अभिनन्दन।

पत्रकार, सम्पादक 'विचार-विविधा'
११०/२, नई बस्ती, अलोपीबाग
इलाहाबाद-२११००६

प्रेरणा के स्रोत

डॉ० रवि शंकर द्विवेदी

हम जिस वातावरण में जन्म लेते हैं, पलते हैं और बड़े होते हैं तथा अध्ययन करते हैं हमारे जीवन में उसकी छाप जीवनपर्यन्त रहती है। जिस प्रकार घर के वातावरण में माता-पिता का मार्गदर्शक के रूप में स्थान है उससे कहीं बढ़ कर शिक्षा के क्षेत्र में गुरु के मार्गदर्शन का है। साथ ही हमारे दैनिक और आध्यात्मिक जीवन में मार्गदर्शन का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। सही मार्गदर्शन और उसका अनुसरण करने से ही हमें अपने जीवन के लक्ष्यों की प्राप्ति संभव है। इसी कारण मार्गदर्शक की तुलना हमारे धार्मिक ग्रंथों में ईश्वर से इस प्रकार की गई है :

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

शिक्षक यदि कक्षा व प्रयोगशाला तक अपने को सीमित न कर अपने जीवन के आदर्शों द्वारा शिष्यों की सूझ-बूझ, नैतिक और आध्यात्मिक भावों में परिवर्तन ला सके तो यह बहुत ही अनूठा योगदान होगा। एक आदर्श मार्गदर्शक का यही विशेष गुण है। मेरे जीवन में भी श्रद्धेय प्रो० डॉ० शिवगोपाल मिश्र का स्थान ऐसे ही एक आदर्श मार्गदर्शक के रूप में रहा। इलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट, नैनी में कृषि में स्नातक की उपाधि १९७१ में प्राप्त करने के पश्चात् कृषि रसायन में स्नातकोत्तर उपाधि हेतु प्रयाग विश्वविद्यालय में जुलाई, १९७१ में मैंने प्रवेश लिया। उसी समय मैं 'गुरु जी' (श्रद्धेय मिश्र जी) के सम्पर्क में आया। एक शिक्षक के रूप में अपने अध्यापन शैली से आपने मुझे हर प्रकार प्रभावित किया कि आपके पढ़ाए गए विषयों- मृदा विज्ञान और कृषि रसायन में जो कुछ भी शिक्षा उन्होंने दी उसकी छाप अभी मुझ पर है। 'गुरु जी' की समय की पाबन्दी, सादगी और उच्च्व विचार ने मुझे बहुत ही प्रभावित किया।

सन् १९७३ में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के बाद मैं और मेरे ज्येष्ठ भ्राता डॉ० रमाशंकर द्विवेदी 'गुरु जी' के साथ डी.फिल. उपाधि हेतु शोध कार्य करने लगे। उन्होनें हमें (द्विवेदी बन्धुओं) बहुत ही सामयिक विषय 'सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की अनुक्रिया' पर कार्य करने की सलाह दी। जुड़वे भाई होने के कारण 'गुरु जी' ने हमारे शोध के लिए (सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की अनुक्रिया) एक ही रखा। वस्तुतः हम दोनों के अध्ययन के पहलू अलग-अलग रहे।

शोध कार्य के लिए समुचित सुविधा उपलब्ध करवाने के साथ 'गुरु जी' ने आवश्यक मार्ग निर्देशन भी किया। प्रस्तावित शोध विषय की योजना बनाने से लेकर उसके एक-एक पहलू का

कार्यान्वयन और मानीटरन उन्होंने किया। यदि किसी समय कार्य योजना में संशोधन की आवश्यकता अनुभव की गई तो उसका भी उन्होंने काफी कुशलता से मार्गदर्शन किया। दैनंदिन कार्यों के साथ 'गुरु जी' ने अपने व्यावसायिक जीवन का जो उदाहरण हम लोगों के सामने रखा वह आज भी हमारे लिए प्रेरणा का महत्वपूर्ण स्रोत है। पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वहन के साथ-साथ गुरु जी हिन्दी व अंग्रेजी में लेख व शोधपत्र लिखा करते थे। उस समय गुरु जी अमेरिका से प्रकाशित होने वाले केमिकल ऐबस्ट्रैक्ट के ऐबस्ट्रैक्टर थे और शोधपत्रों के सार तैयार करते थे। हिन्दी ग्रंथ अकादमी, उत्तर प्रदेश द्वारा चलाई गई तत्कालीन योजना के अन्तर्गत हिन्दी में ज्ञान की मूल पुस्तकों को लिखने व हिन्दी में ऐसी पुस्तकों का अनुवाद करने को प्रोत्साहित किया जा रहा था। गुरु जी ने इस क्षेत्र में भी बहुत सी हिन्दी में मूल पुस्तकें लिख कर और अन्य मूल अंग्रेजी पुस्तकों को अनूदित कर महत्वपूर्ण योगदान दिया।

निरंतर कार्यरत रहने, हंसमुख व शांत स्वभाव तथा शिष्यों को उचित मार्गदर्शन व शोध कार्य हेतु समुचित सुविधाएं प्राप्त करने जैसी गतिविधियां मेरी प्रेरणा-स्रोत रही हैं। शोधपत्र व लेख लिखने की जो थोड़ी बहुत क्षमता मुझमें है वह पूज्यनीय 'गुरु जी' की ही देन है। मुझे उनके शिष्य होने का गर्व है।

विभागाध्यक्ष, भूमि निम्नीकरण
नेशनल रिमोट सेंसिंग एजेन्सी
(अन्तरिक्ष विभाग, भारत सरकार)
बालानगर, हैदराबाद-५०००३७

सदगुरु की महिमा अनत

देवव्रत द्विवेदी

ॐ अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानान्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मैः श्री गुरवे नमः।।

यह मेरा परम सौभाग्य है कि जिन महान गुरु के मार्ग निर्देशन में आज से १८ वर्ष पूर्व मेरे पिता डॉ० प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल' ने अपना डी.फिल. शोध कार्य सम्पन्न किया था, उन्हीं स्वनाम धन्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के सानिध्य में और मार्गदर्शन में मुझे भी विज्ञान परिषद् प्रयाग की सेवा करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। पिछले तीन वर्षों से विज्ञान परिषद् के तत्वावधान में सम्पन्न हुई तथा वर्तमान में चल रही विभिन्न परियोजनाओं के अंतर्गत सहायक के रूप में कार्य करते हुए मैं निरंतर डॉ० मिश्र के संपर्क में रहा हूं। इस अवधि में विज्ञान परिषद् प्रयाग के प्रधानमंत्री तथा विभिन्न परियोजनाओं के प्रधान समन्वयक के रूप में डॉ० मिश्र जी का जो मार्गदर्शन, प्रेरणा, स्नेह और शिक्षाएं मुझे प्राप्त हुई हैं और उनके सानिध्य में मैं जो कुछ भी सीख सका हूं वह मेरे जीवन की अमूल्य निधि है।

डॉ० मिश्र जी के बारे में मैं अपने पिता जी से अक्सर ही सुना करता था किन्तु उनके निकट संपर्क में आने का अवसर मुझे १९९९ में मिला जब मैंने उनके निर्देशन में विज्ञान परिषद् के तत्वावधान में चल रही एक वर्षीय परियोजना 'हिन्दी में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की लोकप्रिय पुस्तकों की ससंदर्भ निदेशिका' में सहायक के रूप में कार्य आरंभ किया। तब से लेकर आज तक विज्ञान परिषद् द्वारा संपन्न की गई सभी परियोजनाओं में मुझे कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस क्रम में मुझे डॉ० मिश्र के महान व्यक्तित्व को निकट से देखने तथा उनसे बहुत कुछ सीखने का भी लाभ मिला है।

एक परियोजना समन्वयक तथा विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री के रूप में डॉ० मिश्र अपने जीवन के आठवें दशक में भी जिस ऊर्जा, गतिशीलता और निष्ठा के साथ कार्य करते हैं वह हम जैसे युवकों के लिए एक प्रतिमान है। वर्षपर्यन्त प्रत्येक कार्य दिवस को दोपहर का भोजन कर वे १ बजे घर से विज्ञान परिषद् के लिए निकल पड़ते हैं तथा सायंकाल साढ़े पांच बजे तक तथा गरमियों में साढ़े छः बजे तक निरंतर परिषद् के कार्य पूरे करते हैं। इसी बीच वे मिलने आने वालों से भी बात करते हैं तथा समसामयिक विषयों पर भी चर्चा करते हैं। विज्ञान परिषद् के कार्यालय में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति से उसी सहजता से मिलते हैं जो उनके प्रत्येक क्रियाकलाप में दिखाई पड़ती है। किसी भी प्रकार का आडम्बर उन्हें पसंद नहीं है।

डॉ० मिश्र जी ने जिस किसी परियोजना को अपने हाथ में लिया उसका पूरा स्वरूप उनके

मस्तिष्क में कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व ही तैयार रहता है। उसी के अनुसार चरणबद्ध कार्यक्रम बनाकर वे इन परियोजनाओं को सफलतापूर्वक पूरा करते आ रहे हैं। मैंने अब तक उनके सानिध्य में जिन अन्य परियोजनाओं में कार्य किया है वे इस प्रकार हैं :

१. व्यावहारिक विज्ञान परिभाषा कोश (विज्ञान प्रसार नई दिल्ली द्वारा समर्थित) १९९९

२. जैव प्रौद्योगिकी लोकप्रिय व्याख्यानमाला २०००-२००१

३. विज्ञान पत्रकारिता प्रशिक्षण पाठ्यक्रम २०००

४. जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश (२००१ से अब तक)

इसके अतिरिक्त विज्ञान परिषद् द्वारा इन तीन वर्षों में अनेक कार्यशालाएं भी आयोजित की गईं जिनके संयोजक के रूप में डॉ० मिश्र ने कुशल व्यवस्थापक की भूमिका निभाई है। ये कार्यशालाएं और संगोष्ठियां इस प्रकार हैं :

१. इक्कीसवीं सदी मे जैव प्रौद्योगिकी के नए आयाम-१९९९

२. लोक कला माध्यमों के लिए विज्ञान लेखन-२०००

३. इंजीनियरी शब्दावली कार्यशाला-२०००

४. इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियां और संभावनाएं २००१

५. इक्कीसवीं सदी में कृषि विज्ञान के नए आयाम २००२

इन कार्यशालाओं के आयोजनों के दौरान मुझे डॉ० मिश्र के व्यक्तित्व के जिस महत्वपूर्ण आयाम का अनुभव हुआ वह है उनकी अतिथि सत्कार की भावना। डॉ० मिश्र जी का यह प्रयास रहता है कि वे बाहर से आने वाले सभी प्रतिभागियों को स्टेशन पर लेने स्वयं जाएं। उनके ठहरने, खाने पीने तथा यातायात की सारी व्यवस्था वे स्वयं निर्धारित करते हैं तथा हम सभी कार्यकर्ताओं को यथायोग्य कार्य आबंटित करते हैं जिससे कि आयोजन में किसी प्रकार की त्रुटि न रह जाए। इस दौरान कभी कभी उन्हें लगातार १२ से १५ घंटों तक कार्य करना पड़ता है किन्तु वे अथक रूप से आयोजन की समाप्ति तक पूरी तन्मयता से कार्य करते रहते हैं।

मुझे डॉ० मिश्र के साथ अनेक बार यात्राएं करने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ है। इन यात्राओं में डॉ० मिश्र जी अपने संस्मरणों को सुनाकर यात्रा की थकान व बोझिलता समाप्त कर देते हैं। यह डॉ० मिश्र का एक और मानवीय पक्ष है कि वे अपने सहयात्री की छोटी से छोटी आवश्यकता की पूर्ति के लिए चिंतित रहते हैं। किंतु यात्रा के दौरान वे यात्रा के उद्देश्य की पूर्ति को सर्वाधिक महत्व देते हैं तथा कम से कम समय में अधिक से अधिक कार्यों को पूरा कर लेते हैं। इस संबंध में मैं एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूंगा। जुलाई २००१ में विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली द्वारा डॉ० मिश्र को 'हिन्दी विज्ञान लेखन के सौ वर्ष' पुस्तक की अंतिम प्रूफ रीडिंग हेतु बुलाया गया। पुस्तक शीघ्र प्रकाशित होनी थी इसलिए डॉ० मिश्र ने चौबीस घंटों के भीतर ही चार सौ से अधिक पृष्ठों की प्रूफ रीडिंग पूरी कर डाली।

डॉ० मिश्र जी विज्ञान परिषद् की गतिविधियों तथा इसके उत्थान के प्रति सदैव प्रयासरत रहते हैं। परिषद् को एक राष्ट्रीय स्तर की संस्था के रूप में स्थापित करना और इसकी गतिविधियों को बहुआयामी बनाना उनके प्रमुख लक्ष्य हैं जिनकी पूर्ति के लिए वे पूरे मनोयोग से लगे रहते हैं। वे विज्ञान परिषद् आने वाले प्रत्येक व्यक्ति से विज्ञान परिषद् के लिए सहयोग करने का आग्रह अवश्य

करते हैं।

डॉ० मिश्र जी की मेरे ऊपर विशेष कृपा रही है तथा उन्हीं की छांव में बैठ कर मैंने विज्ञान लेखन तथा पत्रकारिता के प्रारंभिक पाठ पढ़े हैं। मेरे लिए यह एक सौभाग्य की बात है कि 'विज्ञान पत्रकारिता के मूल सिद्धान्त' पुस्तक के सहायक संपादकों में उन्होंने मुझे भी शामिल किया। मैं इसे उनकी एक अहैतुकी कृपा मानता हूं और इस हेतु उनके प्रति कृतज्ञ हूं।

डॉ० मिश्र जी जन्म से ही नहीं अपितु कर्म से भी सच्चे अर्थों में ब्राह्मण हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार-

शमोदमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेवच।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्मस्वभावजम्।।

डॉ० मिश्र जी के व्यक्तित्व में ये सभी गुण स्वाभाविक रूप से परिलक्षित होते हैं। यदि उनके सानिध्य में रहते हुए उनके सद्‌गुणों का लेशमात्र भी आत्मसात् करने में मैं सफल हुआ तो स्वयं को धन्य समझूंगा।

इन शब्दों के साथ मैं डॉ० मिश्र के दीर्घ एवं सक्रिय जीवन की कामना करता हूं।

४३६-ए, वासुकी खुर्द
दारागंज, इलाहाबाद-२११००६

विज्ञान सेवी, कर्मयोगी, युग मनीषी श्रद्धेय डॉ० मिश्र

प्रमोद कुमार मिश्र

मेरे लिए यह सुयोग उल्लेखनीय हे कि डॉ० साहब के प्रिय शिष्य डॉ० उमाशंकर मिश्र एवं डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय जी के सहयोग से डॉ० साहब से मुलाकात हुई। आप दोनों लोग अपने-अपने हिसाब से समय समय पर डॉ० साहब की विशेषताओं की चर्चा करते थे। तब मैं कभी कभी सोचता था कि इतनी सारी विशेषताएं एक ही व्यक्ति में कैसे हो सकती हैं ?

लेकिन जब डॉ० साहब ने डॉ० पाण्डेय जी के कहने पर हमें अपने सानिध्य में रहने की अनुमति प्रदान की और हमें पारिभाषिक शब्दावली का कार्य सौंपा तो मैं इस कार्य के प्रति उत्साहित हुआ।

इसके बाद आपके निर्देशन में जो कार्य करते समय हमको जो महसूस हुआ वह सुने गए वर्णनों से भी बढ़कर निकला। कभी-कभी अकेले में मैं यह सोचता रहा कि इस अवस्था में भी इतनी कर्मठता और कर्तव्यपरायणता कैसे है ? तो हमें अपने आप से जो उत्तर मिलता है कि यह दृढ़ संकल्प शक्ति, आत्मविश्वास और जिज्ञासु होने का परिणाम है। डॉ० साहब के कार्य को देखकर लोगों के पैरों के नीचे से जमीन खिसक जाती है। इससे ऐसा लगता है कि ईश्वर जब अनुकम्पा करते हैं तो अपनी दिव्य ज्योति ऐसे ही महापुरुषों में उतार देते हैं और यह ज्योति मानव देह को अपने रचनात्मक कार्यों से लोगों को नई दिशा प्रदान करती है। जिस पथ पर मैंने आपके शिष्यों को चलते हुए देखा है उससे अत्यन्त हर्ष होता है। आपके शिष्य आपके दिए ज्ञान को अपनी लेखनी द्वारा देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं और गोष्ठियों में सराहनीय ढंग से प्रस्तुत कर रहे हैं।

अधिकतर लोग अपने लिए ही जीते हैं अपने बोझ से ही लदे होते हैं उन्हें अपने अलावा और कुछ सूझ नहीं पड़ता। किन्तु कुछ ऐसे भी पैदा होते हैं जिन्हें समाज और देश दिखाई पड़ता है। वे अपने को समर्पित कर देते हैं। डॉ० साहब को मैं इसी कोटि के पुरुषों में पाता हूं।

डॉ० साहब के जीवन की सबसे बड़ी विशेषता घिसी पिटी लीक पर चलना नहीं, नई लीक या परिपाटी का सृजन या नए जीवन दर्शन का निर्माण है। कवीन्द्र रवीन्द्र का यह कथन "जोदि तोमार डाके केऊ न एशे, ऐकला चलो रे" आपके सम्बन्ध में पूर्णतः सही उतरता है। यदि आपके दृष्टिकोण के साथ अन्य व्यक्ति सहमत नहीं है तो एकाकी रहकर ही कार्य करना चाहते हैं और करते भी हैं। आपकी कर्मठता, योग्यता, सादगी, सजगता एवं लौह लेखनी की गहनता लोगों को प्रभावित किए बिना नहीं छोड़ती है। रसायन शास्त्र के ज्ञाता आप हैं ही, किन्तु अन्य विविध क्षेत्रों जैसे- इतिहास, धर्मदर्शन, साहित्य आदि के अध्ययन, मनन, चिंतन में भी सक्रिय रूप से गतिशील हैं।

डॉ० साहब की प्रेरणा एवं रचनात्मक टिप्पणियों से ही मेरा पहला शोधपत्र प्रकाशित हुआ।

पारिभाषिक शब्दावली में कार्य करते समय हमसे गल्तियों की पुनरावृत्ति होने पर कहते, मिश्र जी ! फिर से प्रयास कीजिए। आप राष्ट्रीय गोष्ठियों में युवाओं को पत्र-वाचन में प्रोत्साहित करते हैं। साथ-साथ प्रश्नों की बौछारों के समय वाचक के उत्तर स्पष्ट न कर पाने पर बड़ी सजगता एवं सहजता से प्रश्नों का निदान सुझाते हैं जिससे युवा वाचकों को काफी राहत एवं सम्बल मिलता है। चित्रकूट यात्रा में आपके साथ जिस अनुभव ने मुझे विशेष रूप से प्रभावित किया वह यह है कि वाहन में कुछ खराबी २०-२५ मिनटों के लिए आ गई थी तो उस समय आप पढ़ने के लिए माता जी से किताब मांगने लगे। ऐसा देख कर हमें आपके पढ़ने के प्रति सजगता और एक भी मिनट का समय नष्ट न होने देने की मौन प्रेरणा मिली। आपकी ऐसी ही बहुत सी कार्य पद्धतियों से युवाओं को प्रेरणा मिल रही है।

आप अपने गुणों से ही सभी सजग युवावर्ग को विज्ञान लेखन में स्वाभाविक एवं मौलिक चिन्तन के द्वारा सूचना क्रान्ति के इस ऐतिहासिक मोड़ पर गुणात्मक परिवर्तन लाने के लिए कृतसंकल्प हैं और सक्षम भी हैं। आपका पथ प्रदर्शन सराहनीय ही नहीं अपितु चिरस्मरणीय रहेगा। डॉ० साहब व्यकित नहीं संस्था हैं, चलते फिरते विश्वकोश हैं। मैं स्वावलम्बन के युगद्रष्टा, भारतीय चिन्तन और हिमालयी संकल्पबद्धता के सशक्त समर्थ हस्ताक्षर, प्रबुद्ध वैज्ञानिक, राष्ट्रभाषी सोच के धनी, सरस्वती के वरद पुत्र श्रद्धेय डॉ० साहब के मंगलमय दीर्घ जीवन की कामना करता हूं और स्वाभाविक रूप से डॉ० साहब के चरणों में नतमस्तक हूं।

ग्राम- केशवपुर, पो०- केदारनगर
जिला- अम्बेडकर नगर (उ० प्र०)

अमृत महोत्सवी : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० श्रीधर मिश्र

यह जानकर हर्ष हुआ कि श्रद्धेय डॉ० शिवगोपाल मिश्र अपने कर्मठ, यशस्वी जीवन के सात दशक पूर्ण कर रहे हैं। वस्तुतः डॉ० मिश्र सभी क्षेत्रों में हीरा, हीरक जयंती के व्यक्तित्व ही नहीं, बल्कि अमृत महोत्सवी व्यक्तित्व हैं। इनके अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन एक शुभ और महत्वपूर्ण कार्य है।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र से मेरा संबंध पचास वर्षों का है जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में छात्र था। डॉ० मिश्र महाप्राण निराला, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, परमपूज्य गुरु डॉ० उदय नारायण तिवारी आदि के बड़े प्रिय थे। उसी काल में गुरुवर डॉ० तिवारी जी की द्वितीय विदुषी पुत्री डॉ० रामकुमारी तिवारी, एम.ए., पीएच.डी., डी.लिट. (सम्प्रति मिश्र) से इनका विवाह हुआ। डॉ० रामकुमारी और मैं एम.ए. हिन्दी में सहपाठी थे। तभी से मैं जीवन, विज्ञान, साहित्य सभी क्षेत्रों में डॉ० मिश्र को पूर्ण रूप से 'शिव' गोपाल मिश्र के रूप में देख रहा हूं।

आपका व्यक्तित्व 'शिव' तत्व से पूर्ण है तो जीवन 'गोपाल' के समान, सरल, मनोहर रहा है तथा उसमें मुरली सुदर्शन चक्र गीता तत्व का प्राधान्य रहा है एवं 'मिश्र' अर्थात् मिलाने वाला, समन्वयकारी, रासायनिक आदि तत्वों का प्रतीक रहा है। इसीलिए मैं मानता हूं कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र केवल हीरा, हीरक ही नहीं बल्कि अमृत महोत्सवी व्यक्तित्व हैं। अतः सच्चे अर्थों में अभिनंदनीय व्यक्तित्व हैं। इससे अभिनंदन समिति के सदस्यों का गौरव बढ़ा है।

प्रगति के पथिक : त्रिवेणी की धारा

डॉ० मिश्र प्रगति-पथिक हैं। इनका जीवन विज्ञान, शोध, साहित्य-साधना एवं सांस्कृतिक मूल्यों का सम्मेलन है, संगम है, जो त्रिवेणी की धारा के समान इनके जीवन, कार्य, व्यक्तित्व में प्रवाहित हो रहा है। डॉ० मिश्र इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन शास्त्र विभाग में पहले प्राध्यापक, फिर रीडर और एक दिन प्रोफेसर हुए। इन्होंने विभाग की गरिमा को परिवर्द्धित किया, शोध निर्देशक के रूप में एक मानदण्ड स्थापित कया। मेरे छोटे भाई पद्माकर पाण्डेय ने इनके निर्देशन में डी.फिल. की उपाधि प्राप्त की। वे इनकी शोध निर्देश पद्धति की भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं। सम्प्रति डॉ० पद्माकर पाण्डेय राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक, लखनऊ में उपमहाप्रबंधक (तकनीकी) हैं।

डॉ० मिश्र को प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० एन.आर. धर का विशेष स्नेह और निर्देशन प्राप्त हुआ। आपने डॉ० धर के निर्देशन में ही 'क्षारीय तथा अम्लीय मिट्टियों का निर्माण' विषय पर सन् १९५५ में डी.फिल. की उपाधि प्राप्त की। यह अपने आप में एक गौरव का विषय है। भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के वैज्ञानिक शोध संस्थानों में शीलाधर मृदा शोध संस्थान का अपना स्थान है। सन् १९८६ में डॉ० धर अपने योग्य ज्येष्ठतम् शिष्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र को अपने शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान का कार्यभार संभालने के लिए आमंत्रित किया। यह सौभाग्य शायद ही किसी वैज्ञानिक प्रोफेसर को प्राप्त

हुआ हो। इलाहाबाद विश्वविद्यालय की ओर से शीलाधर मृत्तिका विज्ञान संस्थान के निदेशक रूप में डॉ० शिवगोपाल मिश्र की नियुक्ति हुई।

जिस संस्थान के निदेशक डॉ० एन.आर. धर हों, उसके निदेशक रूप में डॉ० मिश्र का होना विज्ञान शोध संस्थान के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इनकी गणना अब विश्व के वृहत वैज्ञानिकों में होने लगी। ऐसे तो सन् १९९१ में डॉ० मिश्र ने शीलाधर संस्थान के निदेशक पद से अवकाश ग्रहण किया किन्तु आज भी आप डॉ० धर की वैज्ञानिक शोध परम्परा को विकसित करने में लगे हुए हैं। इनसे मुझे अभी बहुत आशा है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र में एक युवक की शक्ति, उत्साह, तत्परता, साठा तब पाठा की प्रौढ़ता, हीरक ही नहीं, बल्कि अमृत महोत्सवी व्यक्तित्व के शुभ, प्रभावशाली तत्व हैं। इनकी वैज्ञानिक उपलब्धियों से महाप्राण निराला, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, गुरुवर डॉ० उदयनारायण तिवारी आदि विद्वान बड़े प्रसन्न थे।

हिन्दी साधना

विज्ञान साधना के क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि डॉ० शिवगोपाल मिश्र को हिन्दी साधना के क्षेत्र में भी सफलता मिली। डॉ० मिश्र फतेहपुर के एक छोटे गांव के रहने वाले हैं। वस्तुतः जिस क्षेत्र में भी डॉ० मिश्र ने काम किया, वहाँ उनकी फतह हुई, वे विजयी हुए। उस क्षेत्र में उनकी पताका फहराने लगी।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने विज्ञान शोधकर्ता होते हुए, हिन्दी में प्रथम बार कवि कुतुबन कृत 'मृगावती' और मंझनकृत 'मधुमालती' का संपादन किया। डॉ० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या तथा डॉ० सुकुमार सेन ने उनकी प्रशंसा की। उसी काल में डॉ० मिश्र ने ईश्वरदासकृत 'सत्यवती' का संपादन किया। डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल, डॉ० माता प्रसाद गुप्त, डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त आदि ने उनके कार्य की सराहना की। इन सूफी काव्यों का संपादन करके डॉ० मिश्र ने शिव तत्व को प्रचारित प्रसारित किया।

डॉ० मिश्र ने पाठालोचन ही नहीं, बल्कि लोकसाहित्य एवं पुरातत्व के क्षेत्र में भी मानदंड स्थापित किया। अवधी लोक की गरिमा को उन्होंने प्रकाशित किया। डॉ० मिश्र ने 'अंतरवेद' नामक पत्रिका के 'पुरातत्व अंक', 'लोक साहित्य अंक' तथा 'निराला अंक' प्रकाशित किए। इनके इस व्यक्तित्व के निर्माण में महापंडित राहुल सांकृत्यायन, पं० कृष्णदत्त वाजपेयी की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

डॉ० मिश्र ने प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० एन.आर. धर के एक लेख का हिन्दी अनुवाद १९५२ में प्रथम बार 'विज्ञान' पत्रिका में प्रकाशित किया। इससे हिन्दी विज्ञान परिषद् प्रयाग से इनका संबंध हुआ। डॉ० देवेन्द्र शर्मा ने विज्ञान पत्रिका के संपादन मंडल में डॉ० मिश्र को रखा। डॉ० सत्य प्रकाश ने सन् १९५८ में ही इन्हें 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का प्रबंध संपादक बनाया। सम्प्रति डॉ० शिवगोपाल मिश्र 'विज्ञान' पत्रिका के प्राण हैं। दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची हो गए हैं। डॉ० मिश्र ने हिन्दी में कई वैज्ञानिक पुस्तकें लिखी हैं एवं पाठ्यपुस्तकें भी। अब तो यह स्थिति है कि जहाँ हिन्दी में विज्ञान संबंधी शोधकार्यों, प्रचार प्रसार संबंधी निबंधों की आवश्यकता होती है उनके लिए डॉ० शिवगोपाल मिश्र से निवेदन किया जाता है। डॉ० मिश्र का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। इससे मुझे गर्व, हर्ष, आनंद होता है, क्योंकि डॉ० शिवगोपाल मिश्र का मेरे प्रति विशेष स्नेह, अपनापन, आदर भाव रहा है।

मानव उन्नयन, जागरण, यश धारा

वृहत्तर धार्मिक, सांस्कृतिक, मानव उन्नयन जागरण के क्षेत्र में भी डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने महत्वपूर्ण कार्य किए हैं एवं कर रहे हैं। इन्हीं का फल है कि मान, सम्मान, पुरस्कार आदि डॉ० मिश्र के पीछे छाया की भांति लगे रहते हैं। जिसको जैसा लगे, उसकी डॉ० मिश्र को चिन्ता नहीं, ये अपने शिव, गोपाल, मिश्र कार्यों में लगे रहते हैं। डॉ० मिश्र शायर इकबाल के प्रसिद्ध शेर के समर्थक हैं, अनुयायी हैं जो है-

खुदी को कर बुलंद इतना, कि हर तकदीर से पहले।
खुदा बंदे से खुद पूछे, बता तेरी रजा क्या है।।

इस महान शुभ अवसर पर डॉ० शिवगोपाल मिश्र का मैं सादर अभिनंदन करता हूं, उन्हें प्रणाम करता हूं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरे अमृत महोत्सवी व्यक्तित्व की यशः धारा सदा प्रवाहित होती रहेगी। यह मानव समाज को असत्य से सत्य, अंधकार से प्रकाश, मृत्यु से अमरत्व की ओर प्रशस्त करती रहेगी-

ऊँ असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय, ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

(बृहदारण्यक उपनिषद्)

अव. प्रो. एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
ए२/१०, स्वजन फ्लैट ४०४
गोकुलाधान, गोरेगांव (पूर्व)
बम्बई-४०००६३

डॉ० शिवगोपाल मिश्र : मेरे प्रेरणा स्रोत

डॉ० विमलेश

राष्ट्रभाषा हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की श्रीवृद्धि में अपने अमूल्य योगदान के लिए डॉ० शिवगोपाल मिश्र हमारे प्रेरणास्रोत हैं। डॉ० मिश्र भारत ही नहीं, अपितु विदेशों में भी एक कृषि रसायनज्ञ एवं मृदा विज्ञानी के रूप में प्रसिद्ध हैं तथा विज्ञान परिषद् के माध्यम से विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में पिछले कई दशकों से संलग्न हैं।

याद नहीं पड़ता डॉ० मिश्र से मेरा परिचय कब हुआ। स्वामी सत्यप्रकाश की छत्रछाया एवं सान्निध्य में मेरे जीवन का दीर्घकाल व्यतीत हुआ और इसी बीच में डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी से मेरी अंतरंगता बढ़ी। हमेशा मुस्कुराते हुए, प्रत्येक के साथ सौम्य व्यवहार करते हुए डॉ० मिश्र बहुत जल्दी ही अपने व्यक्तित्व से लोगों को अभिभूत कर अपना निकटस्थ बनाने में सफल रहते हैं। इस आयु में भी नियम से विज्ञान परिषद् आने और उसके कार्यों के निर्वाह में यौवनोचित उत्साह का प्रदर्शन कर वे दूसरों को भी परिषद् के कार्यों से जुड़ने की प्रेरणा देते हैं।

हिन्दी की सबसे पुरानी वैज्ञानिक पत्रिका का तो आपके निर्देशन में पूर्ण कायाकल्प हो चुका है और अनुसंधान पत्रिका शोध कार्य करने वालों के लिए आदर्श बन चुकी है। अनेक ग्रंथों के प्रणयन एवं सम्पादन द्वारा आपने साहित्य की उल्लेखनीय सेवा की है। इसमें यदि हम कहें कि उनकी धर्मपत्नी सम्माननीया डॉ० रामकुमारी मिश्रा जी का भी अविस्मरणीय योगदान रहा है तो अत्युक्ति न होगी।

'डॉ० रत्नकुमारी स्वाध्याय संस्थान' के द्वारा जब प्रकाशन योजना आरम्भ हुई तो डॉ० मिश्र ने इसमें अग्रणी भूमिका निभाई और हमें उनसे अतुल्य सहयोग प्राप्त हुआ। संस्थान के लगभग सौ ग्रंथों का प्रकाशन किया होगा। प्रत्येक छोटे या बड़े ग्रंथ के मुद्रण, उसके प्रूफ देखने और अन्य सभी कार्यों में भी सहयोग डॉ० मिश्र सर्वदा देते रहे और आवश्यक परामर्श भी।

डॉ० मिश्र न केवल एक कुशल अध्यापक रहे अपितु उन्होंने शोध की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है और आज भी इसमें लगे हुए हैं। विज्ञान परिषद् की बैठकों में हमें देखने को मिलता है कि किस प्रकार युवा शोधार्थी डॉ० मिश्र का स्नेह एवं सम्मान प्राप्त करते हैं। डॉ० मिश्र को सदैव ही यह लगन है कि विज्ञान परिषद् को किस प्रकार आगे बढ़ाया जाए। विज्ञान परिषद् ने पिछले दशकों में जो प्रगति की है उसका सम्पूर्ण श्रेय उन्हीं को है क्योंकि बिना किसी प्रसिद्धि एवं आर्थिक लाभ की भावना के वे वर्ष के ३६५ दिन केवल विज्ञान परिषद् के उत्थान के बारे में ही सोचते रहते हैं। स्वामी सत्यप्रकाश और डॉ० गोरख प्रसाद आदि ने हिन्दी में वैज्ञानिक ग्रंथों का प्रणयन कर व उनके प्रकाशन में योगदान देने की जो परम्परा चलाई थी, आज उस परंपरा को गति देने में डॉ० शिवगोपाल मिश्र पूर्ण रूप से संलग्न हैं।

डॉ० मिश्र को उनके स्तुत्य कार्यों के लिए बधाई देते हुए ईश्वर से प्रार्थना है कि वे शतायु हों और हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के प्रसार में अपने अमूल्य योगदान द्वारा हमारा मार्गदर्शन करते रहें।

७/१३, लखपतराय लेन
इलाहाबाद-३

शोध अध्येता : डॉ० मिश्र

डॉ० गिरीश पाण्डेय

मेरे गुरु डॉ० शिवगोपाल मिश्र बहुआयामी प्रतिभा वाले एक आदर्श शिक्षक, वैज्ञानिक, साहित्यकार, हस्तलिखित ग्रंथों के खोजी एवं कोशकार, हिन्दी में कृषि एवं विज्ञान लेखक के रूप में राष्ट्रीय स्तर के व्यक्ति हैं। इनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को किसी सीमा में बांधना उचित नहीं है।

प्रो० मिश्र से मेरी पहली मुलाकात जनवरी १९७१ में हुई थी। वे प्रयोगशाला के बाहर बैठे अपने शोध के छात्रों के शोध के परिणामों का अवलोकन कर रहे थे। उसी बीच मैंने डॉ० रमेश चन्द्र तिवारी जी को पत्र दिया जो मेरे लिए शोध कार्य करने के सन्दर्भ में था। काफी जांच-पड़ताल के बाद डॉ० मिश्र ने मुझे शोध छात्र के रूप में स्वीकार किया और तुरंत सूक्ष्ममात्रिक तत्वों के अध्ययन पर शोध विषय आवंटित कर दिया। इस तरह १९७१ से १९७५ तक मैं डॉ० मिश्र के निर्देशन में शोध करता रहा।

डॉ० मिश्र की यह दैनिक क्रिया थी कि वे १० बजे प्रयोगशाला में आ जाते थे एवं सायंकाल ६ बजे जाते थे। प्रतिदिन सभी शोध छात्रों के पूरे किए गए शोध कार्यों का अवलोकन एवं मूल्यांकन करते थे। जहां भी परिणामों में शंका होती, उन्हें पुनः करने के लिए शोध छात्रों को प्रेरित करते थे। उनका मानना था कि जो भी विश्लेषण किया जाए उसे कम से कम तीन बार किया जाए जिससे किसी भी तरह की त्रुटि की सम्भावना न रहे।

एक शिक्षक एंव शोध अध्येता के रूप मे डॉ० मिश्र ने कभी भी 'स्पून फीडिंग' पर विश्वास नहीं किया। वे सभी शोध छात्रों को शोध पत्र एवं शोधप्रबंध स्वयं लिखने को कहते भले ही उन्हें शोध पत्र एवं शोध निबन्ध को दो-तीन बार देखना पड़े। चूंकि डॉ० मिश्र हिन्दी एवं अंग्रेजी के सिद्धहस्त सम्पादक रहे हैं अतः उनकी पैनी आंखों एवं कलम से कोई गलती होती नहीं।

डॉ० मिश्र हिन्दी के हिमायती हैं। वे अपने सभी शोध छात्रों को अंग्रेजी के साथ हिन्दी में शोधपत्र एवं लोकप्रिय लेख लिखने को उत्प्रेरित करते हैं। उन्होंने न जाने कितने लोगों को टोक पीटकर अच्छा लेखक बनाया है।

मेरे ऊपर न जाने क्यों, प्रो० मिश्र जी की असीम अनुकम्पा रही है। शोध के बाद भी प्रत्येक वर्ष २-३ बार मुझे प्रयाग में मिलने का मौका मिल ही जाता है। मैंने अपने गुरु से कर्तव्य के प्रति समर्पण, साधारण रहन-सहन एवं उच्च्य विचार एवं किसी से विद्वेष की भावना न रखना सीखा जो गुरु जी की ही देन है एवं मेरी भी सफलता की कुंजी है। गुरु जी से मेरा लगातार पत्राचार एवं दूरभाष पर वार्ता होती रहती है।

गुरु जी का सम्पूर्ण जीवन ही संघर्षशील रहा, चाहे उनके बड़े दामाद की आकस्मिक मृत्यु हो,

चाहे उनक दूसरी बेटी की बीमारी एवं अंधापन या कि पत्नी की बीमारी। कभी भी उनको विचलित होते नहीं देखा। दुख के पहाड़ को भी उन्होंने बड़े धैर्य से एक महामानव की तरह झेला है। धैर्यवान होना कोई सीखे तो डॉ० मिश्र साहब से। अपने शिष्यों को बेटे की तरह स्नेह देते रहे। कभी भी कोई शुभ कार्य हो या विपत्ति हो एक पिता की तरह शिष्यों को अवश्य याद करते हैं।

डॉ० मिश्र ने मुख्य पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम) गौण तत्व (कैल्सियम, मैग्निशियम, गंधक), सूक्ष्ममात्रिक तत्व (जिंक, आयरन, मैंगनीज, कापर, बोरान, मालिब्डैनम), भारी तत्व- निकेल, लेड, क्रोमियम, लाभकारी तत्व- सेलेनियम, फ्लोरीन के अतिरिक्त पीड़कनाशी, मृदा प्रदूषण, जैव उर्वरक एवं वर्मीकल्चर इत्यादि क्षेत्रों में अपने दिशा निर्देशन में शोध छात्रों से कार्य कराया। उपरोक्त पहलुओं पर डॉ० मिश्र के उनके शोध छात्रों के साथ लगभग २५० शोध पत्र अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर की शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। इन महत्वपूर्ण उपलब्धियों को वैज्ञानिकों द्वारा काफी सराहा गया। शोध की भावी दिशा में डॉ० मिश्र के शोध पत्रों को अंतर्राष्ट्रीय राष्ट्रीय स्तर पर सन्दर्भित किया जाता है।

१०, भरतपुरी कॉलोनी
धारा रोड, फैजाबाद (उत्तर प्रदेश)

पसे मर्गन समझ में आएंगे, ये कौन हमदम थे ....

डॉ० राजकुमार शर्मा

महाकवि निराला का शुभ नाम हिन्दी साहित्य के इतिहास में ही नहीं भारतीय साहित्य, कला एवं संस्कृति के इतिहास में भी स्वर्णाक्षरों में अंकित किया जाएगा। और यह कहना भी कहीं अधिक उपयुक्त होगा कि महाकवि निराला के शुभ नाम के साथ कुछ नाम ऐसे जुड़ गए हैं कि उनका सगर्व उल्लेख करना प्रत्येक भारतवासी के लिए एक अनिवार्यता होगी, जिनमें से एक शुभ नाम है राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित सुप्रसिद्ध विज्ञान लेखक विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री, प्रोफेसर डॉ० शिवगोपाल मिश्र का, जो फतेहपुर जनपद से आकर प्रयागवासी हो गए हैं।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र से मेरा परिचय अर्धशताब्दी पूर्व हुआ था जब सहारनपुर से प्रयाग आकर मैंने प्रयाग विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया था। उस समय डॉ० मिश्र शहराराबाग मोहल्ले में निवास करते थे और अपने अग्रज भाई जयगोपाल मिश्र के साथ रहते हुए प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्ययनरत थे। श्री जयगोपाल रेलवे विभाग से जुड़े हुए थे। दोनों मिश्र बन्धुओं की दिनचर्या में एक विशिष्ट कार्य जुड़ा हुआ था और वह था महाकवि निराला के दारागंज स्थित निवासस्थान तक प्रतिदिन जाना, वहां महाकवि की सेवा-सुश्रुषा करना और उनकी व्यक्तिगत जरूरतों के सम्बन्ध में जानकारी लेना तथा बाहर से आए हुए पत्रों के उत्तर लिखना और साथ ही साथ महाकवि द्वारा यत्र-तत्र छोटे बड़े कागज के पुर्जों पर लिखी हुई उनकी रचनाओं को समेट-सहेज कर रखना। मुझे भी अपने जीवन में यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि मैं अपने पूज्य बन्धुओं के साथ अक्सर मधवापुर से साइकिल पर उनके साथ साथ महाकवि निराला के दर्शन करने पहुंचता रहता था। जैसे देश-विदेश को अनेक गणमान्य हस्तियों को महाकवि के दर्शन कराने और उनसे वार्तालाप कराने, उनके साथ चित्र खिंचवाने आदि का श्रेय मिश्र बन्धुओं को है उसी प्रकार मुझे भी महाकवि के निकट तक पहुंचाने और उनका परम स्नेह प्राप्त करवाने का श्रेय भी भाई शिवगोपाल मिश्र और जयगोपाल मिश्र को ही है।

भाई शिवगोपाल मिश्र हम सबसे अलग होकर एक कार्य चुपचाप किया करते थे, जिसका खुलासा तब हुआ जब महादेवी वर्मा जी के, 'साहित्यकार' के उत्तरदायित्व से मुक्त होकर मैंने अपने साहित्यिक मित्रों के अनुरोध पर महाकवि निराला के संस्मरणों को पुस्तकाकार स्वरूप प्रदान करने का निश्चय किया। शिवगोपाल जी ने मुझे समझाते हुए प्रेमपूर्वक अमित स्नेह सहित कहा- तुम चिन्ता क्यों करते हो ? मैंने निराला जी के संस्मरण, उनसे सम्बन्धित प्रत्येक घटना और प्रतिदिन आने जाने वालों का सम्पूर्ण ब्योरा अपनी कापियों में लिख रखा है। तुम्हारी पुस्तक तो मात्र सौ-दो सौ पन्नों की होगी, मेरे पास तो हजारों पन्नों की जानकारी सुरक्षित एवं संग्रहित है।

मैंने भाई शिवगोपाल की उन कापियों को देखा, परखा और मैं मन से निश्चित हो गया कि अब मेरा कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाएगा। मुझे यह स्वीकारने में प्रसन्नता का सदैव अनुभव हुआ कि मेरी प्रथम कृति 'महाकवि निराला-संस्मरण : श्रद्धांजलियां' जिसने मुझे अपने जीवन के युवाकाल में, महाकवि निराला के जीवनकाल में अत्यधिक लोकप्रियता दिलाई, हिन्दी साहित्याकारों और हिन्दी साहित्य

का इतिहास लेखकों की दृष्टि में मुझे पर्याप्त गौरव प्रदान कराया, उसका सम्पूर्ण श्रेय भाई शिवगोपाल मिश्र की उन कापियों को है, जिन्होंने यह महत्वपूर्ण संस्मरण कृति प्रस्तुत करने का गौरव मुझे प्रदान कराया। पद्मभूषण और प्रयाग विश्वविद्यालय के तत्कालीन हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रोफेसर डॉ० रामकुमार वर्मा जी ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में उल्लेख करते हुए स्वीकारा है कि राजकुमार शर्मा की यह कृति संस्मरण साहित्य में अपने प्रकार का एक अलग और अनूठा प्रयास है। इसी सन्दर्भ में यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि उस समय तक हिन्दी में किसी भी साहित्यकार के संस्मरणों की एक सम्पूर्ण कृति प्रकाशित नहीं हुई थी जबकि हिन्दी के मूर्धन्य लेखक पं० बनारसीदास चतुर्वेदी (संपादक : विशाल भारत), पं० कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर (संपादक : ज्ञानोदय तथा नया जीवन और विकास), क्रान्तिकारी एवं लेखक रतनलाल बन्सल और राय बहादुर पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी 'पद्मभूषण' (संपादक : सरस्वती) ने अनेक साहित्यकारों के संस्मरण फुटकर रूप में लिखे थे जिन्हें पर्याप्त ख्याति प्राप्त हुई थी, परन्तु पुस्तक रूप में 'महाकवि निराला-संस्मरण : श्रद्धांजलियाँ', ही प्रथम कृति के रूप में प्रस्तुत हुई, जिसे अत्यधिक लोकप्रियता एवं ख्याति मिली और जिसके निर्माण का सम्पूर्ण श्रेय डॉ० शिवगोपाल मिश्र को है। भाई शिवगोपाल ने यदि प्रतिदिन की अपनी डायरी कापियों के पन्नों मे सुरक्षित न रखी होती तो यह लोकप्रयि कृति सम्भवतः इस रूप में न प्रस्तुत हो पाती जिसे हिन्दी विद्वानों द्वारा अपने ढंग के अनूठे और बेजोड़ प्रयोग के रूप में सराहा और स्वीकारा गया है।

मैं यह भी भलीभांति जानता हूं कि भाई शिवगोपाल मिश्र ने मेरे जैसे न जाने कितने अन्य मित्रों की तरह तरह से सहायता की है और यह आकांक्षा भी नहीं की कि वे कहीं उनके नाम का उल्लेख करें अथवा अपने जीवन में घटित उस सत्य को स्वयं स्वीकारें। 'नेकी कर, कुएं में डाल' वाली कहावत बहुत बचपन में मां से सुनी थी परन्तु भाई शिवगोपाल के साथ जीवन की अर्धशताब्दी गुजार देने के बाद मां द्वारा कही गई इस कहावत का निहितार्थ अब समझ में आने लगा है, जिसके साकार एवं साक्षात् स्वरूप हैं विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ० शिवगोपाल मिश्र।

डा० शिवगोपाल मिश्र में एक और बहुत बड़ी विशेषता है और वह यह है कि वे कभी भी अपनी करनी का ढिंढोरा नहीं पीटते। एक अत्यन्त संकुचित स्वभाव वाले भाई शिवगोपाल कथनी में नहीं वरन् करनी में विश्वास करते हैं और संभवतः इसी कारण वे अपने आपको अपने अन्य परिचितों से कहीं अलग पाने में सफल भी हो जाते हैं, जो कलियुग की इस कहावत में विश्वास करते हैं- पंडित सोई, जो गाल बजावा। मुझे अच्छी तरह याद है। जब डॉ० सत्यप्रकाश विज्ञान परिषद् के अध्यक्ष थे तो उन्होंने अपने साथ विज्ञान परिषद् की देखरेख, संचालन और 'विज्ञान' पत्रिका के प्रकाशन एवं संपादन हेतु भाई डॉ० शिवगोपाल मिश्र का चयन किया था। डॉ० सत्यप्रकाश की पारखी आंखों ने भलीभांति परख लिया था और शिवगोपाल के सहज सरल संकुचित स्वरूप के भीतर छुपे हुए हीरे की चमक उन्हें चमत्कृत कर रही थी। उसी कार्यकाल में विज्ञान परिषद् की पुस्तकों के प्रचार-प्रसार के लिए मुझे भी कुछ समय तक कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। डॉ० सत्यप्रकाश जी से बात करके भाई शिवगोपाल ने मुझे यह उत्तरदायित्व सौंपा था कि साहित्यकार संसद (महादेवी जी द्वारा संस्थापित संस्था) के 'साहित्यकार' तथा अन्य पुस्तकों के प्रचार-प्रसार तथा त्रिवेणी प्रकाशन की पुस्तकों के उत्तरदायित्व के साथ ही विज्ञान परिषद् की पुस्तकों की बिक्री का उत्तरदायित्व भी मैं संभाल लूं। इस प्रकार विज्ञान परिषद् को सदैव आगे बढ़ने में शिवगोपाल जी ने अपने निकटतम सम्बंधों एवं सम्पर्कों का भरपूर उपयोग किया। जबकि अपने निजी जीवन से सम्बन्धित किसी भी कार्य में, चाहे जितने बड़े और भीषण संकटों के बीच से वे गुजर रहे हों, मैंने कभी भी उन्हें किसी मित्र या परिचित से चर्चा करते हुए आज तक नहीं देखा। संस्था के प्रति अपना उत्तरदायित्व उनके अपने निजी के उत्तरदायित्व से कहीं अधिक

महत्वपूर्ण है डॉ० शिवगोपाल की नजरों में, जबकि आज के युग की मांग है, जिसका अधिकांश गुरुजन और मित्रगण खुलकर सदुपयोग कर रहे हैं कि अपने निजी दायित्व की पूर्ति हेतु सभी कुछ करो, सबकी मदद लो और संस्था के हित को अपने निजी हित से मिलजुलकर संचालित करो। भाई शिवगोपाल ने ऐसी परम्परा का कभी निर्वाह नहीं किया। उनके अनुसार निजी कष्ट अपने आप भोगने के लिए होते हैं, दूसरों से कहने सुनने अथवा उनसे सहयोग लेने के लिए नहीं। जो मित्र उनके अपने निजी जीवन से तनिक भी परिचित हैं, मैं जानता हूं कि वे सब मेरे इस कथन का जोरदार शब्दों में समर्थन करेंगे। भाई शिवगोपाल के इस स्वरूप को देखकर मुझे कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ टैगोर की वह पंक्ति अक्सर स्मरण हो आती है- 'ऐकला चलो रे'।

भाई शिवगोपाल के और मेरे कई सम्बन्ध हैं और उनमें से एक सम्बन्ध है- साले बहनोई का सम्बन्ध। भाई शिवगोपाल का विवाह हमारे पूज्य गुरुजी सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ० उदयनारायण तिवारी जी की सुपुत्री रामकुमारी के साथ सम्पन्न हुआ। पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी (पूज्य भैया साहब) के दरबार में महत्वपूर्ण नवरत्नों में डॉ० तिवारी जी की गणना की जाती थी। मैं पूज्य भैया साहब के घर परिवार का ही एक सदस्य माना जाता रहा हूं, क्योंकि मेरे परमपूज्य पिताश्री आचार्य जगदीश चन्द्र मिश्र जी भैया साहब के परमप्रिय मित्रों में थे और मेरी धर्मपत्नी श्रीमती सरोज शर्मा पूज्य भैया साहब के जन्मस्थान इटावा के उनके बचपन के मित्र पं० छैलबिहारी चतुर्वेदी की सबसे छोटी सुपुत्री हैं। पूज्य भैया साहब को इटावा से बेहद मोह था और वे अपने सम्बन्धों का निर्वाह तन-मन-धन से करने में अपने आप में एक बेजोड़ व्यक्तित्व के धनी महापुरुष थे। डॉ० तिवारी जी का परमस्नेह मुझे इसी कारण प्राप्त था। डॉ० तिवारी जी का परिवार भी मेरा अपना ही परिवार था और उनके बड़े सुपुत्र लक्ष्मीनारायण तिवारी (प्रति उपकुलपति सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी) हम लोग सबके प्रिय मित्र थे। एकदम भाई समान और इसी नाते से भाई शिवगोपाल जो अपने विवाह के उपरान्त मेरे मित्र और मेरे बहनोई भी हो गए। आज मुझे यह मत व्यक्त करते हुए अतीव प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि भाई शिवगोपाल ने पूरी अर्धशताब्दी व्यतीत हो जाने पर भी कभी भी मुझे ऐसा अवसर प्रदान नहीं किया है कि मैं यह कह सकने का दुस्साहस कर सकूं कि मेरे और उनके रिश्तों में कभी भी भूलचूक से भी कभी कोई रेखा कहीं रेखांकित हो पाई है। बहुत मुश्किल होता है आज के जीवन में इस प्रकार सम्बन्धों का सफल निर्वाह, जैसा कि शिवगोपाल जी ने आज तक किया है और भविष्य में भी इन रिश्तों के अन्य निखरे स्वरूप ही आपको दृष्टिगत होंगे, बिखरे-बिखरे स्वरूप नहीं, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। आपसी सम्बन्धों और सम्पर्कों का उचित रूप में सदुपयोग कैसे किया जा सकता है, इसका एक जीवन्त उदाहरण है डॉ० शिवगोपाल मिश्र।

भाई शिवगोपाल का स्मरण हो और महाकवि निराला की स्मृति सजीव न हो उठे, यह कम से कम मेरे जैसे व्यक्ति के लिए तो एकदम असम्भव है। महाकवि निराला जी को अपने दो शिष्यों पर अपार गर्व था- एक तो आगरा निवासी ऋषितुल्य हिन्दी आलोचक-साहित्यकार डॉ० रामविलास शर्मा और दूसरे विज्ञान लेखक-सम्पादक डॉ० शिवगोपाल मिश्र। इन दोनों को ही निराला जी ने बच्चों की तरह अंग्रेजी का विशेष रूप से ज्ञान कराया था और साहित्य, धर्म, भारतीय संस्कृति, भारतीय वाङमय, बंगला साहित्य आदि का ज्ञान प्रदान किया था। जब कभी भी अंग्रेजी की बात चलती तो वे इन दोनों का ही गर्व से नामोल्लेख करते थे- मैंने इन्हें पढ़ाया है।

एक दिन की बात है कि बिहार के एक सज्जन महाकवि निराला जी के दर्शनार्थ प्रयाग पधारे। निराला जी के दारागंज स्थित निवास पर पहुंचकर उन्होंने चरणस्पर्श किया। निराला जी कुछ प्रसन्न मूड में थे, अतः उनसे बातचीत होने लगी। उन्होंने अपने को रामधारी सिंह 'दिनकर' का सम्बंधी

बताया। बातचीत के दौरान में उन सज्ज्न ने निराला जी से कहा कि अगर आप अपनी रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित करा दें तो नोबेल पुरस्कार के लिए उन्हें भेजा जा सकता है और पुरस्कार मिलेगा भी अवश्य।

'अंग्रेजी अनुवाद करा दें', सुनते ही निराला जी का मूड उखड़ गया। झल्लाहट और क्रोध की मुद्रा में वे बोलने लगे- अनवुाद क्यों करा दें ? अंग्रेजी में लिख क्यों न दें ? मैंने रामविलास और शिवगोपाल को अंग्रेजी पढ़ाई है। जाकर उनकी अंग्रेजी सुनो ..... हिन्दी में लिखने की एक आदत बन गई है। अपनी मातृभाषा है ना, टैगोर ने भी बंगला में ही लिखा। .... निराला जी की बिगड़ती मुखमुद्रा देखकर वे बिहारी सज्जन जाने लगे तो निराला जी ने अन्य उपस्थित जनों से उन्हें रुकवाया और उर्दू का एक मशहूर शेर सुनाया-

पसे मर्गन समझ में आएंगे, ये कौन हमदम थे।
समर ओ गुल खिजां में, गरमियों में आबे ज़मज़म थे।।

महाकवि निराला का कहा हुआ यह शेर सदैव याद रहता है। इलाहाबाद के उर्दू के महान शायर रघुपति सहाय 'फिराक' ने भी लगभग इसी तर्ज पर अपना एक शेर कहा है जिसका भावार्थ मुझे स्मरण है कि मेरे मरने के बाद लोग यह कहने में गर्व का अनुभव करेंगे कि मैंने फिराक को देखा था।

भाई डॉ० शिवगोपाल मिश्र के सम्बन्ध में उपर्युक्त श्रेष्ठ रचनाकारों के कहे गए वचन मुझे स्मरण याद हो आते हैं। हम सब मित्रों ने जब कभी भी उनसे इस सम्बन्ध में चर्चा की तो वे मौन साध गए। ऐसे निर्विकार दिखाई देने लगे जैसे कि प्रशंसा, उपलब्धि, पद, मान, सम्मान, अभिनन्दन और पुरस्कार उनके लिए सब एकसमान हैं। बहुत अधिक जोर देने पर सदैव उनका एक ही उत्तर होता है- मैं निराला जी के संग रहा हूं। निराला जी को कौन सा पुरस्कार मिला ? समाज में कौन सा मान-सम्मान मिला ? और इस उत्तर के बाद हम सब निरुत्तर। यह स्थिति किसी योगी या सन्त पुरुष की मनः स्थिति की द्योतक है और तब हम सब यह महसूस करने लगते हैं कि हम अपने प्रिय भाई शिवगोपाल के साथ नहीं बल्कि सच्चे सन्त या योगी महापुरुष के साथ बैठे हुए हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य संस्थान और अखिल भारतीय हिन्दी सेवी संस्थान के कार्यकारी अध्यक्ष होने के नाते डॉ० शिवगोपाल मिश्र को दो बार सम्मानित एवं अभिनन्दित करने का परम सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, परन्तु भाई शिवगोपाल जी दोनों बार मेरे आग्रह पर आ तो जरूर गए, परन्तु एक बार भी मुझे ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि इससे उन्हें किसी प्रकार के विशेष आनन्द अथवा किसी प्रकार विशिष्ट अनुभूति प्रतीत हुई हो, जैसी कि अन्य अभिनन्दित एवं सम्मानित होने वाले साहित्यिक एवं लेखक बन्धुओं के मुख-मंडल पर प्रसन्नता तथा गौरव की छटा छिटकी हुई नजर आ रही थी। मैं और उनके सब प्रिय मित्रगण भाई शिवगोपाल मिश्र की इसी निर्विकारता को श्रद्धासहित प्रणाम निवेदन करते हैं और जीवनपर्यन्त करते रहेंगे।

प्रधान सम्पादक 'जागरण'
द्वारा त्रिवेणी प्रकाशन
४७४, बक्शी खुर्द, दारागंज
इलाहाबाद-६ (उ० प्र०)

Prof. S.G. Misra an affable teacher

Dr. N. Panda

My association with Prof. S.G. Misra goes way back to July 1955 when I was admitted to the Department of Chemistry, Univeristy of Allahabad for my Master's Degree in Agricultural Chemistry. Then he had not earned his D. Phil. Degree but almost completed the requirements for the degree. His doctoral research work was on the characterisation and reclamation of alkali soils. He conducted research under the supervision of Prof. Nilratan Dhar, the great propounder of photochemical nitrogen fixation in soils and then Director, Sheila Dhar Institute of Soil Science, University of Allahabad. Educationally and academically Dr. Misra is a chemist but professionally a soil scientist par excellence. He was probably the first person to be appointed as a lecturer in the Chemistry Department having done research in soil science as a lecturer. Dr. Misra's understanding of the relationships of soil, plant and water was excellent since he was equipped with the fundamentals and application for physical, organic, inorganic and analytical chemistry which could be extended to soil science for better appreciation of the problems. Dr. Misra was highly industrious, energetic, conscientious and innovative both as a teacher and researcher. As a teacher, he did not believe in passing informations only to his students, he believed in selling knowledge.

Dr. Misra has made significant contribution to basic and applied research in different areas of soil fertility and chemistry. He has immense contributions to the knowledge of micronutrients in soils and plants as far as deficiency and toxicity are concerned. His pioneering work on inexpensive methods of reclamation fo alkali soils helped the farmers of the Western U.P. in the management of their problem soils. Environmental safety was uppermost in his mind while designing research programmes. With all those also, he did not lag behind in the dissemination and transfer of apt technologies through popular writing and radio talks.

Dr. Misra has authoured a number of books covering different aspects of soil science and environmental pollution both in Hindi and English. His books entitled Micronutrients in Agriculture in Hindi is worthy to name. He has innumerable research papers to his credit published in the national and international journals. In addition, he has several review articles,

seminar/symposia papers, popular articles both in English and Hindi. I had the unique privilege of publishing two papers with the co-authorship of Dr. Misra in the proceedings of the National Academy of Sciences, Allahabad when I was a post graduate student in 1956. I was encouraged by Dr. Misra to present those papers in the Annual Convention of the National Academy held at Aligarh Muslim University when I was continuing as a student of M.Sc. To my good fortune, Prof. N.R. Dhar defended my findings during the discussion of the paper. Such a thing could happen due to affection of Dr. Misra towards me.

Dr. Misra's writing both in English and Hindi are erudite and impeccable. Above all his editing is superb. His contribution to popularisation of science in Hindi is deferential. He has served the Vigyan Parishad, Allahabad which publishes a monthly "Vigyan" the first science journal in Hindi. His association with the Parishad goes back earlier to half a century serving it at different times as editor, publisher and general secretary. After Dr. Satya Prakash taken to "Sanyas" Dr. Misra virtually has managed the affairs of the Vigyan Parishad which is praiseworthy. Apart from literary bent of mind he has high organising ability. His unstinted efforts for creation of Prof. N.R. Dhar memorial fund is remembered by his students and colleagues.

Dr. Misra is a winsome gentleman, honest, courteous, genial, friendly and affable. He is a caring son, husband and father of his family. He loves his students much like his own children. He is a recepient of several coveted honours, awards and distinction for his outstanding contribution to soil science and science literature. Rectitude is ingrained in his character. Pecuniary benefits was hardly of any consideration to deter him from service to humanity. During his career when he was a Lecturer, he had a stint at New Delhi serving the Council of Scientific and Industrial Research with good emoluments but he ran away to Allahabad as he had no job satisfaction. This shows that money was no consideration for him. Honesty and frankness often made him vulnerable but he did not desist from that path. His faith in God and love for humanity often has been taken as orthodoxy but for that he is never disturbed. Dr. Misra would always be remembered as a top soil scientist and preternatural teacher. I pray the almighty to grant him a long life in the service of nature and humanity.

Retired Professor of Soil Science
Orissa University of Agriculture
and Vice Chancellor, Sambalpur University

S.G. Misra

Dr. Lal Ji Mishra

I am extremely happy to know that Dr. Mishra is approaching his 70th birthday and that his former students are planning to pay their tributes and celebrate this auspicious occasion. I send my warm greetings to Dr. Mishra and his family. I wish him a very happy 70th birthday and a long healthy life.

I feel very fortunate to have been one of his students. I studied M.Sc. Agricultural Chemistry (1964-66). My class fellows were very friendly, and highly motivated. M.Sc. Agricultural Chemistry students (Part I & II) and research scholars shared the same laboratory. We often mingled with M.Sc. final year students and research scholars (Drs. R.C. Tiwari, S.K. Ojha, P.C. Mishra and D.P. Sharma). In M.Sc. first year, Dr. Mishra taught us Soil Science. Unfortunately during the first year, my interaction with Dr. Mishra was very limited. Most of the time, I would often observe Dr. Mishra's commitment and dedication towards his research program and students. He was very kind, and courteous. He spent numerous hours analyzing data, guiding his students, and writing research papers. Dr. Mishra was abreast of the latest developments in Soil science. He participated in the Summer School Program for Biochemistry/Microbiology at Pantnagar in the summer of 1965.

In the second year, Dr. Mishra taught us Agricultural Biochemistry, Soil Microbiology and Soil Science. He prepared his lectures thoroughly, and kept us busy. We met Dr. Mishra daily as he was our mentor. Dr. Mishra assigned term papers on several topics pertaining to Plant Biochemistry and Soil Microbiology. We worked very hard and submitted comprehensive reports. I wrote on Biological Nitrogen Fixation. Our final year M.Sc. examinations were held in the April of 1966. Before departing for our respective homes, all of my fellows thanked Dr. Misra for his kindness, and encouragement.

I was keenly fascinated with Microbiology and I expressed this fascination to Dr. Mishra. With his encouragement, I joined the Indian Institute of Science, Bangalore to study Soil Microbiology/Biochemistry. Later, I applied to US universities for graduate study. Dr. Mishra helped me in obtaining admission to US universities. During the summer of 1968, I struggled to acquire a passport and air ticket. Dr. Mishra had kindly signed a letter of guarantee for a loan on my behalf

of Air France. However, this was later waived as I was offered an assistantship from the University of California, Davis. This illustrates Dr. Mishra's magnanimity and willingness to help his students.

I joined the Department of Biochemistry, University of California, Davis in fall quarter of 1968. Since then, I have been in touch with Dr. Mishra and have received numerous encouraging letters from him during my graduate and postdoctoral studies. While Dr. Mishra spent time in New Delhi translating scientific documents, he wrote a very joyous letter, informing me the birth of his son, Ashutosh. Whenever, I visited India, I used to visit Dr. Mishra in Allahabad.

All of my family members feel very fortunate that Dr. Mishra and his wife (Mrs. Dr. Mishra) visited us in the USA. My young son was very impressed with Dr. Mishra. Fortunately it was a spring time in Washington DC, with beautiful flowers in bloom. Dr. Mishra saw the Washington monument, US capital and visited the White House. He also saw a variety of trees planted by previous US president in the rose garden.

I was pleasantly surprised to learn that Dr. Mishra has translated most of the books on Bhagavat Puranam, Bhagavat Geeta and other spiritual work of Sri Srimad A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupad from the English to Hindi Language. My friends (Bhagavat Geeta study group in Washington DC) and I regularly use the Hindi version of the Bhagavat Geeta. I feel proud and blessed. Dr. Mishra has done monumental work in bringing this great epic to Hindi readers.

Dr. Mishra and his students have made significant contributions in the field of Agricultural Chemistry and Soil Science. His pioneering research on Trace elements is highly recognized. Trace elements play a vital role in human nutrition, physiology and health.

Dr. Mishra has received many accolades from the UP Govt, and the President of India. His accomplishments are extraordinary and exemplary. Dr. Mishra is an outstanding scientist, dedicated teacher, mentor, writer, editor and most of all a humble human being. I am grateful to him for his numerous blessings. On behalf of my family and myself, I wish Dr. Mishra a very happy 70th birthday.

Microbiologist
Food and Drug Administration
Rockvily, MD 20857, USA.

Dr. Shiv Gopal Misra

Dr. A.C. Gaur

I came in contact with Dr. Shiv Gopal Mishra when I joined Sheila Dhar Institute of Soil Science, University of Allahabad during July, 1954. A strong contingent of research scholars were working in different areas of Soil chemistry and Soil biology under th guidance of Prof. N.R. Dhar, the lifelong Director of this Institute.

I was allotted a working space in one of the laboratories where a few senior research scholars including Shiv Gopal Mishra were also working. I have a vivid memory of meeting Dr. Mishra and working in the same laboratory. He impressed me as a serious and deligent research worker. At that time Dr. Mishra was working on leachihg losses of salts from different types of soils. His contribution was appreciated by the emaminers. Dr. Mishra practised simple living which was also unique. Slowly my bond of friendship with Dr. Mishra was strengthened. Subsequently he joined Allahabad University as a Lecturer after the award of the D. Phil. degree to him.

At Allahabad, a few of the research workers including myself used to reside in Prayag Lodge managed by the University. He used to visit us and vice versa. Our bond of friendship were strenghtened with time. Dr. Mishra being close to Nirala Ji, helped to invite and bring him to our annual fuctions.

I left Allahabad in 1958 and went abroad and joined Indian Agricultural Research Institute, New Delhi during 1963. Luckily our contacts were further renewed at New Delhi when he joined as Officer on Special Duty (Hindi), Wealth of India (C.S.I.R.) located in Pusa complex, New Delhi during 1970-72. At that time we used to frequently visit each other in Patel Nagar, New Delhi where both of us used to reside. The family bonds were established which continued uninterrupted.

Dr. Mishra has done excellent work for the promotion of Science through Hindi medium. He has served Vigyan Parishad Allahabad in different official capacities. He is General Secretary of Vigyan Parishad Allahabad at present.

He invited me to deliver Professor N.R. Dhar Memorial Lecture during the year 2000 which was organised by him at Agricultural Institute, Naini, Allahabad. He has been making dedicated efforts in different areas of Science. After his retirement as Director, Sheila Dhar Institute of Soil Science he continues to serve Science and Hindi. He is frequently invited to participate in different meetings organised by Scientific and Literary bodies. He has been bestowed with several honours and awards. He is a Fellow of National Academy of Sciences, Allahabad and other academic bodies.

I wish him healthy and purposeful life in the years ahead.

Retired Prof. (Microbiology)
IARI, New Delhi

Prof. (Dr.) S.G. Misra

Dr. S.N. Pandey

It was in 1956, when I came in contact with Dr. Mishra while he was working as Lecturer in the Chemistry Department, University of Allahabad. At a very young age, Dr. Mishra was appointed as Lecturer in the University and was teaching M.Sc. (Agricultural Chemistry) students. Dr. Mishra has a very brilliant academic career. He completed his Doctorate (D.Phil) under renowned person late Prof. N.R. Dhar, who was founder Director of Sheila Dhar Institute of Soil Science, Allahabad. Later on Dr. Mishra was appointed as professor and also Director of Sheila Dhar Institute of Soil Science in the year 1986. During the period 1956-58, I was very closely connected with Dr. Mishra. I found him a very hard working, devoted and committed person to the task assigned to him. Dr. Mishra believes in simple living and high thinking. He treated his students in a very dignified manner. Although I left the University in 1958, but I remained in touch with Dr. Mishra throughout and found him very friendly. I always found him working very hard to upgrade the University courses for the benefit of the students.

Dr. Mishra has contributed immensely in various fields of science, particularly in Soil Science (macro & micro nutrients), Pesticides, Soil Pollution, Biofertilizers. He has published more than 250 research papers in national and international scientific journals of repute. He has also written a number of books and monographs. He has guided a large number of students for D. Phil and D.Sc. Degrees at the university of Allahabad in diverse subjects. Some of his students are occupying very senior positions in Govt. of India, Universities, Private Industries and abroad.

Dr. Mishra is connected with several scientific societies in India and abroad. He is Fellow of National Academy of Science, Allahabad. Still at the age of 70, he is actively engaged in popularisation of science and working as Editor and Publisher of Vigyan (Hindi). He is also Pradhan Mantri of Vigyan Parishad, Allahabad. Prof. Mishra translated a book of Nobel Laurate Linus Pauling's 'College Chemistry' in Hindi. Presently he is engaged in writing 'History of Science' in Hindi and several other books, which are likely to be published in future.

Prof. Mishra's achievements are innumerable. He has been honoured by several awards. In 1997, he was honoured as 'Vijgyan Bhushan' for his outstanding contribution in science writing in Hindi by U.P. Hindi Sansthan.

I am very happy to write these few words on 70 years of achievements of Prof. S.G. Mishra. I pray Almighty to grant happy, prosperous and healthy long life to Prof. Mishra.

Former Director, Central Institute for Research on Cotton Technology, ICAR, Bombay

Dr. Misra : Simplicity Personified

Dr. M.M. Rai

I have very close association with Dr. S.G Misra since January 1954 when I joined Sheila Dhar Institute, Chemistry Department, Allahabad University, under Prof. N.R. Dhar as a research scholar, although I had known Dr. Misra even earlier (1951). Dr. Misra was my senior at Sheila Dhar Institute when I joined as a research student. Dr. Misra was a very devoted and sincere student of Prof. Dhar. He had a brilliant academic record throughout. He worked day and night for his research. He was a very simple person wearing dhoti and shirt, which simplicity possibly he adorned from his great Guru Prof. Dhar. He is in fact simplicity personified. He along with Shri Radhey Shyam Dwivedi, now an advocate in High Court, Allahabad (then a B.Sc. student), used to stay at the Institute day and night. I have yet to find such a sincere and devoted student in my life. He even did not have time to shave and thus acquired a long beard, the kind of which is adorned by great saints. I have still a group photograph of Institute students and Professors when Prof. Linus Pauling, Nobel Laureate and his wife visited the Institute in 1955, as a testimony of this fact for those for whom my statement may appear unbelievable.

When it came to the appointment of a foreign examiner for his thesis, Dr. Misra insisted on appointment of Dr. W.P. Kelley, an authority of U.S.A. on alkali soils, the work that Shri Misra was associated with for this D. Phil thesis (1955) which he came out with flying colours.

It appeared to us that Dr. Misra was married to Chemistry, but it was a great surprise when he was married to Dr. Ram Kumari (1957), daughter of a great linguist, Prof. Udai Narain Tiwari of Hindi Department of Allahabad University. It appears to me that Mrs. Misra metamorphised the thinking and living of Dr. Misra, proving the old saying that "Behind every successful man, there is a woman."

Dr. Misra was appointed as Lecturer, Allahabad University (1956) and was elevated to Reader (1977) and finally to Professor and Director (1986). He continued to keep the traditions of Prof. Dhar. Today he is an authority in his subject and besides writing a number of books (11 in English and 22 in Hindi), guiding many D.Phil and D.Sc. students (more than 40) has contributed to Vijnana Parishad, Prayag of which he is the General Secretary even today. Thus, he has served the cause of Science in Hindi, a trait acquired from late Swami Satya Prakash Ji. He is a legend by himself in his own life time. He has been decorated with several awards- to mention a few- Vijnanna Saraswati Award (1978), U.P. State Awards (1974-75, 1975-76, 1981), Harisharnanand Award (1961), Dr. Atma Ram Award (1993), Vigyan Bhushan Award (1966). He has been associated with various editorial Boards. He believes in simple living and high thinking. I wish Dr. Misra a very long and happy life.

Retired Prof. of Soil Science
Jabalpur University
174B, Tagore Town, Allahabad-2

Prof. S.G. Misra

Dr. P.C. Jaiswal

Under the able guidance of Dr. S.G. Mishra I was awarded D.Phil degree in the Science Faculty of Allahabad University in March 1982. The research work enabled me to contribute in the national and international symposiums in chemical activity, soil science and plant nutrition. The international research board of the American Biographical Institute, USA nominated me for the title 'Man of the Year 2000'. The association with Mishra Ji brought me prosperity academically.

A accepted Mishra Ji as my Guru. I had the desire to work with great devotion. Mishra Ji opened his excellent spacious laboratory for me, and he arranged all the glasswares, reagents and apparatus etc. required to perform chemical analysis of soils and plants.

Mishra Ji encouraged me to write research papers for symposiums and research periodicals. As he corrected the manuscript, I admired his genious and editing. Even when he was deeply absorbed in the work of Vigyan Parishad, he gave some time to check my work.

I found Mishra Ji always in the company of proffesors or else surrounded by his research students. He commanded great respect from others. He helped others without any personal gain. He remains cool always. Presumably he has full control over his anger.

Mishra Ji came to the Chemistry Department, Vigyan Parishad as well as to the Sheila Dhar Institute on a cycle even when he became the Director of the Institute. I found him content with his simple living even after his return from USA.

Mishra Ji's simple living, and his excellent academic achievements will continue to inspire students and researchers to work with sincerity and devotion.

Former Professor & Head
Department of Agronomy
Allahabad Agricultural Deemed University
Naini, Allahabad

एक विलक्षण व्यक्तित्व

डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय

सीधे सादे दिखने वाले डॉ० मिश्र में अनेक विलक्षणतायें हैं। ये विलक्षणतायें उनके व्यक्तित्व को रेखांकित करने वाली हैं। समय के साथ इनका विकास हुआ है।

वे अपने को शरीर से दुर्बल बताते हैं किन्तु उनमें अपार साहस एवं धैर्य है। वे विद्यार्थी जीवन से परिश्रमी रहे हैं, आत्मनिर्भर भी। विश्वविद्यालय में अध्यापन की इच्छा विद्यार्थी जीवन से उपजी थी। सीमित साधनों के बावजूद वे लक्ष्य को प्राप्त भी कर सके हैं। लक्ष्य प्राप्ति के बाद वे निष्क्रिय नहीं रहे। सदा नवीन, आगे के लक्ष्य निर्धारित करते हुये बढ़ते रहे हैं।

अपने जनपद फतेहपुर के लोकजीवन से उनका प्रगाढ़ अनुराग रहा है। वे जनपद भर में घूमे हैं, उन्होंने लोक साहित्य का संकलन किया है। अपनी प्राचीन संस्कृति से लगाव के कारण जनपद के पुरातात्विक स्थलों का निरीक्षण किया है और 'अन्तरवेद' का पुरातत्व अंक निकाला है।

उन्होंने जनपद की प्राचीन साहित्यिक परम्परा का उद्घाटन किया है- पाण्डुलिपियों की खोज करके। जब भी अध्यापन से अवकाश मिलता रहा, वे एकडला के अपने मित्र रावत ओम प्रकाश सिंह के यहां जाकर खोज के अभियान में लग जाते थे। उन्होंने सैकड़ों महत्वपूर्ण पाण्डुलिपियां (१७-१९वीं सदी) खोज निकाली हैं।

उन्होंने जनपद के १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास भी लिखा है। उन्होंने जनपद के कवियों पर भी लेख लिखे हैं।

यद्यपि उन्हें लम्बी यात्रायें पसन्द नहीं किन्तु वे ग्रीष्मकालीन वैज्ञानिक कार्यशालाओं के सम्बन्ध में दिल्ली तथा पन्तनगर में महीनों बाहर रहे हैं।

अपनी पुत्री की बीमारी के सिलसिले में उन्होंने अपनी पत्नी सहित महीनों मद्रास तथा दिल्ली में बिताये हैं। उनके मित्र उनके विपत्ति के साथी बने हैं।

वे अपने शोध छात्रों पर दयालु रहे हैं किन्तु उन्हें सदा कठोर परिश्रम के लिये प्रेरित किया है। उन्हें जीवन में स्थापित होने में यथाशक्ति सहायता भी पहुंचाई है। उन्हें लेखन के प्रति उन्मुख किया है। उनसे सदैव पुत्रवत् व्यवहार बनाये रखा है, उनसे पत्राचार कायम रखा है।

प्रकाशकों से उनके मधुर सम्बन्ध रहे हैं। यदि किसी ने धोखा दिया है तो उसे भी क्षमा किया है। वे हिन्दी के प्रबल समर्थक रहे हैं। उनका अधिकांश लेखन हिन्दी में ही है।

विज्ञान में हिन्दी के प्रयोग से वे सन्तुष्ट नहीं हैं। स्वामी सत्यप्रकाश, प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा, डॉ० आत्माराम तथा डॉ० गोरख प्रसाद की परम्परा को उन्होंने पुष्ट किया है।

वे विज्ञान परिषद् के लिये अपना सारा अतिरिक्त समय देते रहे हैं। उन्होंने अवैतनिक कार्य किया है। उन्होंने परिषद् को दिया ही है, लिया नहीं। वे कहते भी रहे हैं कि परिषद् मेरी पुत्री के समान

है। इसे देना ही देना है।

वे परिषद् को दीन हीन नहीं देखना चाहते। वे उसे अग्रणी संस्था बनाने का स्वप्न संजोये हैं। वे कई बार डॉ० मुरली मनोहर जोशी से इसे राष्ट्रीय संस्था घोषित करने के लिये कह चुके हैं।

वे परिषद् में संकीर्णता को निकाल फेंकने के लिये लगातार कार्य करते रहे हैं। उन्होंने राष्ट्रीय गोष्ठियों में सभी भारतीय भाषाओं के विज्ञान लेखकों को आमन्त्रित किया है। वे स्थानीय संस्थाओं- हिन्दी साहित्य सम्मेलन, हिन्दुस्तानी एकेडमी, गंगानाथ झा संस्कृत संस्थान, राष्ट्रीय संग्रहालय आदि से तालमेल बनाये रहे हैं। वे विज्ञान साहित्य की सभी विधाओं को पल्लवित करने के लिये नवयुवकों को प्रेरित करते रहे हैं। विज्ञान कथा तथा कविता के लिये उन्होंने नये मंच स्थापित करने में सहायता की है।

वे विज्ञान में नाटकों, यात्रा साहित्य, रिपोर्ताज, संस्मरणों तथा जीवन चरित्र लेखन को बढ़ावा देना चाहते हैं। वे कोश साहित्य को भी कम अहमियत नहीं देते। वे विज्ञान लेखन का इतिहास लिखे जाने के लिये प्रतिबद्ध हैं। विज्ञान लेखकों की निर्देशिका भी तैयार कर रहे हैं। प्रारम्भ में साहित्यिक पत्रिकाओं में जितना लेखन हुआ है उसको सूचीबद्ध करना चाहते हैं। वे विज्ञान पत्रकारिता को पुष्पित पल्लवित देखना चाहते हैं।

७० वर्ष की आयु में भी उनकी लेखनी रुकी नहीं है। उनके पास अनेक योजनायें हैं और जिन योजनाओं को हाथ में ले रखा है उन्हें समय से पूरा करने के लिये वे स्वयं प्रतिदिन विज्ञान परिषद् जाकर ३-४ घंटे कार्य करते हैं, चल रहे कार्य का निरीक्षण एवं मार्गदर्शन करते हैं। वे न थकने वाले जीव हैं। घर में अनेक समस्याओं के बावजूद विज्ञान परिषद् के प्रति उनका लगाव अटूट है।

उनमें हास्य विनोद भी कम नहीं है। वे कहते हैं स्वतन्त्र भारत में एक प्रधानमंत्री होता है किन्तु स्वतन्त्रता से पूर्व ही तीन प्रधानमंत्री चले आ रहे हैं- विज्ञान परिषद् का प्रधानमंत्री कम अहमियत नहीं रखता।

वे कहते हैं कि संस्था व्यक्ति से बढ़कर है। विज्ञान परिषद् से सबों को हितैषी भावना रखनी चाहिये। उसे देना चाहिये, उससे लेना नहीं।

संयुक्त मंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग

मेरे अभिन्न

राधेश्याम द्विवेदी

किसी अभिन्न मित्र के जीवन की समीक्षा करना अथवा उसके व्यक्तित्व को थोड़े में समेटना कितना दुरूह कार्य है इसकी कल्पना करना ही कठिन है जबकि व्यक्तित्व ऐसा हो जिसके बारे में कभी सोचा न गया हो कि वह कितना खरा और कितना खोटा है। हमने कभी इस ओर ध्यान ही नहीं दिया। अब जब डॉ० शिवगोपाल मिश्र के व्यक्तित्व व चरित्र के विषय में कुछ लिपिबद्ध करना है तो पीछे मुड़कर देखने में बड़ा अजीब व आश्चर्यमय लगता है। इतने लम्बे अंतराल में एक सरपट दौड़ चल रही है, बिना रुके, बिना थमे, हम दोनों की तथा दोनों परिवारों की दोनों में किसी को इस बात की चिन्ता नहीं है कि हम में कितनी अच्छाई या कितनी बुराई है। डॉ० मिश्र जी का ऐसा व्यक्तित्व जो इतना सरल जितना पानी और इतना गंभीर जैसे सागर जिसमें न कभी उबाल आता है न ज्वालामुखी फटता है, न फुलझड़ी झरती है न अट्टहास न विलाप। स्वाभिमानी रहते हुये किस तरह जीवन जीना चाहिये इस कला को यदि सीखना है तो डॉ० शिवगोपाल जी से सीखा जा सकता है। कितनी ही प्रसन्नता का अवसर हो - परीक्षा में प्रथम आने की अथवा विज्ञान व साहित्य क्षेत्र में विभिन्न सम्मान प्राप्त करने की - उनके चेहरे पर उतनी ही प्रसन्नता झलकेगी जितनी एक सभ्य, सुसंस्कृत मर्यादित व्यक्ति में सम्भव है। और कितना ही बड़ा दुख हो तो इतना ही दिखेगा जितना दिखना आवश्यक हो। उनका जीवन जितना सन्तुलित एवं मर्यादित है ऐसा सन्तुलन केवल परमहंस को ही प्राप्त है। हमने उन्हें न तो कभी प्रसन्नता से उछलते देखा, न दुख से बिलखते अथवा क्रोध से उफनते। एक समभाव की स्थिति।

वे अजातशत्रु हैं। उनका कोई इतना घनिष्ठ नहीं जिसके बिना वे अपने को अपूर्ण समझें, कोई इतना दूर नहीं जिसके बिना वे तड़पते रहें। यदि सीधे शब्दों में कहा जाये तो वे स्थितप्रज्ञ हैं।

उनका जीवन विरोधाभास सा लगता है। एक ओर विज्ञान क्षेत्र में लब्धप्रतिष्ठ प्रकाण्ड पण्डित, विविध पुरस्कारों से अलंकृत, तो दूसरी ओर हिन्दी के प्रति समर्पित तथा भगवद्गीता जैसे महान ग्रंथ के अनुवादक। विज्ञान की व्याख्या हिन्दी माध्यम से करने में वे निपुण एवं कृतसंकल्प हैं। ज्येष्ठ दामाद के आकस्मिक निधन तथा पुत्री विभा की रुग्णता जैसे आघात-प्रतिघातों को संयमपूर्वक सहन करना साधरण जीव के वश की बात नहीं है। प्रत्येक परिस्थिति में अपने को सहज सहनशील बना कर रखना वास्तव में डॉ० मिश्र को साधारण मनुष्य से काफी ऊपर उठा देता है।

डॉ० मिश्र एक कर्मयोगी हैं- ऐसे कर्मयोगी जो गीता में दी गयी व्याख्या से पूर्णरूपेण खरे उतरते हैं। विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् भी उनके पास समयाभाव है। हिन्दी में विज्ञान लेखन में वे अग्रणी हैं। यह उनका प्रिय विषय है।

१९५० से ही उनका मित्र होने से एक गुप्त रहस्य बताने का लोभ मैं छोड़ नहीं पा रहा हूँ। यह रहस्य इतना गुप्त है जिसे केवल मैं जानता हूँ। आप भी किसी से मत कहियेगा कि इनकी एक प्रेयसी भी है जिसके साहचर्य में इनका अधिकांश समय व्यतीत होता है। जीवन के सात दशक पूर्ण करने पर भी उसका आकर्षण इन्हें अपनी ओर खींचता ही रहता है। गर्मी हो या बरसात अथवा कि जाड़ा, उसके पास जाने, रहने और समय बिताने में इन्हें अपार सुख व संतुष्टि मिलती है। उनकी एकमात्र पत्नी डॉ० (श्रीमती) रामकुमारी मिश्र को इसकी पूरी जानकारी है पर वाह रे भारतीय नारी! कितना विशाल हृदय है! जो इन्हें वहां जाते रहने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करतीं। अब भी बिना नागा उस प्रेयसी के पास पूरा का पूरा दिन व्यतीत करते हैं और साँझ ढले ही घर वापस आते हैं। मैं उसका नाम स्वतः नहीं बताऊँगा। समझ लीजिये कि उसके प्रति उनका लगाव पागलपन की सीमा तक है। उसी की प्रेरणा से वहीं बैठकर वे साहित्य का सृजन करते हैं। विज्ञान की रचना हिन्दी के माध्यम से करते हैं। विज्ञान की वह स्थली यानी विज्ञान परिषद् ही उनकी प्रेयसी है। अब आप समझ गये न !

हम दोनों मित्र एक दूसरे से इस तरह बँधे हैं कि विलग नहीं हो पाते। जहाँ तक उन्हें समझने की बात है तो हमने कभी इस ओर सोचा ही नहीं और न समझना चाहते हैं। बस इतना समझ लीजिये कि-

तू दिल में तो आता है समझ में नहीं आता
हम जान गये तेरी पहचान यही है।

ऐसे कर्मठ कर्मयोगी युगपुरुष के दीर्घजीवन की हम कामना करते हैं।

७, बेली एवेन्यू
ममफोर्डगंज, इलाहाबाद

आपबीती

क्या कहूं क्या न कहूं

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

आयु के सत्तरवें वर्ष की दहलीज पर खड़ा आज जब मैं कभी देहात में बीते बचपन की, कभी प्रथम बार शहर में जाकर पढ़ाई की और कभी विश्वविद्यालय में बीते दिनों की याद करता हूं तो अजीब सा लगता है और ऐसा प्रतीत होता है कि कई कालखण्ड बीत चुके हैं और मैं जिस जगह पर हूं उसके भी आगे एक विस्तृत कर्मक्षेत्र फैला हुआ है। अब भला यमुना नदी में नहाने, आम के बगीचों में सीकलें बीनने, जंगल में जाकर जानवरों की रखवाली करने, ज्वार बाजरा के खेतों में से चिड़िया उड़ाने, खलिहान में मंडाई करने का अवसर कहां मिलने वाला है! मेरे गांव का घर भी उजड़ चुका है। मेरे बचपन के मित्रों में गिने चुने बचे हैं। देवदत्त गौतम, इन्द्रदेव गौतम, श्याम सुन्दर भुर्जी, देवरजवा अहीर। मेरे प्राइमरी पाठशाला के अध्यापकों में से अब कोई भी जीवित नहीं हैं। मेरे सर्वाधिक प्रिय अध्यापक पं० रामराखन का पचीसों वर्ष पूर्व देहान्त हो चुका है और गाँव के सबसे वृद्ध अध्यापक राजाराम मिश्र का देहान्त कुछ वर्ष पूर्व ९२ वर्ष की आयु में हुआ। मेरे परिवार में मेरे पिता का देहान्त १९४० में, जब मैं दर्जा चार में था हो चुका था, और मेरी माता की मृत्यु १९८० में हुई। मेरे सबसे बड़े भाई का भी देहान्त ८२ वर्ष की आयु में तीन वर्ष पूर्व हो गया है। हम छह भाई तथा दो बहन थे। बहनें मुझसे छोटी थीं जिनमें से एक दिवंगत हो चुकी है।

हाईस्कूल तक मेरी पढ़ाई का जिम्मा मेरे दूसरे बड़े भाई पं० रामगोपाल मिश्र पर था। वे भी अब नहीं रहे। मुझसे एक छोटा तथा दो बड़े भाई अभी जीवित हैं। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा गांव से चार मील दूर अर्जुनपुर के प्राइमरी स्कूल में हुई।

१९४२ में मैं हाईस्कूल की पढ़ाई करने के लिये फतेहपुर आया। वहां अपने बड़े भइया रामगोपाल के साथ रहकर पढ़ने लगा। वहां पहले से मेरे एक और भाई पढ़ रहे थे, दूसरे भाई मेरे एक वर्ष बाद गये। वहां कभी कभी हाथ से भोजन बनाना पड़ता, लकड़ी लाना, आटा पिसाना, और युद्ध के दिनों के कारण राशन की दुकान से मिट्टी का तेल लाना पड़ता था। शहर गांव की तुलना में बुरा नहीं लगा। स्कूल की ओर से होने वाले खेलकूद में शरीक नहीं हो पाता था क्योंकि शरीर से दुर्बल था किन्तु फुटबाल तथा वालीबाल मैच देखने मे आनन्द आता था। फतेहपुर में घूमने के लिये टाउन हाल, मान भवन, चमनबाग, जेल, रामलीला मैदान जैसे अनेक स्थान थे। यहां के बीते चार वर्ष अभी तक बड़े लुभावने लगते हैं। हाईस्कूल के मेरे कई अध्यापक मुझे मेरी प्रखरता के कारण बहुत चाहते थे। गणित के अध्यापक पं० वृन्दावन मिश्र, साइंस टीचर बी.बी.एल. सक्सेना, संस्कृत के अध्यापक पं० रामचन्द्र मालवीय से मुझे अत्यधिक प्यार मिला। उनके ही आशीर्वाद से पहली बार

गवर्नमेंट हाईस्कूल से मेरा नाम योग्यता सूची में आ सका। इन अध्यापकों में से पं० रामचन्द्र मालवीय जब संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के रजिस्ट्रार थे तो उनसे भेंट हुई थी। एक बार वे मेरे घर भी आये थे क्योंकि मूलतः इलाहाबाद के निवासी थे। पं० वृन्दावन मिश्र जब ज्ञानपुर कालेज में गणित के अध्यापक बन गये तो दारागंज में उनके घर मैं प्रायः जाता रहा। अब उपर्युक्त में से कोई भी अध्यापक शेष नहीं हैं।

१६४६ में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये इलाहाबाद आना पड़ा। मेरा दाखिला के.पी. इन्टर कालेज में हुआ। मैं अपने बड़े भाई जो रेलवे में थे, उनके साथ खुल्दाबाद में रहने लगा। पहले वर्ष हिन्दू-मुस्लिम दंगों के कारण पढ़ाई चौपट रही। मैं पैदल ही के.पी. कालेज जाता था और फिर लौटता था तो थक जाता। फिर भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ और मेरिट लिस्ट में नाम छपा। रसायन शास्त्र में सर्वाधिक अंक मिलने से आज भी के.पी. कालेज की रसायनशाला में मेरा नाम वहां के पट्ट में अंकित है। इंटर के मेरे गुरुओं में ज्वालाप्रसाद जी रसायन के अध्यापक, गोपालस्वरूप भार्गव उर्फ गुरू जी भौतिकी के अध्यापक, तथा श्री हरिनारयण जी भौतिकी के प्रयोगात्मक शिक्षक थे। उनमें से श्री हरिनारायण जी ने बहुत नाम कमाया और वे देश में प्रसिद्ध भूकम्प वैज्ञानिक हैं। भार्गव साहब से तब तो सारे छात्र डरे रहते थे किन्तु जब बाद में मुझे पता चला कि विज्ञान परिषद् से छपने वाली पत्रिका 'विज्ञान' के सम्पादक और विज्ञान लेखकों में से एक थे तो उनके प्रति मेरी श्रद्धा चौगुनी बढ़ गयी। अब वे नहीं रहे।

१६४८ में मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। गणित, भौतिकी और रसायन शास्त्र-ये मेरे विषय थे। मैं नई सड़क में अपने रेलवे वाले भाई के साथ रहता था। नित्य ही वहां से विश्वविद्यालय तक पैदल जाना होता। पढ़ाई का माहौल नहीं बन पा रहा थ। मित्रमंडली भी नहीं बन सकी थी और विज्ञान के विषय दुरूह लगने लगे थे। कभी कभी भोजन भी बनाना पड़ता, मकान मालकिन तंग करती, कभी कभी लालटेन से पढ़ना पड़ता। पुस्तकें न होने से कभी म्योर कालेज लाइब्रेरी, कभी कम्पनी बाग की पब्लिक लाइब्रेरी में जाकर बैठना पड़ता। अध्यापकों से किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं हो पाता था। घर का वातावरण भी ठीक नहीं था। चूंकि मैं ही अपने परिवार में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहा था, इसलिये किसी को मेरी आवश्यकताओं की न तो जानकारी थी, न ही कोई परवाह।

बी.एससी. करने के बाद मैंने एम.एससी. में रसायन शास्त्र विषय चुना। अब मैंने एक साइकिल खरीद ली थी जिससे आने जाने में सुविधा हुई और प्रथम वर्ष की मेरी पढ़ाई अत्यधिक सन्तोषजनक हुई। अन्तिम वर्ष में मैंने जानबूझकर कृषि रसायन विषय चुना। इसमें मुझे नवीनता ही नवीनता दिखी। खूब पढ़ा और सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। १६५२ की गर्मियों में डॉ० नीलरत्न धर ने बुलाकर शोधछात्र के रूप में मुझे दीक्षित किया। एक छोटी सी विभागीय छात्रवृत्ति भी दिला दी। मैंने जुलाई के पूर्व ही शीलाधर मृत्तिका विज्ञान संस्थान में अपना शोधकार्य शुरू कर दिया। कुछ दिनों बाद डॉ० धर विदेश चले गये तो मैंने संस्थान में ही अड्डा जमा लिया। दो वर्षों तक जम कर कार्य किया। मैं डॉ० धर को पत्र द्वारा अपने शोध परिणाम सूचित करता था। जब डॉ० धर विदेश से लौटे तो मेरी थीसिस लिखी गई, जमा हुई और १६५५ में मुझे डी.फिल की डिग्री मिल गई। मेरे हितैषियों ने इस उपलक्ष में एक आयोजन भी किया। एक वर्ष बाद मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में कृषि रसायन तथा मृदा विज्ञान पढ़ाने के लिये लेक्चरर नियुक्त हो गया। उसके बाद १६५७ में मेरी
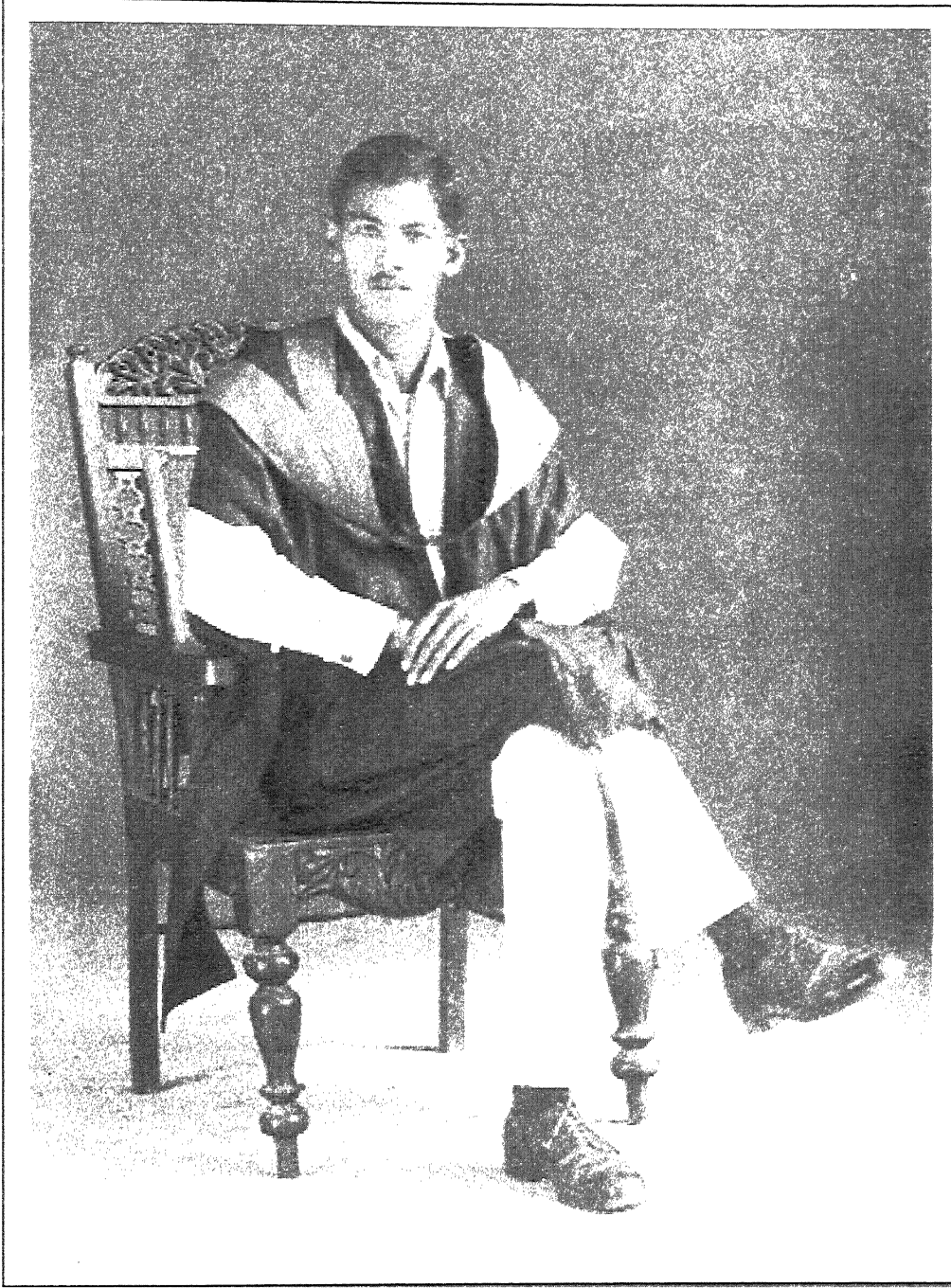
बी. एस. सी. उपाधि प्राप्त (गाउन पहने) १९५०
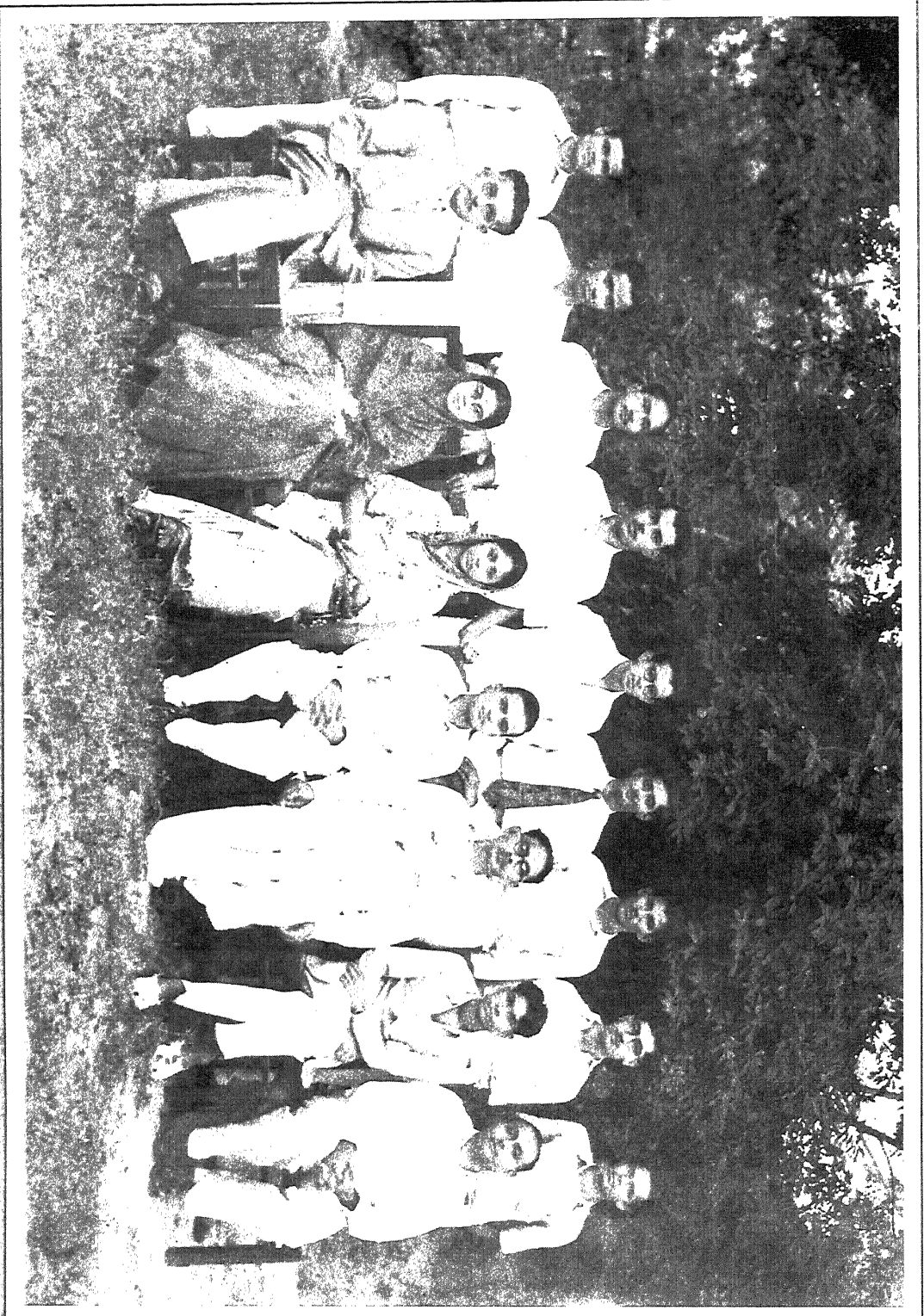
बैठे हुए- श्री एस० भानुमूर्ति, श्रीमती एस० घोष, श्रीमती एन० आर० धर, डा० एस० घोष,
प्रो एन० आर० धर, डा० एच० एल० निगम एवं डा० एस० पी० मित्र
खड़े हुए- मे० देव राज, बी० एल० श्रीवास्तव, एच० पी० शाह, जे० पी० गुप्ता, ओ० पी० अग्रवाल,
बिमलेन्दु बोस, एस० जी० मिश्र, बी० के० धर एवं एस० बी० सक्सेना (१९५१)
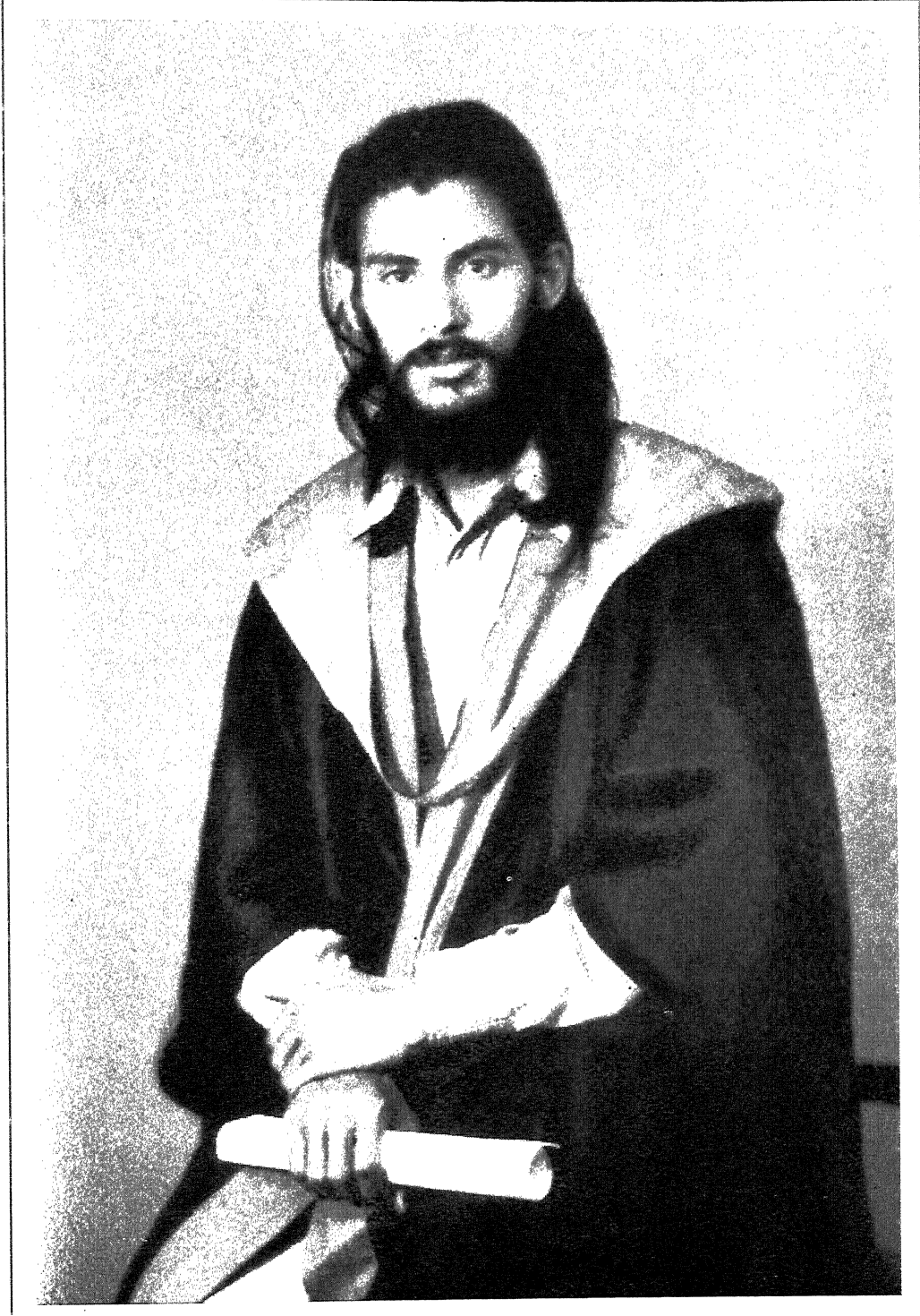
डी. फिल. डिग्री प्राप्त (१९५५)
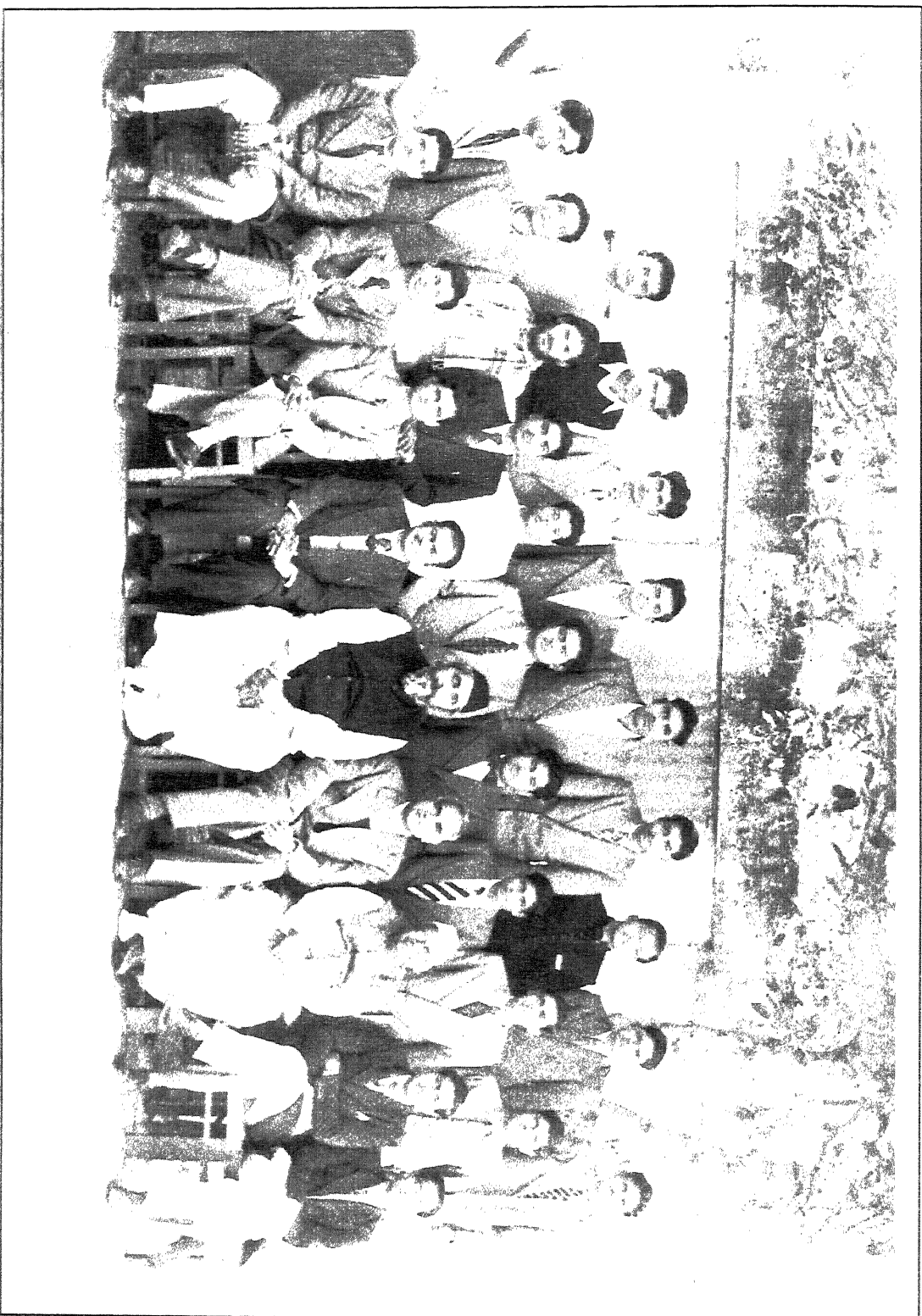
बैठे हुए (बांए से दांए) : सर्व श्री, पुण्डरिक मिश्रा (लिटररी सेक्रेटरी), आर.पी. लाल (मैम्बर लॉजेज वेलफेयर कमेटी), एच.एस. शर्मा (प्रेफेक्ट), डा. ओम प्रकाश (प्रेसीडेन्ट), पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी (निराला), टी.पी. भल्ला (मैम्बर यू.पी. पब्लिक सर्विस कमीशन), डा. सत्य प्रकाश (चेयरमैन डेलीगेसी), ओ.पी. खरे (सोशल सेक्रेटरी), यू.एस.डी. शर्मा (गेम सेक्रेटरी)।

पहली पंक्ति में खड़े हुए (बांए से दांए) : सर्व श्री, ओ.पी. गुप्ता, ए.एन. मनी त्रिपाठी, एस.जी. मिश्र, के.डी. मिश्र, ए. साम्बिया, ए.सी. गौड़, टी.एन. चोजर, डी.पी. गर्ग, बी.पी. खत्रे, टी.वी.एन. मूर्ति।

दूसरी पंक्ति में खड़े हुए (बांए से दांए) : सर्व श्री, पी.वी. कृष्णाराव, पी. ससियाह, के. अन्जनेयूल्लू, ए. वेंकटेश्वरयूल्लू, वी.एस. अग्रवाल, के.बी. सिंह, एन.के. गर्ग, के.एन. गोयल, के. वेंकटेश्वरयूल्लू।

(१९५५-५६)
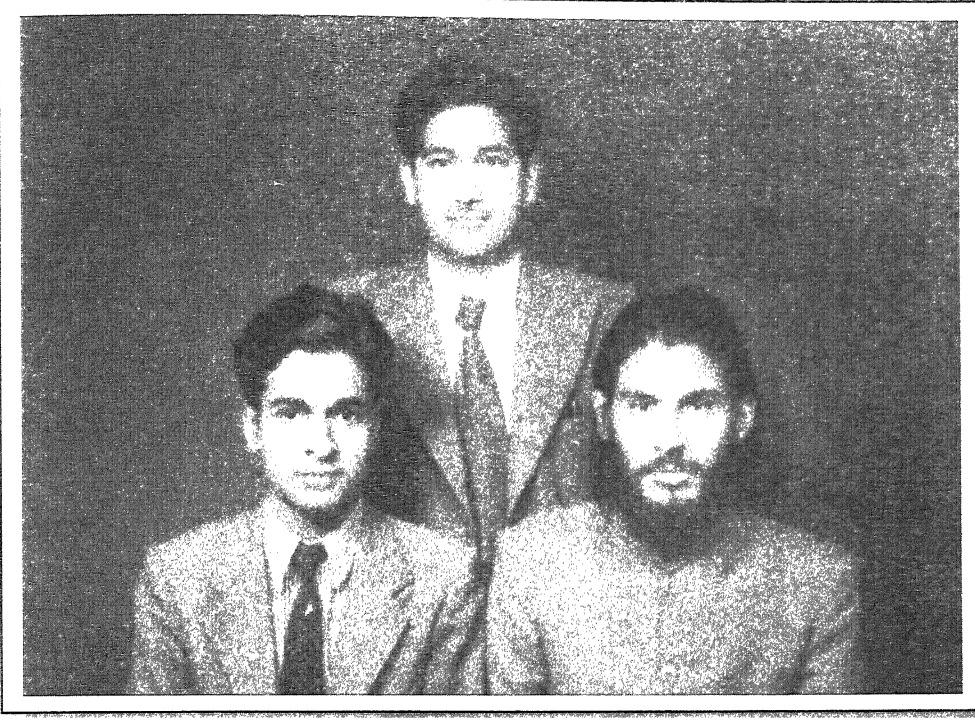
अपने मित्र
डा. चोजर
तथा डा. वदालकर
के साथ डा. मिश्र
(१६५६)
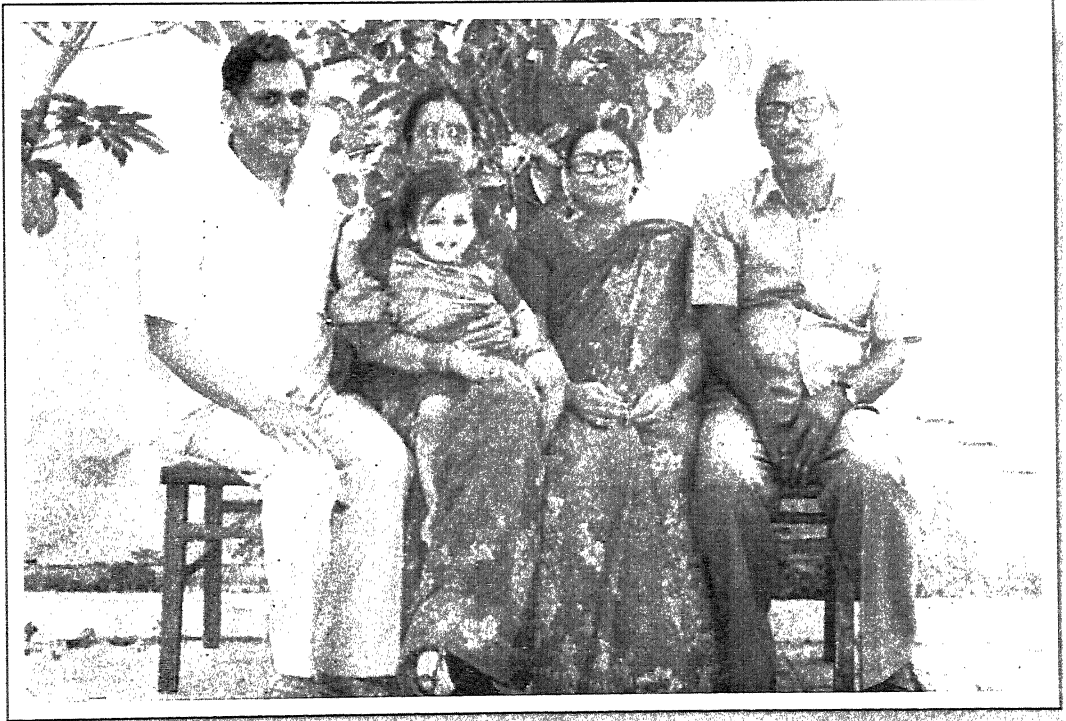
अपने मित्र
राधेश्याम द्विवेदी
(सपत्नीक)
के साथ
डा. मिश्र
(सपत्नीक)

१९५६ में डा. मिश्र

१९६३ में डा. मिश्र
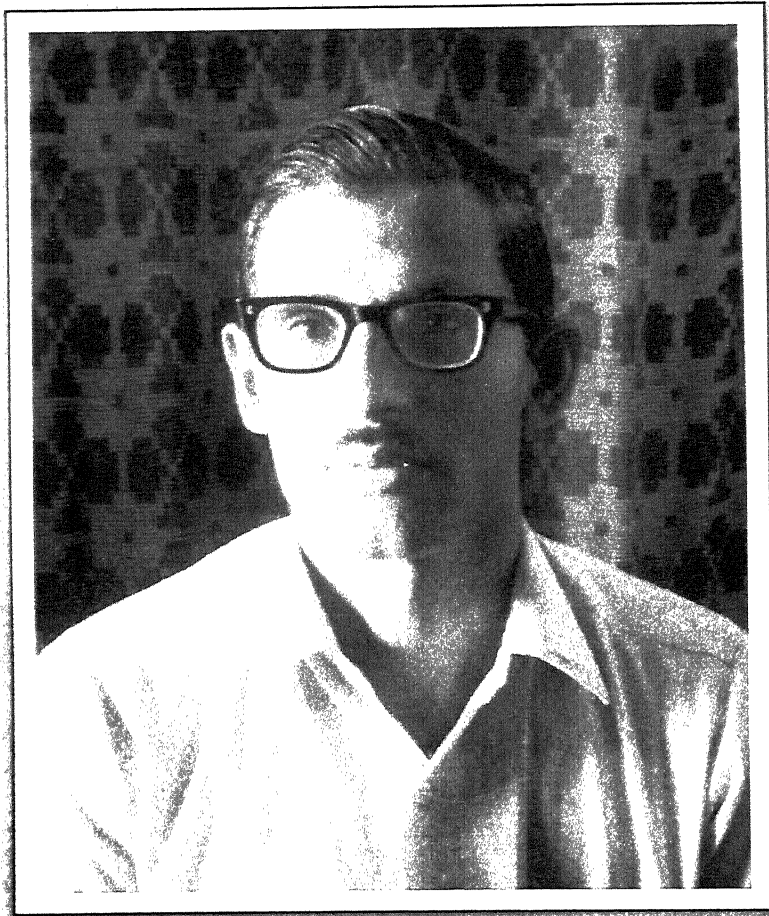
१९७४ में डा. मिश्र
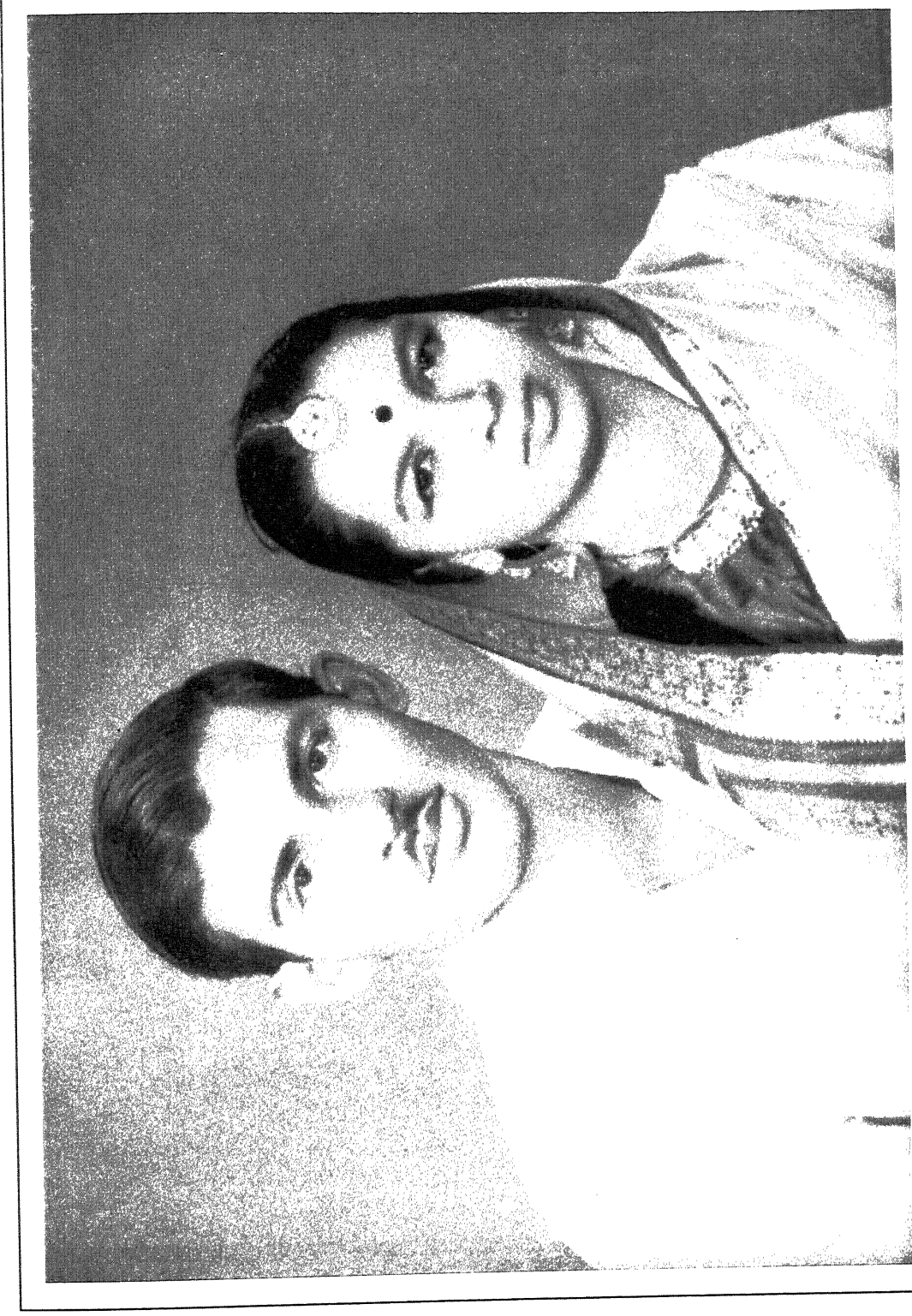
डा. मिश्र अपनी पत्नी राम कुमारी मिश्र के साथ (१९५७)
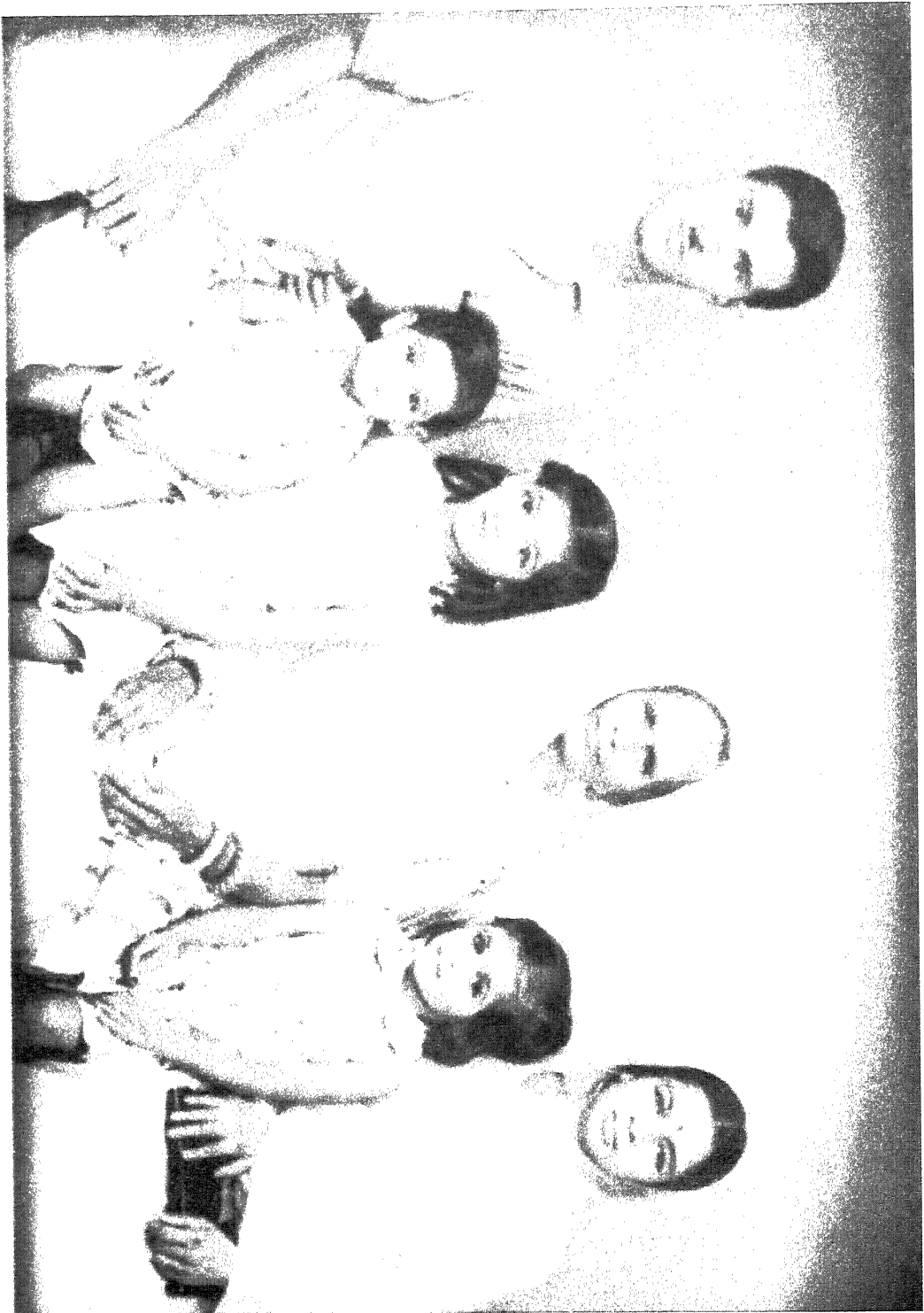
अपनी माता पार्वती मिश्र, पत्नी डा. राम कुमारी मिश्र तथा तीन पुत्रियों शुभा, विभा तथा आभा के साथ डा. मिश्र (१९६६)
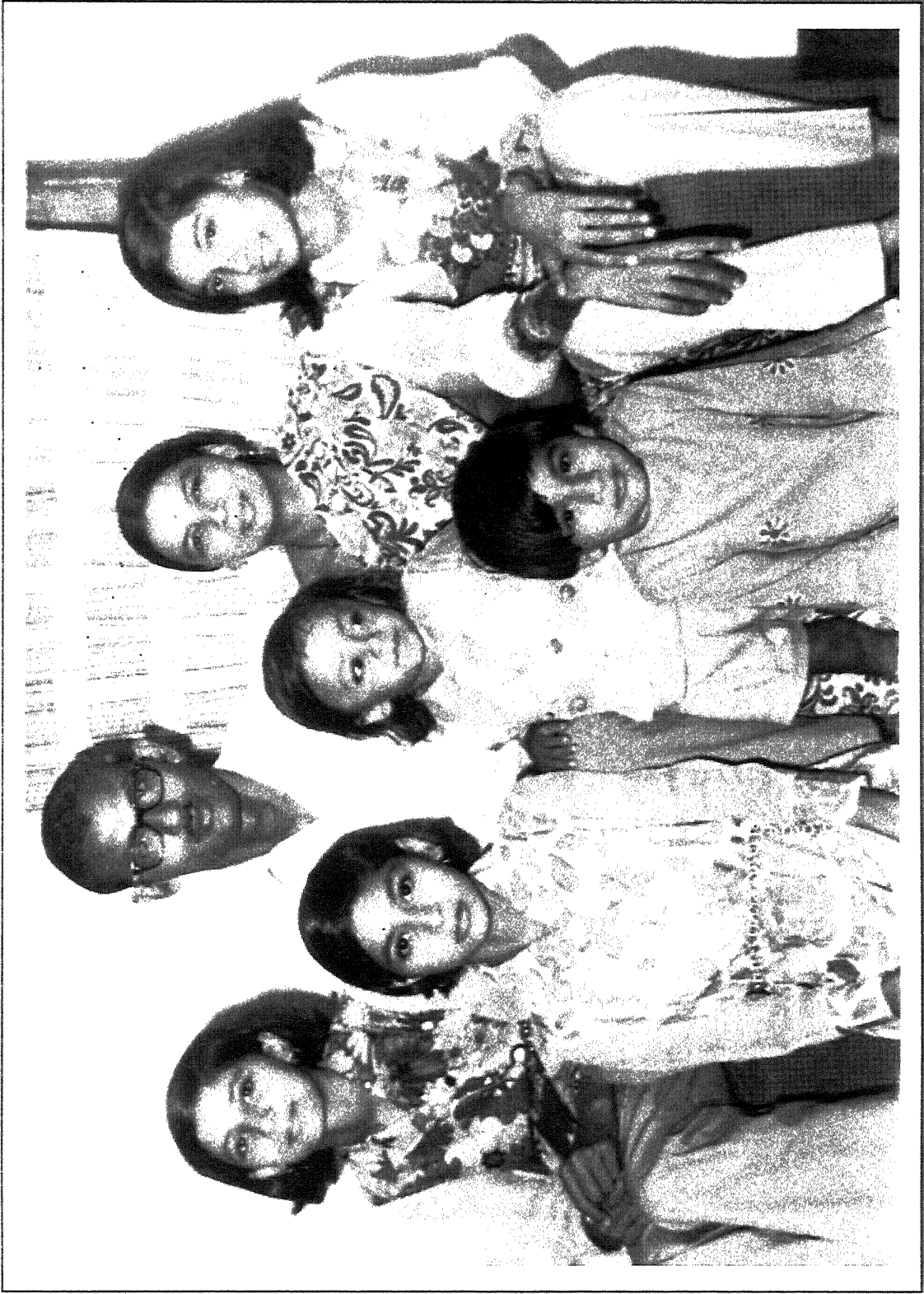
अपनी पत्नी डा. रामकुमारी मिश्र, चार पुत्रियों शुभा, विभा, आभा तथा निशि तथा पुत्र आशुतोष के साथ डा. मिश्र (१६७४)

महापंडित राहुल
सांकृत्यायन
के साथ
हैप्पी वैली मसूरी में
(१९५६)
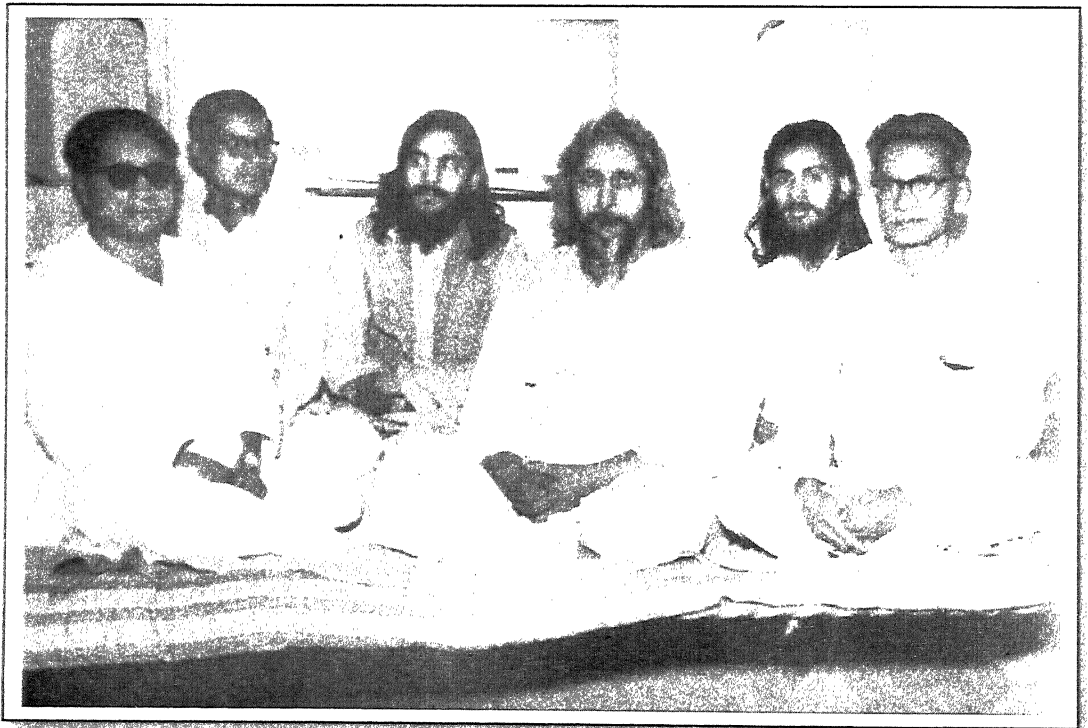
कविवर निराला
के साथ
दारागंज में
बिहार से आये
कविजनों के साथ
डा. मिश्र भी
(१९५६)
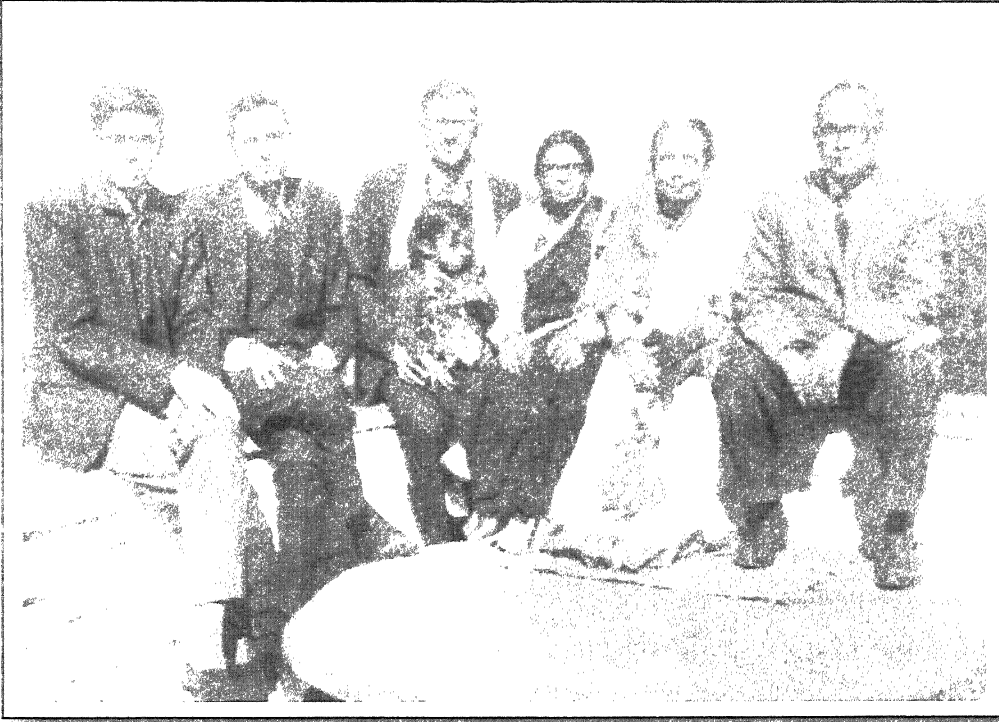
मृदा विज्ञानी
डा. एस.पी.राय चौधरी
तथा उनकी पत्नी
के साथ डा. मिश्र
अपने पुत्र, अपनी
पत्नी तथा दो
शोध छात्रों सहित
(१९७२)
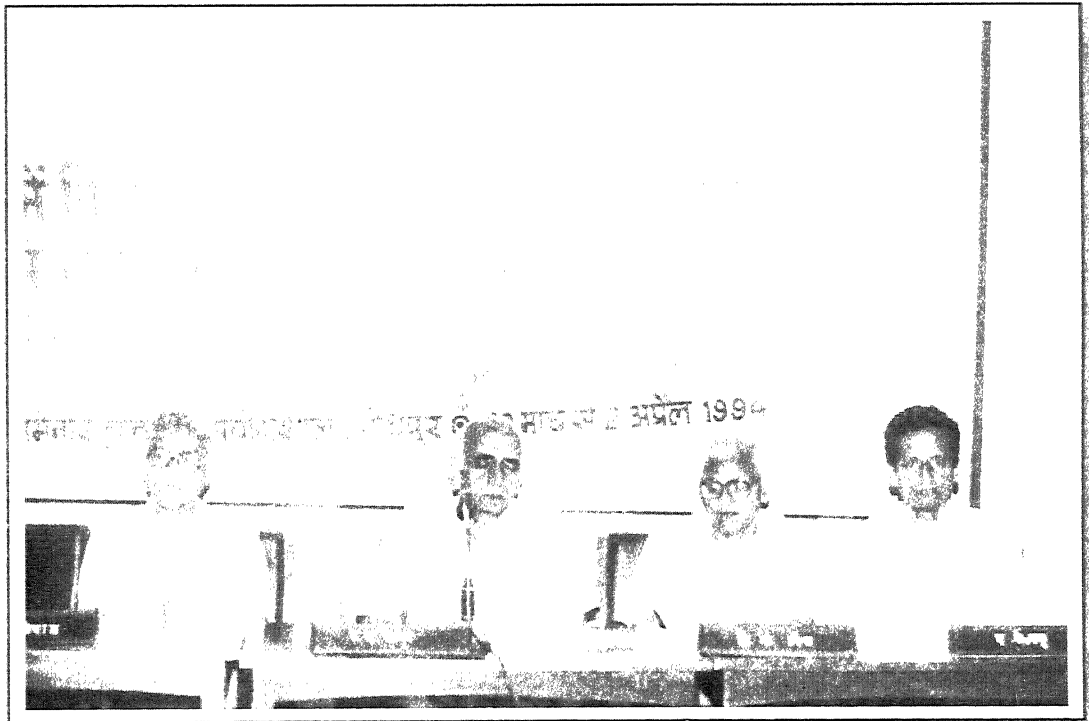
कार्यशाला जोधपुर
(१९४४)
डा. राम गोपाल,
डा. आर.सी. कपूर
डा. मिश्र तथा
ए.के. बसु
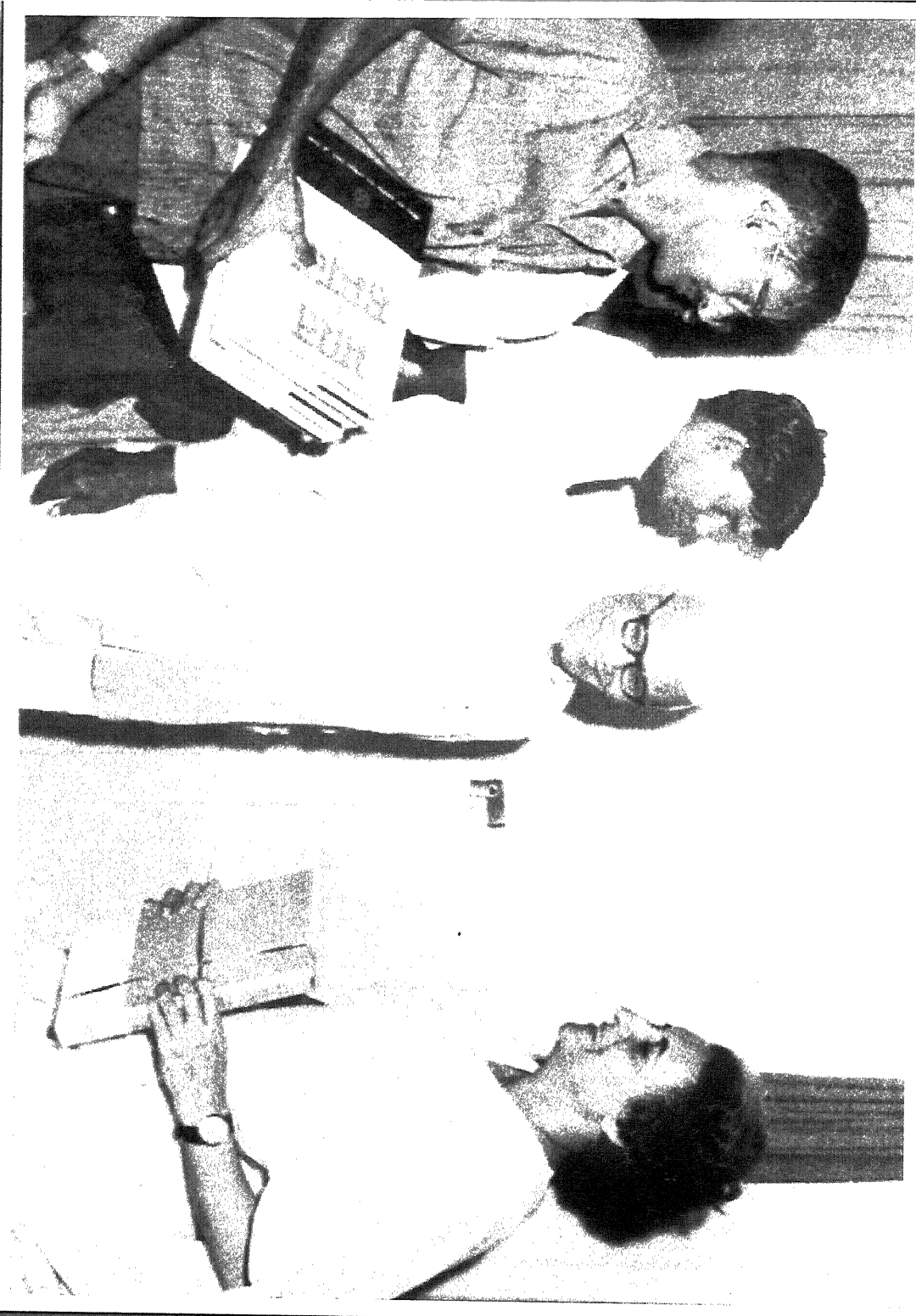
''भारत की सम्पदा'' का विमोचन : डा. आत्माराम तथा प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी के साथ डा. मिश्र (१९७१)
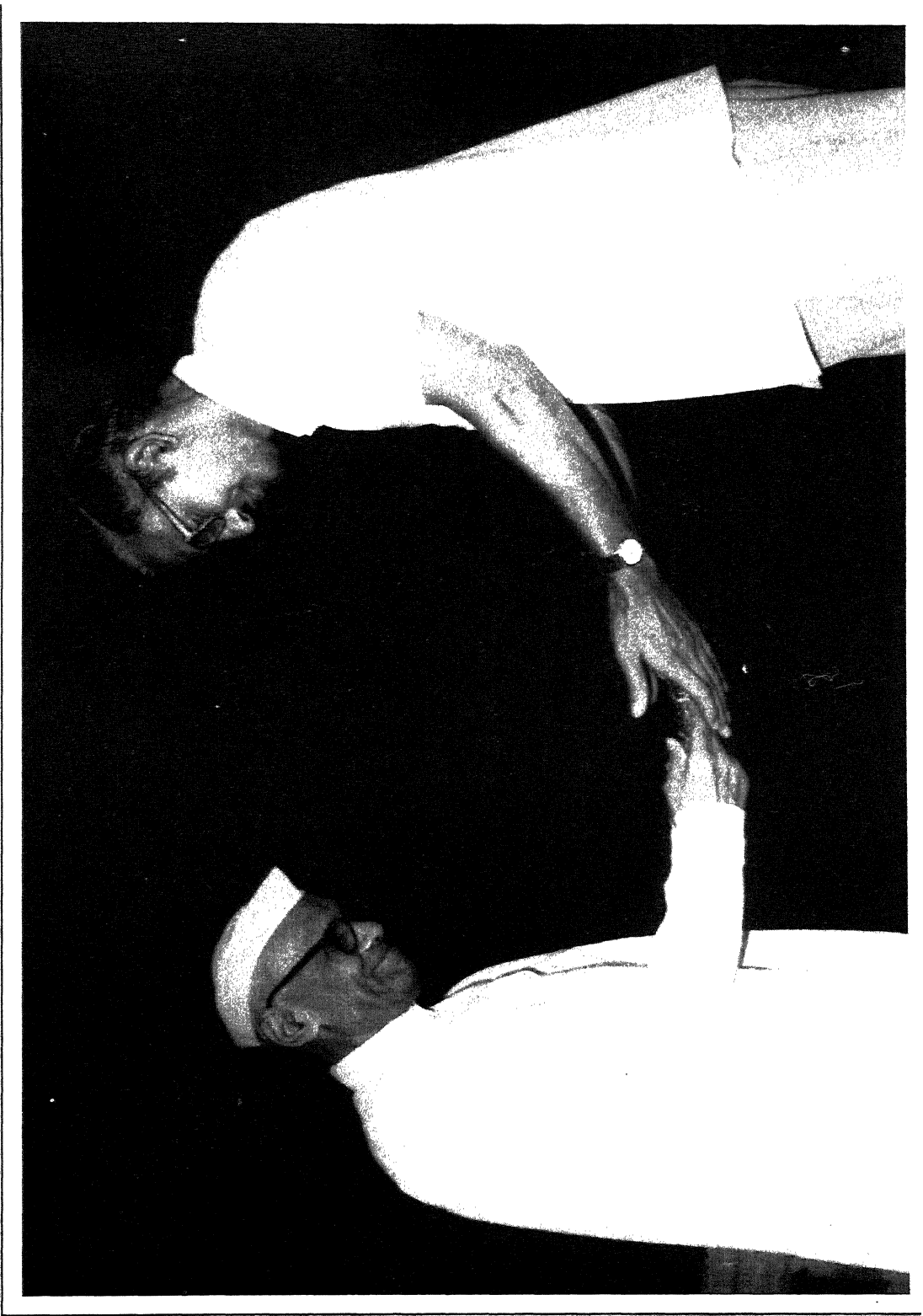
डा. आत्माराम से विज्ञान सरस्वती सम्मान ग्रहण करते हुए डा. मिश्र (१९७८)
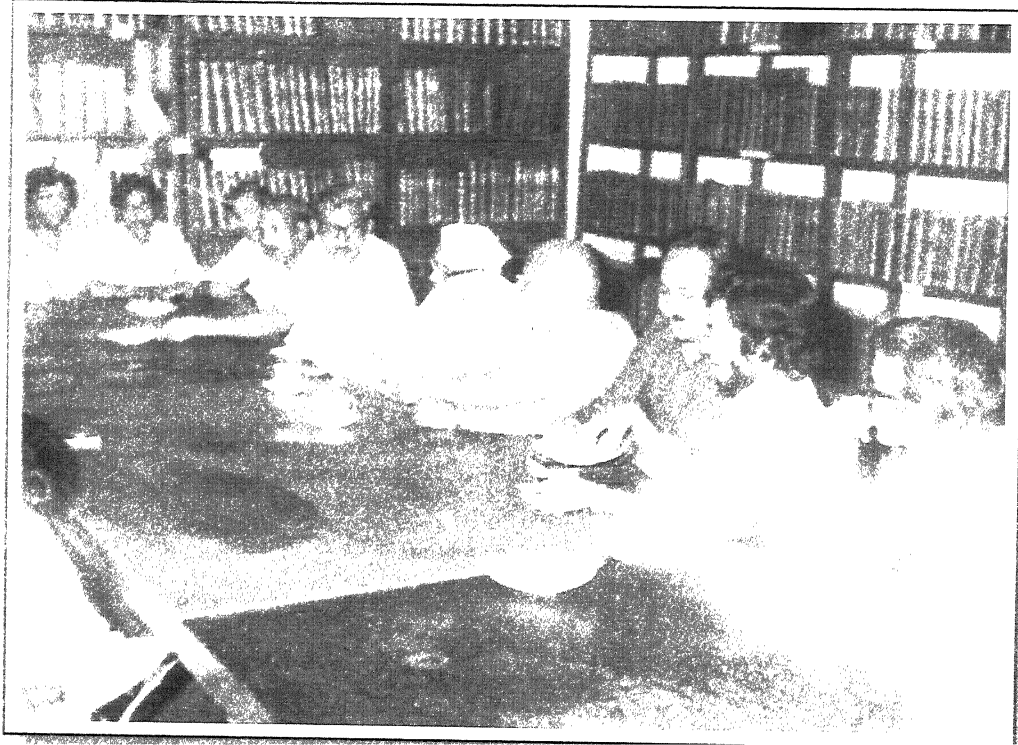
विज्ञान परिषद् पुस्तकालय कक्ष में डा. आत्माराम, स्वामी सत्य प्रकाश तथा रमेश दत्त शर्मा के साथ डा. मिश्र (१९७६)
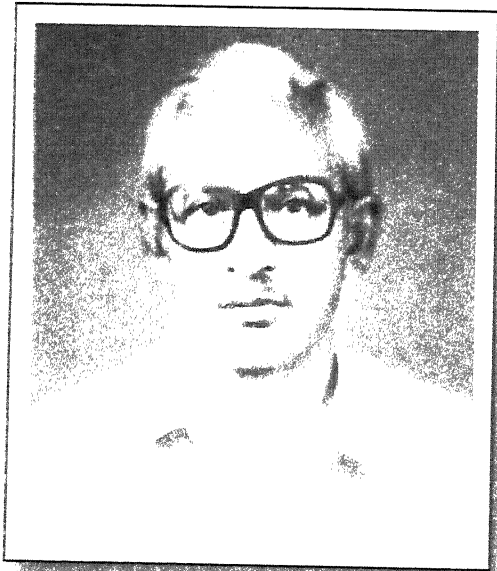
(१९५५)

अपने एकमात्र पुत्र आशुतोष के यज्ञोपवीत के अवसर पर (१९८५)
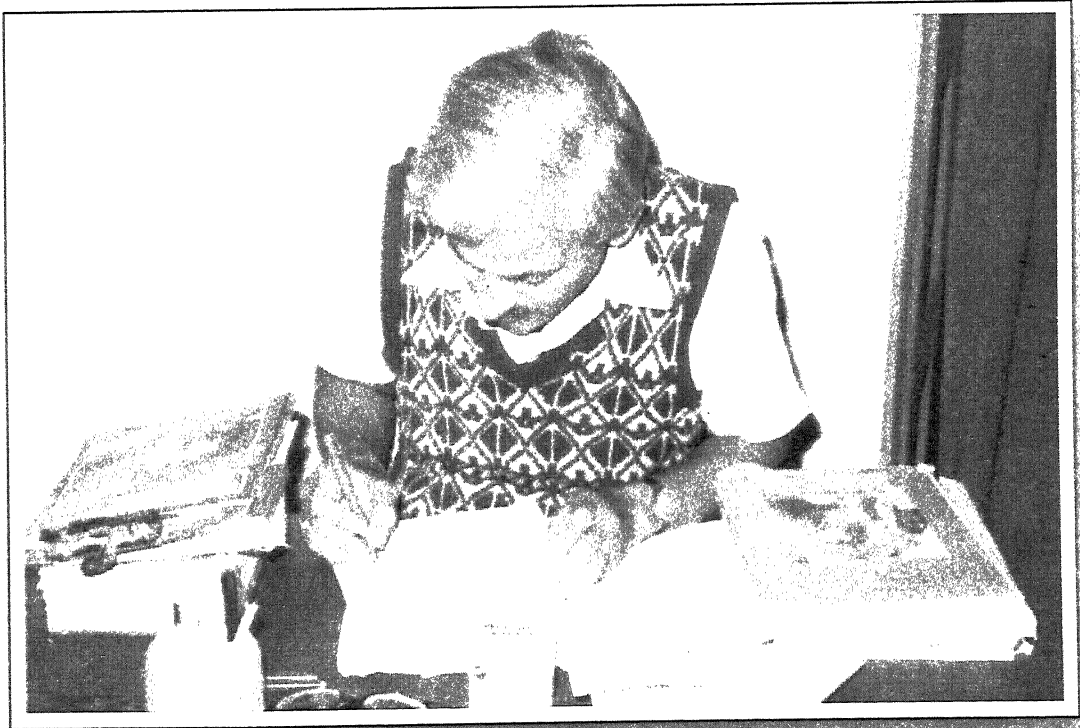
(१९९४)

दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन

विज्ञान-सरस्वती पुरस्कार

१९७८

श्री (डॉ०) शिव गोपाल मिश्र को

विज्ञान साहित्य की अभिवृद्धि में विशिष्ट योगदान के लिए दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन आज दिनांक ११ अगस्त, १९७८, शुक्रवार को विज्ञान सम्मेलन में **विज्ञान-सरस्वती** भेंट करता है।

(सत्यनारायण बंसल)
कार्यवाहक अध्यक्ष

(आत्माराम)
अध्यक्ष
विज्ञान सम्मेलन

(गोपालप्रसाद व्यास)
महामंत्री

विज्ञान सरस्वती सम्मान

शादी सुप्रसिद्ध भाषाविज्ञानी डॉ० उदयनारायण तिवारी की सुपुत्री के साथ हो गई। मेरे विवाह में पूज्य निराला जी ने आकर वर वधू को आशीर्वाद दिया था।

हिन्दी के प्रति मेरा झुकाव तभी से हुआ जब मैं बी.एससी. में पहुंचा। चूंकि मैं हिन्दी साहित्य सम्मेलन के निकट रहता था अतः मैंने क्रमशः विशारद और साहित्यरत्न की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। इस बीच १९५० में निराला जी से परिचय हो चुका था। मेरे प्रति उनका अगाध स्नेह था। मैं निरन्तर उनकी ओर खिंचता गया। १९५२ के बाद मैं नित्य ही प्रातः साइकिल से दारागंज जाता रहा और उनके संस्मरण भी लिपिबद्ध करने लगा। जिस दिन प्रातःकाल न जाता उस दिन सायंकाल विश्वविद्यालय से सीधे उनके यहां पहुंचता। उनकी सेवा से यह लाभ हुआ कि साहित्यकारों से भेंट हो सकी और उनसे परिचय बढ़ा। यह क्रम निराला जी की मृत्यु तक चलता रहा। मैंने पहले उनके अप्रकाशित गीतों का संकलन 'गीतगुंज' नाम से किया, फिर उनके निबन्धों को खोजकर 'चयन' तथा 'संग्रह' नाम से प्रकाशित कराया। उनकी भूमिकायें भी लिखीं। किन्तु निराला जी की मृत्यु के बाद मेरे जीवन के साहित्य स्रोत का प्रवाह मन्द पड़ गया।

अब मैं अपनी प्रयोगशाला में ही बद्ध हो गया था। नित नये शोधछात्र मेरे निर्देशन में शोध कार्य करने के लिये आने लगे। मैं उनके साथ मिट्टी के नमूने एकत्र कराने के लिये दूर दूर तक यात्रायें करने लगा। जो भी नये शोधपरिणाम निकलते, उन्हें शोधपत्रों के रूप में लिखना, विभिन्न शोध पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ भेजना और राष्ट्रीय संगोष्ठियों में भाग लेना मेरे जीवन के अभिन्न अंग बन गये। बीच में हाईस्कूल तथा इण्टर की कृषि की पाठ्यपुस्तकें लिखने का आमन्त्रण हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय बनारस से मिला तो अपने प्रथम शोध छात्र रमेश चन्द्र तिवारी के सहयोग से कृषि की पुस्तकों का पूरा सेट तैयार किया। यद्यपि इन पुस्तकों से मुझे कोई आर्थिक लाभ नहीं हुआ किन्तु लेखन के प्रति मेरी रुचि बढ़ी। परिणामस्वरूप १९७१ के बाद, मैंने हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी लखनऊ के लिये क्रमशः पादप रसायन, फास्फेट, सूक्ष्ममात्रिक तत्व तथा अम्लीय मृदायें नामक पुस्तकें लिखीं। इनमें से पहली एम.एससी. के लिये पाठ्यपुस्तक थी, शेष मेरे शोध कार्यों से सम्बद्ध मोनोग्राफ थे। मैंने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के लिये 'जैव उर्वरक' पुस्तक भी लिखी।

मैंने अपने शोध छात्रों के सहयोग से ५ वर्षों में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग को मृदा विज्ञान विषयक शोध कार्य का केन्द्र बना डाला। देश भर से शोध छात्रों ने आकर विविध विषयों पर शोध कार्य किया। पहले हमारा शोध कार्य फास्फेट पर था, फिर क्षारीय मृदाओं पर, तब सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर और उसके बाद पेस्टीसाइडों पर हुआ। बीच में (१९७०-७२) मुझे दो वर्षों के लिये 'भारत की सम्पदा' के सम्पादन हेतु हिन्दी विशेष अधिकारी बनकर सी.एस.आई.आर. नई दिल्ली जाना पड़ा किन्तु पुनः मैं प्रत्यावर्तित हो आया। १९८६ में डॉ० धर के आग्रह पर मैं रसायन विभाग से शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान चला गया। छह मास बाद ही डॉ० धर के निधन के बाद मैं इस संस्थान का निदेशक बना। यहां पर प्रायोगिक फार्म की सुविधा होने से मैंने क्षेत्र प्रयोग प्रारम्भ कराये और अपना ध्यान अब भारी धातुओं के कारण सम्भावित मृदा प्रदूषण पर केन्द्रित किया। यह सर्वथा नवीन कार्यक्षेत्र था। जब इस दिशा में काफी कार्य हो चुका तो मेरा ध्यान वर्मीकल्चर की ओर आकृष्ट हुआ।

निदेशक पद पर कार्य करते हुये मैंने अपने वरिष्ठ शोध छात्र डॉ० दिनेश मणि के साथ अंग्रेजी तथा हिन्दी में प्रदूषण, अपशिष्टों आदि पर अनेक पुस्तकें लिखीं।

१९९१ में निदेशक पद से अवकाश ग्रहण करने के बाद भी वर्षों तक एम.एससी. की कक्षायें लेता रहा और शोध कार्य कराता रहा। १९९७ में मैं तीन मास के लिये अपने पुत्र डॉ० आशुतोष मिश्र के पास डल्लस (संयुक्त राज्य अमेरिका) गया। लौटकर मैंने विज्ञान परिषद् को ही अपनी कार्यस्थली बनाया।

मैंने विश्वविद्यालय में पूरे ३५ वर्ष अध्यापन तथा शोध कार्य में बिताये। जब १९५६ में मैं विज्ञान परिषद् से जुड़ा तो अध्यापन के बाद सीधे वहीं पहुंचता और शाम तक कार्य करता। मेरे शिक्षक मित्रों को इस पर आश्चर्य होता रहा है, ईर्ष्या भी।

१९७० में 'भारत की सम्पदा' के सम्पादन के लिये शिक्षण कार्य से छुट्टी लेकर दिल्ली जाने के पीछे डॉ० सत्यप्रकाश जी का अनुरोध तथा दबाव था। सी.एस.आई.आर. के महानिदेशक डॉ० आत्माराम जी को भी मेरी कार्यक्षमता का भरोसा था। वहां पर मैंने डटकर कार्य किया। मुझे दिल्ली प्रवास का एक लाभ यह भी हुआ कि वहां के विज्ञान लेखकों से निकटता बढ़ी। सर्वश्री प्रेमानन्द चन्दोला, रमेशदत्त शर्मा, गुणाकर मुले, हरीश अग्रवाल, श्याम सुन्दर शर्मा, डी.एन. भटनागर से तभी घनिष्ठता हुई। सी.एस.आई.आर. में तुरशन पाल पाठक, जटाशंकर द्विवेदी, मनोज पटेरिया, दीक्षा विष्ट आदि की नियुक्तियों में मैंने भूमिका निभाई जिन्होंने आशानुरूप हिन्दी के कार्य को आगे बढ़ाया है।

१९८८ में विज्ञान परिषद् की पचहत्तरवीं वर्षगांठ के अवसर पर विज्ञान परिषद् की शाखायें खोलने का विचार जागा तो सबसे पहले दिल्ली, फिर रोहतक, बनारस तब जोधपुर, फैजाबाद, बड़ोदरा में क्रमशः शाखायें स्थापित कराने में मैंने अपना योगदान दिया। इससे विज्ञान परिषद् का कार्यक्षेत्र विस्तृत हुआ और इन केन्द्रों में हिन्दी के विज्ञान लेखकों की संख्या बढ़ी। इतना ही नहीं, पांच छह वर्ष पूर्व फैजाबाद की शाखा के अन्तर्गत भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति की भी नींव डाली गई। आज भी इन सारे केन्द्रों के लेखकों से मेरा सम्पर्क बना हुआ है।

१९९१ के बाद मैंने विज्ञान परिषद् को बौद्धिक केन्द्र बनाने के उद्देश्य से 'विज्ञान प्रसार' नई दिल्ली से पत्र व्यवहार किया। उसके निदेशक डॉ० नरेन्द्र सहगल ने परिषद् को क्रमशः कई प्रोजेक्ट दिये जिनका मूल उद्देश्य विज्ञान लोकप्रियकरण था। सर्वप्रथम 'स्वतन्त्रतापूर्व विज्ञान लोकप्रियकरण के व्यक्तिनिष्ठ प्रयास' पर एक कार्यशाला आयोजित की गई जिसमें पठित निबन्ध अब पुस्तकाकार हो चुके हैं। इसके बाद 'हिन्दी में विज्ञान लेखन के १०० वर्ष' पर कार्य शुरू हुआ। अन्त में 'व्यावहारिक विज्ञान परिभाषा कोश' प्रोजेक्ट शुरू किया गया।

जब १९९८ में श्रीमती डॉ० मंजु शर्मा, जो भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव हैं विज्ञान परिषद् की सभापति चुनी गईं तो उनके सौजन्य से 'विज्ञान' मासिक को नया रूप देने के लिये आर्थिक सहायता प्राप्त हुई जो अभी भी चालू है। फलतः 'विज्ञान' के आवरण पृष्ठ में आमूलचूल परिवर्तन सम्भव हो सका और अब वह मेरे सम्पादकत्व में नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है। जैव प्रौद्योगिकी विभाग विज्ञान परिषद् को जैव प्रौद्योगिकी विषयक लोकप्रिय व्याख्यान कराने के लिये भी आर्थिक सहायता दे रहा है। विज्ञान परिषद् के विगत ३ वर्षों में उल्लेखनीय कार्यों को देखते हुये जैव प्रौद्योगिकी विभाग ने जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश तैयार करने का महत्वपूर्ण कार्य सौंपा है। इसके अन्तर्गत १० हजार पारिभाषिक शब्दों की परिभाषायें दो वर्षों में पूरी की जानी हैं। इसका पूरा दायित्व

मेरे ऊपर है। यह पहला अवसर है जब सरकार द्वारा किसी गैर-सरकारी संस्था को ऐसा उत्तरदायित्व सौंपा गया है।

मेरा भरसक प्रयास रहा है कि विज्ञान परिषद् में महत्वपूर्ण गतिविधियां होती रहें। फलतः विगत १०-१२ वर्षों से एन.सी.एस.टी.सी. नई दिल्ली, भारतीय भाषा संस्थान मैसूर तथा शब्दावली आयोग नई दिल्ली के सहयोग से उपयोगी कार्यशालाओं का आयोजन होता रहा है जिनमें देश भर के हिन्दी विज्ञान लेखकों को एक मंच पर लाने का प्रयास किया जाता रहा है।

एन.सी.एस.टी.सी. द्वारा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिये हिन्दी प्रदेशों में जो कार्यशालायें डॉ० मनोज पटैरिया द्वारा आयोजित कराई जाती रहीं हैं उनमें भी मैं स्रोत व्यक्ति के रूप में आमन्त्रित होता रहा हूं और अपने मित्रों तथा शिष्यों को भी अवसर दिलाता रहा हूं।

१६७६ से ही मेरी रेडियो वार्तायें प्रसारित होती रही हैं जो मृदा विज्ञान से सम्बन्धित होती थीं। विगत ५-१० वर्षों से रेडियो वार्ता के लिये समय नहीं निकाल पाया हूं। १६६५ में पूज्य स्वामी सत्यप्रकाश की मृत्यु के बाद मेरी एक वार्ता २७.१.६५ को प्रसारित हुई, और फिर विज्ञान की दृष्टि में लोकाचार एवं रीति रिवाज पर।

जब डॉ० मुरली मनोहर जोशी केन्द्र सरकार में मंत्री बने तो एक शिष्टमंडल ने उन्हें विज्ञान परिषद् में बुलाकर परिषद् की आर्थिक स्थिति से अवगत कराया। उन्होंने 'विज्ञान' तथा 'अनुसन्धान पत्रिका' के प्रकाशनार्थ मिलने वाली सहायता में बढ़ोत्तरी करा दी और विज्ञान परिषद् में एक छोटा सा बैठक कक्ष जिसका नाम 'विज्ञान निकुंज' रखा गया है बनवा दिया।

परिषद् की सभापति डॉ० मंजु शर्मा ने मेरा अनुरोध स्वीकार करके परिषद् को एक कम्प्यूटर मुहैया करा दिया जिससे 'विज्ञान' की कम्पोजिंग परिषद् में होने लगी और परिषद् ने आत्मनिर्भरता की दिशा में डग भरना शुरू किया।

बहुत समय से मेरी आन्तरिक इच्छा रही है कि क्यों न विज्ञान परिषद् में 'विज्ञान' में पत्रकारिता शिक्षण कार्यक्रम शुरू किया जाये। सौभाग्यवश डॉ० मनोज पटैरिया को हमारा प्रस्ताव पसन्द आया और एन.सी.एस.टी.सी. के आर्थिक सहयोग से यह कार्यक्रम गत वर्ष शुरू हो गया। इससे अब नवयुक लेखकों को विज्ञान लेखन का शास्त्रीय प्रशिक्षण मिल सकेगा।

मैं विज्ञान परिषद् को राष्ट्रीय महत्व की संस्था बनाने का सपना संजोता आया हूं। इतनी प्राचीन संस्था को यह स्थान कभी का मिल जाना चाहिये था। मुझे विश्वास है हिन्दी के विज्ञान लेखक यदि संगठित हो पाये तो यह सपना अवश्य पूरा होगा।

स्वामी जी बड़े ही दूरदर्शी अनुभवी व्यक्ति थे। उन्होंने अपने जीवनकाल में परिषद् के कर्णधारों की स्मृति में विविध व्याख्यानमालायें चलाने का प्रस्ताव ही नहीं रखा था अपितु डॉ० आत्माराम की मृत्यु के बाद उनकी पत्नी सीतादेवी से एकमुश्त राशि लाकर जमा कर दी थी जिसके ब्याज से डॉ० आत्माराम स्मृति व्याख्यानमाला शुरू हो सकी। इसका प्रथम व्याख्यान उन्होंने स्वयं दिया था। उसके बाद श्री रामदास गौड़, डॉ० गोरख प्रसाद, श्री सालिगराम भार्गव एवं गंगानाथ झा व्याख्यानमालायें शुरू की गईं। इनमें दो व्याख्यानमालाओं के लिये स्वामी जी ने स्वयं धनराशि दी थी।

स्वामी जी इंडियन एकेडमी आफ साइंसेज बंगलोर की तरह विज्ञान परिषद् में भी फेलोशिप प्रदान करने की बात चलाते रहे। उनके जीवन काल में इसे मूर्त रूप न दिया जा सका। गत वर्ष विज्ञान

परिषद् ने पांच वैज्ञानिकों को यह सम्मान प्रदान करके स्वामी जी की इच्छा को मूर्त रूप दिया।

स्वामी जी ने बहुत पहले एक शोधपत्रिका निकालने का संकल्प लिया था। १६५८ में जब यह संकल्प पूरा हुआ तो सारा प्रबन्ध मेरे ऊपर छोड़ दिया। लेख जुटाना, अनुवाद करना, पत्रिका के प्रूफ देखना, भेजना- सारा कार्य मेरे जिम्मे पड़ा। ४३ वर्षों से यह कार्य अकेले करता आ रहा हूं। मैं इस प्रयत्न में हूं कि कोई उत्साही नवयुवक यह कार्य अपने ऊपर ले ले तो पत्रिका आगे निर्बाध गति से छपती रहे। राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रकाशित होने वाली यह पहली शोध पत्रिका है। विदेशों में इसका खूब स्वागत हुआ है। शोध क्षेत्र में हिन्दी को प्रवेश दिलाने में इस पत्रिका की अहम भूमिका है। अब जब दिल्ली, लखनऊ तथा पिलानी में आयोजित विविध वैज्ञानिक राष्ट्रीय संगोष्ठियों मे हिन्दी में ही शोध पढ़े जाते हैं और पुस्तकाकार होते हैं तो मन प्रफुल्लित हो जाता है। लगता है कि हमारे प्रयास सार्थक रहे।

विगत ४५-४६ वर्षों से विज्ञान परिषद् में कार्य करते हुये मुझे सन्तोष है कि परिषद् के उद्देश्यों की पूर्ति में मैंने यथायोग्य सहायता पहुंचाई है।

मेरी साहित्यिक यात्रा

अभी तक मैंने साहित्यिक यात्रा का उल्लेख नहीं किया। मुझे १६५० से ही ऐसा लगता रहा है कि विज्ञान के साथ साथ साहित्य का अध्ययन उपयोगी है। मैंने अपने ढंग से अवधी तथा ब्रजभाषा के ग्रन्थों का सम्पादन किया है और साथ ही लम्बी लम्बी भूमिकायें लिखी हैं। मेरा यह विचार है कि प्राचीन ग्रन्थों का उद्धार आवश्यक है। राहुल जी के संपर्क के बाद लोकसाहित्य में रुचि जगी तो अपने जनपद के कोने कोने में घूम घूम कर मैंने लोकगीतों, पंवारों तथा लोक कथाओं का संकलन किया। एक पुस्तक भी लिख डाली किन्तु वह अभी भी अप्रकाशित है। इस दौरान जनपद फतेहपुर के पुरातात्विक स्थलों को भी देखा तो उधर भी कुछ करने का मन हुआ जिसमें प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी से प्रेरणा प्राप्त की और 'अन्तरवेद' पत्रिका का पुरातत्व अंक निकाल दिया। मैंने 'अन्तरवेद' का लोकसाहित्य और निराला अंक भी निकाला।

धार्मिक साहित्य के प्रति मेरा झुकाव श्रीलप्रभुपाद की अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद करने के कारण हुआ। इस अनुवाद से मुझे मानसिक शान्ति मिली है और साथ ही हिन्दी में प्रचुर वैष्णव साहित्य प्रस्तुत करने का अवसर भी मिला है। इसी सम्बन्ध में मैंने श्री चैतन्य की जन्मस्थली मायापुर और जूहू स्थित श्रील प्रभुपाद द्वारा निर्मित मन्दिर देखा है। मुझे हरे कृष्ण वालों के क्रियाकलापों से उनकी गुरुनिष्ठा का जो आभास हुआ उससे मैं अभिभूत हूं। मैंने श्रील प्रभुपाद के जीवन चरित्र का भी अनुवाद किया है जिसमें डल्लास से शुरू किये गये हरे कृष्ण आन्दोलन का वर्णन आया है। फलतः जब मैं १६६७ में अमेरिका गया तो डल्लास के हरे कृष्ण मन्दिर भी गया था।

पारिवारिक जीवन

मैं अपने पारिवारिक जीवन के विषय में भी कुछ कहना चाहूंगा। मेरी पत्नी श्रीमती रामकुमारी मिश्र ने बड़े ही धैर्य के साथ तथा परिश्रम से बच्चों का पालन करने के साथ ही डी.फिल. और डी.लिट. की उपाधियों के लिये कार्य किया और बाद में हिन्दी विभाग में अध्यापन कार्य किया। उनसे मुझे निरन्तर प्रोत्साहन एवं ऊर्जा मिलती रही है। मेरी चार पुत्रियों तथा एक पुत्र ने मुझसे आत्मनिर्भरता का पाठ सीखा है। यदि मैं उनके लिये सारी भौतिक सुविधायें नहीं जुटा पाया तो उसका उन्हें मलाल नहीं है। उन्हें मेरे साथ रहकर शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अवसर मिला है और उन्होंने

अपनी अपनी रुचि के अनुसार उच्च्व शिक्षा ग्रहण की है और अब वे सभी अच्छे अच्छे पदों पर हैं।

मैं चाहकर भी अपने सम्बन्धियों से अधिक मिल-जुल नहीं पाया। समय का अभाव ही मुख्य कारण रहा है।

मैंने सदैव यही प्रयास किया है कि हिन्दी में विज्ञान लेखन को नया स्वरूप दिया जाय। मैंने विज्ञान कथा और विज्ञान कविता का भी समर्थन किया। नाटकों तथा विभिन्न लोकविधाओं पर भी मेरी दृष्टि लगी है।

स्वामी जी का मुझपर अत्यधिक स्नेह था। उनकी मृत्यु के बाद मैंने उनके कुछ अंग्रेजी व्याख्यानों का हिन्दी अनुवाद 'आर्ष विज्ञान' नाम से परिषद् से छापा है। इससे हिन्दी पाठकों के समक्ष भावपूर्ण प्रमाणिक वैज्ञानिक निबन्धों की बानगी मिल सकेगी।

मैंने अपने शिक्षागुरु डॉ० धर की स्मृति को सजल बनाये रखने के लिये १९८८ से ही एक व्याख्यानमाला शुरू कराई है जिसके अन्तर्गत अभी तक १२ विख्यात मृदाविज्ञानी अपने व्याख्यान दे चुके हैं।

अपने साहित्यगुरु महाकवि निराला पर मैं १९५६ से ही खोजपूर्ण निबन्ध लिखता रहा हूं किन्तु उनकी शताब्दी वर्ष के अवसर पर मैंने **'महामानव निराला'** नामक पुस्तक भी लिखी। अभी एक पुस्तक **'ऐसे थे हमारे निराला'** छपनी शेष है।

मैंने हिन्दी साहित्य के इतिहास के अछूते पक्षों पर कलम चलाई है। मैंने अनेक पुराने कवियों की कृतियों की सूचना दी है और अनेक वरिष्ठ साहित्यकारों के अभिनन्दन ग्रन्थों के लिये संस्मरणात्मक निबन्ध भी लिखे हैं।

विज्ञान विषयक लेख तो १९५६ से ही लिखता रहा हूं। शायद ही कोई विज्ञान पत्रिका हो जिसको मैंने लेख न दिये हों। अधिकांश पुराने लेखक मेरे परिचित हैं।

कुछ वर्षों से विज्ञान लेखन के इतिहास पर मनन चिन्तन करता रहा हूं। १९९९ में हिन्दुस्तानी एकेडमी में एक भाषण में काल विभाजन के अनुसार विज्ञान लेखन की समीक्षा किये जाने पर मैंने बल दिया था। मेरा निश्चित मत है कि स्वस्थ लेखन के लिये ऐसा इतिहास लिखा जाना नितान्त आवश्यक है। लेखकों को अपने से पूर्व वालों तथा समकालीन लेखकों का ज्ञान होना ही चाहिये जिससे वे अंधेरे में तीर चलाने से बच सकें। अभी तक जो कुछ लिखा जा चुका है उसकी निर्भीक समीक्षा आवश्यक है। विज्ञान लेखन की विभिन्न प्रवृत्तियों की भी खोज की जानी चाहिये और जिन विधाओं में अभी लेखन नहीं हुआ उन पर लेखनी चलनी चाहिये। सर्वांगीण वैज्ञानिक साहित्य के लिये ऐसा आवश्यक है। अन्यथा हिन्दी का विज्ञान लेखन बंजर भूमि में बीज बोने जैसा होगा। उच्च्व पदों पर आसीन हमारे वैज्ञानिकों को यह एहसास हो जाना चाहिये कि उन्हें हिन्दी में अपनी शोधों को प्रकाशित करना होगा। अभी तक हिन्दी में जो लोकप्रिय विज्ञान लेखन चल रहा है वह सामान्य ज्ञान वाले लेखकों के बल पर है। उसे उच्च्वस्तरीय बनाने के लिये उच्च्वासीन लोगों को राष्ट्रभाषा अपनानी होगी। यद्यपि आजकल हिन्दी के विज्ञान लेखक चतुर्दिक पुरस्कृत एवं सम्मानित हो रहे हैं किन्तु यह तो गन्तव्य नहीं है। हिन्दी में स्तरीय वैज्ञानिक साहित्य का सृजन आवश्यक है।

मैं अब जहां पर खड़ा हूं वहां से पीछे मुड़कर देखता हूं तो पाता हूं कि मेरी प्रेरणा के सारे स्रोत क्रमशः तिरोहित होते जा रहे हैं। मुझे प्रोत्साहित करने वाले मेरे गुरुजन एक एक करके चले गये। पहले

डॉ० गोरख प्रसाद, फिर प्रो० फूलदेव सहाय, फिर डॉ० आत्माराम और अन्त में स्वामी सत्यप्रकाश जी। अब जितने गुरुजन बचे हैं वे मुझसे दूर हैं। मैं आदरणीय डॉ० रामचरण मेहरोत्रा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहूंगा। वे मुझे सभी प्रकार से प्रोत्साहित करते रहे हैं। डॉ० चन्द्रिका प्रसाद जी के प्रति भी विनयावनत हूं। मेरा पत्र व्यवहार, विदेशी मृदाविज्ञानी डॉ० डब्ल्यू.पी. केली तथा सी.ए. ब्लैक से होता रहा। भारत के मृदा विज्ञानियों में डॉ० एस.पी. रायचौधरी (दिल्ली), डॉ० बी.वी. मेहता (आनन्द, गुजरात), डॉ० ए.एन. पाठक (कानपुर) तथा डॉ० एन.एस. रंधावा (लुधियाना) से सम्पर्क रहा है। अपने शोध छात्रों तथा विद्यार्थियों से भी मैंने निरन्तर सम्पर्क बनाए रखा है।

इसी तरह हिन्दी साहित्य के मेरे आराध्यों में क्रमशः निराला जी, राहुल जी, डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल जी, श्री अगरचन्द नाहटा जी, पं० हरिहर निवास द्विवेदी, पं० कृष्णदत्त वाजपेयी, डॉ० रामविलास शर्मा कालकवलित हो गये। श्री नारायण दत्त जी, डॉ० किशोरी लाल गुप्त जी, श्री श्याम सरन विक्रम प्रभृति मेरे शुभैषी अभी मेरी खोज खबर लेते रहते हैं। मेरे ग्रामीण मित्र रावत ओउम प्रकाश सिंह तथा ठा० चन्द्रपाल सिंह के निधन से मेरी अपूरणीय क्षति हुई है। अपने गांव, अपने पुराने परिचितों, मित्रों, प्रशंसकों के प्रति मेरे मन में सदैव आदर का भाव रहा है। आज भी उनकी स्मृति से आंखें सजल हो उठती हैं। यदि मेरा परिवार, मेरा गांव, मेरा जनपद, मेरा विश्वविद्यालय और यह विज्ञान परिषद् मुझे किंचित्मात्र भी आदर के योग्य समझती है तो मैं अपने को धन्य मानूंगा। मेरी सत्तरवीं वर्षगांठ पर अभिनन्दन ग्रन्थ का यह आयोजन इसका प्रमाण है कि विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी प्रतिष्ठित हुई है और प्रतीक रूप में मुझे सम्मान देकर हिन्दी के लेखक स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं।

२५, अशोक नगर
इलाहाबाद-१

मेरे अनन्य

श्रीमती डॉ० रामकुमारी मिश्र

डॉ० मिश्र फतेहपुर जनपद के अन्तर्वर्ती भाग में बसे हुये नरौली ग्राम के निवासी हैं। अपने से बड़े चार अग्रज, एक अनुज और दो छोटी बहनें तथा अपनी माता जी के साथ संयुक्त, शिक्षित तथा सुसंस्कृत परिवार में रहते हुये अपने जिले के प्राचीन गौरवशाली वैभव के प्रति विशेष जागरूक एवं अपनी मातृभाषा अवधी के प्रति गहन रुचि रखने वाले हैं। मात्र ११ वर्ष की अवस्था में पिता की छत्रछाया से विहीन होने के उपरान्त उन्होंने जो संकल्प लिया, अपनी प्रखर प्रतिभा, परिश्रम, इष्ट मित्रों की प्रेरणा एवं गुरुजनों के आशीर्वचनों के परिणामस्वरूप अपने उद्देश्य पूर्ति करने में समर्थ हो सके। हाई स्कूल से एम.एससी. (विज्ञान विषय को लेकर) तक की तथा उसी के समानान्तर हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विशारद और साहित्यरन्त जैसी परीक्षायें उन्होंने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं तथा सन् १९५५ में इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से ही कृषि रसायन विषय में डॉ० एन.आर. धर के निर्देशन में डी.फिल. की उपाधि ग्रहण की। अपनी मातृभाषा अवधी के प्रति विशेष स्नेह और सम्मान के उद्देश्य से उन्होंने अवधी भाषा में लिखित किन्तु अप्रकाशित अनेक सूफी एवं असूफी प्रेमाख्यानों को सम्पादित और प्रकाशित करके हिन्दी जगत के समक्ष प्रस्तुत किया जो इनके पूर्व किसी अन्य विद्वान द्वारा सम्भव न हो सका था।

डॉ० मिश्र की कुशाग्र बुद्धि और शान्त प्रकृति से आकृष्ट होकर महापंडित राहुल सांकृत्यायन एवं मथुरा संग्रहालय के क्यूरेटर पं० कृष्णदत्त बाजपेयी ने परस्पर विचार-विनिमय करते हुये १९५६ में इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में रसायन विभाग में प्रवक्ता पद पर आसीन डॉ० मिश्र की वैवाहिक पृष्ठभूमि की सृष्टि करते हुये डॉ० उदयनारायण तिवारी की पुत्री के लिये न केवल वर रूप में ही चुना बल्कि उन्हें आग्रहपूर्वक पुत्री रामकुमारी के लिये वर की सूचना देकर विवाह के लिये भी प्रेरित किया। चूंकि डॉ० मिश्र के अग्रज अपनी डफली अपना राग अलापने वालों में से थे अतः महापंडित राहुल सांकृत्यायन के एक वर्ष के कठिन प्रयास से ही यह वैवाहिक गठबन्धन सम्भव हो सका। परिवार के अन्य सदस्य भले ही इच्छुक न रहे हों, मेरी सास श्रीमती पार्वती देवी अपने सुयोग्य पुत्र के विवाह से अधिक प्रसन्न हुईं और मेरे बाबूजी (डॉ० उदय नारायण तिवारी) द्वारा दिये गये वरेच्छा को स्वतः अपने हाथों स्वीकार करते हुई विवाह की स्वीकृति दे दी। इस प्रकार २१ जून १९५७ की शुभ वेला में मैं डॉ० मिश्र के साथ परिणय-सूत्र में बँधी। गौने की रीति के अनुसार विवाह के ९वें दिन २९ जून १९५७ को विदा होकर नरौली ग्राम के पैतृक निवास में नवेली वधू के रूप में डॉ० मिश्र के साथ मेरा पदार्पण हुआ। मेरी सास अत्यधिक प्रसन्न थीं। इस शुभ घड़ी में अपने स्वर्गीय पति का स्मरण करती हुई मुझे गोद में लेकर देर तक रोती रहीं। उन्होंने सब प्रकार से मेरी सुख सुविधा का ध्यान रखते हुये अन्य

समस्त लोक रीतियों को आनन्द और उत्साहपूर्वक सम्पन्न किया। ६ दिन बाद इलाहाबाद से मेरा छोटा भाई मुझे विदा कराने नरौली पहुँचा और विदा होकर मैं अपने पितृगृह अलोपीबाग आ गयी। इन्हीं दिनों महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने डॉ० मिश्र के साथ मसूरी स्थित निवासगृह हैपीवेली आने का आमन्त्रण दिया किन्तु दोनों पक्ष (मायके और ससुराल) की रूढ़िवादिता से यह सम्भव न हो सका क्योंकि अभी द्विरागमन नहीं हुआ था।

मैं अपनी ससुराल नरौली से पहली बार विदा होकर जब अपने घर आ गई थी तो एक दिन डॉ० मिश्र ने अपने भतीजे से एक पत्र इस आशय का भेजा कि मेरी नियुक्ति सीएसआईआर के रोड रिसर्च इन्स्टीट्यूट (मथुरा रोड) में 'साइंटिस्ट' पद पर हो गयी है। क्या मैं वहां स्वीकृति पत्र भेज दूं ? मैंने बिना किसी विचार के प्रत्युत्तर में लिखा 'आप वहां स्वीकृति पत्र न भेजें। यूनिवर्सिटी का प्रवक्ता पद श्रेयस्कर होगा।' वास्तविकता यह थी कि मुझे युनिवर्सिटी की नौकरी के अतिरिक्त किसी अन्य पद अथवा नौकरी के बारे में कोई ज्ञान न था। मुझे अपनी अज्ञानता का बोध और क्षोभ तब हुआ जब अस्थायी पद पर नियुक्त डॉ० मिश्र की नौकरी में व्यतिक्रम उपस्थित हुआ। यद्यपि यह व्यतिक्रम केवल कुछ महीनों का था किन्तु आर्थिक स्थिति से निपटने के लिये पर्याप्त कष्टदायी रहा। यही नहीं, आगे भी अनेक संघर्षों का सामना करना पड़ा किन्तु सभी कठिनाइयों को झेलते हुये डॉ० मिश्र अनवरत रूप से अपने अध्ययन और अध्यापन कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न करने में लगे रहे। उन्हीं दिनों डॉ० मिश्र ने हायर परचेज का एक मकान (२५ नं० अशोक नगर) कुछ धनराशि देकर अपने नाम से ले लिया जिसका प्रतिमाह ४१ रु० के हिसाब से मकान का किराया म्युनिसिपल बोर्ड में जमा करना पड़ता और उसी में जाकर रहने लगे। मेरी दूसरी विदाई नवम्बर के महीने में हुई और मैं अलोपीबाग से विदा होकर पतिगृह २५ अशोक नगर इलाहाबाद में आकर रहने लगी। इस प्रकार नवम्बर १९५७ से लेकर आज तक मैं अपने इस निजी गृह में रह रही हूँ।

डॉ० साहब के मन में अपने गुरुजनों (साहित्यकार अथवा वैज्ञानिक) के प्रति स्नेह और सम्मान की भावना के साथ साथ उनसे कुछ सीखने की चाह ही नहीं दृढ़तापूर्वक अमल करने की क्षमता ने उन्हें उस ऊंचाई तक पहुंचाने में सहयोग दिया जहां तक वे पहुंचना चाहते थे। महान पुरुषों के गुणों का संचयन उन्होंने स्वयं के लिये उपलब्ध पौष्टिक आहार माना। समय के प्रति पल का हिसाब रखना और निरन्तर स्वयं को कार्य में व्यस्त रखना उन्हें बचपन से आता था। उनकी बाल्यकालीन कवितायें इसकी साक्षी हैं। उनकी विलक्षण प्रतिभा और प्रकृति को सहज समझ पाना सामान्य व्यक्ति के लिये आज भी दुष्कर है। परिवार के कुछ सदस्य उनकी प्रतिभा और योग्यता को बिना समझे बूझे प्रायः मखौल उड़ाते हुये खोट निकालने का प्रयास करते जो मेरे लिये असह्य होता। वाह्य रूप से रुक्ष और गम्भीर किन्तु आन्तरिक रूप से मृदु एवं स्नेहसिक्त, अधिक स्पष्टवादी और बनने अथवा बिगड़ने की चिन्ता से रहित, दूसरों द्वारा अपमानित अथवा उपेक्षित होने पर विष के घूंट पीकर मौन रह जाना और परिणाम तथा अन्त का विचार उसी पर छोड़ देना डॉ० साहब की प्रकृति के विशेष गुण हैं।

अपनी निजी प्रकृति के धनी डॉ० मिश्र दूसरों की दृष्टि में विरोधी प्रवृत्ति के भले जान पड़े हों, यह उनका स्वाभाविक गुण ही रहा है। स्वयं की दृष्टि से अनुचित विचारों को उन्होंने कभी भी समर्थन अथवा उनसे समझौता नहीं किया। दूसरों द्वारा दिये गये न्याय को अस्वीकार करते हुये उन्होंने अपने अन्तर्मन के न्याय को ही सर्वश्रेष्ठ माना है। जाति पांति का भेद न मानते हुये रिश्तेदारों की तुलना में

मित्रों से सहयोग लेना उन्हें अधिक पसन्द रहा है। मदनमोहन मालवीय हास्टल के वार्डेन होते हुये अथवा विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री होते हुये या कि शीलाधर इन्स्टीट्यूट के निदेशक पद पर कार्य करते हुये डॉ० मिश्र ने कभी भी आफिस के बड़े अथवा छोटे कर्मचारी को घर पर बुलाकर अपना व्यक्तिगत कार्य कराने की बेगारी नहीं ली। यदि कभी आवश्यकता भी पड़ी तो पैसा देकर उनसे कार्य लिया अथवा अपने घर के नौकर नौकरानियों से कार्य लेना अथवा स्वयं अपने हाथों अपना कार्य करना उचित माना। वे निरन्तर इसी प्रयास में रहते कि घर अथवा बाहर प्रत्येक कार्य अनुशासित रूप से सम्पन्न हो और अपना काम दूसरों से न कराकर खुद किया जाये। तत्सम्बन्धी घर के बाहर और भीतर होने वाली आलोचना-प्रत्यालोचना से कभी भी वे भयभीत नहीं हुये।

सन् १९५८ ई० से १९७० के बीच मैं क्रम से ४ पुत्रियों और एक पुत्ररत्न की मां बनने से गौरवान्वित हुई। यद्यपि हम दोनों के विचार से परिवार बढ़ाने की कोई योजना न थी किन्तु मायके ससुराल के वयोवृद्ध जन ही नहीं, डॉ० मिश्र के सुहृद और गुरुजन भी प्रायः पुत्ररत्न की कामना करते अथवा मनोविनोद करते हुये उत्तराधिकारी की बात अवश्य कह जाते और सभी गुरुजनों के आशीर्वचन के रूप में मुझे जुलाई सन् १९७० में पुत्ररत्न के रूप में पांचवीं सन्तान चि० आशुतोष की प्राप्ति हुई। सभी बच्चों का पालन पोषण करते हुये हम दोनों ने कर्तव्य निभाने का पूरा प्रयास किया। ज्येष्ठ पुत्री शुभा ने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से रसायन विषय में एम.एससी. उत्तीर्ण किया। वह सभी कक्षाओं में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होती हुई विज्ञान की छात्रा बनी। अन्य तीन पुत्रियां क्रमशः विभा, आभा और निशि ने साहित्य वर्ग लेकर हाई स्कूल से एम.ए. तक की परीक्षाएं प्रथम श्रेणी में सर्वोच्च अंकों से उत्तीर्ण कीं। द्वितीय और तृतीय पुत्री विभा और आभा ने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के इतिहास विभाग से डी.फिल. उपाधि भी ग्रहण की। चतुर्थ पुत्री ने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से मनोविज्ञान विषय लेकर सर्वोच्च श्रेणी में एम.ए. उत्तीर्ण किया और रांची की मनोचिकित्सा विज्ञानशाला में अध्ययन करते हुये एम.फिल की उपाधि ग्रहण की। मेरी पांचवीं सन्तान आशुतोष ने इण्टरमीडियेट परीक्षा उत्तीर्ण करके कानपुर के आई.आई.टी. से रसायन की एम.एससी. परीक्षा (५ वर्ष की) उत्तीर्ण की और अमेरिका से प्राप्त छात्रवृत्ति के लिये चुने जाने पर अमेरिका जाकर अन्य कई कोर्स उत्तीर्ण करते हुये सन् १९९७ में अमेरिका की डेंटन यूनिवर्सिटी से डी.फिल. की उपाधि प्राप्त की और वह पहले टेक्साज इन्स्ट्रूमेन्ट में इंजीनियर और अब लिक्विड एयर के निदेशक पद पर कार्यरत है।

डॉ० मिश्र ने कभी भी किसी बच्चे को न तो बार बार पढ़ने की हिदायत दी, न बैठकर कोई विषय पढ़ाना स्वीकार किया। वे अच्छी से अच्छी पुस्तकें उनके लिये बाजार से खरीद कर लाते, उनके लिये विविध मैगजीन लेते और कहते पुस्तक में सब कुछ लिखा है, ठीक से पढ़ो। सब कुछ पुस्तक में मिल जायेगा। परिणामस्वरूप बच्चों ने उनसे पढ़ना अथवा पूछना अनावश्यक माना और पुस्तकों से ही ज्ञान अर्जन किया।

मेरे पूज्य पिता डॉ० उदयनारायण तिवारी पुत्र और पुत्रियों में अन्तर न मानने वाले और स्त्री की उच्च शिक्षा के समर्थक थे। उनके मन में स्त्रियों के प्रति विशेष स्नेह और श्रद्धा की भावना थी। सन् १९५५ में एम.ए. (हिन्दी) उत्तीर्ण करने के उपरान्त जब मुझे अपने बाबूजी के साथ लिंग्विस्टिक समर स्कूल के लिये पूना जाने का अवसर प्राप्त हुआ तो मैंने वहां से वर्णनात्मक भाषा विज्ञान का जूनियर कोर्स उत्तीर्ण किया। मेरी रुचि देखते हुये मेरे बाबूजी ने पूना में ही यह निश्चय किया कि वे

इसी वर्णनात्मक भाषा विज्ञान की दृष्टि से बिहारी सतसई का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करने की बात पर विचार करेंगे। किन्तु जब मैंने अपने शोध का विषय विभाग में प्रेषित किया तो इलाहाबाद यूनिवर्सिटी की आर्ट फैकल्टी के दिग्गज विद्वान सदस्यों द्वारा परिवर्द्धित और संशोधित विषय बिहारी सतसई का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन (प्रकाशित एवं प्राचीन पाण्डुलिपियों के आधार पर) तै हुआ। आकार, प्रकार और विस्तार की दृष्टि से यह विषय अत्यन्त व्यापक था। मुझे भयभीत व चिन्तित देखकर बाबूजी ने मुझे धैर्य बंधाया और कहा कि पाण्डुलिपियों की खोज के लिये प्रयास होने के उपरान्त विषय बोधगम्य हो जायेगा। उन्होंने पं० श्री नारायण जी चतुर्वेदी के माध्यम से बिहारी सतसई की एक अत्यन्त प्राचीन पाण्डुलिपि भी प्राप्त की। शोध के लिये उन्होंने मुझे वाराणसेय संस्कृत यूनिवर्सिटी की प्रथमा परीक्षा पास करने का आदेश दिया ताकि मैं समस्त व्याकरणिक नियमों को समझ सकूं। सन् १९५६ में मैने शोध आरम्भ किया।

विज्ञान और साहित्य के साथ साथ फतेहपुर जिले की पुरातात्विक सामग्री की शोध में गहन रुचि रखने वाले डॉ० मिश्र ने अज्ञात पाण्डुलिपियां प्राप्त कीं, उन पर विविध पत्र पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित करते हुये साहित्य जगत को उनकी जानकारी दी। अत्यन्त परिश्रमपूर्वक कैथी लिपि में लिखित मध्यकालीन सूफी और असूफी कवियों की अज्ञात पाण्डुलिपियों को बांचकर तथा अन्य पाण्डुलिपियों से मिलान करते हुये प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत कर संपादन और प्रकाशन कराया। अपने विवाह से पूर्व ही उन्होंने सूफी कवि मंझनकृत मधुमालती तथा असूफी कवि ईश्वरदासकृत सत्यवती का संपादन और प्रकाशन हिन्दी प्रचारक वाराणसी तथा विद्या मन्दिर ग्वालियर से सम्पन्न कर लिया था। ये दोनों पुस्तकें पुरस्कृत भी हुईं। फिर तो अज्ञात पाण्डुलिपियों के सम्पादन और प्रकाशन का ऐसा क्रम जारी हुआ कि सन् १९६१ ई० में कुतुबनकृत मृगावती और सन् १९६३ में भीमकृत डंगवैकथा जैसी दुर्लभ कृतियां डॉ० मिश्र द्वारा सम्पादित होकर प्रकाश में आयीं।

यह मेरा परम सौभाग्य है मैं डॉ० मिश्र जैसे मेधावी, कर्मठ, अध्यवसायी और सुयोग्य विद्वान के साथ परिणय-सूत्र में बँधी। निस्सन्देह यदि यह सुयोग मुझे न प्राप्त होता तो अवश्य ही मेरा शोध निबन्ध अधूरा रह जाता अथवा होना संभव न हो पाता। मेरे शोध विषय से अवगत होने पर उन्होंने मुझे पूरे प्रयास के साथ कार्य में जुट जाने का आदेश दिया। वे निरन्तर मुझे लेख लिखने तथा पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित करने की प्रेरणा देते रहते। मैं भी उनके आदेशानुसार गृहकार्य से समय निकालकर कुछ न कुछ लिखती, प्रकाशन के लिये भेजती और प्रकाशित होने पर प्रसन्नता से झूम उठती। लेख के पारिश्रमिक के रूप में १५ रु० का मनीआर्डर बहुत बड़ी आनन्दोपलब्धि लेकर आता। जब मेरी बड़ी बेटी शुभा आठ मास की हुई तो डॉ० मिश्र मुझे शोध के निमित्त वाराणसी लेकर गये। वहां काशी नागरी प्रचारिणी संग्रहालय के रत्नाकर संग्रह तथा याज्ञिक संग्रह में सुरक्षित बिहारी सतसई की दर्जनों पाण्डुलिपियां देखने को मिलीं। नागरी प्रचारिणी सभा के अतिथिगृह में रहते हुये देर रात्रि तक हम दोनों साथ बैठकर पाण्डुलिपियों को देखते रहते और कार्य करते रहते। छोटी बच्ची के साथ कार्य करने की कठिनाई को देखते हुये संग्रहालय के कार्यकर्ताओं ने अत्यन्त उदारतापूर्वक मुझे अतिथि भवन में पाण्डुलिपियां ले जाकर कार्य करने में जो सहयोग दिया वह चिरस्मरणीय होगा। यही नहीं, कई पाण्डुलिपियों की प्रतिलिपि कराकर मेरे कार्य की दिशा को आगे बढ़ाने में जिन्होंने मेरा उत्साहवर्धन किया मैं उनके प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूं। मैं हिन्दी साहित्य सम्मेलन संग्रहालय की भी अत्यन्त आभारी

हूं जहां से पाण्डुलिपियां प्राप्त कर घर बैठे अपने शोध कार्य को करने में सक्षम हो सकी। यही नहीं, उन दिनों इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के लाइब्रेरियन त्रिवेदी जी ने इंडिया आफिस लाइब्रेरी लन्दन से प्राप्त बिहारी सतसई की माइक्रोफिल्म प्रति जो अत्यन्त प्राचीन थी को सुलभ कराने तथा पढ़े जाने की व्यवस्था कराई। मैं उनकी भी चिरऋणी हूं। तात्पर्य यह है कि डॉ० मिश्र के निर्देश और सहयोग से ही बिहारी सतसई का पाठ सम्पादन सम्भव हो सका। भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के लिये उन्होंने तत्सम्बन्धी अनेकानेक पुस्तकें भी खरीद कर कार्य को गतिशील बनाया। परिणामस्वरूप सभी के सौहार्द, सौजन्य और सहयोग से मैं सन् १९६१ में इलाहाबाद से डी.फिल की उपाधि प्राप्त कर सकी।

डॉ० मिश्र के साहित्य के प्रति अनन्य अनुराग देखते हुये उनके वयोवृद्ध शुभचिन्तकों में सन्देह था कि कहीं उनकी वैज्ञानिक शोध सम्बन्धी दृष्टि एकांगी बनकर न रह जाये। प्रकारान्तर से प्राप्त इन निर्देशों पर गौर करते हुये डॉ० मिश्र ने विज्ञान और साहित्य का संतुलन आद्योपान्त बनाये रखा। सन् १९५८ में प्रकाशित असूफी कवि ईश्वरदासकृत सत्यवती तथा अन्य रचनायें तथा सूफी कवि मंझनकृत मधुमालती, सन् १९६० में प्रकाशित सूफी कवि कुतुबनकृत मृगावती तथा इसी वर्ष प्रकाशित वैज्ञानिक कृति भारतीय कृषि का विकास तथा सन् १९६१ में लीनियस पालिंग कृत 'कालेज केमिस्ट्री' का 'विद्यालय रसायन' नाम से अनुवाद, सन् १९६३ ई० में प्रकाशित भीमकृत 'डंगवैकथा', सन् १९७० में थाइमेन कृत 'द लाइफ आफ बैक्टीरिया' का अनुवाद, सन् १९७२ में डचरकृत कृषि जैव रसायन का अनुवाद तथा इसी वर्ष वैज्ञानिक अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली में विशेष अधिकारी के पद पर कार्यरत विज्ञान विषयक विश्वकोष 'भारत की संपदा' के कई खण्डों का सम्पादन तथा पुनः इलाहाबाद वापस आकर यूनिवर्सिटी का कार्यभार संभालना, सन् १९७३ में मौलिक वैज्ञानिक कृति पादप रसायन (पुरस्कृत), सन् १९७४ में फास्फेट (पुरस्कृत), सन् १९७४ में सूक्ष्ममात्रिक तत्व, सन् १९७६ में अम्लीय मृदायें तथा १९९१ में जलप्रदूषण (पुरस्कृत), वायुप्रदूषण, कृषि अवशेषों का उपयोग आदि की रचना उनके मुख्य कार्य हैं। सन् १९८७ से लेकर १९९४ तक डॉ० मिश्र ने बालोपयोगी अनेक पुस्तकों का सृजन किया जो क्रमशः प्रकाशन विभाग, दिल्ली तथा राष्ट्रीय शैक्षणिक प्रशिक्षण अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली और पुस्तकायन नई दिल्ली से प्रकाशित हुई हैं जिनका क्रम है- धातु लोक की सैर (१९८०), माटी का मोल (१९८७), ऊर्जा (१९९०), लोकोपयोगी रसायन (१९९०), रसायन के नोबेल पुरस्कार विजेता (१९९३), जीवनोपयोगी सूक्ष्ममात्रिक तत्व (१९९३), प्रदूषित मृदा (१९९४), ईंधन (१९९४)।

साहित्यिक कृतियों के रूप में डॉ० मिश्र ने सन् १९७० में अंगद पैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा, १९८० में आलमकृत माधवानल कामकन्दला तथा १९८४ में बिहारी के कवित्त जैसी अज्ञात कृतियों का सम्पादन और प्रकाशन कराते हुये हिन्दी साहित्य जगत को बहुमूल्य भेंट प्रस्तुत की।

अभी हाल ही में उन्होंने दुर्लभ कृति बलदेवकृत सतकवि गिरा विलास का पाठ सम्पादित किया है जो हिन्दुस्तानी एकेडमी से प्रकाशित हो चुका है। उनकी सम्पादित अन्य साहित्यिक कृतियां हैं- कवि ललचदासकृत हरिचरित्र, ऐसे थे हमारे निराला तथा अवधी लोक गीत संग्रह जो अभी अप्रकाशित हैं।

सुप्रसिद्ध कवि निराला के चरणों में रहकर उनकी गतिविधियों और क्रियाकलापों से परिचित होते हुये उन्होंने कवि को गुरु मानते हुये न केवल उनसे शेक्सपियर की रचनाओं का अध्ययन किया बल्कि कवि के अन्तर्मन मे बसे हुये अनेक तथ्यों को उजागर करने का प्रयास किया कि कवि निराला सामान्य मानव से भिन्न ऐसे महामानव थे जो सामान्य व्यक्ति से अवश्य ही परे थे। कवि निराला के जीवनगत

ऐसे पक्षों का उद्घाटन करते हुये डॉ० मिश्र ने 'महामानव निराला' कृति की रचना की जो १९९७ में प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली से प्रकाशित हुई।

डॉ० मिश्र ने अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के लिये कठिन परिश्रम किया है। वे घर से ६.३० बजे यूनिवर्सिटी के लिये चल देते, वहां पहुंचकर क्लास लेते, लाइब्रेरी में जाकर तत्सम्बंधी गहन अध्ययन करते, लैब में बैठकर शोध करते और स्वयं के निर्देशन में कार्य करने वाले छात्रों की प्रत्येक जिज्ञासा का शमन करते। समय समय पर नवीन विषयों की खोज में ज्ञान अर्जित करने के लिये समर स्कूल के कोर्स, जो दो महीने अथवा ढाई महीने के होते, करते। ऐसी उपलब्धियां अवश्य ही ज्ञानार्जन में सहायक सिद्ध हुईं।

डॉ० मिश्र ने कठिन संघर्ष और दुर्जेय परिस्थितियों का सामना करते हुये अपनी किन्ही चाहतों को खोया अवश्य है किन्तु उन्होंने कभी भी उनके लिये ग्लानि अथवा पश्चाताप नहीं किया। १९९२ ई. में उन्हें इलिनोवा यूनिवर्सिटी अमेरिका तथा होनोलुलू से मृदा रसायन विषय में शोध के लिये दो आमन्त्रण साथ साथ प्राप्त हुये। डॉ० मिश्र विदेश जाने के इच्छुक भी थे किन्तु अन्ततः पारिवारिक कठिनाइयों को देखते हुये स्थगित करना पड़ा। सन् १९७० ई. में डॉ० सत्यप्रकाश सरस्वती के अनुरोध पर न चाहते हुये भी बहुत दिन से रुके हुये कार्य को सम्पन्न करने के उद्देश्य से अत्यन्त आवश्यक समझकर उन्हें यूनिवर्सिटी से अवकाश लेकर दिल्ली जाना पड़ा। वे दिल्ली में मकान लेकर रहते हुए, भोजन होटल में करते, प्रत्येक माह अथवा दो माह पर परिवार से मिलने इलाहाबाद आते, और बच्चियों की छुटिटयां होने पर (बड़े दिन और ग्रीष्म ऋतु) हम बच्चों समेत दिल्ली का आनन्द लेते। उस समय मेरी चौथी पुत्री साढ़े तीन वर्ष की और पुत्र केवल डेढ़ महीने का था। स्कूल जाने वाली बच्चियों की पढ़ाई अथवा मेरी डी.लिट. की रिसर्च में किसी प्रकार का गतिरोध उन्हें मान्य न था। इसकी शुरुआत मैंने सन् १९६५ में यू.जी.सी. की सीनियर फेलोशिप के प्राप्त करने के उपरान्त की थी। मेरा यह विषय भी अत्यन्त गुरु गम्भीर था, 'चौदहवीं शती से १९वीं शती के सूफी काव्य का अप्रस्तुत विधान'। जब मैं अपना शोध विषय लेकर हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ० रामकुमार वर्मा के कक्ष में अपने पतिदेव के साथ पहुँची तो डॉ० वर्मा ने पहले हंसते हुये कहा– शिवगोपाल! तुम मेरे विभाग में आ जाओ। डॉ० मिश्र ने मेरी ओर संकेत करते हुये कहा इसे ट्रेन कर रहा हूं आपके विभाग के लिये। और कक्ष में बैठे सभी लोग हंसने लगे। मैंने अपने डी.लिट.का शोध निबन्ध पूज्य गुरुवर डॉ० हरदेव बिहारी के निर्देश्न में पूरा किया जो मेरे कार्य को सुधारते और बारम्बार उसे शीघ्र सम्पन्न करने के लिये प्रेरित करते। डॉ० मिश्र ने घर में टीमटाम से रहित सादगी का स्वागत किया। किसी प्रकार के अलंकरण की उन्होंने उपेक्षा की। शोध कार्य सम्बन्धी पुस्तकें खरीदने में उन्होंने कभी किसी प्रकार की कमी नहीं होने दी।

मुझे सन् १९७९ से रोगग्रस्त अपनी द्वितीय पुत्री विभा का ब्रेन ट्यूमर का आपरेशन कराने के लिये तीन बार मद्रास जाना पड़ा। इस कठिन रोग से ग्रस्त मेरी प्रतिभावान बेटी विभा क्रमशः बी.ए., एम.ए. और फिर इतिहास विभाग में शोध करने में संलग्न रही। प्रथम दो बार के सफल आपरेशन से वह अपने अध्ययन और शोध में सक्षम रही किन्तु शोध करते समय उसकी दृष्टि क्षमता में कमी आने लगी थी, वह कठिनाई उत्पन्न होने पर मैग्निफाइंग ग्लास की सहायता से काम करती। तीसरी बार आपरेशन न करके डॉ० राममूर्ति ने उसे दवा के माध्यम से स्वस्थ करना चाहा और

सफलता न मिलने पर आयुर्विज्ञान शोध संस्थान दिल्ली ले जाने का आग्रह किया किन्तु वहां सफलता न मिलने से वह दृष्टिहीन हो गयी। हम पति पत्नी पर मानो वज्रपात हो गया। डॉ० मिश्र के दिल्ली के मित्रों के सहयोग से उन्होंने दिल्ली के बी.आर.ए. (ब्लाइण्ड रिलीफ एसोसियेशन) संस्थान में पहले वहां के हास्टल में रखकर चलने फिरने की ट्रेनिंग दिलायी और फिर ब्रेल में दी जाने वाली टीचर्स ट्रेनिंग का कोर्स भी पूरा कराकर उसे स्वावलम्बी बनाया। उसने साढ़े तीन वर्ष जोधपुर में रहते हुए दृष्टिबाधित बच्चों को पढ़ाया। बीच बीच में छुट्टियों में घर आकर अपनी थीसिस को पूरी करके डी. फिल. की उपाधि ग्रहण की और हायर एजुकेशन कमीशन से प्रवक्ता पद पर चुनी जाकर अब वह सी. एम.पी. डिग्री कालेज में प्रवक्ता है। हम दोनों का पूरा ख्याल रखती हुई वह अपना कर्तव्यपालन पूरी निष्ठा के साथ कर रही है। दो वर्ष के अन्तर से (१९९१ एवं १९९३) यूनिवर्सिटी से अवकाश ग्रहण करके हम दोनों अपने अध्ययन कार्य में संलग्न हैं। इसी बीच डॉ० मिश्र दो बार भयंकर रूप से रोग ग्रस्त हुये। प्रथमतः उन्हें हार्निया का आपरेशन कराना पड़ा और दूसरी बार वे वायरल फीवर से ग्रस्त होकर दो महीने बाद ही कार्य करने में सक्षम हो सके।

बीच बीच में उत्पन्न होने वाले अवरोधों से सम्भलते हुये हमने विभा को छोड़कर अपनी तीन बेटियों का विवाह सम्पन्न किया और ससुराल पक्ष को भलीभांति उनकी इच्छानुसार प्रसन्न करने का प्रयास किया। मेरी तीन बेटियां और पुत्र आशुतोष विवाहित है। बेटा आशुतोष अमेरिका में पीएच.डी करके टेक्साज इन्स्ट्रूमेन्ट कम्पनी में कार्यरत है। उसके आग्रह पर मैं १९९७ में अपने पतिदेव डॉ० मिश्र के साथ अमेरिका पहुंच कर अपने बेटे के पास साढ़े तीन महीने रहकर उस धनाढ्य देश की गरिमा को देखकर अभिभूत हूं। डॉ० मिश्र वहां की डेन्टन यूनिवर्सिटी में शोधार्थियों के प्रयोगात्मक उपकरणों की विशेष सामग्री देखकर अत्यधिक प्रसन्न हुये जो भारतीय शोधार्थियों को प्राप्त करना संभव नहीं।

डॉ० मिश्र ईश्वर में श्रद्धा और विश्वास रखने वाले ऐसे वैज्ञानिक हैं जो अवैतनिक कार्य करने और संस्थान की प्रगति को महत्व देते हैं। उनके अधिकांश लेख पारिश्रमिक से रहित होते हैं जो पत्र पत्रिकाओं में समय समय पर प्रकाशित होते हैं। वे ईश्वर में अनन्य निष्ठा रखते हुये श्रीलप्रभुपाद के सम्पूर्ण साहित्य का १२ वर्षों तक अनवरत रूप से अनुवाद करते रहे हैं जो कई हजार पृष्ठों में सम्पन्न हुआ है।

ऐसे मनीषी और मनस्वी साधक को परमेश्वर स्वस्थ रखे और चिरायु दे, यही प्रार्थना है।

२५, अशोक नगर
इलाहाबाद

मेरे आदर्श, मेरे पापा डॉ० शिवगोपाल मिश्र

श्रीमती शुभा पाण्डेय

डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी द्वारा जीवन के सात दशक पूर्ण करने के उपलक्ष्य में अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है इसकी सूचना मुझे डॉ० गिरीश पाण्डेय जी के पत्र से प्राप्त हुई, पत्र पढ़कर मैं भावविह्वल हो उठी। पापा के प्रति अपनी श्रद्धा व कृतज्ञता व्यक्त करने का इससे अधिक उचित अवसर और क्या हो सकता है ? यह ईश्वर की असीम अनुकम्पा है कि परम पूज्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र की ज्येष्ठ पुत्री होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। उन्हें अपने पिता के रूप में पाकर मैं अपने आपको धन्य मानती हूँ।

मुझे स्मरण है बचपन में पापा को कुछ भी लिखकर दिखाने की हिम्मत नहीं पड़ती थी, क्योंकि लेखन पसन्द न आने पर या लिखावट अच्छी न होने पर पापा उसे काट देते थे और पुनः लिखकर लाने को कहते। याद नहीं पड़ता कभी कोई लेख उन्होंने इमला बोलकर लिखवाया हो या स्वयं लिख कर दिया हो। वे बार-बार प्रयत्न करने के लिय प्रोत्साहित करते। किताबों से नकल कर तैयार की गई रचना उन्हें कभी पसन्द न आती। रचना मौलिक हो इस पर विशेष बल देते। अक्सर विज्ञान विषयक या फिर ऐसे शीर्षक पर लिखने को देते जिस पर किताब में सामग्री न मिलने पर हार कर स्वयं लिखना पड़ता। लेख पसन्द आने पर सुन्दर या अति सुन्दर देते। इम्तहान की कापियाँ जाँचते समय भी उनकी सख्ती देखी जा सकती थी। यह था पापा का स्नेहमय किन्तु कठोर प्रशिक्षक का स्वरूप।

बड़े होने के साथ-साथ पापा का व्यवहार मित्रवत् होता गया। चाय नाश्ता हो या खाना, पापा हमेशा परिवार के साथ ही करते। खाने की मेज पर ही वे हम लोगों के स्कूल कॉलेज की बातें सुनते और समस्याओं का समाधान करते। बोर्ड की परीक्षा हो या फिर विश्वविद्यालय स्तर की, पापा परीक्षा भवन तक साथ जाते, रोल नम्बर ढूँढ कर सीट पर बिठाते और सही ढंग से रोल नम्बर लिखने की हिदायत बार-बार देते। इम्तहान देकर लौटने पर पापा परीक्षा भवन के फाटक पर प्रतीक्षा करते मिलते। हम सभी के लिये उनके हृदय में अपार वात्सल्य है किन्तु यदि हम लोगों को अपनी माँ से डाँट पड़ रही होती तो वे कभी दखलंदाजी नहीं करते। हमारी माँ की भावनाओं का सम्मान करते हुये हम लोगों को ही सुधरने की सलाह देते। महिलाओं को समाज में सम्मान मिले, प्रतिष्ठा मिले और वह भी लेखन के क्षेत्र में आगे बढ़ें, महिलायें खाली समय का सदुपयोग विज्ञान सम्बन्धी लेख आदि लिखने में करें, उसके लिये उन्होंने मुझे भी बहुत प्रोत्साहित किया है। पापा चाहते थे कि रसायन शास्त्र में एम.एस-सी. कर चुकने के बाद मैं शोधकार्य करूँ किन्तु विवाह हो जाने से यह सम्भव न हो पाया। वे मुझसे लेख लिखने के लिये कहते और १९८८ में उन्होंने मुझसे पहले 'सन्तुलित आहार' पर और फिर 'संक्रामक रोग' पर पुस्तकें लिखाईं। इनके लेखन में मेरे पति डॉ० विजय हिन्द पाण्डेय ने भरपूर सहायता की।

अपने बच्चों की ही भाँति पापा को अपनी कक्षा के विद्यार्थियों और अपने निर्देशन में शोध कार्य कर रहे छात्रों से विशेष लगाव रहा है। जिसने उन्हें गुरु बना लिया वह अपने भविष्य की ओर से निश्चिन्त हो जाता है। उनकी पहुँच अपने शिष्य के हृदय तक होती है। जहाँ एक ओर वे उसकी पढ़ाई की समस्या का समाधान करते हैं वहीं यदि आवश्यकता पड़ी तो उसके रहने की व्यवस्था तथा उसकी पढ़ाई व जीविका सुचारु रूप से चलती रहे इसके लिये विद्यार्थी लेखनी का प्रयोग कर कैसे जीवन यापन कर सकता है, इसका भी मार्गदर्शन करते। एक जौहरी की ही भाँति पत्थरों के बीच से हीरे को तलाशने व उसे तराशने में वे निपुण हैं। उनकी पारखी नजर ने जिस किसी में लिखने की क्षमता देखी है, उसे हमेशा लिखने के लिये प्रेरित किया। शिष्यों के लिये ऐसे वटवृक्ष हैं जिसकी शीतल छाया तले कितने ही विद्यार्थियों का भविष्य सँवरा है। उनके शिष्य देश-विदेश में फैले हुये हैं।

वे समय के हर क्षण का सदुपयोग बड़ी ही कुशलता से कर लेते हैं। दैनिक दिनचर्या की शुरुआत होती है उनके हाथ की बनाई और हम सबके लिये बहुत ही स्पेशल चाय से। फिर दूध लाना, अखबार पढ़कर कूलर व पेड़-पौधों में पानी देने के बाद चाय नाश्ता कर वे अपनी टेबल पर लिखने पढ़ने बैठ जाते हैं, यह वह समय होता है जब कोई उन्हें डिस्टर्ब करने की हिम्मत नहीं करता। समय से खाना खाकर, पहले वे विश्वविद्यालय और शीलाधर इंस्टीट्यूट और अब सेवानिवृत्त होने के पश्चात् पूर्णरूपेण विज्ञान परिषद् को समर्पित हैं। किन्तु इधर मेरी माँ की तबियत ठीक न रहने के कारण व छोटी बहन विभा का भी पूरा ध्यान वे ही रखते हैं। विज्ञान परिषद् के उन्नयन का विचार सदैव उनके लिये प्राथमिकता पर रहता है, किन्तु घर के हर सदस्य व अपने शिष्यों का भी उतनी ही ईमानदारी से पूरा पूरा ध्यान रखते हैं।

विज्ञान का क्षेत्र हो या हिन्दी साहित्य, या फिर आध्यात्मिक क्षेत्र, या फिर अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद, पापा की हर क्षेत्र में बराबर की पकड़ रही है। विज्ञान पत्रिकाओं के लिये हिन्दी में लेखन हो या स्कूल की रसायन शास्त्र की पुस्तकों का, रसायन कोश शब्दावली हो या फिर हिन्दी साहित्य या विज्ञान सम्बन्धी लेख या फिर श्रील प्रभुपाद रचित श्रीमद्भागवत्, भगवद्गीता या चैतन्य चरितामृत का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करना हो, उनकी अपनी अलग ही पहचान है। मेरे पास उनके द्वारा अनूदित आध्यात्मिक साहित्य का संकलन है, उसे पढ़कर मैं रोमांचित हो उठती हूँ। रसायन शास्त्र के प्रोफेसर के लिये ईश्वर की कृपा के बिना यह कार्य कर पाना असंभव प्रतीत होता है।

इधर लगभग ढाई वर्ष पूर्व रेल दुर्घटना में मेरे पति का देहांत हो गया था। पापा ने मुझे जीवन के उन कठिन क्षणों में विपरीत परिस्थितियों से लड़ने की शक्ति, अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रखकर अपने बच्चों को जीवन जीने की कला सिखलाई। पापा से मैंने सहनशीलता से धैर्यपूर्वक जीवन को पुनः किस प्रकार नये सिरे से जिया जा सकता है, सीखा। पापा हर माह चार छः दिनों के लिये समय निकाल कर लखनऊ आते रहे, मानसिक तौर व आर्थिक रूप से मेरी मदद की और जब तक मुझे नौकरी नहीं मिल गई लगातार प्रयत्नशील रहे। बचपन में जैसे उन्होंने उंगली पकड़ कर मुझे चलना सिखाया था, पुनः चालीस वर्षों बाद उसी तरह पुनः मुझे मेरे पैरों पर खड़ा होना सिखाया। उनके द्वारा अनूदित आध्यात्मिक साहित्य श्रीमद्भगवद्गीता व श्रीमद्भागवत का पठन कर पापा के माध्यम से मुझे ईश्वर संदेश मिलता रहा और मैं पूर्णरूपेण उन कठिन परिस्थितियों से उबर पाई। अभी भी यदि प्रति सप्ताह उनसे फोन पर मैं अपनी या बच्चों की कुशलता के समाचार नहीं देती तो वे बहुत परेशान हो जाते

हैं।

विवाहोपरांत यद्यपि हम सभी भाई-बहन अलग-अलग शहरों में रह रहे हैं किन्तु उनकी स्नेहरूपी मजबूत डोर ने हम सबको एक-एक मनके की भाँति गूँथकर एक माला के रूप में संगठित कर रखा है।

Simple living and high thinking को अपनाने वाले पापा जी बहुत ही सहजता एवं सरलता से अपनी बातों को स्पष्ट रूप से कहने की क्षमता रखते हैं। वे अति उदार, सहृदय, विज्ञानसेवी व हिन्दीप्रेमी, सहयोगियों के लिये आदरभाव रखने वाले व विद्यार्थियों के लिये आदर्श शिक्षक, कठोर प्रशिक्षक एवं मार्गदर्शक, प्रोत्साहन प्रदान करने वाले, बहुत ही हँसमुख, बच्चों के लिये स्नेहिल पिता व उनकी प्रेरणा के स्रोत, ऐसा है डॉ० मिश्र का बहुआयामी व्यक्तित्व।

सही मायनों में वे एक ऐसे तपस्वी हैं जिसे अपनी मातृभूमि भारतवर्ष से इतना लगाव है कि कितने ही विदेश जाने के अवसर क्यों न आये हों, विदेश जाकर धन कमाने के लोभ का ताप उनके तप को पिघला न पाया। उन्होंने तीर्थराज प्रयाग (इलाहाबाद) को अपनी तपोभूमि बनाया और वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के उत्थान के लिये, हिन्दी में विज्ञान के उच्चस्तरीय लेखन के लिये निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि पापा दीर्घायु हों और राष्ट्रभाषा हिन्दी व विज्ञान परिषद् की निरन्तर सेवा करते रहें। उनकी छत्रछाया हम सब पर चिरकालीन बनी रहे और उनका आशीर्वाद निरन्तर मिलता रहे, यही मेरी कामना है।

१८/४७६, इन्दिरा नगर
लखनऊ-१६

तस्मै श्री पित्रे नमः

डॉ० कुमारी विभा मिश्रा

पापा (डॉ० शिवगोपाल मिश्र) जैसा सरल एवं निश्छल व्यक्तित्व महापुरुषों का ही होता है। विज्ञान के साथ-साथ उन्होंने हिन्दी साहित्य की भी भरपूर साधना की तथा दोनों ही क्षेत्रों में प्रतिष्ठा पाई। किन्तु मेरी दृष्टि में इन सबसे कहीं अधिक गरिमा उनकी पिता के रूप में है। वे अगाध स्नेह से परिपूर्ण एक आदर्श पिता हैं। मुझे इस बात का गर्व है कि मैं ऐसे महान पिता की पुत्री हूँ।

पापा की सभी सन्तानों में मेरा दूसरा स्थान है। उन्होंने कभी भी बेटी और बेटे में अन्तर नहीं समझा और वे हमें समभाव से अपरिमित स्नेह प्रदान करते रहे हैं। हमारे पालन-पोषण में उन्होंने कोई कसर नहीं रखी। उन्होंने उत्तम से उत्तम शिक्षा की व्यवस्था की।

वे स्वयं हमारी रीडिंग टेबल के समीप बैठकर अपना काम करते रहते और बीच-बीच में हमारी पढ़ाई भी चेक कर लेते। हमें 'वर्क व्हाइल यू वर्क' सिद्धान्त का पालन करना पड़ता था। बीच में शरारत करने पर डाँट भी पड़ जाती थी।

मुझे सदैव प्रथम स्थान प्राप्त करने की प्रेरणा पापा से ही मिली। पढ़ाई के साथ-साथ हमारे खेलकूद का भी ध्यान रखते। बचपन से ही मुझे इस बात की जानकारी थी कि मेरे पापा यूनिवर्सिटी में पढ़ाते हैं। स्कूल बस से आते-जाते मैं अपनी सहेलियों को यूनिवर्सिटी की ओर संकेत करके कहती कि यह मेरे पापा की यूनिवर्सिटी है। पता नहीं मेरे मन में यह धारणा कब और कैसे जम कर बैठ गई कि यह पूरी यूनिवर्सिटी केवल मेरे पापा की ही है। जब कोई लड़की इसका विरोध करती तो उससे मेरी झड़प ही नहीं लड़ाई भी हो जाती थी।

इसी प्रकार विज्ञान परिषद् के बारे में भी मेरी ऐसी ही धारणा रही जो मेरे समझदार होने पर ही स्पष्ट हुई।

१९६२-६३ में पापा विज्ञान परिषद् से सम्बद्ध हुए और 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक बने। विज्ञान परिषद् से मेरा पहला परिचय उस समय हुआ जब मैं कक्षा तीन में थी। हमारे स्कूल में जूनियर सेक्शन की छुट्टी हर शनिवार को रहती थी। इस दिन मैं घर में रहकर जब अपनी छोटी बहन से खेल-खेल में बहुत लड़ाई करती तो पापा मुझे विज्ञान परिषद् ले जाने लगे। मुझे वे अपनी कुर्सी पर बैठा देते और स्वयं यूनिवर्सिटी में क्लास लेने चले जाते। मैं थोड़ी देर चुपचाप कहानी की किताब पढ़ती, फिर घूम घूमकर विज्ञान परिषद् की गैलरी में लगे विभिन्न वैज्ञानिकों के फोटो देखती, उन्हें गिनती और फिर पूरे परिसर में दौड़-भाग करती। उस समय मेरी रखवाली परिषद् का चपरासी महावीर करता। मुझे बहुत मजा आता। अब तो शनिवार के अलावा जो भी छुट्टी होती, मैं पापा के साथ विज्ञान परिषद् आने लगी। इसका मुख्य आकर्षण आफिस की मेज पर रखे दो टाइपराइटर थे,

जिन्हें पंडित जी (गंगाधर तिवारी जी) की नजर बचाकर छूने में आनन्द आता था। पापा जब क्लास लेकर लौटते तो मुझे मिठाई खिलाते, फिर कुछ देर बैठकर हम पापा के साथ घर लौट आते। आते जाते पापा मुझे अच्छी-अच्छी बातें बताते।

विज्ञान परिषद् को ऊँचा उठाने का बहुत कुछ श्रेय पापा को है। उनकी मेहनत का ही फल है कि आज विज्ञान परिषद् न केवल इलाहाबाद की ही संस्था है अपितु इसकी शाखायें पूरे भारत में फैल चुकी हैं।

हिन्दी में विज्ञान लेखन को प्रोत्साहित करने का कार्य भी पापा ने किया है।

छुट्टियों में पापा ने हमें गांव भी घुमाया है। अपने गाँव एवं जनपद के सबसे अधिक शिक्षित एवं ख्यातिलब्ध होने के कारण ही पापा का गांव में बहुत सम्मान होता रहा है। गाँव के लोग जब हम बच्चों को देखकर यह कहते कि ये डाक्टर साहब के बच्चे हैं तो हमारा मस्तक गर्व से ऊँचा उठ जाता था। गांव में हमने न केवल खेत, खलिहान, बगीचे का आनन्द उठाया बल्कि अपनी दादी का भी पूर्ण प्यार पाया। दादी पापा के बचपन की बातें बताती थीं। बाबा तो पापा के बाल्यकाल में ही दिवंगत हो चुके थे। वे भी पापा को बहुत चाहते थे।

पापा ने जिस मेहनत और लगन से पढ़ाई की थी और सदा सर्वश्रेष्ठ स्थान पाया था, ये सभी बातें मेरे लिये अनुकरणीय बनीं। 'सादा जीवन उच्च विचार' उनके जीवन का मूलमन्त्र रहा है। हम बच्चों में अच्छे संस्कारों का बीजारोपण कर भारतीय संस्कृति का पाठ हमें घर में ही पढ़ाया गया था। पॉकेट मनी न देकर हमारी आदतों को बचपन से ही संयमित रखा गया। पड़ोसियों के घर देर तक बैठने अथवा किसी सहेली के घर जाकर खेलने का भी पापा ने विरोध किया। हमने भी पापा की आज्ञा का सदैव पालन किया।

१९७० से ७२ के मध्य पापा को सी.एस.आई.आर. में 'भारत की सम्पदा' के सम्पादन के लिये दिल्ली जाना पड़ा। पापा का अभाव इस अवधि में हम सबको बहुत खला। पापा के दिल्ली से आने की प्रतीक्षा हम करते, पापा को स्टेशन रिसीव करने भी जाते, पापा हम सबके लिये कपड़े, खिलौने, मिठाई लाते। जाते समय हमें सख्त हिदायत देते कि अम्मा को तंग नहीं करना, न ही आपस में झगड़ना।

सर्दी व गर्मियों की छुट्टियों में हम सब दिल्ली जाते और पापा हमें रोज कहीं न कहीं दिल्ली घुमाते। दिल्ली स्टेशन पर जब पापा हमें छोड़ने आते तो हमारी ही नहीं पापा की भी आँखें नम रहतीं। जब पापा अपना कार्य पूरा कर दिल्ली से वापस लौटे तब हमें बहुत खुशी हुई। हम पापा की प्रयोगशाला में जाकर विज्ञान सम्बन्धी उपकरणों को हाथ से छूकर देखते तो मजा आता था।

मेरे पापा ने कठिन से कठिन परिस्थितियों का सामना बड़े धैर्य से किया। उन्होंने मेरी बीमारी जैसे- टाइफाइड, मलेरिया, मैनेंजाइटिस ही नहीं ब्रेन ट्यूमर का तीन बार आपरेशन कराने में अपना तन मन धन लगाकर मेरे प्राणों की रक्षा की। वे क्षण कितने कष्टप्रद रहे होंगे जब पापा तथा अम्मा बिना कुछ खाये पिये आपरेशन थियेटर के बाहर खड़े होकर मेरे बाहर आने की प्रतीक्षा करते रहते। जब डाक्टर आकर बताते कि आपरेशन सफल हुआ है तो वे परम प्रसन्न हो उठते। ऐसी परिस्थितियों में उन्होंने मेरे मनोबल को कभी गिरने या टूटने नहीं दिया। मुझे सदैव अपनी शिक्षा पूरी करने के लिये प्रोत्साहित करते रहे। मेरी दृष्टिहीनता ने मुझ पर तो वज्रपात किया ही, पापा अम्मा को भी दुखी बना दिया। पापा ने मुझे स्वावलम्बी बनाने का हर सम्भव प्रयास किया और दिल्ली के एक दृष्टिहीन संस्थान

में पुनर्वास हेतु भर्ती करा दिया। यहां रह कर मैंने बहुविध प्रशिक्षण पूरे किये जो मेरे स्वावलम्बन में उपयोगी सिद्ध हुए। पापा का दायित्व अब पहले से कहीं अधिक बढ़ गया था। मैंने साढ़े तीन वर्ष तक जोधपुर के दृष्टिबाधित विद्यालय में शिक्षण कार्य किया। पापा हर छुट्टी में आकर मुझे इलाहाबाद ले आते। इस अवधि में पापा कुल मिलाकर ७४-७५ बार इलाहाबाद से जोधपुर और जोधपुर से इलाहाबाद गये आये। आज मैं पापा अम्मा के पास हूँ और सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज में प्राचीन इतिहास की व्याख्याता हूँ। किन्तु पापा की जिम्मेदारियाँ ज्यों कि त्यों बनी हुई हैं- जैसे पुस्तकें पढ़कर सुनाना, उनको टेप करना, कॉलेज आने-जाने की व्यवस्था करना आदि।

मैं अपने को बहुत भाग्यशाली समझती हूं कि मुझे इतने स्नेहिल पापा-अम्मा मिले और आजीवन उनके सानिध्य में रहने का अवसर मिलता रहेगा।

पापा ने अनेकानेक साहित्यिक तथा वैज्ञानिक पुस्तकों का प्रणयन किया है और आज भी लेखन कार्य में संलग्न हैं। उन्हें अनेक पुरस्कार एवं सम्मान मिले हैं। पापा के सदृश विद्वान, विनयी एवं अध्यवसायी व्यक्ति विरले ही होते हैं। पापा का स्नेह एवं आशीर्वाद हमारे जीवन का सम्बल है।

ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि मेरे पापा को उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घायु प्रदान करें ताकि पापा का प्यार एवं दुलार हमें मिलता रहे।

२५, अशोक नगर,
इलाहाबाद-१

मेरे पूज्य पापा : मेरे मार्गदर्शक व प्रेरणास्रोत

श्रीमती (डॉ0) आभा त्रिपाठी

जिस दिन से मुझे ज्ञात हुआ कि मुझे अपने पूज्य पापा (डॉ० शिवगोपाल मिश्र) के जीवन के सात दशक पूर्ण हो जाने के उपलक्ष में प्रकाशित होने वाले 'अभिनन्दन ग्रन्थ' के लिये कुछ संस्मरणों को लेखनीबद्ध करना है, उसी दिन से मैं अपने जीवन के सुखद क्षणों को स्मृति पटल पर लाने का प्रयास करती रही। पुत्री होने के नाते मुझे जितना प्रेम, स्नेह एवं वात्सल्य मिला है, वह जीवनपर्यन्त मेरे लिये एक धरोहर के रूप में सुरक्षित है। वे पिता होने के साथ हम सभी के मानस गुरु व आदर्श रहे हैं जो जीवन के कठिन क्षणों में मार्गदर्शक बनकर प्रेरणा देते रहे हैं।

सन् १९५६ में पापा ने एक प्रवक्ता के रूप में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग में अध्यापन कार्य प्रारंभ किया। रीडर व प्रोफेसर के पद पर कार्य करते हुये सन् १९९१ में उन्होंने शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद से अवकाश ग्रहण किया। १९७०-७१ में उन्होंने वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, दिल्ली में हिन्दी के विशेष अधिकारी के रूप में 'भारत की सम्पदा' कोश के कई खंडों का सम्पादन किया। 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादन व अनेक वैज्ञानिक पुस्तकों के लेखक के रूप में उन्हें विज्ञान सरस्वती सम्मान, डॉ० आत्माराम पुरस्कार, हरिशरणानन्द पुरस्कार तथा विज्ञान भूषण से समय-समय पर समलंकृत किया गया है।

एक वैज्ञानिक का प्रारंभ से ही मातृभाषा हिन्दी से लगाव दर्शनीय है क्योंकि उन्होंने समय-समय पर हिन्दी भाषा में कई साहित्यिक कृतियों- ईश्वरदासकृत सत्यवती तथा अन्य रचनाएं, मंझनकृत मधुमालती, कुतुबनकृत मृगावती, भीमकृत डंगवै कथा, बिहारी के कवित्त, ईश्वरदासकृत अंगद पैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा, महामानव निराला की रचना की है तथा कुछ कृतियों का सम्पादन भी किया है।

पापा को अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत, बांगला व उर्दू भाषा का अच्छा ज्ञान है जिसके कारण उनकी अनूदित रचनायें भी मौलिक प्रतीत होती हैं।

कृष्णकृपा श्रीमूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद जी द्वारा विरचित अनेक अंग्रेजी गंन्थों का अनुवाद उन्होंने हिन्दी में किया है जिनमें "श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप", 'श्रीमद्भागवतम' (१८ भाग) तथा "चैतन्य चरितामृत" ग्रंथ ऐसे हैं जो प्रायः प्रत्येक घर में मिलेंगे।

बचपन से ही पापा को हमने प्रातः जल्दी उठकर और रात में देर तक पढ़ते-लिखते ही देखा है। पठन व लेखन ही उनका शौक रहा है। आज भी ७० वर्ष की उम्र में उनका पढ़ने-लिखने में रुझान कम नहीं हुआ है। वे 'विज्ञान' के सम्पादन के साथ अपने शिष्यों के मार्गदर्शन में लगे रहते हैं। उन्हें पढ़ते-लिखते समय अपने खाने-पीने की चिन्ता नहीं रहती है। कई बार तो वे इतना व्यस्त रहते हैं कि शाम को ही आकर खाना खाते हैं। उनके प्रयास से आज 'विज्ञान' पत्रिका की इंटरनेट पर एक वेबसाइट बनाई गई है। यह पहली हिन्दी वेबसाइट है जिसे अपने देश में ही नहीं वरन् विदेशों में भी कम्प्यूटर के माध्यम से देखा जा सकता है।

अपने पापा जैसा कर्मठ, गंभीर, धैर्यवान, सरल, सहृदय, सहनशील, स्वाभिमानी, साहित्यविद् एवं वैज्ञानिक व्यक्ति आज तक न मैंने कहीं देखा है, न सुना है। उन्होंने अपने परिवार को अपने स्नेह से सिंचित किया है। उनमें गर्व तनिक भी नहीं है और गंभीरता इतनी है कि उन्होंने अपने कष्टों व दुःखों

को कभी भी किसी के बीच में प्रकट नहीं किया। उन्हें ईश्वर पर बहुत विश्वास है इसीलिये वे आशावादी भी हैं। उन्हें कभी क्रोध में भी बहुत चिल्लाते हुये नहीं देखा क्योंकि क्रोधित होने पर वे प्रायः मौन ही हो जाते हैं। वे अपने स्वभाव के कारण न केवल परिवारजनों में अपितु गुरुजनों व शिष्यों में प्रिय हैं। उन्होंने कभी हम में से किसी को भी सदाचरण का व्याख्यान नहीं दिया लेकिन उनका आचरण ही ऐसा रहा कि हमें स्वयं ज्ञात हो जाता कि हमारे लिये क्या उचित है या क्या अनुचित। आज उन्हीं के दिये संस्कार ही हमारे आदर्श हैं।

पापा को 'सादा जीवन, उच्च विचार' तथा 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' इन कथनों पर अटूट विश्वास है। वे कर्म करने की सदैव शिक्षा देते रहते हैं क्योंकि कर्म करने से फल अवश्य प्राप्त होता है। उन्हें रुपया, पैसा, बँगला, गाड़ी, सोना-चांदी का रत्ती भर भी शौक नहीं है। शौक तो एकमात्र पुस्तक-संग्रह का है। अवकाश ग्रहण करने के बाद तो वे पढ़ने लिखने में और भी व्यस्त हो गये हैं। कार्यों की व्यस्तता के बीच भी वे अम्मा की तबियत का बहुत ध्यान रखते हैं। घर में प्रवेश करते ही उनका हालचाल पूछते हैं और दवाई ली या नहीं, इसका भी बहुत ध्यान रखते हैं।

आज मेरी शादी के १५ वर्ष बीत गये हैं। शादी के बाद मैं हिमाचल प्रदेश (सोलन) आ गई। यहाँ मेरे पति (डॉ० दिवाकर त्रिपाठी) डॉ० यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय में रीडर हैं। प्रतिवर्ष सर्दियों की छुट्टियों में मैं व मेरे दोनों पुत्र अभिनव व गौरव इलाहाबाद जाते हैं। वहाँ जाकर हम सभी पापा से बहुत सारा ज्ञान ग्रहण करते हैं। बच्चों को उनके नाना अंग्रेजी, गणित, विज्ञान व हिन्दी विषय के बारे में नवीन जानकारी देते हैं और पढ़ने के लिये अनेक पुस्तकें देते हैं। इतनी उम्र में भी पापा को काम करते देखकर हम सभी को प्रेरणा मिलती है कि हम सभी परिश्रम व लगन से अपने कार्य कर सकें।

बचपन में हम अपने स्कूल 'संत अंथोनी कान्वेंट' स्कूल बस से जाते थे। पापा का 'विज्ञान परिषद्', 'इलाहाबाद विश्वविद्यालय' तथा 'हमारा विद्यालय' तीनों आस पास ही हैं इसलिये जब किसी आवश्यक कार्यवश पापा हमें स्कूल लेने आते तो हम सभी बहुत प्रसन्न होते। उस दिन हम अपनी बस में न जाकर पैदल ही दौड़ते हुये विज्ञान परिषद् पहुँच जाते। वहाँ हम कुछ खाते पीते और बगीचे में खेलते रहते। कभी-कभी पापा हमें अपनी प्रयोगशाला भी ले जाते। वहाँ हम पापा को शिष्यों से घिरे काम करते हुये देखते। मुझे तो काफी बड़े हो जाने तक भी ऐसा लगता था कि यहाँ 'विज्ञान परिषद्' और 'रसायन विभाग' केवल पापा का ही है जहाँ वे लेखन कार्य तथा शोध कार्य करते हैं। जब पापा को उनके सहयोगी या शिष्य 'डॉ० साहब' कहते, तब समझ में नहीं आता था कि ये किस प्रकार के डाक्टर हैं जिनके पास न तो सुई है, न ही स्टेथोस्कोप। जैसे-जैसे बचपन बीतता गया और समझ बढ़ती गई, वैसे-वैसे मैं प्रण करती गई कि मैं भी उच्च शिक्षा प्राप्त करूँगी और डी.फिल. करूँगी। शादी के बाद भी निरन्तर पापा की प्रेरणा से ही सन् १९९२ में मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग से डी.फिल. की उपाधि ग्रहण की है।

इस वर्ष उनके जीवन के सात दशक पूरे हो रहे हैं। हम सभी को हार्दिक प्रसन्नता है। ईश्वर से प्रार्थना है कि वे स्वस्थ रहें, हमें इसी तरह मार्गदर्शन व प्रेरणा देते रहें, दीर्घजीवी हों, शतायु हों। उनका वरद-हस्त निरन्तर हम पर बना रहे।

द्वारा डॉ० दिवाकर त्रिपाठी
मृदा विज्ञान विभाग
डॉ० वाई.एस. परमार यूनिवर्सिटी आफ
हार्टिकल्चर एण्ड फारेस्ट्री,
नौणी, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

श्रम एवं सहनशीलता की मूर्ति, मेरे पिता : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

निशि मिश्र

"पिता" शब्द मुख में आते ही मेरे सम्मुख एक अत्यधिक उदार, शालीन, स्नेह से परिपूर्ण, ईमानदार एवं कर्मठ व्यक्ति की प्रतिमूर्ति सामने आ जाती है क्योंकि मैंने अपने पिता को सर्वदा ऐसा ही देखा और पाया है। अगर यह कहा जाय कि उनमें इतने गुण हैं कि उनकी गणना कर पाना संभव नहीं, तो यह अतिशयोक्ति न होगी। जब कभी भी मैं अपने शैशवकाल को याद करती हूँ तो मेरी आँखों के सामने अभी भी वह दिन घूम जाता है जब मेरे पिता मुझे विद्यालय में प्रवेश करवाने ले गये थे। उनके साथ उनके दो शिष्य भी थे। मैं कृतज्ञ रहूँगी कि उन्होंने इलाहाबाद के सबसे अच्छे विद्यालय में मेरा प्रवेश करवाया। पापा मुझे स्कूल-बस तक छोड़ने के लिये हमेशा जाया करते थे। स्कूल जाने के पूर्व नहलाना, जूतों में पॉलिश करना आदि कार्य भी पापा ही करते थे। नया क्लास मिलने पर बुकलिस्ट लेकर नई किताबें लाना, उन पर कवर चढ़ाना, पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त विज्ञान तथा अन्य विषयों से सम्बन्धित ज्ञानवर्धक किताबें लाकर देना उनकी आदत थी। गृहकार्य आदि करवाने में पापा को विश्वास न था। उन्होंने हमेशा से हम भाई बहनों को स्वाध्याय एवं स्वावलम्बन की शिक्षा दी। मुझे नहीं याद पड़ता कि पापा ने कभी भी हममें से किसी को पढ़ाई न करने के लिये डाँटा हो। इस बात के लिये हमेशा मैं उन्हें धन्यवाद दूँगी कि उन्होंने बचपन से ही हम सभी में समय के सदुपयोग की आदत डाली जो अभी तक हम सभी भाई बहनों में विद्यमान है।

पापा की गणित और अंग्रेजी दोनों ही बहुत अच्छी है। मैं गणित विषय में बहुत कमजोर थी इसलिए पापा के पास नित्य ही गणित का कोई न कोई सवाल लेकर पहुँचती थी। पापा बिना कागज पेन्सिल का इस्तेमाल किये किसी भी सवाल का हल ढूँढ लेते थे। मैं अचरज भरी निगाहों से उन्हें देखती रह जाती थी। पापा की अंग्रेजी तथा हिन्दी की हस्तलिपि भी बहुत अच्छी है जो मुझे हमेशा प्रेरित करती रही है। पापा इस बात पर हमेशा बल देते थे और हैं कि कोई भी समस्या, चाहे वह पढ़ाई से सम्बंधित हो या फिर किसी और क्षेत्र से- उसका समाधान स्वयं करके देखो। वे हमेशा ही हम सब को लेख लिखने के लिये प्रेरित करते थे और उसमें सुधार बाद में करते थे।

खाली समय में पापा हम लोगों को अपने बचपन की बातें, निराला जी के सानिध्य में बिताये हुये दिन, विज्ञान-जगत से सम्बंधित ज्ञान तथा अन्य सामान्य ज्ञान से सम्बंधित बातें बताते रहते थे।

मुझे याद नहीं पड़ता कि पापा ने मुझको कभी भी मारा। उनकी डाँट ही अपने में पर्याप्त थी। कभी-कभी वे मुझे और मेरे भाई को अपनी प्रयोगशाला भी ले जाते थे जहाँ वे हम लोगों को हमारी बुद्धि के अनुसार प्रयोगशाला में रखे अनेक उपकरणों के विषय में बताते थे। हमें छोटे-छोटे प्रयोग भी करके दिखाते थे। मनोरंजन के लिये वे हमें ज्ञानवर्धक सिनेमा भी दिखाते थे।

पापा में मैंने हमेशा अप्रतिम धैर्य पाया। जीवन में ऐसे कितने ही क्षण आये जिसमें साधारण मनुष्य अपना धीरज खो बैठता, लेकिन पापा ने बहुत ही धैर्यपूर्ण तरीके से सारी चुनौतियों का सामना किया। हम चार बहनें और एक भाई हैं। जब मैं करीब १० वर्ष की थी तो मेरी दूसरी बहन की तबियत

अचानक ही रात को अत्यधिक खराब हो गई और उसे अस्पताल में भर्ती करवाना पड़ा। मम्मी के साथ मिलकर पापा ने रात-दिन सारी चुनौतियों का सामना किया। उन्हें कुछ महीनों बाद उसे मद्रास में ब्रेन ट्यूमर के आपरेशन के लिये लेकर जाना पड़ा। धीरज न खोते हुये उन्होंने अपनी दूसरी बेटी की दृष्टिहीनता और बड़े दामाद की मृत्यु जैसे दुःख भी सहे और करीब १० वर्षों से सेवानिवृत्ति के पश्चात् भी अनेक पुस्तकों की रचना की है। चिड़चिड़ापन, संयम खोना, गुस्सा करना एवं धन के प्रति लोलुपता जैसे कोई भी अवगुण उनमें नाममात्र भी नहीं हैं। मेरे पिता सादा जीवन, उच्च विचार में विश्वास रखते हैं। हम लोगों ने उन्हें कभी भी पुस्तकों के अतिरिक्त अपने लिये बाजार से कोई भी वस्तु खरीदते नहीं देखा। पापा समय के पाबन्द हैं। सबेरे ५.३०-६.०० बजे उठकर बाहर टहलना तथा हल्का व्यायाम करने के पश्चात् वह हम सभी के लिये चाय बनाते हैं और तत्पश्चात् दूध लाते हैं। नाश्ता करने के बाद १० बजे स्वाध्याय में समय लगाते हैं। १२.०० बजे दोपहर के भोजन के पश्चात् वे विज्ञान परिषद् जाते हैं और शाम को ५.००-५.३० बजे घर पर होते हैं। पापा ने हमेशा हम सब परिवारजनों के साथ भोजन किया है। शाम को हमारे साथ चाय पीने के पश्चात् वह फिर अपनी किताबों में खो जाते हैं और करीब १० बजे रात को भोजन के पश्चात् थोड़ी सैर करते हैं। रात को सोने के पूर्व वह कोई पत्रिका जरूर पढ़ते हैं।

पापा को भगवान में विश्वास है। वे भगवान कृष्ण के उपासक हैं और करीब १२ वर्षों से 'इस्कान' के लिये श्रीमद्भागवतम् तथा श्रील प्रभुपाद के अन्य ग्रंथों का अंग्रेजी भाषा से हिन्दी भाषा में अनुवाद करते रहे हैं। वे अपने शिष्यों के लिये भी प्रेरणा के स्रोत रहे हैं और उन्हें हिन्दी में विज्ञान लेखन के लिये प्रेरित करते रहे हैं। पापा के सभी शोध छात्र अच्छे पदों पर सेवारत हैं।

चार लड़कियों के पिता होते हुये भी उन्होंने हमें ऐसा महसूस नहीं होने दिया कि हम उन पर किसी प्रकार का भार हैं। उन्होंने हम तीनों बहनों की शादी बड़ी धूम-धाम से की। मुझे शादी के बाद भी पापा के पास रहने का सौभाग्य मिला क्योंकि मेरी पहली पोस्टिंग इलाहाबाद में थी जहाँ मैं साढ़े पांच साल रही। विवाह होने के बाद भी मैं पापा के साथ उतने ही अपनेपन का अनुभव करती हूँ जैसा कि विवाह से पूर्व था। पापा मेरी ३ वर्ष की बेटी के साथ वैसी ही बातें करते हैं जैसे वह हम लोगों से हमारे बचपन में करते थे। अभी भी पापा हमारा उत्तरदायित्व लेने को तैयार रहते हैं। इतनी वय होते हुये भी वे अपने सब कार्य स्वयं करते हैं और समय के हर क्षण का सदुपयोग करते हैं। अपने एकमात्र सुपुत्र के विदेश में रहने से उन्होंने कभी भी कष्ट होने पर मेरी माँ के साथ मिलकर स्वयं ही कष्टों का सामना किया। पापा को सेवानिवृत्त हुये १० वर्ष हो चुके हैं लेकिन हम लोगों ने उन्हें घर में दोपहर को आलस्यपूर्वक सोते हुये नहीं पाया।

मितभाषी होते हुये भी उनकी मुस्कान तथा उनका भव्य व्यक्तित्व सभी को मोहित कर लेता है।।

हिन्दी साहित्य में पापा की विशेष रुचि है और उन्होंने हिन्दी साहित्य से संबंधित अनेक पुस्तकें लिखी हैं। उन्हें अनेक पुरस्कार मिल चुके हैं और अनेक सम्मान, परन्तु उन्हें इस बात का तनिक भी अभिमान नहीं है।

मैं भगवान से यह प्रार्थना करती हूँ कि मुझे हर जन्म में उनकी बेटी होने का सौभाग्य मिले जिससे मैं उनकी स्नेहिल छाया में नित्य कुछ नया सीख सकूं। अन्त में मैं इतना ही कहना चाहूँगी कि मुझे ऐसे प्रतिभावान पिता की पुत्री होने पर गर्व है।

साइंटिस्ट "सी." डी.आई.पी.आर.,डी.आर.डी.ओ.
तीमारपुर, दिल्ली-५४

Par Excellence

Dr. Ashutosh Misra

I distinctly remember the day, almost decades ago, when I wrote an essay and with much enthusiasm, took it over to Papa for his comments. He gave it a very poor grade and asked me to re-write it. I was disappointed, and asked why he thought it was sub-standard. His brief comments, which I took seriously, forever changed the way I wrote. Uniqueness of ideas, proficiency in grammar and vocabulary, modulation of sentences and maintaining the flow of text makes a good piece of writing. Papa has the art of writing, whether it's science or literature, whether it's essay for children or research articles in peer reviewed journals, whether it's a one page critique of a book or a several hundred page text on science. It makes one wonder how can one man accomplish the highest level of excellence in such a diversity of literary skills ? In this short essay, I will make an effort to reflect on the Mahapurush who gave me life and wisdom, taught me to read and write, and inspired in me the highest levels of ethics and patience.

I will try to piece together the various aspects of Papa's unique literary style by addressing a few fundamental questions -What motivates one to write? What factors influence the literary style? What is the driving force behind years of unwavering passion for excellence in writing?

Papa's writings reflect the boldness of his character, the tenderness of his nature, the depth of his knowledge and the exactness of his viewpoints. He has always written only one version, which is the final version - whether it's an article, or a book. This is perhaps the most amazing and mysterious aspect of his style, which has always bewildered me. It would be fair to say that this is truly indicative of the confidence of his ideas, and his mastery of the art of sentence structures. The individual sentences are always very definite in his writings, and always written in an easy to understand style. Thus despite his exhaustive training in Hindi Sahitya, he never seems to make his writings overburdened with overly complicated *klisht* words, but still preserves the discipline which is characteristic of balanced literary style. The multitude of what Papa has written in the last fifty years can be classified into popular science, Soil science, Hindi literature and translated text. It is quite obvious that the range of topics covered under these categories has got to be plentiful. Yet, his style remains the same.

I feel that Papa derives his motivation to write from his passion towards a free expression of ideas and dissemination of knowledge. He is an arduous reader himself. I remember, even

from my early childhood, how he would pick up a book and begin reading while me and my elder sisters would sit by his feet and listen to him. Sometimes we would not understand, perhaps because the text would be too complicated, but he always inspired us to listen, and, sometimes, he would fall asleep, reading - tired, yet determined. He reads, therefore he writes. He would always challenge me to strive for perfection, and would never consider anything as very tough or unattainable. When I was in the fourth grade, he asked me to come and listen to a mathematics symposium being delivered at the University. Of course he knew that I wouldn't understand it, but he has always felt that the mere fact of being in the company of learned people, in itself is a great source of learning and knowledge. The best inspiration is drawn from a silent observation of behaviors, honest self estimation and practice of the very best of what we observe. Those of us who have had the privilege and honor of either working with Papa, or for him, have learnt this, in one way or the other- that he is a constant source of inspiration. He always inspires people to write because he knows that a good writer must be a good reader and a good listener first. He has always said that everyone can be a good writer, and he has proven himself right again and again- those who have followed his disciplined approach have indeed been extremely successful. The fact that he considers the art of writing to be no magic, in itself, is a sign of his selfless desire to cultivate creativity, and he leads by example. His numerous writings have never shown sign of dullness, never a hint of fatigue. The simplicity of his literary style is a true reflection of the simplicity of his character. Most of his writings begin with a very definitive statement and are interspersed with such statements throughout the text- in my opinion, this definitiveness makes his style very unique and unambiguous. It is likely the result of his training as a hard core scientist, coupled with th uninhibited freedom of expression of thoughts- both integral parts of his mighty character. The scientist in him is very persuasive, fact based, reasoning-oriented and challenging. The sahityakar in him is very simple, carefree, determined and true to his cause- bearing very much the semblance of Mahakavi Nirala.

This makes us wonder, as to who has influenced Papa's life and his writing style. At the risk of being entirely wrong, I'd venture and say that his association with Mahakavi Nirala (in the 1950's), Swami Satyaprakash (in the 1960's) and ISKCON (in the 1980's) have had the maximum influence on the way he writes. I consider these associations to be motivational, inspirational and spiritual, respectively, in nature. While his studentship under Nirala appears to have motivated the Svachandata in his style and cultivated the simplicity in character, Swamiji's simultaneous command over scientific and literary skills seems to have inspired Papa to be the profilic, disciplined writer that he is. Further, along the vast amount of translatory work that he performed for the Bhaktivedanta Book Trust, starting in 1980, ought to have a significant spiritual impact on his life- if not directly impacting his style of writing, the closeness with spiritual wisdom definitely provided him the solace, strength and comfort- and therefore, helped maintain the consistency in his style and efficiency. I must also note that my mother, with all the devotion, has always been Papa's side, providing him support, admiration and the highest standards of literary critique on every-

thing he has written. In my opinion, over the years, her constructive criticism has reflected in the structuring of sentences, choice of words and essay titles in Papa's works.

One aspect of Papa's literary works in his style of translation. The range of his translation work spans a wide variety of topics- from Vedic text to Chemical Abstracts, from science fiction to chemical physics, and much more. His translations are not word-to-word, yet they preserve the integrity of the original work, and the simplicity and creativity that he imparts in this process is beyond compare. In many instances, his motivation to translate is his love for his matribhasha, and his desire to make world's best literature available for reading in Hindi- so that one does not need the proficiency in English to be able to enjoy and learn from classic pieces of scientific and litrary text. In this process, he has taken popularization of science to new levels by setting the highest standards of literary work and cultivating the philosophy of disseminating knowledge and information.

I consider Papa as a true *tapasvi*, whose *sadhana* is his profound devotion to science, literature and his family. The balance that he has maintained throughout his life, between his devotion and his responsibilities, is truly admiring and a reflection of his rock solid integrity. He is often very quiet and prefers to listen than talk, yet, when he laughs, he laughs with an open heart. He has his own way of admiring the achievements of others- it's often in very simple, yet true to the heart comments. Deeply ingrained in his towering personality is a very sensitive human being- one who stands strong inadversities, unshaken in his resolve, yet a tear in the corner of his eye. Some may think that it takes a lot to please him, and maybe that is true. Those who yearn his admiration strive for the highest levels of excellence- in their professions and in their conduct. He himself has aimed for nothing less, ever. As a father, he has had a profound impact on the way I think, the way I write, the way I observe and the way I react. If I had my way, I would imitate him in all aspects of life because I know that he is nothing short of perfection. I also know that he wouldn't want any of us to copy him- he would want us to be our own selves, excel in own disciplines and serve as example to others. On this solemn occasion, the greatest gift to him is to practice everything that he has silently taught all of us- simplicity, dignity, respect, fearlessness and endless, softless devotion to our cause.

Dallas, Texas

कृतित्व खण्ड

वैज्ञानिक तथा साहित्यिक अवदान

डॉ मिश्र का कृतित्व

एक प्रशंसक

डॉ० मिश्र जाने माने मृदा विज्ञानी होने के साथ ही बहुआयामी लेखक एवं हिन्दी रचनाकार हैं। १६६० में उन्होंने कुछ कवितायें लिखीं थीं किन्तु वे मूलतः गद्यलेखक या निबन्धकार हैं।

उन्होंने १६५२ से विभिन्न वैज्ञानिक पत्रिकाओं के लिये निबन्ध लिखना शुरू किया। उन्होंने स्वीकृत वैज्ञानिक शब्दावली को आत्मसात् करके सर्वत्र उसी का प्रयोग किया है। वैसे गूढ़ शब्दों की वे अपनी भी व्याख्या देते हैं। उन्होंने १६७० के दशक में हाईस्कूल तथा इंटर की कृषि कक्षाओं के लिये अत्यन्त उपयोगी पाठ्य पुस्तकें लिखीं जिनमें उन्होंने अपने शिष्य रमेश चन्द्र तिवारी का सहयोग लिया किन्तु बाद में वे मौलिक लेखन करते रहे।

लेखन तो डॉ० मिश्र की हाबी रहा है। वे विश्वविद्यालय में एम.एससी. कक्षाओं को मृदा विज्ञान पढ़ाते थे और शोध कराने के बाद जो समय मिलता था, उसमें लेखन करते रहे हैं। उन्हें डॉ० गोरख प्रसाद, डॉ० सत्यप्रकाश तथा प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा से प्रोत्साहन भी मिलता रहा है।

वे किसी पत्रिका के लिये लेख तभी लिखते जब उसके सम्पादक का अनुरोध होता। पारिश्रमिक को दृष्टि में रखकर कभी लेखन नहीं किया। उनका अधिकांश लेखन 'विज्ञान' पत्रिका के लिये होता रहा। वे अपने विषय से हट कर बहुत ही कम लिखते रहे। विज्ञान के साथ साथ साहित्य के प्रति उनकी रुचि अनूठी है। वे उतने ही मनोयोग से पाण्डुलिपियों का सम्पादन करते और पत्र पत्रिकाओं में नये से नये ग्रन्थों के विषय में विवरण देने में अग्रणी भूमिका निभाते रहे हैं।

एक ओर वे जहां विज्ञान की सारी पत्रिकाओं में छपते रहे, वहीं उनकी साहित्यिक रचनायें साप्ताहिक आज, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ज्योत्स्ना, अजन्ता, दक्षिण भारती, प्राच्य भारती, हिन्दुस्तानी, सम्मेलन पत्रिका, साहित्य सन्देश आदि में धड़ल्ले से छपती रही हैं। दूरस्थ हिन्दी वाले उन्हें हिन्दी का लेखक मानते हैं और उनके हिन्दी के शोध छात्र उनके पास मार्गदर्शन हेतु आते रहे जिन्हें वे सभी प्रकार की मदद पहुंचाते रहे हैं।

उनके विज्ञान लेखन से दिल्ली, बनारस, जोधपुर आदि के विज्ञान लेखक प्रभावित होते रहे है। और जब वे 'विज्ञान' के सम्पादक बने तो उन्होंने विज्ञान के सभी लेखकों को विज्ञान में लिखने के लिये आमन्त्रित किया। १६६० से २००० के ४० वर्षों में डॉ० मिश्र के इतने लेखक मित्र हैं जिसकी गणना नहीं की जा सकती।

डॉ० मिश्र के लेखन का उद्देश्य नये लेखकों को प्रोत्साहित करना भी रहा है। उनके अधिकांश शोध छात्र हिन्दी लेखन में प्रवृत्त हुये हैं और उनके अतिरिक्त भी अनेक लेखकों को आकृष्ट करने में उनकी महती भूमिका रही है।

डॉ० मिश्र के लेखन का एक पक्ष अनुवाद भी रहा है। वे कई वैज्ञानिक कृतियों का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने के अलावा 'विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका' में आये गणित, भौतिकी, रसायन आदि के शोधपत्रों का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते आ रहे हैं।

डॉ० मिश्र ने 'इस्कान' के लिये श्रील प्रभुपाद की समस्त ग्रन्थों का जो हिन्दी अनुवाद किया है वह उनकी कर्मठता का द्योतक है। १२ वर्षों में उन्होंने ३५००० पृष्ठों का अनुवाद करके कीर्तिमान स्थापित किया है। शायद ही किसी वैज्ञानिक ने इतना विशद अनुवाद कार्य किया हो। धार्मिक साहित्य को अंग्रेजी से हिन्दी में सुलभ कराने के लिए इतना समय आपने दिया है। इस्कान भक्त एवं प्रबन्धक इस अनुवाद की भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं। यदि डॉ० मिश्र के मन में विज्ञान के साथ साथ धर्म के प्रति आस्था न होती तो शायद वे यह कार्य न कर पाते क्योंकि आर्थिक लाभ से कोई कार्य नहीं किया जाता। विज्ञान और धर्म नामक उनका लेख उनके वास्तविक स्वरूप को बताने वाला है।

डॉ० मिश्र का लेखन मात्र निबन्धों की रचना में समाप्त नहीं होता। उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से अपने ज्ञान को पुस्तकाकार किया है। १९६० में ही उन्होंने **भारतीय कृषि का विकास** पुस्तक लिखी। उस समय उन्हें इसके लिये तमाम पुस्तकालय छानने पड़े थे। अब ४० वर्षों बाद वे अपनी इस प्रथम वैज्ञानिक कृति का परिमार्जन करके पुनः प्रकाशित करने जा रहे हैं। इस पुस्तक में उन्होंने घाघ भड्डरी के अलावा खना की कृषि विषयक कहावतों को स्थान दिया है और उनके योगदान का सही मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। इसके पूर्व शायद ही कोई कृषिविज्ञानी इन्हें अपने ग्रन्थों में स्थान देता रहा हो।

डॉ० मिश्र का विज्ञान लेखन चुनौती का साहित्य रहा है। वर्षों तक मृदा विज्ञान का अध्यापन और तत्सम्बन्धी शोध कार्य करने के बाद उन्हें अनुभव हुआ कि इन विषयों पर हिन्दी में मौलिक ग्रन्थ लिखने चाहिये। फलस्वरूप पहले **पादप रसायन** पाठ्य पुस्तक लिखीं। फिर **सूक्ष्ममात्रिक तत्व, फास्फेट** तथा **अम्लीय मृदायें** नामक पुस्तकें लिखीं। इनकी भाषा, इनकी शैली दृष्टव्य है। इनमें जहां विश्वसाहित्य की समीक्षा की गई है वहीं भारतीय योगदान को प्रमुखता प्रदान करते हुये अपने शोध परिणामों को भी अंकित किया गया है। भले ही अंग्रेजी में ऐसा विपुल साहित्य उपलब्ध है किन्तु हिन्दी में इस अभाव की पूर्ति डॉ० मिश्र ने ही की है।

डॉ० मिश्र को जब भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् से जैव उर्वरकों पर पुस्तक लिखने का आमन्त्रण १९८० के दशक में मिला तो उनके समक्ष बहुत बड़ी चुनौती आ खड़ी हुई। उस विषय में भारत में बहुत कम शोधकार्य हुआ था और उसे प्राप्त कर पाना कठिन कार्य था। उन्होंने विशेषज्ञों को पत्र लिखकर रिप्रिंट मंगाये और तब इस पुस्तक को पूरा किया। यह जैव उर्वरकों पर पहली पुस्तक थी, जिस पर उन्हें पुरस्कार भी मिला।

मौलिक शोध साहित्य के अतिरिक्त लोकोपयोगी विज्ञान लेखन के प्रति भी डॉ० मिश्र का ध्यान आकृष्ट हुआ। स्वामी सत्यप्रकाश ने १९८८ में विज्ञान परिषद् की ७५वीं वर्षगांठ के अवसर पर दिल्ली के प्रकाशक को लोकोपयोगी साहित्य की ७५ पुस्तकें छापने के लिये राजी किया और उसके विषयों का चुनाव करने और पुस्तकें लिखाने का कार्य डॉ० मिश्र के कंधों पर डाल दिया। चुनौतीस्वरूप डॉ० मिश्र को एक आदर्श पुस्तिका लिखनी पड़ी। वह थी **ऊर्जा**। इस पुस्तिका की शैली तथा विषय निर्वाह दृष्टव्य हैं। उसी क्रम में लोकोपयोगी रसायन, ईंधन, रसायन के नोबेल पुरस्कार विजेता जैसी पुस्तिकायें भी

लिखीं। इस योजना में डॉ० मिश्र ने अनेक नये लेखकों को प्रोत्साहित किया और उन्हें लेखक बना डाला। आज भी यह योजना चल रही है। १६६० का वह दशक बड़ा ही लोमहर्षक रहा।

एक बार दिल्ली में श्याम सिंह शशि ने डॉ० साहब से कहा कि भारत सरकार का प्रकाशन विभाग बच्चों के लिये विज्ञान की रोचक पुस्तकें छापना चाहता है किन्तु कोई लेखक नहीं मिल रहा है। उन्होंनें तुरन्त ही एक पुस्तक लिखने की चुनौती स्वीकार की और इस तरह धातुलोक की सैर पुस्तक प्रकाश में आई जिसके अब तक छह संस्करण हो चुके है। इसमें भारत के प्राचीन धातु विज्ञान की जैसी झांकी प्रस्तुत की गई है वह अद्वितीय है।

१६६० के दशक में एनसीईआरटी ने एक नया आकर्षक अभियान चलाया 'पढ़ें और सीखें'। इसके अग्रणी बनाये गये डॉ० आर.सी. मेहरोत्रा। उन्होंने अपने अनन्य शिष्य डॉ० मिश्र को इस अभियान में सहायता देने के लिये कहा। फलस्वरूप माटी का मोल तथा जीवनोपयोगी सूक्ष्ममात्रिक तत्व जैसी पुस्तकें प्रकाश में आईं। ये दोनों पुस्तकें डॉ० मिश्र के मृदा विज्ञान विषयक गहन अध्ययन एवं पाण्डित्य को बताने वाली हैं। इनकी शैली इतनी रोचक है कि विषय की दुरूहता का पता ही नहीं चल पाता। माटी का मोल की गिनती सर्वश्रेष्ट पुस्तकों में की जा सकती है। खेद है विज्ञान के लेखक या विज्ञान के पाठकों को अभी तक अच्छे बुरे की समझ और अच्छी कृतियों की प्रशंसा करने की आदत नहीं बन पायी है। भला ऐसे में सत्साहित्य कैसे प्रकाश में आ सकता है !

१६८६ में जब डॉ० मिश्र शीलाधर मृदा शोध संस्थान के निदेशक बने तो अध्यापन और शोधकार्य के बाद बचे समय का उपयोग उन्होंने सर्वथा नवीन विषय पर रचनाएं लिखने में किया। उन्होंने दिल्ली के प्रभात प्रकाशन के लिए पहले हिन्दी में प्रदूषण पर पांच पुस्तकें लिख कर देने की चुनौती स्वीकार की। उसी समय वे आशीष प्रकाशन के लिये इसी विषय पर अंग्रेजी में छह पुस्तकें लिख रहे थे। मजे की बात तो यह है कि हिन्दी की पुस्तकों के लेखन की शैली में अंग्रेजी पुस्तकों का पिष्टपेषण नहीं हुआ। यही नहीं, उन्होंने हिन्दी में सरल लेखन की परम्परा शुरू की। अपने शोध छात्रों के सहयोग से इन पुस्तकों का लेखन किया। उन्होंने इस पुस्तकों के आधे से अधिक अंश स्वयं लिखे और छात्रों के लिखे अंशों का संशोधन किया। यही नहीं, पुस्तकें छपने पर प्राप्त पारिश्रमिक में से आध ा भाग उन्हें दिया। ऐसी सहभागिता उन्होंने सूक्ष्मजीवाणुओं में प्राप्य परम्परा से प्राप्त की। ऐसा अनूठा उदाहरण विज्ञान जगत के लेखन में शायद ही मिले। इसी बहाने डॉ० मिश्र ने सहयोगी छात्रों को हिन्दी का लेखक बना दिया।

डॉ० मिश्र के कृतित्व में कोशरचना का उल्लेख आवश्यक है। १६६० के ही दशक में प्रभात प्रकाशन में चुनौती भरे स्वर में डॉ० साहब से कहा था कि हिन्दी वाले रसायन कोश नहीं लिख रहे। उन्होंने तय कर कहा कि मैं लिखूंगा। अकेले ही दस मास में कोश पूरा कर दिया। इस कोश की विशेषता यह है कि यह हिन्दी अकारादि क्रम से लिखा गया है जबकि विज्ञान के सारे कोश अंग्रेजी अकारादि क्रम में हैं।

जब डॉ० मिश्र ने विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त कर लिया तो वे अपना सारा समय विज्ञान परिषद् में ही देने लगे। वे कृतसंकल्प थे कि विज्ञान परिषद् को बौद्धिक मंच बनाया जाय। फलस्वरूप वे विज्ञान प्रसार दिल्ली के सहयोग से कई प्रोजेक्ट ले आये और उनपर शोध सहायकों से कार्य कराना शुरू किया। तीन वर्षों के भीतर उन्होंने दो प्रोजेक्ट पूरे किये जो हिन्दी में उपलब्ध वैज्ञानिक तथा

प्रौद्योगिकी की पुस्तकों की सूची तथा विगत सौ वर्षों में रचित वैज्ञानिक लेखों का संकलन एवं प्रकाशन था। स्पष्ट है कि प्रकारान्तर से डॉ० साहब विज्ञान लेखन के इतिहास की सामग्री जुटा रहे थे क्योंकि उनके मन में ऐसा इतिहास लिखने की प्रेरणा १९९२ से ही उठी थी और १९९७ में वे उसे पूरा करके अपने मित्र **आविष्कार** के सम्पादक श्री भटनागर को सौंप चुके थे। यही नहीं, हिन्दी संस्थान ने उसके एक अंश **बाल विज्ञान सर्वेक्षण** को पुस्तक रूप में प्रकाशित भी कर दिया है।

डॉ० मिश्र ३ मास के लिये विदेश भी गये। वहां उन्होंने निराला जी के ऊपर पुस्तक पूरी की।

लौटकर उन्होंने प्रभात प्रकाशन से हिन्दी में विज्ञान विश्वकोश छापने का सुझाव पेश किया। पहले तो एक सम्पादन मण्डल द्वारा यह कार्य सम्पन्न कराने का प्रस्ताव था किन्तु एक वर्ष तक जब कुछ नहीं हुआ तो प्रभात कुमार ने डॉ० साहब से यह कार्य स्वयं कराने के लिये कहा। फलस्वरूप उन्होंने कठिन श्रम करके सामग्री संकलित की। अकेले शीर्षक चुनना, सामग्री जुटाना, चित्र बनवाना- यह काफी जटिल कार्य था। किन्तु डॉ० साहब का मानना है कि प्रायः ५० वर्ष पूर्व ही कृष्ण वल्लभ द्विवेदी ने एक विश्वकोश निकाला था तो अब ऐसा क्यों नहीं हो सकता। वे तो नितान्त साहित्यिक व्यक्ति थे। उन्हें भगवती प्रसाद श्रीवास्तव, डॉ० गोरखप्रसाद, श्री सुरेश सिंह आदि से सहयोग लेना पड़ा था। अब वह परिस्थिति बदल चुकी है। डॉ० मिश्र ने विश्वकोश रचना का नया अनुभव अर्जित किया। दोनों खण्ड प्रकाशनाधीन हैं। डॉ० मिश्र का कहना है कि सामाजिक विज्ञान खंड में उन्हें काफी सामग्री स्वतः लिखनी पड़ी है। इसके छपने पर पाठक देखेंगे कि इस विश्वकोश के साथ नई विधा का उदय हुआ है। यह छात्रोपयोगी, जनसामान्य के लिये उपयोगी तथा हिन्दी के लिये दस्तावेज होगा।

डॉ० मिश्र की साहित्यिक कृतियां १९६० के दशक से शुरू होती हैं। पहले मंझनकृत मधुमालती, फिर ईश्वरदासकृत सत्यवती, कुतुबनकृत मृगावती का सम्पादन किया। बीच में अपने शोधकार्य में व्यस्त रहने से उन्होंने साहित्य से विराम ले रखा था किन्तु १९८० में पनुः अंगदपैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा, आलमकृत माधवानल कामकन्दला का सम्पादन किया। २००० के दशक में सत्कवि गिरा विलास तथा हरिचरित्र जैसी महत्वपूर्ण कृतियों का सम्पादन पूरा किया जिनमें से पहली कृति प्रकाशित हो चुकी है। ये पुस्तकें डॉ० मिश्र द्वारा पुस्तक संपादन कला की दिशा में पाण्डुलिपि की खोज, उनमें व्यवहृत कैथी लिपि को पढ़ना, फिर प्रामाणिक पाठ तैयार करना, भूमिका लिखना और शब्दों के अर्थ लिखना जो काफी श्रमसाध्य है जैसी प्रक्रिया को बताने वाली हैं। इससे भी कठिन है इनका प्रकाशन। प्रायः प्रकाशक ऐसी पुस्तकें छापने के लिये तैयार नहीं होते। डॉ० मिश्र ने वर्षों प्रतीक्षा की है। वे यही चाहते हैं कि हिन्दी के अमूल्य ग्रन्थों का प्रकाशन प्रसिद्ध संस्थायें करें। हिन्दुस्तानी एकेडमी तथा नागरी प्रचारिणी सभा ने इन्हें प्रकाशित करना स्वीकार किया है।

डॉ० मिश्र को पुस्तकों से धन कमाने की कोई कामना नहीं है। वे वाहवाही भी नहीं चाहते। वे तो हिन्दी के अमूल्य निधि के रस को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखक इन नवीन रचनाओं से परिचित होकर अपनी कृतियों में स्थान दें। डॉ० मिश्र ने न केवल सूफी साहित्य में नये अध्याय जोड़े हैं, अपितु भक्ति काल के अनेक कवियों की रचनाओं को भी प्रकाश में लाया है। इनमें लालचदासकृत हरिचरित्र मुख्य है। रीतिकाल के आधार ग्रंथ सतकवि गिरा विलास की खोज करके उन्होंने एक बहुत बड़े शून्य को पाटा है।

विज्ञानी होकर साहित्य में अभिरुचि कोई नवीन बात नहीं किन्तु छायावाद के उन्नायक महाकवि

निराला का सानिध्य प्राप्त करके उनके १२ वर्षो के जीवन की प्रामाणिक डायरी रखना अपने आपमें काफी महत्वपूर्ण हैं। डॉ० मिश्र निराला के अतिप्रिय अन्तिम शिष्य रहे है। निराला की मृत्यु के बाद प्रायः ४० वर्षों तक मौन रहकर उनकी शतीवर्ष में डॉ० मिश्र ने **महामानव निराला** नामक पुस्तक लिखी है जो प्रभात प्रकाशन से प्रकाशित हुई है। इसे हर आलोचक को पढ़ना चाहिये। इसमें सर्वथा नवीन दृष्टिकोण से निराला जी का मूल्यांकन किया गया है।

चूंकि इस पुस्तक में निराला विषयक सारी बातें अट नहीं पाई हैं इसलिये डॉ० मिश्र ने अन्य पुस्तक **ऐसे थे हमारे निराला** लिखी है। जब यह पुस्तक छाप कर आवेगी तो लोग देखेंगे कि निराला जी का असली रूप क्या था और ईर्ष्या द्वेष वश उन्हें किस तरह प्रस्तुत किया जाता रहा है। डॉ० मिश्र ने निराला को तुलसी के बाद आधुनिक युग का सबसे बड़ा कवि बताया है। उनकी दृष्टि में निराला परमहंस थे।

डॉ० मिश्र की साहित्य के प्रति अभिरुचि के कई कारण रहे हैं। निराला, राहुल, डॉ० उदयनारायण तिवारी, श्री नारायण दत्त जी प्रभृति विद्वानों ने उन्हें प्रभावित किया है। उनकी पत्नी हिन्दी साहित्य की विदुषी हैं। उनका पुत्र भी प्रतिभाशाली वैज्ञानिक है। वह भी हिन्दी का पक्षधर है। डॉ० मिश्र सबों की आशा के अनुरूप उतरने का प्रयास करते रहे हैं।

उनके लेखन का प्राण यथार्थता का निरूपण है। जो सत्य नहीं है वह त्याज्य है, और जो सत्य है उसका उद्‌घाटन आवश्यक है। उनकी विज्ञान तथा साहित्य विषयक समस्त कृतियों की अन्तर्धारा में यही तत्व मिलते हैं। उन्हें शब्दाडंबर प्रिय नहीं है। वे नये विषयों की खोज करके कुछ नया प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। उन्हें यह बात खलती है कि हिन्दी के कई पक्ष अभी भी अछूते हैं। उनका मानना है कि हिन्दी के साहित्यकारों को विज्ञान लेखकों से सौहार्द सम्बन्ध बनाने चाहिये। उनका कहना है कि हिन्दी अब इतनी समृद्ध हो चुकी है कि उसे राष्ट्रभाषा बनाने के लिये गिड़गिड़ाने की जरूरत नहीं रह गई।

डॉ० मिश्र की वैज्ञानिक कृतियां

डॉ0 ए.के. गुप्ता

डॉ० मिश्र की पहली पुस्तक 'भारतीय कृषि का विकास' १६६० में विज्ञान परिषद् से प्रकाशित हुई। इसमें 'विज्ञान' मासिक में प्रकाशित उनके लेखों को पुस्तकाकार किया गया था। इस पुस्तक पर उन्हें 'हरिशरणानन्द पुरस्कार' भी मिला था।

इसके बाद १६६७-६८ में डॉ० मिश्र ने हाईस्कूल तथा इण्टर कक्षाओं के लिये कृषि तथा रसायन विषयों से सम्बद्ध पाठ्यपुस्तकें लिखीं। तब पारिभाषिक शब्दावली का प्रस्फुटन हो रहा था अतः इन पुस्तकों के लिखने में तमाम शब्द गढ़ने पड़े थे। इन पुस्तकों की विशेषता थी इनके पहले अध्यायों में भारतीय योगदान का विस्तृत उल्लेख।

१६७० में उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी गठित होने के बाद डॉ० मिश्र ने उसके लिये महत्वपूर्ण मोनोग्राफ लिखने में सहयोग दिया और स्वयं भी उसके लिये तीन मोनोग्राफ लिखे- सूक्ष्ममात्रिक तत्व, फास्फेट तथा अम्लीय मृदायें। इन तीनों के लिखे जाने के एक वर्ष पूर्व एम.एससी. कक्षाओं के लिये वे एक पाठ्यपुस्तक 'पादप रसायन' लिख चुके थे। फास्फेट तथा पादप रसायन भी पुरस्कृत पुस्तकें हैं।

दिल्ली प्रवास के दौरान भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् से उन्हें 'जीवाणु उर्वरक' पर पुस्तक लिखने का आमंत्रण मिल चुका था किन्तु इसके लेखन तथा प्रकाशन में काफी समय लग गया। यह इस विषय पर पहली पुस्तक थी। बाद में इस पुस्तक पर उन्हें पुरस्कार भी मिला।

'विज्ञान' का सम्पादक रह चुकने के कारण डॉ० मिश्र में लोकप्रिय विज्ञान के प्रति बहुत पहले से झुकाव था किन्तु उसकी शुरुआत भारत सरकार के प्रकाशन विभाग के लिये 'धातु लोक की सैर' के लेखन से शुरू हुई। यह पुस्तक अत्यन्त रोचक शैली में लिखी गई इस विषय पर बेजोड़ कृति है।

इसके पश्चात् 'पुस्तकायन' दिल्ली के अनुरोध पर डॉ० मिश्र के निर्देशन पर बाल विज्ञान पर अनेक पुस्तकें तैयार हुईं। उन्होंने इस योजना के अन्तर्गत स्वयं भी कई पुस्तकें लिखीं जिनमें ऊर्जा (१६६०), दैनिक जीवन में रसायन (१६६३), लोकोपयोगी रसायन (१६६०), रसायन के नोबेल पुरस्कार विजेता (१६६३) मुख्य हैं।

डॉ० मिश्र ने एनसीईआरटी के लिये भी 'माटी का मोल' तथा 'जीवनोपयोगी सूक्ष्ममात्रिक तत्व' पुस्तकें लिखीं।

डॉ० मिश्र ने प्रभात प्रकाशन, दिल्ली के लिये उच्चस्तरीय लोकोपयोगी पुस्तकें लिखीं। इनमें प्रदूषण से सम्बन्धित तीन पुस्तकें हैं- जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण तथा मृदा प्रदूषण। इन पुस्तकों में पहली बार प्रदूषण के वैज्ञानिक पक्ष की विवेचना हुई है। इनमें से जल प्रदूषण पुस्तक पुरस्कृत भी हो चुकी है।

डॉ० मिश्र ने प्रभात प्रकाशन, दिल्ली के लिये विज्ञान की रोचक पुस्तकमाला के अन्तर्गत अन्तरिक्ष की रोचक बातें, भौतिकी की रोचक बातें, पृथ्वी की रोचक बातें तथा मानव की रोचक बातें नामक पुस्तकें लिखीं। इन पुस्तकों में पहली बार अंग्रेजी तथा हिन्दी में उपलब्ध समस्त साहित्य का

आलोडन करके वैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत किये गये जो छात्रों, अध्यापकों, शोधकर्ताओं के लिये समान रूप से उपयोगी हों। इनकी भाषा तथा शैली दृष्टव्य है।

डॉ० मिश्र ऐसे विज्ञान लेखक हैं जिन्होंने कोश और विश्वकोश भी लिखे हैं। उनके द्वारा लिखित रसायन विज्ञान कोश तथा अभिनव विश्वकोश साहसिक प्रयास हैं। अब वे जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश का सम्पादन कर रहे हैं।

डॉ० मिश्र ने विज्ञान कथा एवं तथा विज्ञान कविताओं का संकलन, विज्ञानांजलि, का भी सम्पादन किया है। उन्होंने विज्ञानगल्प एवं कविता लेखन को प्रोत्साहित किया और १६३६ से अब तक छपी विज्ञान कविताओं का मूल्यांकनपरक संकलन भी सम्पादित किया है।

डॉ० मिश्र ने विज्ञान प्रसार, दिल्ली के सहयोग से जिन दो महत्वपूर्ण संकलनों का सम्पादन किया है वे हैं-

१. स्वतन्त्रतापूर्व विज्ञान लेखन के व्यक्तिनिष्ठ प्रयास

२. हिन्दी में विज्ञान लेखन के १०० वर्ष (२ खण्ड)

विज्ञान के लोकप्रियकरण की दिशा में आधारभूत सिद्धान्तों के बारे में उन्होंने एक छोटी सी पुस्तक भी लिखी जिसमें अत्यन्त महत्वपूर्ण बातों का पहली बार प्रतिपादन हुआ है।

डॉ० मिश्र ने शब्दावली आयोग द्वारा शुरू की गई विज्ञान पाठमाला के लिये पहली पुस्तक लिखी, वाहित मल एवं आपंक : उपयोग एवं प्रबंधन। यह ऐसी पुस्तक है जो किन्हीं कारणों से १६६६ में प्रकाशित हुई जिसमें तद्विषयक विस्तृत समीक्षा प्रस्तुत हुई है और मल जल एवं आपंक के गुण दोषों का स्पष्टीकरण हुआ है।

डॉ० मिश्र के समक्ष पारिभाषिक शब्दावली या भाषा कभी अवरोध नहीं वनी। उन्होंने विज्ञान को सरल, सुबोध एवं परिष्कृत भाषा प्रदान की है जिसमें जटिलता छू भी नहीं गई। डॉ० मिश्र शब्दावली आयोग के लिये 'स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी में विज्ञान लेखन का इतिहास' नामक पुस्तक लिख चुके हैं। यह इस विषय पर पहली पुस्तक है जिसमें विगत ४० वर्षों के चिन्तन, मनन एवं सृजित साहित्य पर उनकी सूक्ष्म दृष्टि को देखा जा सकता है।

वे शब्दावली आयोग के लिये 'भारतीय कृषि का इतिहास' भी लिख चुके हैं।

डॉ० मिश्र की नवीनतम सम्पादित पुस्तक है 'विज्ञान पत्रकारिता के मूल सिद्धान्त'। इसमें से काफी सामग्री उन्हीं द्वारा लिखी हुई है- विशेषतया बाल विज्ञान नामक अध्याय। डॉ० मिश्र ने एक छोटी सी पुस्तक 'बाल विज्ञान का सर्वेक्षण' १६६७ में ही लिखी थी जो हिन्दी संस्थान उत्तर प्रदेश से छपी है।

डॉ० मिश्र के कृतित्व में विज्ञान का लोकप्रियकरण, विज्ञान लेखन का इतिहास तथा पारिभाषिक शब्दों पर बहस- ये तीन मुद्दे छाये हुये मिलेंगे। उन्होंने विगत ५० वर्षों में विज्ञान लेखन के क्षेत्र को उर्वर बनाया है और उसमें नये नये लेखकों को भाग लेने के लिये प्रेरित किया है।

डॉ० मिश्र अपने विषय मृदा विज्ञान के विविध पक्षों के प्रति सचेष्ट रहे हैं। इसका प्रस्फुटन उनके द्वारा अंग्रेजी की पुस्तकों में हुआ है। इन पुस्तकों की संख्या काफी है जिसमें मृदा प्रदूषण, पर्यावरण संरक्षण जैसे मुद्दे मुख्य हैं। इनकी अंग्रेजी पुस्तकों में से Soil Pollution इस विषय की पहली प्रामाणिक कृति है। आज मृदा प्रदूषण कृषि विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित है।

डॉ० मिश्र द्वारा अंग्रेजी में लिखे लेख अनेक संकलनों में सम्मिलित हुये हैं।

डॉ० मिश्र के मृदा विषयक शोधपत्र देश विदेश के मानक जर्नलों में १६५६ से ही प्रकाशित होते रहे हैं। उन्होंने काफी शोधपत्र हिन्दी में भी लिखे हैं।

डॉ० मिश्र का कृतित्व वैविध्यपूर्ण है। उनकी विज्ञान विषयक पुस्तकों की एक अलग लाइब्रेरी बन सकती है। आवश्यकता है कि प्रबुद्ध पाठक उसका अध्ययन करें।

डॉ० मिश्र की कृतियां/सम्मान

डॉ० मिश्र ने विगत ५० वर्षों में अनेक वैज्ञानिक तथा साहित्यिक पुस्तकों का लेखन किया है जिसमें मौलिक तथा अनूदित दोनों सम्मिलित हैं। उनकी कृतियों में विज्ञान विषयक (तीन दर्जन से अधिक), साहित्यिक (एक दर्जन) तथा धार्मिक (कई दर्जन) पुस्तकें हैं।

विज्ञान विषयक

१. पाठ्यपुस्तकें (१०)

१९६५ नवीन रसायन शास्त्र (हाई स्कूल, म०प्र०), सरस्वती प्रकाशन, मथुरा
१९६७ नवीन कृषि विज्ञान (भाग १, २) हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
१९६७ कृषि शास्त्र की रूपरेखा (भाग १, २, ३, ४), हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
१९६८ आधुनिक हाई स्कूल रसायन, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
१९६८ कार्बनिक रसायन की रूपरेखा, अशोक पुस्तक मन्दिर, इलाहाबाद
१९७३ अकार्बनिक रसायन की रूपरेखा, अशोक पुस्तक मन्दिर, इलाहाबाद

२. अनूदित पुस्तकें (२)

१९६७ विद्यालय रसायन : लीनियस पॉलिंग की पुस्तक 'कालेज केमिस्ट्री' का अनुवाद
१९७० जीवाणु दिनचर्या : थाइमैन की पुस्तक 'लाइफ ऑफ बैक्टीरिया' का अनुवाद
१९७२ कृषि जैव रसायन : डचर की पुस्तक 'एग्रीकल्चर बायोकेमिस्ट्री' का अनुवाद

३. उच्चस्तरीय मौलिक पुस्तकें (१९)

१९६० भारतीय कृषि का विकास, विज्ञान परिषद् प्रयाग (पुरस्कृत)
१९७३ पादप रसायन : उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी, लखनऊ (पुरस्कृत)
१९७४ फास्फेट : उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी, लखनऊ (पुरस्कृत)
१९७४ सूक्ष्ममात्रिक तत्व : उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी, लखनऊ
१९७६ अम्लीय मृदायें : उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी, लखनऊ
१९८१ जीवाणु उर्वरक : भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् नई दिल्ली (पुरस्कृत)
१९९१ गांव के कचरे के नये उपयोग : नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, फैजाबाद
१९९२ महान कृषि वैज्ञानिक प्रो० धर : विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद
१९९४ मृदा प्रदूषण : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
१९९४ जल प्रदूषण : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली (पुरस्कृत)
१९९६ भौतिकी की रोचक बातें : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
१९९६ पृथ्वी की रोचक बातें : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
१९९८ सागर की रोचक बातें : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
१९९८ अन्तरिक्ष की रोचक बातें : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
१९९८ मानव की रोचक बातें : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
१९९९ वाहित मल एवं आपंक : उपयोग एवं प्रबंधन : वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली
२००१ स्वतन्त्रता के पूर्व हिन्दी विज्ञान लेखन का इतिहास (२ भाग): वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली
भारतीय कृषि का विकास : वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली

लोकप्रिय विज्ञान विषयक पुस्तकें (१२)
१९८८ माटी का मोल : राष्ट्रीय शैक्षिक एवं प्रशिक्षण अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली
१९८९ धातुलोक की सैर : प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली
१९९० ऊर्जा : पुस्तकायन, अन्सारी रोड, नई दिल्ली
१९९० लोकोपयोगी रसायन विज्ञान : पुस्तकायन, अन्सारी रोड, नई दिल्ली
१९९३ प्रदूषित मृदा : पुस्तकायन, अन्सारी रोड, नई दिल्ली
१९९३ ईंधन : पुस्तकायन, अन्सारी रोड, नई दिल्ली
१९९३ जीवनोपयोगी सूक्ष्ममात्रिक तत्व : राष्ट्रीय शैक्षिक एवं प्रशिक्षण अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली
१९९३ रसायन विज्ञान के नोबेल पुरस्कार विजेता
१९९६ दैनिक जीवन में रसायन :पुस्तकायन, अन्सारी रोड, नई दिल्ली
नीम, प्लास्टिक (प्रकाशाधीन)
१९९७ बाल विज्ञान सर्वेक्षण : उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

कोश/विश्वकोश (३)
१९९१ रसायन विज्ञान कोश : साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली
अभिनव विश्वकोश (२ भाग): प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली (प्रकाशाधीन)

सम्पादित (९)
१९७०-७२ भारत की संपदा (१-४ खंड) वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली
१९८६ हिन्दी में विज्ञान लेखन : कुछ समस्यायें : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
१९८८ भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन : विज्ञान परिषद् प्रयाग
१९९६ आर्ष विज्ञान : विज्ञान परिषद् प्रयाग
१९९६ विज्ञानांजलि : विज्ञान परिषद् प्रयाग
१९९७ स्वतन्त्रतापूर्व विज्ञान के लोकप्रियकरण के व्यक्तिनिष्ठ प्रयास : विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली
१९९८ लोकप्रिय विज्ञान लेखन
१९९९ हिन्दी में लोकप्रिय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की पुस्तक सूची : एन.सी.एस.टी.सी., नई दिल्ली
२००१ विज्ञान पत्रकारिता के मूल सिद्धान्त : तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली
२००१ हिन्दी में विज्ञान लेखन के सौ वर्ष (२ भाग) : विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली

सम्पादक
'विज्ञान' मासिक १९५८-१९७१, २०००-
'विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका' त्रैमासिक १९५८ से लगातार प्रबन्ध सम्पादक
अन्तरवेद (१९५८ से १९८५ तक) जनपदीय पत्रिका
अपरा (साहित्यिक पत्रिका) ३ वर्षों तक
सम्पादकीय मंडल/परामर्शदाता
रसायन समीक्षा (जयपुर)
विज्ञान गरिमा सिंधु (दिल्ली)
आविष्कार (दिल्ली)
सदस्य, सम्पादन सलाहकार समिति विज्ञान प्रगति १९८४-१९८७
अध्यक्ष, सलाहकार समिति विज्ञान प्रगति १९८७-१९८९
उपाध्यक्ष, भारतीय लवणता अनुसंधान वैज्ञानिक समिति
सलाहकार समिति (सदस्य : भारत की सम्पदा) १९८७
संयुक्त हिन्दी सलाहकार समिति (नामित सदस्य) विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा महासागर विकास विभाग २००१
एन.सी.एस.टी.सी. नेशनल अवार्ड समिति (नामित सदस्य) २००१
संरक्षक
भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति, फैजाबाद १९९८
भारतीय कृषि अनुसन्धान समिति, करनाल १९९२
प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग १९७७-८७, १९९६-
सम्मान
१९६१ हरिशरणानन्द पुरस्कार
१९७८ विज्ञान सरस्वती सम्मान, दिल्ली साहित्य सम्मेलन
१९७४-७५, १९७५-७६, १९८१ उत्तर प्रदेश राज्य सम्मान
१९७९ फेलो नेशनल एकेडमी आफ साइंसेज
१९९३ डॉ० आत्माराम पुरस्कार : केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा
१९९६ विज्ञान भूषण : उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
१९९७ विज्ञान मार्तण्ड : भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति, फैजाबाद
१९९७ विज्ञान भास्कर : विज्ञान परिषद् प्रयाग
२००० फेलो : इण्डियन सांइस राइटर्स एसोसियेशन, दिल्ली
२००० अभिषेक श्री : शकुन्तला सिरोठिया बाल साहित्य पुरस्कार, प्रयाग
२००० राष्ट्रीय हिन्दी सेवी सहस्राब्दि सम्मान
२००१ डॉ० लक्ष्मी नारायण दुबे सम्मान : जैमिनी अकादमी, पानीपत
२००१ हिन्दी भूषण : अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य संस्थान, इलाहाबाद
२००१ साहित्य भूषण : अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य संस्थान, इलाहाबाद

अध्यक्षीय भाषण

२४-२५ मई १६७१ वैज्ञानिक अध्ययन और अध्यापन में हिन्दी : कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय
३ मई १६८८ विज्ञान की उच्च शिक्षा का माध्यम : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
जुलाई १६६५ विज्ञान की भाषा : सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट आफ इंडियन लैंग्वेजेज़, मैसूर
जनवरी १६६७ उद्घाटन भाषण : भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, बरेली
२० जुलाई १६६७ हिन्दी में विज्ञान का लक्ष्य : स्वस्थ परम्परा : डॉ० हरिमोहन स्मृति व्याख्यान

कुछ रेडियो वार्तायें

१. २१.१०.७६ अनुसंधान शाला से खेतों तक
२. ४.३.८० भूमिसंरक्षण कैसे : ऊसर और बंजर भूमि का सुधार
३. २४.३.८१ भूमिसंरक्षण के लिये काम
४. २७.४.८१ प्रदूषण का संक्रामक रोग
५. १३.६.८१ पर्यावरण की शुद्धता
६. २.६.८२ ऊसर भूमि का सुधार
७. १.१२.८३ अधिक सिंचाई के हानिकारक प्रभाव
८. २१.११.८४ भूमिसंरक्षण : क्षरण रोकने के उपाय
६. ५.६.८५ मिट्टी की कहानी : ऊसर बंजर वार्ता
१०. ५.६.८६ नये दशक की चुनौतियां
११. ११.१०.८६ बंजर भूमि के सुधार के लिये वैज्ञानिक तकनीक
१२. ३१.१२.८८ स्वच्छ जल
१३. १.१.८६ मिट्टी का परीक्षण
१४. ११.२.८६ प्रदूषण से बचाव
१५. ८.८.८६ कृषि के वैज्ञानिक तरीके
१६. १२.१२.८६ कचरे से कंचन
१७. १४.१.६२ पर्यावरण को जल प्रदूषण से कैसे बचायें
१८. ३०.१.६५ बहुमुखी प्रतिभा के धनी : डॉ० सत्यप्रकाश
१६. ५.५.६७ परिचर्चा : जैव विविधता और लाभकर कृषि
२०. १३.६.०० समय के साथ : विज्ञान विषयक कार्यक्रम
२१. १६.२.०१ विज्ञान की दृष्टि में लोकाचार एवं रीति रिवाज

एनसीएसटीसी नई दिल्ली के लिये संसाधन विशेषज्ञ के रूप में

१. 'विकास' द्वारा आयोजित कार्यशालायें : फतेहपुर १५-१७ मार्च १६६६
पी.डी. कालेज जौनपुर १८-२० मार्च १६६६
प्रतापगढ़ सितम्बर १६६५
लखनऊ १६-२६ नवम्बर १६६८
२. युवा विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित ग्वालियर १६-३१ सितम्बर १६६७
दतिया मई २००१
२. भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति सारनाथ १६-२२ फरवरी २००१
३. VOISCE बाराबंकी ४ जून १६६६
रायबरेली १३-१६ मार्च २०००

ग्रन्थ जिनमें परिचय सम्मिलित हुए हैं

International Who's Who of Intellectuals 13th Edition 1998
International directory of distinguished leadership 2000, American Biographical Institute
Directory of International Biography 2000, International Biographical Centre, Cambridge
Asia Pacific Who's Who, New Delhi 2000
2000 outstanding intellectuals of 20th Century 1999, Cambridge
International man of the year 1998
Member New York Academy of Science 2000
RBA Member ABI 1999
2000 Millennium Medal of honour 2000
Man fo the year 2000 ABI
Indo American Who's Who 1994
Who's Who in India 1998, Bombay
Biography International 1993
Reference India Vol. I : Rifacimento International 1992
Reference Asia : Asia Who's Who of Men & Women 1994
Men of Science and Technology in India, Premier Publication, Delhi
Eminent educationist of India, New Delhi 1996
Indo European who's who, Delhi 1995
साहित्य अकादमी, दिल्ली १९९५
हिन्दी साहित्य संसार २०००

विविध

कई विश्वविद्यालयों की विषय विशेषज्ञ समिति के सदस्य, शोध उपाधि समिति सदस्य, चयन समिति सदस्य, शोधग्रंथ परीक्षक, पुरस्कार समिति सदस्य, पाण्डुलिपियों के समीक्षक।

राष्ट्रपति शंकर दयाल शर्मा से आत्माराम सम्मान ग्रहण करते हुये डा. मिश्र।
१९९३
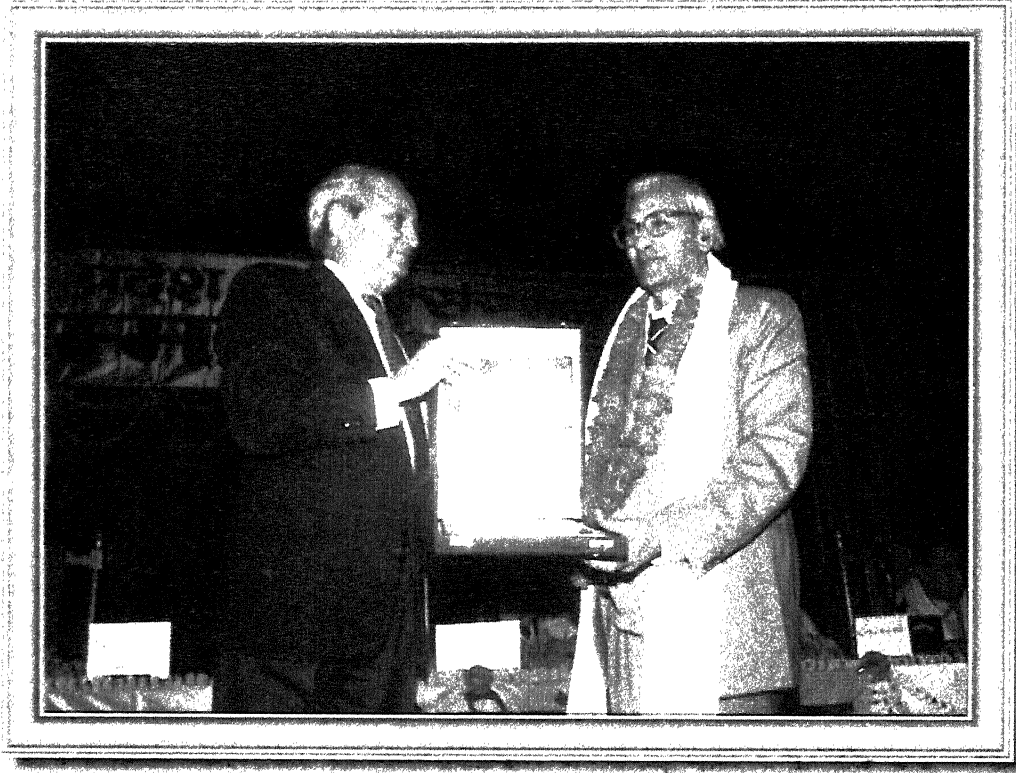
उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री रोमेश भण्डारी से विज्ञान भूषण सम्मान ग्रहण करते हुए डा. मिश्र। (१९९७)
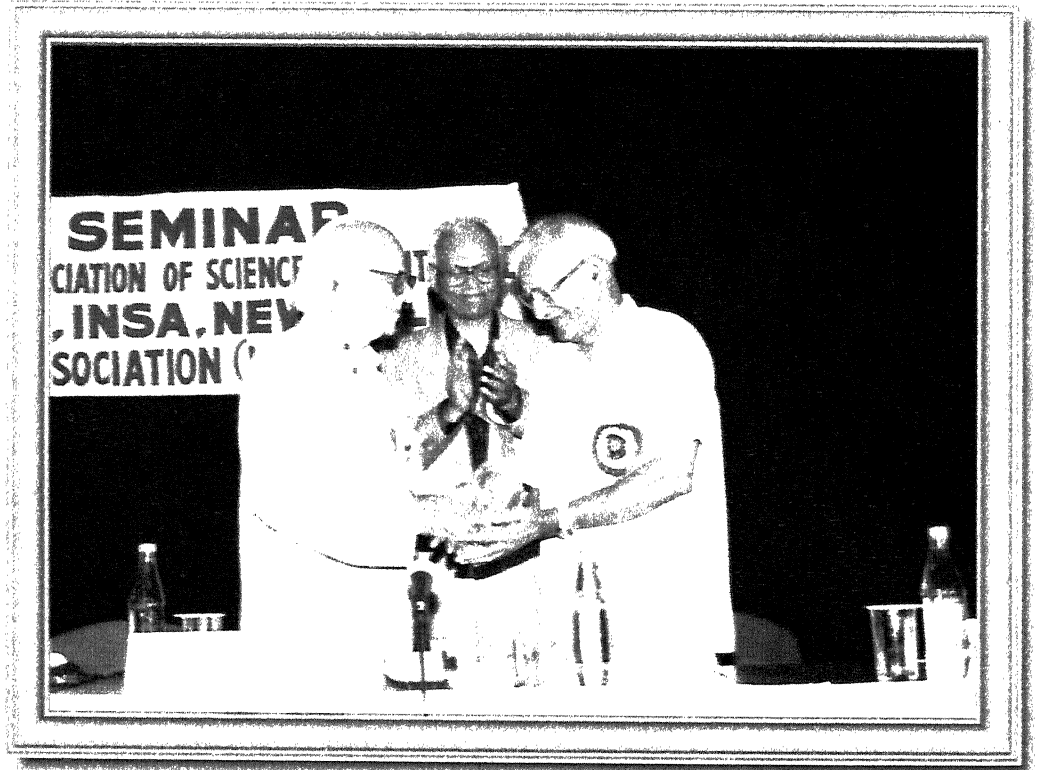
प्रो० यशपाल से इस्वा फेलोशिप ग्रहण करते डा. मिश्र। (२०००)

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
में अध्यक्षीय भाषण
देते हुए डा. मिश्र
(१९८८)

दीर्घ कालीन विज्ञान
लेखन के लिए
विज्ञान परिषद् द्वारा
सम्मानित विज्ञान लेखकों
के साथ डा. मिश्र
(१९८८)

जल गुणवत्ता जाँच परीक्षण पाठ्यक्रम में स्वामी सत्य प्रकाश तथा डा. राम गोपाल के साथ डा. मिश्र (१६६०)

स्वतंत्रता पूर्व विज्ञान लोकप्रियकरण संगोष्ठी : डा. नरेन्द्र सहगल, डा. डी.डी. पंत तथा डा. डी.डी. नौटियाल के साथ डा. मिश्र (१६६६)

शीलाधर मृदा संस्थान में डा. मिश्र के शोध छात्रों के नामों का प्रस्तर लगाते कुलपति प्रो. वी.डी. गुप्त तथा डा. एच.पी. तिवारी। साथ में डा. एम.एम. राय तथा डा. प्रभाकर द्विवेदी भी (१६६८)

सालिग राम भार्गव
स्मृति व्याख्यानदाता
डा. देवेन्द्र शर्मा
के साथ डा. वी.डी. गुप्त
तथा डा. डी.डी. पंत,
डा. मिश्र परिचय
कराते हुए (१९९७)
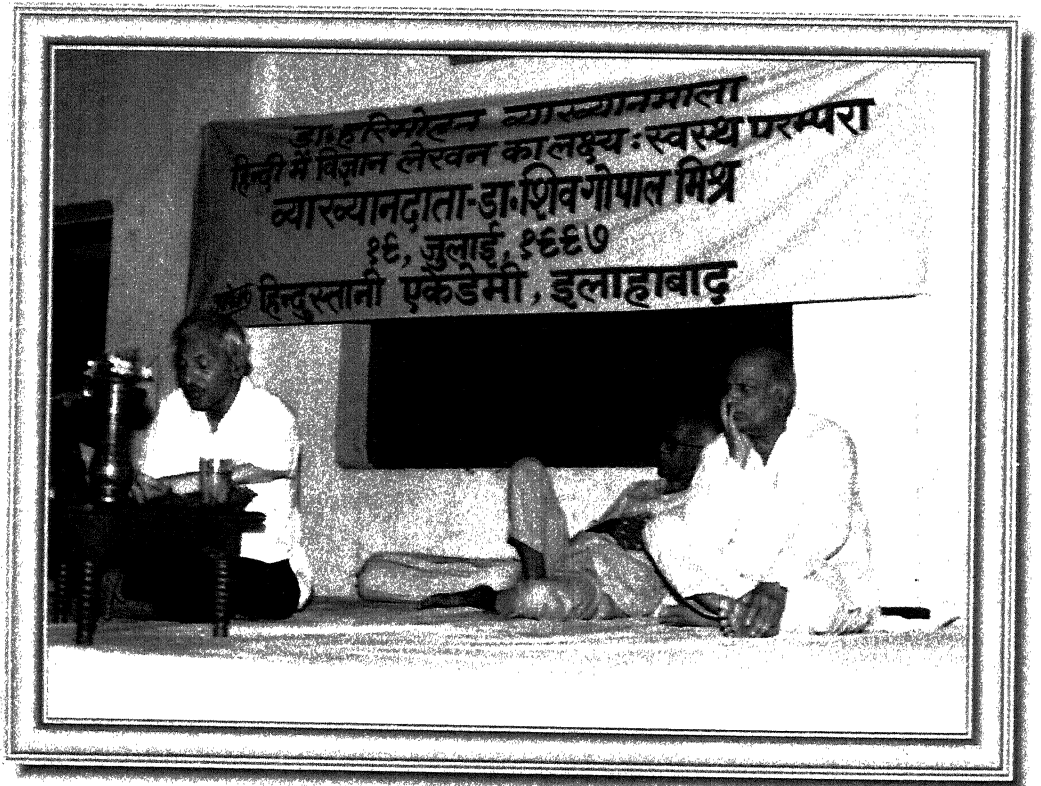
हिन्दुस्तानी एकेडमी में
डा. हरिमोहन व्याख्यान
देते हुए डा. मिश्र
(१९९७)

अमेरिका में-
प्रो. डा. पॉल मार्शल
तथा उनकी पत्नी
पामिला के साथ
डा. मिश्र
तथा उनकी पत्नी
(१९९७)

अमेरिका में-
डेन्टन यूनिवर्सिटी
दीक्षान्त समारोह
के बाद अपने पुत्र
डा. आशुतोष मिश्र
के साथ डा. मिश्र
(१९९७)

अमेरिका में-
लेक रे राबर्ट झील पर
अपनी पत्नी के साथ
डा. मिश्र
(१९९७)

विज्ञान परिषद् की
फैजाबाद शाखा में
विज्ञान कथा लेखन
समिति के
प्रथम अधिवेशन
का उद्घाटन करते हुए
डा. मिश्र
(१९९८)
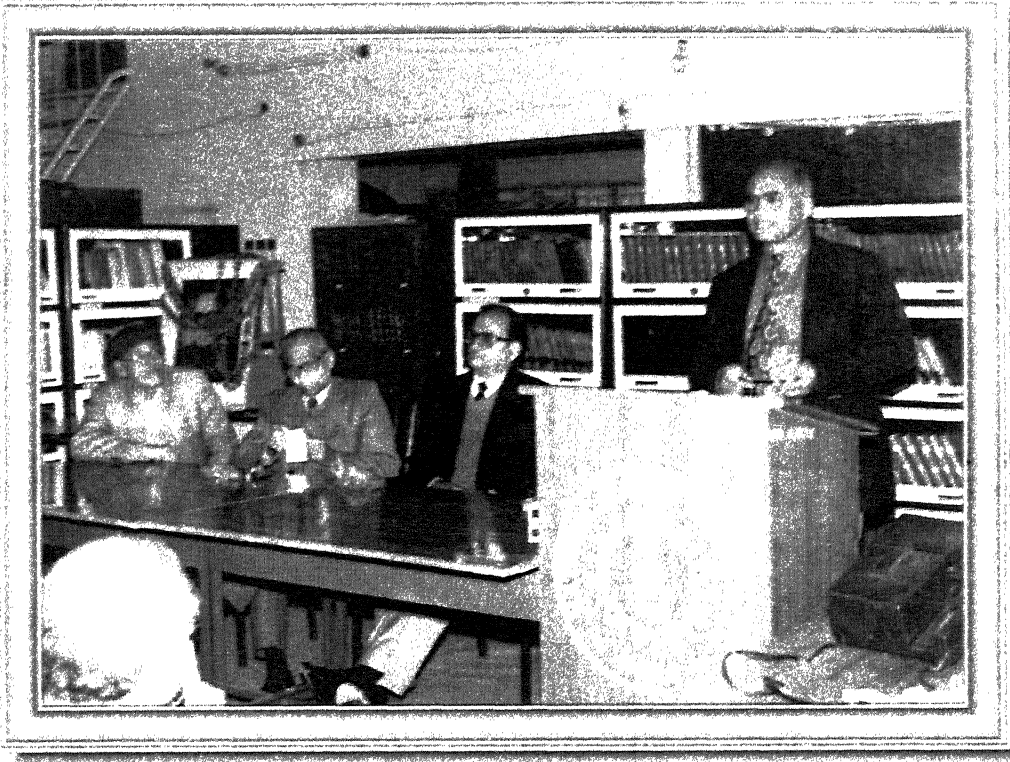
नेशनल एकेडमी आफ साइंसेज के पुस्तकालय में प्रो. एन.आर. धर स्मृति व्याख्यान देते डा. लालजी मिश्रा (जर्मन टाउन) बैठे हुए- डा. मिश्र, डा. उमाशंकर श्रीवास्तव तथा प्रो. एच.पी. तिवारी (१९९८)

डा. नन्दलाल स्मृति व्याख्यानः डा. श्रवण कुमार तिवारी, डा. आर.ए.के. श्रीवास्तव, डा. महाराज नारायण मेहरोत्रा के साथ डा. मिश्र
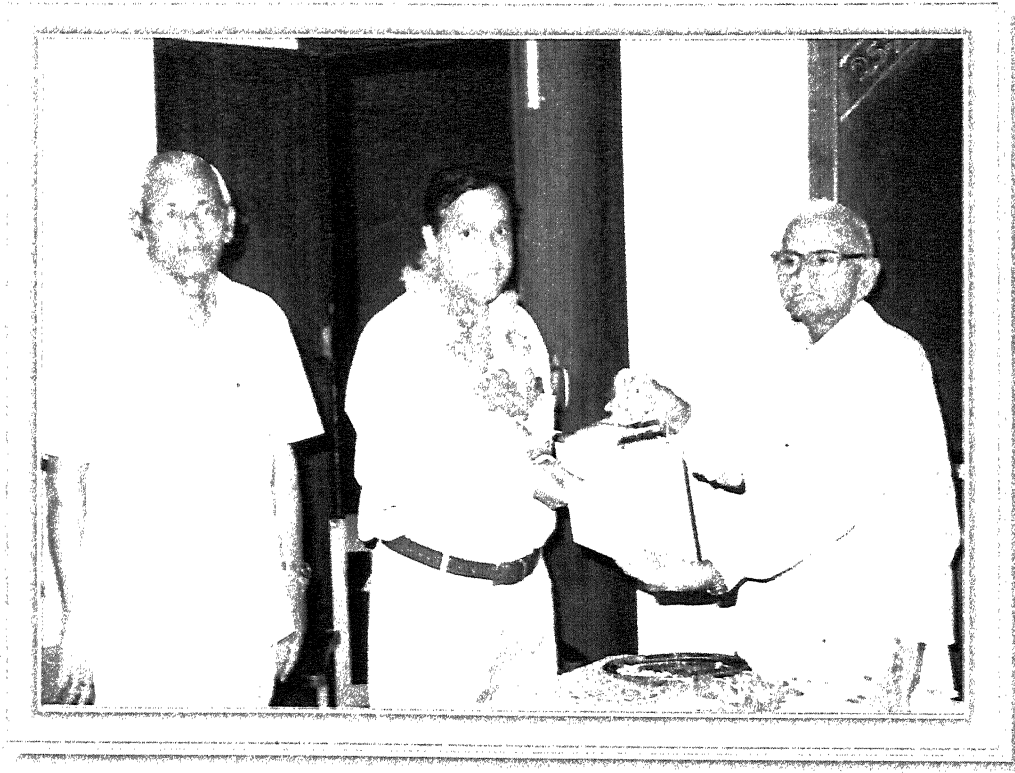
डा. गिरीश पाण्डेय
विज्ञान वाचस्पति सम्मान
ग्रहण करते हुए।
साथ में डा. मिश्र
(१६६६)
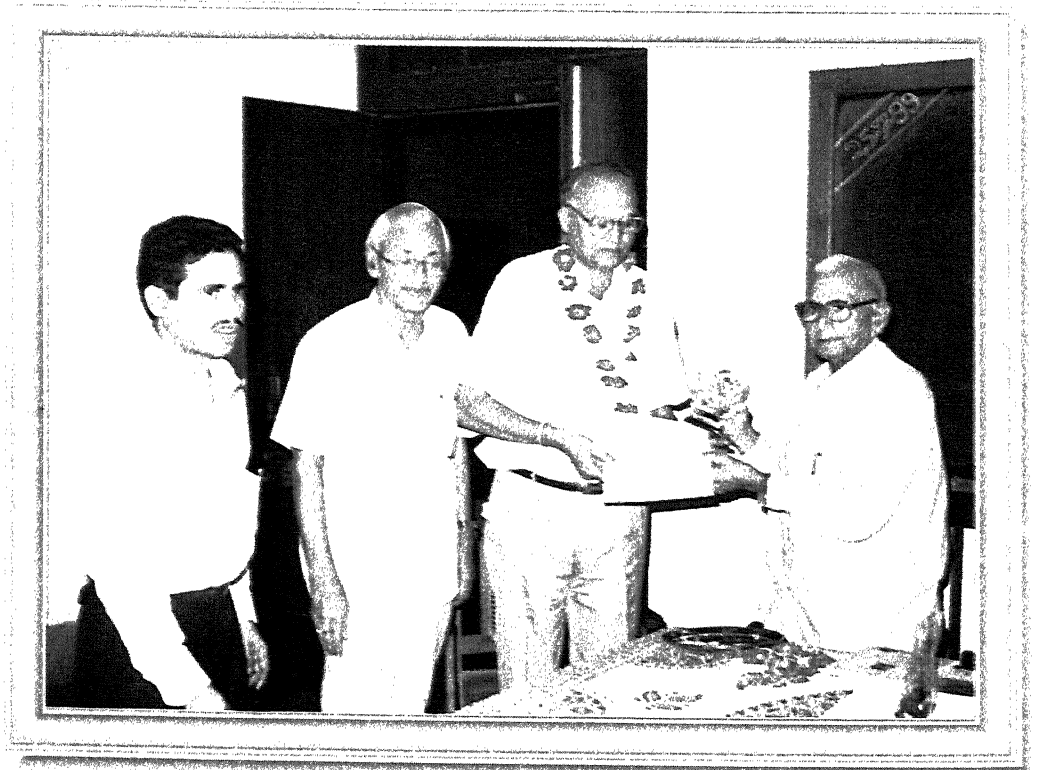
डा. रमेश चन्द्र तिवारी
विज्ञान वाचस्पति सम्मान
ग्रहण करते हुए।
साथ में
डा. सुनील पाण्डेय
तथा डा. मिश्र
(१६६६)

विज्ञान परिषद् में
डा. मुरली मनोहर जोशी
से मंत्रणा करते हुए
डा. मिश्र
(१९९९)

आत्माराम व्याख्यान
के अवसर पर
प्रो. मेनन,
विज्ञान परिषद् की
सभापति डा. मंजु शर्मा
के साथ डा. मिश्र
(१९९९)
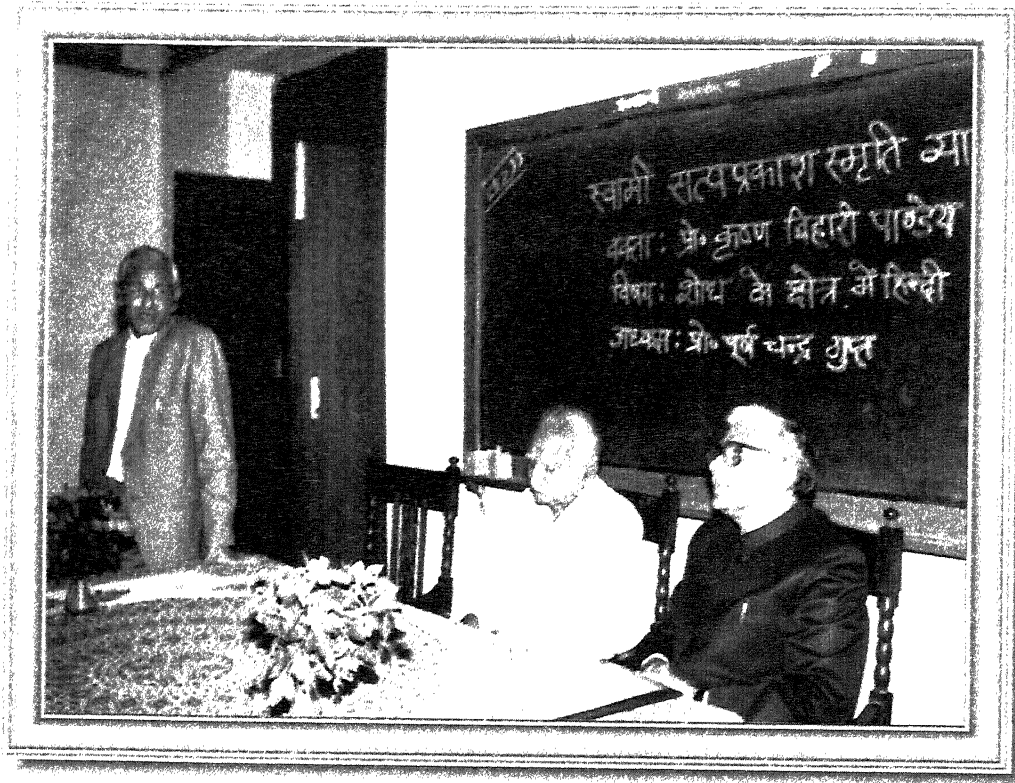
स्वामी सत्यप्रकाश
सरस्वती व्याख्यान
के अवसर पर
डा. के.बी पाण्डेय
डा. पी.सी. गुप्त तथा
परिचय देते डा. मिश्र
(१९९९)

गोरख प्रसाद
स्मृति व्याख्यान :
डा. एच.सी. खरे,
डा. चन्द्रिका प्रसाद,
डा. एच.पी. तिवारी तथा
परिचय देते डा. मिश्र
(१९९९)

श्रीमती मृदुला सिन्हा
से दिल्ली में
सहस्राब्दी सम्मान
ग्रहण करते डा. मिश्र
(१६ सितम्बर २०००)
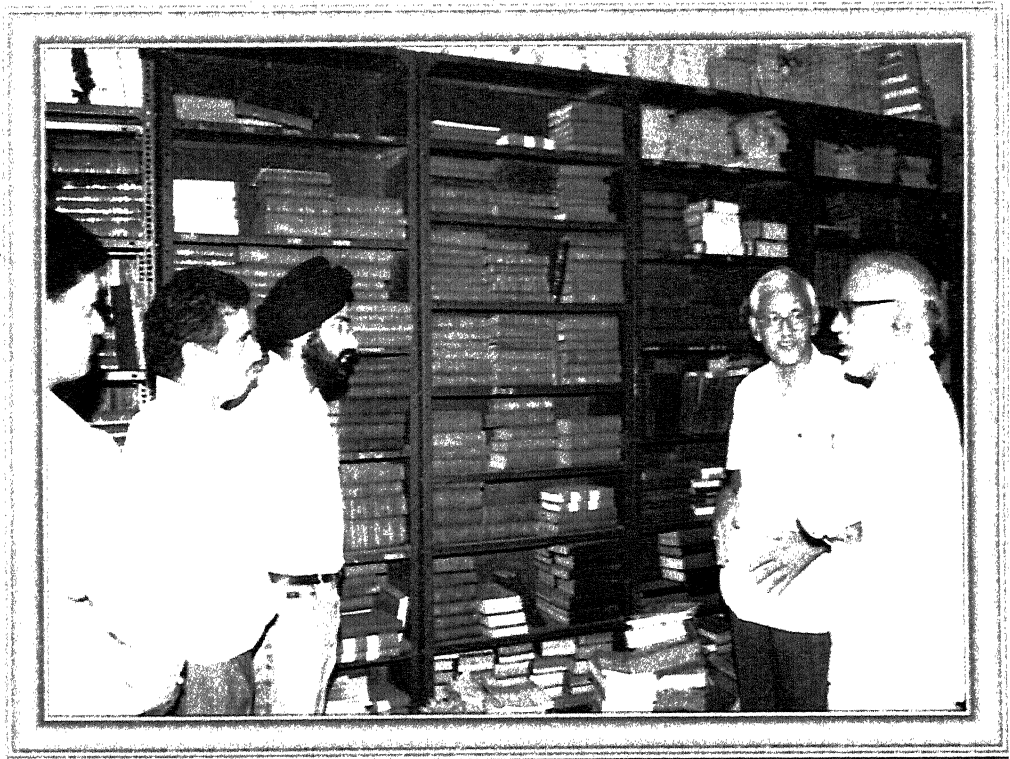
प्रो. मेनन को
विज्ञान परिषद् का
पुस्तकालय दिखाते हुए
डा. मिश्र। साथ में
श्री देवव्रत द्विवेदी तथा
डा. सुनील पाण्डेय
(२०००)

गंगानाथ झा स्मृति व्याख्यानः पं. सुधाकर पाण्डेय डा. डी.डी. पंत तथा डा. रजनीश मिश्र। डा. मिश्र परिचय कराते हुए (२०००)

लोक कला माध्यमों के लिए विज्ञान लेखन संगोष्ठी के समापन समारोह के अवसर पर डा. मिश्र, डा. एच.पी. तिवारी तथा श्री यू.एस. तिवारी निदेशक इलाहाबाद संग्रहालय (२०००)

'आत्माराम पुरस्कार' का मानपत्र

'विज्ञान भूषण' सम्मान का मानपत्र

डॉ० मिश्र द्वारा रचित अंग्रेजी पुस्तकें

Books in English

1. Soil Pollution by S.G. Misra and Dinesh Mani : Ashish Publishing House, New Delhi, 1991.

2. Metallic Pollution by S.G. Misra and Dinesh Mani : Ashish Publishing House, New Delhi, 1992.

3. Air and Atmospheric Pollutants by S.G. Misra and Sunil Dutt Tiwari : Venus Publishing House, New Delhi, 1992.

4. Environmental Pollution : Solid Waste by S.G. Misra and D. Prasad, Venus Publishing House, New Delhi, 1992.

5. Environmental Pollution : Thermal by S.G. Misra and D. Prasad, Venus Publishing House, New Delhi, 1992.

6. Environmental Pollution : Noise by S.G. Misra and D. Prasad, Venus Publishing House, New Delhi, First Edition 1992.

7. Pollution through Soild Waste by S.G. Misra and Dinesh Mani : Ashish Publishing House, New Delhi, 1993.

8. Ecosystem Pollution by S.G. Misra and Dinesh Mani : Indus Publishing Company, New Delhi, 1993.

9. Agricultural Pollution (Vol. I) by S.G. Misra and Dinesh Mani : Ashish Publishing House, New Delhi, 1994.

10. Agricutlrual Pollution (Vol. II) by S.G. Misra and Dinesh Mani : Ashish Publishing House, New Delhi 1994.

11. Dictionary on Environment and Ecology (in Press) by S.G. Misra and Dinesh Mani : Pustakayan, New Delhi.

List of Chapters in Books

1. Pollution and Soil Population by S.G. Misra and Dinesh Mani, Book-Environmental Issues and Programmes edited by I. Mohan First Edition, 1989 Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

2. Effect of Pollutants on Ecosystem.

3. Water Pollution Management by S.G. Misra and Dinesh Mani, Book-Environment Planning and Management in India (Vol. II) Edited by R.K. Sapru First Edition-1990, Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

4. Water Pollution and Health Hazards.

5. Protection and Development of Forests by S.G. Misra and Dinesh Mani, Book-Environmental Pollution and Health Problems, Edited by Rais Akhtar, First Edition, 1990. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

6. Gulf War and Soil Contamination by S.G. Misra and Dinesh Mani in book Gulf War and Environmental Problems. Edited by K. S. Ramchandra, 1991. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

7. Environmental Problems and Planning for Water by S.G. Misra and Dinesh Mani, Book-Environmental Machinery and Management Edited by V.S. Mahajan, 1991. Published by Deep Publication, F-159, Rajouri Garden, New Delhi.

8. Vigyan Lekhan Aur Hindi Anuvad by S.G. Misra and Dinesh Mani, Bood- Vigyan Aur Praudyogiki Ke Naye Aayam. Edited by S.K. Tiwari, First edtition, 1992. Published by G.H.U. Varanasi.

9. Soil Pollutionn and Human Environment by S.G. Misra and Dinesh Mani, Book-Indian Environment, Edited by Dr. Prasad Singh First Edition, 1992. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabu Bagh, New Delhi.

10. Saving the Taj by S.G. Misra and Dinesh Mani, Book-Global Environment Perception (Vol. I) Changing Environmental Ideologies Edited by A.K. Tripathio and V.B. Bhatt First Edition 1992, Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

11. Land Productivity : A crisis by S.G. Misra and Dinesh Mani. Book-Rural Reconstruction Eco-system and Ferestry by Dr. Pramod Singh, First Edition, 1987. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

12. Land Pollution by S.G. Misra, Amberish Tiwari and Umesh Singh. Book-Ecology of Urban India (Vol. II) Edited by Dr. Pramod Singh, First Edition 1987. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

13. How safe is sewage irrigation ? by S.G. Misra and C.P. Srivastava, Bood-Environmental Issues and Programmes Edited by I. Mohan, First Edition, 1989. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

14. Metallic Pollutants and their effects by S.G. Misra and Vinay Kumar. Book-Environmental Issues and Programmes. Edited by I. Mohan, First Edition 1989. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabu Bagh, New Delhi.

15. Soil Pollution and Health Hazards by S.G. Misra and Pramod Kumar Shukla. Book-Environmental Pollution and Health Problems edited by Rais Akhter, First Edition 1990. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

16. Lead in the Environment : Effect of Human Exposure by S.G. Misra and C.P. Srivastava. Book-Environmental Pollution and Health Problems Edited by Rais Akhter, First Edition, 1990. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

17. Pollution and Management by S.G. Misra and Pramod Kumar Shukla. Book-Environmental Planning and Management in India (Vol. II) First Edition 1990, Edited by R.K. Sapru, Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

18. Management of Sewage Water by S.G. Misra and C.P. Srivastava. Book-Environmental Planning and Management in India (Vol.II), First Edition 1990. Edited by R.K. Sapru. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

19. Soil Salinization and its Management by S.G. Misra and Vinay Kumar, Book-Environment Planning and Management in India (Vol. II), First Edition, 1990. Edited by R.K. Sapru. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

20. Awareness needed for Healthy Environment by S.G. Misra and Pramod Kumar Shukla Book-Environment Planning Machinery and Management, First Edition 1991 Edited by V.S. Mahajan. Published by Deep and Deep publication f-159, Rajouri Garden, New Delhi.

21. Impact of Gulf War on our Environment by S.G. Misra and Pramod Kumar Shukla. Book-Gulf War and Environmental Problems First Edition, 1991, Edited by K.S. Ramchandran. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.
22. Gulf War and Environmental Impedance by S.G. Misra and Sunil Dutt Tiwari. Book-Gulf War and Environmental Problems First Edition, 1991 Edited by K.S. Ramchandran. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

23. Air Pollution by S.G. Misra and Sunil Dutt Tiwari. Book-Environmental Pollution and Health Hazards Edited by Rais Akhter, First Edition 1990. Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

24. Biographic note on Prof. N.R. Dhar by S.G. Misra and INSA (Delhi) Yearbook, 1987.

25. Energy Plantation by S.G. Misra and P.C. Srivastava. Book-Problem of Wasteland and Forest Ecology in India Edited by Pramod Singh, Published by Ashish Publishing House 8/81, Punjabi Bagh, New Delhi.

लोक विज्ञान के महान हिमायती प्रो० मिश्र

विजय चितौरी

कुछ उच्चस्तरीय वैज्ञानिकों की उपस्थिति, बड़े शोध संस्थानों की स्थापना या परमाणु विस्फोट जैसे कारनामों से ही कोई देश न तो उन्नत हो सकता है और न वहाँ का समाज वैज्ञानिक समाज हो सकता है। समाज का उन्नत या वैज्ञानिक होना आम आदमी के स्तर और उसकी जागरूकता पर निर्भर होता है। दुर्भाग्य से हमारे देश में कुछ ऐसा ही विरोधाभास रहा है। यहाँ की वड़ी आवादी निरक्षर रही है। जाहिर है कि यह आवादी अंधविश्वास और कूपमण्डूकता में डूबी रही है। संचार माध्यमों के विस्तार तथा शिक्षा के प्रचार-प्रसार के साथ अव काफी परिवर्तन दिख रहे हैं। फिर भी अभी भी ग्रामीण व दूर-दराज के क्षेत्रों में भूत-प्रेत, चुड़ैल और डायन जैसे अंधविश्वास जीवित हैं।

इस तरह के अंधविश्वासों की समाप्ति तथा एक वैज्ञानिक व उन्नत समाज की स्थापना के लिये विज्ञान ही एक ऐसा मंत्र है जो कारगर हो सकता है। लेकिन लम्वे समय तक देश में अंग्रेजी हुकूमत की उपस्थिति तथा आधुनिक विज्ञान की अंग्रेजी शिक्षा पद्धति ने देश में कुछ ऐसा वातावरण वना दिया जिससे यह भावना प्रचलित हो गयी है कि विज्ञान एक क्लिष्ट विषय है, इसका ज्ञान केवल अंग्रेजी के माध्यम से ही हासिल हो सकता है, यह उच्चस्तरीय लोगों के ही पढ़ने लिखने की चीज है। कुछ इसी तरह की भ्रान्तियों के निवारण के लिये १० मार्च १६१३ में इलाहावाद के म्योर सेंट्रल कालेज के अध्यापक महामहोपाध्याय डॉ० गंगा नाथ झा, प्रो० हमीदुद्दीन साहव, वावू रामदास गौड़ तथा सालिगराम भार्गव ने एक संस्था की स्थापना की जो वाद में विज्ञान परिषद् प्रयाग के नाम से प्रसिद्ध हुई। इसी संस्था के माध्यम से विज्ञान को हिन्दी में प्रचार-प्रसार के लिये अप्रैल १६१५ से 'विज्ञान' नामक मासिक का प्रकाशन शुरू हुआ जो अव तक जारी है। इस संस्था और इस पत्रिका ने हिन्दी जगत को अनेक रत्न दिये हैं जिन्होंने हिन्दी के माध्यम से विज्ञान के प्रचार-प्रसार का महान कार्य किया। डॉ० गोरख प्रसाद, डॉ० सन्त प्रसाद टण्डन, डॉ० रामचरण मेहरोत्रा, डॉ० हीरालाल निगम, डॉ० देवेन्द्र शर्मा और स्वामी सत्य प्रकाश जी कुछ ऐसे ही महान व्यक्तित्व हुये हैं। इसी कड़ी में हम डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी का नाम श्रद्धापूर्वक लेना चाहेंगे जिन्होंने एक लम्बे समय तक न केवल विज्ञान और विज्ञान परिषद् की सेवा की है वरन् उनकी यह तपस्या अव भी जारी है।

प्रो० मिश्र से मेरा परिचय करीब बीस साल पुराना है। तब तक मैं 'विज्ञान' पत्रिका का सदस्य बन गया था और 'विज्ञान' पत्रिका के माध्यम से विज्ञान परिषद् की गतिविधियों की हलकी झलक मेरे दिमाग में बन गयी थी। लेकिन तब तक मुझे यह कल्पना नहीं थी कि इस संस्थान में प्रो० शिवगोपाल मिश्र जैसा भी कोई व्यक्तित्व है जिसके ऊपर लोक विज्ञान के प्रचार-प्रसार का जुनून ही सवार है। तव तक मैंने थोड़ा बहुत लिखना शुरू कर दिया था। विज्ञान में भी एक दो लेख छप चुके थे। प्रथम परिचय में ही प्रो० मिश्र ने जो आत्मीयता प्रदर्शित की और लोक विज्ञान के प्रति प्रतिबद्धता का जो मंत्र दिया था वह आगे चलकर मेरे जीवन की अमूल्य धरोहर बना। सच पूछिये तो उस प्रथम मुलाकात से ही मेरे अन्दर एक विज्ञान लेखक ने जन्म लेना शुरू कर दिया।

प्रो० मिश्र बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्तित्व हैं। उच्च कोटि के मृदा विज्ञानी, उच्च कोटि के प्राध्यापक, दर्जनों हिन्दी अंग्रेजी की पुस्तकों के लेखक और सैकड़ों शोधपत्रों के अलावा वे लम्बे समय तक 'विज्ञान'

और 'विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका' का संपादन करते रहे हैं।

यही नहीं, डॉ० आत्माराम पुरस्कार सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित प्रो० मिश्र 'विज्ञान प्रगति' सलाहकार मण्डल के अध्यक्ष तथा 'भारत की सम्पदा' सी.एस.आई.आर. जैसी प्रतिष्ठित संस्थाओं के सलाहकार मण्डल के सदस्य रह चुके हैं। लेकिन हम यहाँ प्रो० मिश्र के लोकविज्ञान के प्रचार-प्रसार संबंधी पक्ष को ही रख रहे हैं जिसने हमें सर्वाधिक प्रभावित किया। प्रो० मिश्र ने आम आदमी, सामान्य पढ़े लिखे लोगों से लेकर विज्ञान के जानकारों तक के लिये लोकविज्ञान सम्वंधी अनेक रोचक पुस्तकें लिखी हैं। कुछ पुस्तकें हैं : भारतीय कृषि का विकास (१९६३), पादप रसायन (१९७३), फास्फेट (१९७४), सूक्ष्ममात्रिक तत्व (१९७४), अम्लीय मृदायें (१९७६), जीवाणु उर्वरक (१९८१), माटी का मोल (१९८८), धातु लोक की सैर (१९८९), ऊर्जा (१९९०), लोकोपयोगी रसायन विज्ञान (१९९०), गांव के कचरे के नये उपयोग (१९९१), रसायन विज्ञान कोष (१९९१), महान कृषि वैज्ञानिक प्रो० धर (१९९२), ईंधन (१९९३), प्रदूषित मृदा (१९९३), वायु प्रदूषण (१९९४), मृदा प्रदूषण (१९९४), जल प्रदूषण (१९९४) आदि। इसके अलावा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रो० मिश्र के आलेख लगातार छपते रहे हैं। लोक विज्ञान सम्वंधी यह सारी सामग्री विज्ञान लेखन के क्षेत्र में आने वाले नये लेखकों के लिये एक मानक बन गयी। इस तरह के लेखन से साहित्य में विज्ञान लेखन का एक माहौल तैयार हुआ।

प्रो० मिश्र हिंदी के मठाधीशों से काफी दुखी रहते हैं। बातचीत में उन्होंने कई बार बड़े क्षोभ के साथ कहा है कि आज के तथाकथित साहित्यिक मठाधीश विज्ञान को साहित्य से अलग करके हिन्दी का वड़ा नुकसान कर रहे हैं। उन्हें इस बात का दुख होता है कि कविता, कहानी, उपन्यास आदि साहित्यिक विधाओं पर हिन्दी में ढेरों पुरस्कार हैं लेकिन विज्ञान साहित्य या अच्छे से अच्छे विज्ञान लेखकों के लिये कोई खास प्रोत्साहन नहीं है। प्रो० मिश्र का मानना है कि हिन्दी को नये युग के अनुसार ढालना होगा। हिन्दी को ज्ञान, सूचना प्रवाह तथा तकनीकी विकास की धुरी बनाना होगा। नये नये वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दों को गढ़ना होगा। तभी हिन्दी प्रवाहमय होगी और तभी हिन्दी विश्व भाषा का दर्जा भी प्राप्त करने लायक होगी।

प्रो० मिश्र का मानना है कि विज्ञान का प्रचार-प्रसार मात्र लेखन से ही नहीं हो जायेगा। तमाम आदिवासी व ग्रामीण समाज जहाँ लोग अभी भी निरक्षर हैं वहाँ विज्ञान का प्रचार-प्रसार लोक कथाओं के माध्यम से किया जाना चाहिये। उक्त के लिये पिछले वर्ष विज्ञान परिषद् में एक कार्यशाला भी सम्पन्न हो चुकी है। सौभाग्य से उक्त कार्यशाला के संचालन में मैं भी डॉ० साहव का सहयोगी था। लेकिन लोक कलाओं के माध्यम से विज्ञान के प्रचार-प्रसार का काम उचित टीम के अभाव में आगे नहीं बढ़ पा रहा है।

विज्ञान परिषद् में अक्सर संगोष्ठियाँ और कार्यशालायें होती ही रहती हैं। प्रायः अधिकांश का विषय लोक विज्ञान से ही सम्वन्धित होता है। पिछले वर्ष से तीन माह का विज्ञान लेखन और पत्रकारिता का कोर्स भी यहाँ से शुरू हो चुका है। इस आयोजन के पीछे भी उद्देश्य मात्र यही है कि हिन्दी में विज्ञान लेखकों और पत्रकारों की फौज तैयार हो। निश्चित ही इस तरह के ढेरों कार्यक्रम प्रो० मिश्र के दिशा निर्देश और संरक्षण में चलाये जा रहे हैं। प्रो० मिश्र में गजब की ऊर्जा है। इस आयु में भी उनकी मेहनत देखकर नौजवान भी शर्म खा जाते हैं। विज्ञान परिषद् कार्यालय में उन्हें किसी भी दिन दोपहर एक वजे से लेकर सायं पाँच वजे तक कार्य में तल्लीन देखा जा सकता है। प्रो० मिश्र से विज्ञान जगत को अभी भी बहुत उम्मीदें हैं। प्रार्थना है कि ईश्वर उन्हें लम्बी आयु व अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करे।

संपादक
गांव की नई आवाज़ (मासिक)
घूरपुर, इलाहाबाद

मिश्र जी को पत्रकार न कहकर सम्पादक कहना उचित होगा

श्री रामधनी द्विवेदी

डॉ० मिश्र मूलतः विश्वविद्यालय के प्राध्यापक रहे हैं। विज्ञान लेखन उनकी हाबी रही है। किन्तु जब विज्ञान परिषद् से जुड़े तो विज्ञान के लिये लेख लिखते लिखते पहले सम्पादक मण्डल में सम्मिलित किये गये। डॉ० देवेन्द्र शर्मा तब 'विज्ञान' के प्रधान सम्पादक थे। बाद में डॉ० मिश्र को 'विज्ञान' के सम्पादन का भार दे दिया गया। वे दीर्घ काल तक उसके सम्पादक रहे। उनके सम्पादन काल में विज्ञान परिषद् की आर्थिक दशा ठीक न थी। डॉ० मिश्र पहले कटरा में हिन्दुस्तान प्रेस से 'विज्ञान' छपाते रहे। तभी विज्ञान का कलेवर भी छोटा किया गया और लेखों के अभाव में काफी सामग्री स्वयं तैयार करते रहे। किन्तु उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। विज्ञान के लिये उत्तर प्रदेश सरकार से २०००/- की आर्थिक सहायता मिलती थी (१९४६ से यही राशि थी)। चूंकि 'विज्ञान' अनेक प्रदेशों के पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत पत्रिका थी और मध्य प्रदेश तथा गुजरात में उसके ग्राहक काफी थे अतः 'विज्ञान' का छपना आवश्यक था। उसका वार्षिक शुल्क कम था अतः पहले शुल्क बढ़ाया गया, फिर विज्ञान को पूर्व आकार में लाया गया और आवरण पृष्ठ को आकर्षक बनाया गया। 'विज्ञान' के कई विशेषांक निकाले गये। पारिश्रमिक देने की व्यवस्था की गई। १९७० तक 'विज्ञान' में सुधार आ चुका था। डॉ० मिश्र ने उसमें सम्पादकीय स्तम्भ देना शुरू कर दिया था, अन्य कई स्तम्भ भी चालू कर दिये थे। वैज्ञानिकों की जीवनियां छापी जाने लगीं थीं। तभी डॉ० मिश्र को 'भारत की सम्पदा' के सम्पादन हेतु दिल्ली जाना पड़ा। कुछ दिनों तक वहाँ से 'विज्ञान' का सम्पादन करते रहे किन्तु इसमें जब व्यवधान की शंका हुई तो उन्होंने सम्पादकी छोड़ दी। दिल्ली प्रवास से एक लाभ हुआ। उन्हें 'हिन्दी विज्ञान पत्रिका समिति' का मंत्री बनाया गया तो डॉ० मिश्र ने समस्त भारतीय भाषाओं की विज्ञान पत्रिकाओं के लिये १०-१० हजार रुपये का अनुदान दिये जाने का प्रस्ताव पारित करा लिया। फलस्वरूप 'विज्ञान' को भी दस हजार रुपये की राशि प्रतिवर्ष मिलने लगी। इससे 'विज्ञान' का प्रकाशन सुचारु रूप से चलने लगा। डॉ० मिश्र अपने प्रधानमंत्रित्व काल में उपर्युक्त राशि को बढ़ाये जाने के लिये प्रयास करते रहे। उसी का परिणाम है कि आज 'विज्ञान' को सी.एस.आई.आर. से एक लाख रुपये का अनुदान मिलता है।

विज्ञान के आवरण पृष्ठ को रंग बिरंगा बनाने, उसकी कम्प्यूटर कंपोजिंग-प्रिंटिंग कराने में तथा बाजार में बिक्री बढ़ाने के उद्देश्य से विगत वर्ष से 'विज्ञान' का सम्पादन भार उन्होंने अपने हाथों में पुनः ले लिया है। इससे पत्रिका का कलेवर बदल चुका है, नये नये लेखकों को विज्ञान में स्थान दिया जा रहा है और उन्हें पारिश्रमिक दिया जाने लगा है। इतना ही नहीं, विज्ञान परिषद् की वर्तमान सभापति डॉ० मंजु शर्मा ने जैव प्रौद्योगिकी विभाग से एक लाख रुपये की आर्थिक सहायता इस शर्त पर देना स्वीकार किया है कि 'विज्ञान' में जैव प्रौद्योगिकी विषयक सामग्री को प्रमुखता दी जाये। फलस्वरूप न केवल जैव प्रौद्योगिकी अपितु सूचना प्रौद्योगिकी जैसे विषय पर भी निरन्तर लेख प्रकाशित किये जा रहे हैं।

यह तो एक पत्रिका का सम्पादन हुआ।

डॉ० मिश्र ने अपने स्तर पर 'अन्तरवेद' तथा 'अपरा' नामक पत्रिकाओं का सम्पादन किया है। अपरा एक साहित्यिक पत्रिका थी जो १९९१ से १९९२ तक निकल कर बन्द हो गई। इसके लिये सामग्री जुटाने, लेख और सम्पादकीय लिखने का कार्य डॉ० मिश्र करते रहे।

'अन्तरवेद' जनपदीय पत्रिका थी जिसके पुरातत्व अंक, लोकसाहित्य अंक तथा निराला अंक छपे। उसके बाद आर्थिक कारणों से इसे बन्द करना पड़ा।

डॉ० मिश्र १९५८ से ही त्रैमासिक 'विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका' के प्रबन्ध सम्पादक हैं। डॉ० सत्यप्रकाश के आदेश पर वे यह कार्य अवैतनिक रूप में करते आ रहे हैं। वे उसके लिये शोधपत्र जुटाने, अंग्रेजी शोधपत्रों का हिन्दी अनुवाद करने, पत्रिका का प्रूफ देखने और उसे डाक से भिजवाने के सारे कार्य स्वयं करते आ रहे हैं। भारतीय भाषाओं में हिन्दी में यह पहली शोध पत्रिका थी। अब तो कई शोध पत्रिकायें प्रकाशित हो रही हैं। विज्ञान शोध के क्षेत्र में हिन्दी का प्रवेश अत्यन्त सुखप्रद घटना है जो विज्ञान परिषद् के प्रयास से सम्भव हो सकी है।

डॉ० मिश्र ने अनेक विशेषांकों का भी सम्पादन किया है। उन्होंने विज्ञान परिषद् की गोष्ठियों में पठित निबन्धों का भी सम्पादन किया है। उन्होंने स्वामी सत्यप्रकाश के लेखों का 'आर्ष विज्ञान' नाम से और विविध लेखकों की विज्ञान कविताओं का सम्पादन 'विज्ञानांजलि' नाम से किया है।

डॉ० मिश्र अनेक पत्रिकाओं के परामर्शदाता हैं जिनमें रसायन समीक्षा, आविष्कार, विज्ञान गरिमा सिन्धु मुख्य हैं। वे 'भारत की सम्पदा' के सम्पादक ही नहीं १९८७ से उसकी सलाहकार समिति के सदस्य भी रहे हैं। उन्होंने विज्ञान प्रगति, खेती आदि के सम्पादक/सहायक सम्पादकों का चुनाव भी किया है। विज्ञान पत्रकारिता के लिए जैमिनी अकादमी पानीपत ने उन्हें डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबे सम्मान से सम्मानित किया है।

डॉ० मिश्र की सम्पादन क्षमता का परिचय उनके द्वारा 'विज्ञान प्रसार', दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित 'स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी में विज्ञान लोकप्रियकरणः 'व्यक्तिनिष्ठ प्रयास' तथा 'विज्ञान लेखन के सौ वर्ष' जैसे महत्वपूर्ण दस्तावेजों से प्रकट होता है। उन्हें विज्ञान लेखन की प्रारम्भिक अवस्था और हिन्दी साहित्य की पत्रिकाओं में प्रकाशित विज्ञान विषयक सामग्री के संकलन में विशेष रुचि रही है।

डॉ० मिश्र ने १८५० से लेकर १९५० तक की हिन्दी में उपलब्ध विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की पुस्तकों की सन्दर्भ सूची का भी सम्पादन किया है।

डॉ० मिश्र कोश तथा विश्वकोश के भी सम्पादक रहे हैं।

डॉ० मिश्र ने हाल ही में 'विज्ञान पत्रकारिता के मूल सिद्धान्त' का सम्पादन किया है।

इस तरह डॉ० मिश्र पत्रकार ही नहीं, बहुआयामी सम्पादक रहे हैं। उन्हें सम्पादकाचार्य तो नहीं किन्तु आचार्य सम्पादक कहा जा सकता है।

वरिष्ठ पत्रकार
दैनिक जागरण, बरेली

विज्ञान लेखन की चुनौतियों को स्वीकार करने वाले डॉ० मिश्र

एक शिष्य

डॉ० मिश्र सरल स्वभाव के व्यक्ति हैं और अपनी धुन के पक्के 'विज्ञान' के सम्पादन काल से ही वे विज्ञान में नये नये विषयों को स्थान देते रहे हैं। उन्होंने सर्वप्रथम १६७० में 'विज्ञान' में प्रदूषण विषय पर स्वयं कई लेख लिखे। तब 'Science Today' में प्रदूषण की चर्चा थी।

उन्होंने 'विज्ञान' में सम्पादकीय स्तम्भ को चालू किया और अनेक सामयिक वैज्ञानिक विषयों पर दो टूक सम्पादकीय लिखे।

डॉ० मिश्र ने 'विज्ञान' में विशेषांकों की परम्परा को फिर से चालू किया। उन्होंने रसायन विशेषांक, गणित विशेषांक, कृषि विशेषांक निकाले। बाद में वैज्ञानिक परिव्राजक, वैज्ञानिक ऋषि के अतिरिक्त डॉ० आत्माराम स्मृति अंक, हीरालाल खन्ना स्मृति अंक निकाले।

विज्ञान के सम्पादक न रहने पर भी १६७२ के बाद उन्होंने अनेक विशेषांकों की योजना बनाई और उन्हें मूर्त रूप दिया।

विज्ञान लेखन के क्षेत्र में तो डॉ० मिश्र ने सदैव चुनौतियां स्वीकार कीं। उन्होंने हिन्दी संस्थान के लिये रसायन विज्ञान के मोनोग्राफों की योजना बनाई और स्वयं भी फास्फेट, सूक्ष्ममात्रिक तत्व, अम्लीय मृदायें मोनोग्राफ लिखे। उन्होंने इनमें अपने शोधकार्य को स्थान दिया और मृदा विज्ञान में भारतीय योगदान की विवेचना की।

उन्होंने १६६१ में हाई स्कूल तथा इंटर की कृषि की पाठ्यपुस्तकों में अनिवार्य रूप से प्राचीन भारतीय विज्ञान के योगदान की चर्चा की।

हिन्दी में विज्ञान विषयक कोशों का अभाव था अतः १६६० में प्रभात प्रकाशन ने जब उनका ध्यान आकृष्ट किया तो उन्होंने 'रसायन विज्ञान कोश' की रचना की। यही नहीं, उन्होंने भौतिकी कोश का भी सम्पादन किया।

इसी तरह जब वैज्ञानिक विश्वकोश की बात उठी तो प्रभात प्रकाशन के लिये उन्होंने 'अभिनव विश्वकोश' तैयार किया। उन्होंने अत्यधिक श्रम करके सामग्री जुटाई है और भारतीय परिवेश का ध्यान रखा। वरिष्ठ विज्ञान लेखक होने के साथ ही डॉ० मिश्र पहले व्यक्ति हैं जो कोशकार भी हैं।

उन्होंने अपनी सूझबूझ से ही जैव प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश के सम्पादन का भार अपने कन्धों पर ले रखा है। वे हिन्दी में स्वतन्त्रतापूर्व विज्ञान पत्रकारिता के क्षेत्र में हिन्दी पत्रिकाओं की भूमिका को अत्यधिक महत्व देते हैं। इसी आधार पर उन्होंने 'हिन्दी में विज्ञान लेखन के सौ वर्ष' नामक प्रोजेक्ट पर एक शोधकार्य कराया और अब १६० चुने निबन्ध पुस्तकाकार हो चुके हैं। हिन्दी में विज्ञान लेखन के स्वरूप को समझने में ये निबन्ध महत्वपूर्ण दस्तावेज का काम करेंगे।

डॉ० मिश्र में पाण्डुलिपियों के रूप में बिखरे वैज्ञानिक साहित्य को भी सूचीबद्ध करने की ललक है। वे इधर भी प्रयत्नशील हैं।

वे हिन्दी के विज्ञान लेखकों की निर्देशिका तथा १८५० से २००० ई० के मध्य प्रकाशित हिन्दी पुस्तकों की सन्दर्भिका भी तैयार करा रहे हैं।

वे हिन्दी में विज्ञान लेखन का इतिहास भी लिख चुके हैं। उनका मानना है कि इस प्रकार के इतिहास से हिन्दी की समृद्धता का परिचय मिलेगा और लेखक प्राचीन परम्परा से जुड़ सकेंगे।

डॉ० मिश्र 'व्यावहारिक विज्ञान कोश' प्रोजेक्ट पर भी विज्ञान परिषद् में कार्य चला रहे हैं। उन्होंने गत ३०-३५ वर्षों में विज्ञान के नये नये क्षेत्रों को हिन्दी लेखन में समाविष्ट किया है और अनेक गोष्ठियों में अपने निष्पक्ष विचार व्यक्त किये हैं।

अब एक वर्ष से वे **'विज्ञान'** पत्रिका को हिन्दी की उत्कृष्ट पत्रिका बनाने में जुटे हैं। वे व्यक्तिगत प्रयासों से जैव प्रौद्योगिकी तथा सूचना प्रौद्योगिकी जैसे विषयों पर व्याख्यान कराने के लिये आर्थिक सहायता प्राप्त कर रहे हैं और विज्ञान में इन अधुनातन विषयों को स्थान दे रहे हैं।

हिन्दी में विज्ञान लेखन को समर्थ बनाने के लिये विज्ञान पत्रकारिता प्रशिक्षण का कार्यक्रम भी उन्हीं की सूझबूझ है। वे विज्ञान प्रसार दिल्ली, एन.सी.एस.टी.सी. दिल्ली, शब्दावली आयोग, जैव प्रौद्योगिकी विभाग से सहयोग प्राप्त करके विज्ञान परिषद् को एक बौद्धिक मंच बनाने के लिये कृतसंकल्प हैं।

वे अन्य भारतीय भाषाओं में सृजित वैज्ञानिक साहित्य और उनके लेखकों से मैत्रीभाव स्थापित करने के पक्षधर हैं। इसीलिये १९८७ में और फिर २००१ में राष्ट्रीय संगोष्ठी कराई है।

मजे की बात यह है कि वे इन चुनौतियों का सामना अकेले करते रहे हैं।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र : विज्ञान लोकप्रियकरण के अग्रदूत

*डॉ0 श्रवण कुमार तिवारी **

*प्रो0 देवेन्द्र कुमार राय ***

प्रो० शिवगोपाल मिश्र और विज्ञान परिषद् प्रयाग को एक दूसरे का पर्याय कहना अत्युक्ति नहीं होगी। परिषद् की समस्त गतिविधियों में वे सक्रिय रूप से भाग लेते हैं और उनके जीवन का अधिकांश समय विज्ञान परिषद् की सेवा में ही व्यतीत होता है। शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान से अवकाश प्राप्त करने के बाद तो उन्होंने अपने आपको राष्ट्रभाषा हिन्दी और विज्ञान परिषद् को समर्पित कर दिया है। हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य सृजन के क्षेत्र में कार्यरत शायद ही कोई ऐसा लेखक होगा जो प्रो० मिश्र को न जानता हो। मिश्र जी ने परिषद् के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये बहुमुखी प्रयास किया है। वे विज्ञान के विविध विषयों के ज्ञाता तो हैं ही, उन्हें हिन्दी भाषा, व्याकरण, शब्दावली और भाषा विज्ञान की भी अच्छी जानकारी है। यही कारण है कि उनके लेख, निबंध और उनकी पुस्तकें सरल, सुबोध और लोकगम्य हैं। प्रो० मिश्र कृषि रसायन शास्त्र के एक ख्यातिलब्ध विद्वान तो है हीं, वे हिन्दी के एक प्रतिष्ठित विज्ञान लेखक भी हैं।

प्रो० मिश्र से हमारा परिचय अब तो बहुत पुराना हो चुका है। विज्ञान परिषद् प्रयाग की मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के माध्यम से ही हम मिश्र जी के नाम से सन् १९६५ के आस-पास ही परिचित हो चुके थे। हमें भी विज्ञान-लेखन एवं पटन-पाठन में रुचि थी अतः हम छटे दशक के आरंभ से ही विज्ञान परिषद् से परिचित थे। उन दिनों परिषद् की गतिविधियों का संचालन प्रो० सत्यप्रकाश जी के माध्यम से होता था। परिषद् की पत्रिका से हम भलीभाँति परिचित थे। इसी के माध्यम से हमें मिश्र जी के विषय में जानकारी थी। राष्ट्रभाषा हिन्दी में विज्ञान-लेखन तथा वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भी उन दिनों उल्लेखनीय कार्य चल रहा था। यह कार्यक्रम भौतिकी के प्रो० नन्दलाल सिंह की देखरेख में चल रहा था। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रो० सिंह तथा प्रो० महाराज नारायण मेहरोत्रा विज्ञान परिषद् प्रयाग से भी जुड़े हुए थे। उन दिनों काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अनेक अध्यापक हिन्दी में विज्ञान लेखन की ओर रुचि लेने लगे थे। प्रो० नन्दलाल सिंह के शिष्य होने के नाते हम लोग भी इस दिशा में कुछ कार्य कर रहे थे।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी में विज्ञान के विभिन्न विषयों के लेखन में रुचि लेने वाले कुछ शिक्षकों के प्रयास से यहाँ सन् १९७८ में एक हिन्दी परिषद् का गठन हुआ, जिसका नाम 'वैज्ञानिक एवं तकनीकी हिन्दी परिषद्' रखा गया था। हम दोनों इस परिषद् के सक्रिय सदस्य थे। इसकी बैठकें प्रायः हर महीने होती थी और यह प्रयास किया जाता था कि सदस्यगण उस समय की वैज्ञानिक पत्रिकाओं में लेख भेजें। यह परिषद् लगभग दस वर्षो तक चलती रही। इस बीच कुछ लेखकों के लेख कभी-कभी 'विज्ञान', 'विज्ञान प्रगति' और 'आविष्कार' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुये। इस दौरान हमें प्रो० मिश्र के लेख भी पढ़ने को मिलते रहे और उनसे हमारा संपर्क बढ़ता गया। वैज्ञानिक एंव तकनीकी हिन्दी परिषद् के सदस्यों ने यह अनुभव किया कि परिषद् को पंजीकृत कराकर

उसके तत्वावधान में एक अपनी विज्ञान पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशित की जाये। परन्तु कुछ अपरिहार्य कारणों से यह संभव नहीं हो सका।

इसी दौरान हममें से एक (श्रवण कुमार तिवारी) को एक संगोष्ठी में विज्ञान परिषद् प्रयाग जाने का अवसर मिला। वहीं पर प्रो० मिश्र से वैज्ञानिक एवं तकनीकी हिन्दी परिषद् के संबंध में चर्चा हुई। उन्होंने बताया कि विज्ञान परिषद् के संविधान में विभिन्न नगरों एवं शिक्षा संस्थाओं में परिषद् की शाखायें गठित करने का प्रावधान है। इन शाखाओं के सदस्यों को विज्ञान परिषद् प्रयाग का ही सदस्य माना जायेगा और वे इससे सम्बद्ध सभी सुविधाओं के हकदार होंगे। इस जानकारी से हमें बड़ी प्रसन्नता हुई और ७ दिसम्बर १९८८ की वैज्ञानिक एवं तकनीकी हिन्दी परिषद् की बैठक इसकी अंतिम बैठक थी जिसमें इसे सर्वसम्मति से विज्ञान परिषद् प्रयाग की 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय शाखा' घोषित किया गया। इसी दिन से प्रो० मिश्र से हमारा संबंध विशेष रूप से घनिष्ठ हो गया। अब हम परिषद् से 'विज्ञान' के अतिरिक्त उसकी अन्य गतिविधियों से भी जुड़ गये और प्रो० मिश्र से हमारा संपर्क बढ़ता गया।

विज्ञान परिषद् की स्थापना सन् १९१३ में हुई थी और इसकी मासिक पत्रिका 'विज्ञान' का प्रकाशन सन् १९१५ से आरंभ हुआ था। इसके प्रथम संपादक प्रसिद्ध हिन्दी विद्वान पं० श्रीधर पाठक रहे। उनके बाद क्रमशः लाला सीताराम, प्रो० गोपाल स्वरूप भार्गव, प्रो० ब्रजराज और डॉ० सत्यप्रकाश ने इसका संपादन किया। डॉ० सत्यप्रकाश के कार्यकाल में ही प्रो० शिवगोपाल मिश्र ने विज्ञान तथा विज्ञान परिषद् में सक्रिय रूप से कार्य करना आरंभ कर दिया था। डॉ० सत्यप्रकाश ने तो अपना संपूर्ण जीवन ही परिषद् की सेवा में लगा दिया था। अपने जीवन के कुछ अंतिम वर्षों के दौरान वे सन्यासी हो गये थे, परन्तु परिषद् की गतिविधियों से उन्होंने कभी भी सन्यास नहीं लिया। डॉ० सत्यप्रकाश के बाद प्रो० मिश्र ने अत्यंत निष्ठा एवं सक्रियता के साथ विज्ञान परिषद् का कार्यभार संभाला है और 'विज्ञान' को प्रतिष्ठित एवं आकर्षक बनाने का प्रशंसनीय कार्य किया है। वर्तमान समय में 'विज्ञान' की लेख सामग्री में तो रोचकता और विविधता आई ही है, इसका आवरण भी मोहक एवं आकर्षक हो गया है। निश्चय ही इसके लिए प्रो० मिश्र की प्रशंसा की जानी चाहिए।

अस्सी के दशक में प्रो० मिश्र कई वर्षों तक परिषद् के प्रधानमंत्री रहे। इस दौरान 'विज्ञान' को लोकप्रिय बनाने की दिशा में उन्होंने बहुत कुछ किया। परिषद् की पत्रिका 'विज्ञान' को समृद्ध और लोकप्रिय बनाने में उनका योगदान अप्रतिम रहा। इस दौरान 'विज्ञान' के दो विशेषांक प्रकाशित हुए जो उल्लेखनीय हैं। एक तो 'ऊर्जा' विशेषांक था जो मार्च १९८३ में प्रकाशित हुआ था। यह अंक ऊर्जा-स्रोतों, संसाधनों एवं उनसे सम्बद्ध ज्वलंत समस्याओं की अद्यतन जानकारी से भरपूर था। 'विज्ञान' को लोकप्रिय बनाने की दिशा में निश्चय ही यह एक सार्थक कदम था। इससे पहले 'विज्ञान' का 'प्रदूषण' अंक भी सर्वसाधारण को उपयोगी जानकारी दे चुका था।

दूसरा उल्लेखनीय विशेषांक था विज्ञान कथा विशेषांक। 'विज्ञान' के विभिन्न विषयों को लोकगम्य बनाने तथा जनसामान्य में वैज्ञानिक चेतना उत्पन्न करने के विचार से विज्ञान कथाओं का एक अपना महत्व है। इसके साथ ही इन कथाओं से बौद्धिक मनोरंजन भी होता है। डॉ० सम्पूर्णानन्द ने सन् १९५३ में ही अपने एक वक्तव्य में कहा था कि हिन्दी में विज्ञान गल्प या विज्ञान फिक्शन लिखने का प्रचलन नहीं है। यह हमारे वैज्ञानिक हिन्दी साहित्य की एक बहुत बड़ी कमी है। प्रो० शिवगोपाल मिश्र ने उक्त विशेषांक में भी हिन्दी साहित्य की इस कमी को इंगित किया है और दुर्गा प्रसाद खत्री के तिलस्मी उपन्यासों से लेकर डॉ० सम्पूर्णानन्द के वैज्ञानिक उपन्यास 'पृथ्वी से सप्तर्षि मंडल' तक की विज्ञान कथाओं की ऐतिहासिक झलक प्रस्तुत की है। इस विशेषांक का लेखकों पर अच्छा प्रभाव पड़ा है। इस क्रम में विज्ञान परिषद् द्वारा प्रो० मिश्र के ही प्रयास से सन् १९९८ में 'विज्ञान गल्प विशेषांक'

प्रकाशित हुआ है जो विज्ञान कथा साहित्य की अद्यतन झांकी प्रस्तुत करता है।

प्रो० मिश्र ने बालकों तथा किशोर छात्र-छात्राओं में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए भी प्रशंसनीय प्रयास किया है। इस दृष्टि से उन्होंने अनेक बालोपयोगी पुस्तकें लिखी हैं जिनमें से दैनिक जीवन में विज्ञान, लोकोपयोगी रसायन विज्ञान, ऊर्जा, रसायन विज्ञान के नोबेल पुरस्कार विजेता, प्रदूषित मृदा और ईंधन आदि उल्लेखनीय हैं जो पुस्तकायन, २/४२४०ए, अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली से प्रकाशित हुई हैं। वयस्कों के लिए भी उन्होंने प्रचुर विज्ञान साहित्य लिखा है। भारतीय कृषि का विकास, विज्ञानांजलि, महान वैज्ञानिक प्रो० धर और लोकप्रिय विज्ञान-लेखन आदि उनकी चर्चित रचनाएँ हैं जो विज्ञान परिषद् प्रयाग से प्रकाशित हुई हैं। आपने विज्ञान के कुछ जटिल सैद्धान्तिक विषयों पर भी लिखा है। जैसे- 'ब्रह्मांड विषयक सात विचार' आपका भौतिकी के प्रमुख सिद्धान्तों का सरल-सुबोध परिचय प्रस्तुत करने वाला एक रोचक निबंध, 'विज्ञान' के सितम्बर १९९१ के अंक में प्रकाशित है जिसमें सूर्यकेन्द्रिक ग्रह निकाय, गुरुत्वाकर्षण, न्यूटन के गति नियम, ऊर्जा, ऐण्ट्रापी, सापेक्षवाद, क्वाण्टम सिद्धान्त और अविनाशिता की सरल बोधगम्य जानकारी दी गई है। आपके इस प्रकार के अन्य उल्लेखनीय लेख हैं: सुनामी उत्पात, सुगन्धवाद और वैदिक गणित। 'वैदिक गणित' में मिश्र जी ने गोवधर्न पीठाधीश्वर श्री शंकराचार्य द्वारा अथर्ववेद के आधार पर दिये गये वैदिक सूत्रों की प्रामाणिकता पर संदेह व्यक्त किया है।

विज्ञान परिषद् द्वारा प्रतिवर्ष डॉ० आत्माराम स्मृति व्याख्यान, डॉ० गोरखप्रसाद स्मृति व्याख्यान, स्वामी सत्यप्रकाश स्मृति व्याख्यान, डॉ० रत्नकुमारी स्मृति व्याख्यान, श्री रामदास गौड़ स्मृति व्याख्यान, प्रो० सालिगराम भार्गव स्मृति व्याख्यान और डॉ० गंगा नाथ झा स्मृति व्याख्यान आयोजित किये जाते हैं। प्रो० मिश्र इन व्याख्यानों के आयोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और एतदर्थ देश के लब्ध प्रतिष्ठ वैज्ञानिकों को लोकगम्य व्याख्यानों के लिए आमंत्रित करते हैं। निश्चय ही विज्ञान को लोकप्रिय बनाने की दिशा में यह एक सराहनीय एवं उपयोगी प्रयास है। अभी कुछ ही वर्ष पूर्व उनकी प्रेरणा से हमने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भूतपूर्व ख्यातिलब्ध हिन्दी विज्ञान लेखक प्रो० नन्दलाल सिंह की स्मृति में भी एक व्याख्यानमाला का शुभारंभ अगस्त १९९७ से किया है। यह व्याख्यान प्रतिवर्ष, विज्ञान परिषद् द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में परिषद् की स्थानीय शाखा के सहयोग से आयोजित किया जाता है। इस व्याख्यानमाला के अंतर्गत अब तक प्रो. देवेन्द्र शर्मा (कुलपति, गोरखपुर विश्वविद्यालय), प्रो० माहेश्वर मिश्र (विभागाध्यक्ष, भौतिकी, गोरखपुर विश्वविद्यालय), डॉ० रण बहादुर सिंह (निदेशक, अपराध विज्ञान प्रयोगशाला, उ०प्र०), प्रो० हरिबल्लभ नेमा (नेत्र रोग विभाग, भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) तथा डॉ० राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव, अध्यक्ष वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली के व्याख्यान हो चुके हैं।

विज्ञान लोकप्रियकरण की दिशा में प्रो० मिश्र आजकल भारत सरकार के बायोटेक्नोलॉजी विभाग के सहयोग से विद्यालयों और महाविद्यालयों के छात्र-छात्राओं के लिए, जैव प्रौद्योगिकी के विभिन्न विषयों जैसे- जीन, जीनोम, डी.एन.ए., आर.एन.ए., आनुवंशिकी, क्लोनिंग तथा जीन कोडिंग आदि पर लोकगम्य व्याख्यान आयोजित कराने का उपयोगी कार्य कर रहे हैं। हाल ही में इस आयोजन के अंतर्गत काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सेन्ट्रल हिन्दू ब्वायज स्कूल में प्रसिद्ध जैवविज्ञानी प्रो० ब्रह्मदेव सिंह का '२१वीं सदी में जैव प्रौद्योगिकी' विषय पर एक रोचक व्याख्यान हुआ जिसमें सैकड़ों छात्र छात्रायें उपस्थित हुईं।

प्रो० मिश्र ने विज्ञान परिषद, हिन्दी संस्थान, हिन्दी समिति, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, वैज्ञानिक एवं अनुसंधान परिषद् तथा राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् आदि अनेक संस्थाओं से सहयोग

प्राप्त करके अनेक संगोष्ठियों, सम्मेलनों और कार्यशालाओं का आयोजन किया है जो विज्ञान लोकप्रियकरण की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी होते हैं। इस प्रकार मिश्र जी इस दिशा में निरंतर क्रियाशील बने रहते हैं। आपने ग्रामवासियों एवं किसानों को वैज्ञानिक जानकारी देने के लिये कई लघु पुस्तिकायें लिखीं और प्रकाशित कराई हैं जिनमें से 'गांव के कचरे के नये उपयोग' विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि यह ग्रामवासियों की एक ज्वलंत समस्या का समाधान प्रस्तुत करती है।

राष्ट्रभाषा हिन्दी को विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न विषयों की अभिव्यक्ति का सक्षम माध्यम बनाने में आड़े आने वाली समस्याओं के समाधान की दिशा में भी प्रो० मिश्र ने उल्लेखनीय प्रयास किया है। इस संदर्भ में उनके अनेक लेख और निबंध समय-समय पर 'विज्ञान' तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने कई संगोष्ठियों एवं कार्यशालाओं का भी आयोजन किया। इस प्रकार की एक संगोष्ठी 'भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन : समस्यायें एवं समाधान' विषय पर विज्ञान परिषद् प्रयाग में दिसम्बर १६८८ में तथा भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर के सहयोग से 'हिन्दी और उर्दू में बाल-विज्ञान साहित्य लेखन' पर एक पाँच दिवसीय कार्यशाला सितम्बर १६८६ में भी आयोजित हुई थी।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रचार-प्रसार में समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकायें, रेडियो एवं टी०वी० आदि संचार माध्यम महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस क्षेत्र में पत्रकारिता का महत्व स्वयंसिद्ध है। मिश्र जी ने इस दिशा में भी सार्थक योगदान किया है। अभी हाल ही में, अक्टूबर-दिसम्बर २००१ में आपने विज्ञान परिषद् तथा राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के सहयोग से एक 'त्रैमासिक विज्ञान पत्रकारिता प्रशिक्षण कार्यक्रम' आयोजित किया था जिसमें अनेक प्रशिक्षुओं ने भाग लिया। इसमें मुख्यतः पत्रकारों को ध्यान में रखकर प्रशिक्षण दिया गया तथा विज्ञान पत्रकारिता के विविध आयामों, अनुवाद एवं शब्दावली की समस्याओं पर विचार-विमर्श किया गया।

हिन्दी भाषा को विज्ञान-लेखन के क्षेत्र में प्रतिष्ठित करने की दिशा में प्रो० मिश्र के एक और महत्वपूर्ण प्रयास की चर्चा के बिना उनके कार्यों का यह संक्षिप्त विवरण अधूरा रह जायेगा। यह है, विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा 'अनुसंधान पत्रिका' का प्रकाशन। इस त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन जनवरी १६५८ में आरंभ हुआ था। इसमें विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में हो रहे शोधकार्यों से संबंधित उच्चकोटि के मौलिक शोध-पत्र हिन्दी में प्रकाशित होते हैं। विनिमय में यह पत्रिका देश-विदेश की ५० संस्थाओं में भेजी जाती है और इसमें प्रकाशित शोध पत्रों के सारांश 'केमिकल ऐब्सट्रैक्ट' और 'मैथेमैटिकल रिव्यूज़' आदि में निरंतर प्रकाशित होते रहते हैं। सन् १६८३ में इसकी रजत जयंती मनाई गई थी। इसके निर्बाध प्रकाशित होते रहने का श्रेय निर्विवाद रूप से प्रो० शिवगोपाल मिश्र को ही दिया जा सकता है, क्योंकि आरंभ से ही वे इस पत्रिका के प्रबंध-सम्पादक भी हैं।

वर्तमान में प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री हैं और राष्ट्रभाषा हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य-निर्माण के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत लेखकों के लिए प्रेरणा-स्रोत हैं। उनके प्रयासों से हिन्दी भाषा का विज्ञान-साहित्य सतत लाभान्वित हो रहा है। हमारी कामना है कि प्रो० मिश्र स्वस्थ और शतायु हों।

* अवकाश प्राप्त सहायक-निदेशक, भौतिकी कक्ष
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००५
** प्रोफेसर, भौतिकी विभाग, विज्ञान संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००५

डॉ० साहब की शोध यात्रा : पड़ाव दर पड़ाव

डॉ० दिनेश मणि

विदित हो कि प्रो० मिश्र जी ने अपनी डी.फिल. उपाधि के लिये शोधकार्य हेतु 'अम्लीय एवं क्षारीय मृदाओं का निर्माण' विषय को चुना था किन्तु आपने अपना आगे का शोधकार्य (लगभग तीस वर्षों तक) सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर किया। लगभग सभी सूक्ष्ममात्रिक तत्वों यथा- आयरन, मैंगनीज, कापर, जिंक, मॉलिब्डिनम, बोरोन तथा आयोडीन सभी से सम्बन्धित कार्य किया। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली द्वारा प्रायोजित परियोजना 'सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की अखिल भारतीय समन्वित प्रायोजना' के अन्तर्गत आपने सूक्ष्ममात्रिक तत्वों पर विस्तारपूर्वक शोधकार्य किया। सच कहा जाये तो आप सूक्ष्ममात्रिक तत्वों से सम्बन्धित अनुसंधान कार्य के प्रणेता रहे हैं। आप द्वारा सूक्ष्ममात्रिक तत्वों से सम्बन्धित किये गये अनुसंधान कार्य के प्रमुख विभाग इस प्रकार हैं-

१. भारतीय मृदाओं में सूक्ष्ममात्रिक तत्वों का अध्ययन
२. मैंगनीज से संबंधित अध्ययन
३. मालिब्डिनम से संबंधित अध्ययन
४. भारतीय मृदाओं के उपलब्ध कार्य के निर्धारण का मूल्यांकन
५. सेलीनियम तथा आयोडीन के विशेष सन्दर्भ में अल्पपरिचित सूक्ष्ममात्रिक तत्वों का अध्ययन
६. उत्तर प्रदेश की मृदा में जिंक के व्यवहार का अध्ययन
७. निकेल और आयरन का अध्ययन
८. सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की अन्योन्य क्रिया का अध्ययन

उत्तर प्रदेश की मृदाओं में विभिन्न सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की उपलब्धि जिन मृदा कारकों के साथ सहसम्बन्धित है, उनका विशद अध्ययन डॉ० साहब एवं सहयोगियों द्वारा किया गया। निष्कर्ष इस प्रकार है कि मिट्टी में कार्बनिक कार्बन की मात्रा तथा महीन कणों के साथ उपलब्ध ताम्र का धनात्मक सार्थक सहसंबंध किन्तु पी.एच. तथा कैल्सियम कार्बोनेट के साथ ऋणात्मक सहसंबंध देखा गया। इसी प्रकार के परिणाम उपलब्ध जिंक के साथ प्राप्त हुये। उपलब्ध जिंक का सार्थक धनात्मक सहसम्बन्ध मिट्टी में महीन कणों की तथा कार्बन की मात्रा के साथ पाया गया। ताम्र की ही भांति पी.एच. तथा कैल्सियम कार्बोनेट के साथ उपलब्ध जिंक का ऋणात्मक सहसम्बंध पाया गया। उपलब्ध मैंगनीज या सक्रिय मैंगनीज का सार्थक धनात्मक सहसम्बन्ध कार्बन, महीन कण तथा सम्पूर्ण मैंगनीज के साथ देखा गया। पी.एच., कैल्सियम कार्बोनेट तथा विनिमेय सोडियम के साथ ऋणात्मक सहसम्बन्ध पाया गया। उपलब्ध लौह का सार्थक धनात्मक सहसम्बन्ध कार्बनिक कार्बन के साथ और ऋणात्मक सहसम्बन्ध पी. एच. तथा कैल्सियम कार्बोनेट के साथ देखा गया जबकि कार्बन के साथ धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों ही प्रकार के सहसम्बन्ध पाये गये।

जल विलेय बोरोन की मात्रा का सार्थक धनात्मक सहसम्बन्ध पी.एच. तथा महीन कणों के साथ

पाया गया जबकि कार्बन के साथ धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों ही प्रकार के सहसम्बन्ध देखे गये। स्पष्ट है कि सभी मिट्टियों में तांबा, जिंक, मैंगनीज तथा लौह की अधिक उपलब्धि मिट्टी में पाये जाने वाले कार्बन पर निर्भर करती है। इसके विपरीत पी.एच. बढ़ने से इसकी उपलब्धि घटती है, मोलिब्डिनम तथा बोरोन ऐसे दो सूक्ष्म तत्व हैं जिनकी उपलब्धि पी.एच. बढ़ने से बढ़ती है।

डॉ० मिश्र ने इलाहाबाद की मिट्टियों में तांबा, जिंक, मैंगनीज, लोह, मोलिब्डिनम के अतिरिक्त सेलीनियम, आयोडीन, निकेल आदि के अभिग्रहण तथा उसे प्रभावित करने वाले कारकों पर विस्तार से कार्य किया है। सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की परस्पर अन्योन्य क्रियाओं से सम्बन्धित शोधकार्य भी डॉ० मिश्र एवं सहयोगियों द्वारा किया गया है। निष्कर्ष इस प्रकार है- यदि अम्लीकृत मिट्टियों में सोडियम तथा कैल्सियम की उपस्थिति में ताम्र का उद्ग्रहण होता है तो सामान्य मिट्टियों की अपेक्षा ताम्र की कम मात्रा ग्रहीत होती है। यदि मिट्टियों को कैल्सियम से संतृप्त कर दिया जाये तो अभिग्रहीत ताम्र की मात्रा घटती जाती है।

जिंक का अभिग्रहण कार्बनिक पदार्थ, पी.एच. तथा कैल्सियम कार्बोनेट के द्वारा प्रभावित होता है। मिट्टी के अधिक क्षारीय होने या उसमें अधिक कैल्सियम कार्बोनेट होने पर जिंक का अभिग्रहण बढ़ जाता है और उसकी उपलब्धि घट जाती है। कृत्रिम विधि से तैयार की गई असंतृप्त मिट्टियों और कैल्सियम द्वारा ग्रहीत जिंक का बहुलांश विनिमेय रूप में रहता है।

मिट्टी में प्रयुक्त मैंगनीज का अधिभाग ग्रहीत होकर मिट्टी में मैंगनीज के विभिन्न प्रकारों में रूपांतरित हो जाता है जबकि कैल्सियम, अमोनियम, लौह तथा ताम्र जैसे धनायनों की उपस्थिति में अभिग्रहण होता है तो अभिग्रहण में कमी आती है। इसके साथ ही विनिमेय मैंगनीज भी घटता जाता है। फेरस लवण के प्रयोग से प्राकृत मैंगनीज की प्राप्यता में काफी वृद्धि होती है। अभिग्रहण पर आक्सैलेट, सिट्रेट तथा फास्फेट जैसे ऋणायनों का भी प्रभाव देखा गया। अभिग्रहण पर कार्बनिक पदार्थ का कोई प्रभाव नहीं मिला। चूना तथा फेरिक आक्साइड डालने से उद्ग्रहण में तो वृद्धि हुई किन्तु उपलब्धि घट गई। असंतृप्त मिट्टी में न्यूनतम अभिग्रहण और कैल्सियम तथा मैग्नीशियम संतृप्त मिट्टियों के अधिक अभिग्रहण देखा गया। मिट्टी को गर्म करने पर मैंगनीज की प्राप्यता पर कोई विशेष प्रभाव लक्षित नहीं हुआ। अपचेय पदार्थों के प्रयोग से मैंगनीज प्राप्ति में प्रचुर वृद्धि देखी गई।

फेरस सल्फेट, लौह तथा लौह सिट्रेट का उद्ग्रहण चार प्रकार की मिट्टियों में देखा गया। यह पाया गया कि प्रथम २४ घंटों में ही ३०-७० प्रतिशत को छोड़कर शेष दो स्रोतों में से लौह का सर्वाधिक अभिग्रहण हुआ। फास्फेट तथा चूना की उपस्थिति में अभिग्रहण बढ़ा।

काली तथा क्षारीय मृदाओं में मालिब्डिनम के प्रयोग से अभिग्रहण बढ़ा किन्तु लाल मिट्टी के साथ विपरीत परिणाम प्राप्त हुये। लौह आक्साइड तथा चूने की उपस्थिति में भी मालिब्डिनम का अध्ययन किया गया और निष्कर्ष निकला कि इनकी उपस्थिति में मालिब्डिनम का अधिक ग्रहण होता है किन्तु सोडियम कार्बोनेट की उपस्थिति में उद्ग्रहण में कमी आती है।

फास्फेट से सम्बन्धित शोध अध्ययन द्वारा यह निष्कर्ष निकला है कि जब मिट्टी के स्तम्भ में से होकर फास्फेट लवण को प्रविष्ट किया जाता है तो निस्सृत विलयन में प्रारम्भ में फास्फेट का अंशमात्र ही प्राप्त होता है। शेष फास्फेट का अभिग्रहीत हो जाता है। जल, लवणों अथवा दुर्बल अम्लों द्वारा बारंबार निष्कर्षित करने पर भी अभिग्रहीत अंश पूर्णतया पुनर्प्राप्त नहीं हो पाता। फास्फोरस का वह अंश जो मृदा द्वारा शिथिलतापूर्वक बन्धित है और तनु अम्लों के द्वारा निष्कर्षणीय है अभिग्रहीत फास्फेट है। यह पौधों के लिये उपलब्ध है। किन्तु वह अंश जो तनु अम्लों द्वारा निष्कार्षित नहीं हो पाता

और पौधों के लिये सफलता से उपलब्ध नहीं हो पाता वह स्थिरीकृत फास्फेट है।

चूंकि विलयन और मृदा के द्वारा ग्रहीत फास्फेट के मध्य अधिशोषण समतापी वक्र जैसा सम्बन्ध पाया गया अतः मृदा की फास्फेट समस्या को कोलाइडी प्रकृति की स्वीकृति प्राप्त हुई। किंतु फास्फेट डालने पर अवश्य ही अधिशोषण के पश्चात् बचे हुये अंश का अवशोषण होता होगा। इस प्रकार अवक्षेपक आयनों की अनुपस्थिति में मृदा पृष्ठ पर फास्फेट का अधिशोषण और उनकी उपस्थिति में फास्फेट का अवक्षेपण- ये दोनों क्रियायें साथ-साथ चालू रह सकती हैं। इनके द्वारा मृदा विलयन में फास्फोरस की सान्द्रता ज्ञात की जा सकती है।

मृदा में अधिशोषण का अध्ययन अपेक्षतया कठिन कार्य है अतः मृत्तिकाओं और एल्यूमिनियम आक्साइड के साथ अधिशोषण का अध्ययन किया गया है। इन अध्ययनों के फलस्वरूप यह सुझाव रखा गया कि पृष्ठों पर अभिक्रिया स्थल होते हैं जो कम या अधिक सान्द्रता पर सक्रिय हो उठते हैं। अधिशोषण के लिये मिट्टियों में सान्द्र विलयनों का उपयोग अव्यावहारिक है।

मृदाओं तथा मृत्तिका खनिज द्वारा फास्फेट अभिग्रहण में सबसे महत्वपूर्ण कारक मृदा पी.एच. है। पी.एच. २-५ परास में लौह तथा एल्यूमिनियम आक्साइडों का विलयनीकरण होता है और इनके फास्फेट अवक्षेपित होते हैं। जैसे ही पी.एच. बढ़ता है इसकी सक्रियता घटती है और पी.एच. ४.५-७.५ परास में मृतिका कणों की सतह पर फास्फेट अधिशोषण होता है। जब पी.एच. ७ से ऊपर (७-१०) लाया जाता है तो Ca तथा Mg मुखर हो उठते हैं और द्विसंयोजी धनायानों के साथ फास्फेट अवक्षेपित होता है। इससे फास्फेट उपलब्धि घटती है किन्तु यदि Ca के स्थान पर Mg रहे तो उच्च पी.एच. पर भी फास्फेट की उपलब्धि घटने के बजाय बढ़ जाती है।

डॉ० मिश्र तथा सहयोगियों ने ८ हाइड्राक्सी क्विनोलीन, सिट्रेट, फेरोसायनाइड, एल्यूमिनान तथा EDTA इन पांच संकुल पदार्थों के द्वारा यह ज्ञात किया कि काली मिट्टियों में लाल मिट्टियों की अपेक्षा अधिक फास्फेट स्थिरीकरण होता है। कार्बनिक पदार्थ, स्टार्च, ग्लूकोस, गोबर की खाद तथा हरी पत्तियों का उपयोग करने से मिट्टियों में फास्फेट उपलब्धि में वृद्धि होती है। यह वृद्धि अधिकांशतः कार्बनिक पदार्थों के विघटन से CO_2 के उत्पादन तथा उसके विलयनीकारक प्रभाव के कारण होती है। किन्तु इसकी सम्भावना कम नहीं है कि विभिन्न हाइड्राक्सी अम्ल, ह्यूमिक अम्ल जैसे संकुलकर्मक या कीलेटीकर्मक उत्पन्न होते हैं।

पेस्टीसाइड

बीजों के अंकुरण तथा पौधों के विकास एवं चयापचयी परिवर्तनों पर पेस्टीसाइडों के प्रभावों का विस्तृत अध्ययन किया गया। कवकनाशियों एवं शाकनाशियों के मृदा में व्यवहार, इनकी दीर्घस्थायित्व अवधि का पौधों की वृद्धि एवं उपज प्रभाव, इनके अवशिष्ट प्रभाव इत्यादि से सम्बन्धित शोध कार्य भी किये गये। जीवनाशियों से होने वाले मृदा के प्रदूषण का अध्ययन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। जीवनाशियों के मिट्टी में निम्नीकरण, विच्छेदन अपघटन तथा सूक्ष्मजीवों पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों का विस्तृत अध्ययन किया गया। वाहित मल जल एवं अवमल (सीवेज स्लज) के द्वारा होने वाले मृदा प्रदूषण के विभिन्न पक्षों यथा- मृदा परिच्छेदिका में गहराई के अनुसार भारी धातुओं (कैडमियम, क्रोमियम, लेड, जिंक, आयरन, मैंगनीज) का वितरण, भारी धातुओं की कैल्सियम, जिंक के साथ अन्योन्य क्रिया एवं इनका मृदा पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया। वाहित मलजल तथा अवमल के प्रयोग से मृदा में विभिन्न गहराइयों (जैसे ०-१०, १०-२०, २०-३० तथा ३०-४० सेमी०) पर चार प्रमुख भारी धातुओं कैडमियम, क्रोमियम, लेड तथा जिंक का वितरण देखा गया और यह पाया

गया कि यद्यपि मल जल तथा अवमल की घरेलू प्रकृति होने के कारण इनमें भारी धातुओं का सान्द्रण अपेक्षाकृत कम है परन्तु दीर्घकाल तक सिंचाई के रूप में अवमल का प्रयोग खाद के रूप में करते रहने से अन्ततोगत्वा सुरक्षित नहीं कहा जा सकता। मल जल तथा अवमल से शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान के फार्म पर विगत २० वर्षों से निरन्तर प्रयोग के कारण यहां की मृदा में उपर्युक्त चारों भारी धातुओं का संचय हुआ है। यद्यपि जिंक को छोड़कर सभी भारी धातुओं का संचय गहराई बढ़ने के साथ कम होता दिखाई देता है फिर भी ०-१० तथा १०-२० सेमी० गइराई तक भारी धातुओं की हानिकारक मात्रा विद्यमान है। मृदा की गहराई का जिंक के वितरण पर कोई विशेष प्रभाव नहीं देखा गया अर्थात् इस वितरण को अनियमित कहा जा सकता है।

पौधों तथा मिट्टी पर भारी धातुओं के संभावित हानिकारक प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से पालक और मेथी की फसलों पर कैडमियम और जिंक के मध्य अन्योन्य क्रिया का अध्ययन किया गया। अध्ययन के फलस्वरूप यह पाया गया कि अकेले कैडमियम की उपस्थिति में पालक तथा मेथी दोनों फसलों की उपज कम हुई जबकि कैडमियम तथा जिंक दोनों का साथ-साथ प्रयोग करने पर दोनों फसलों की उपज अधिक मिली। यही नहीं, अकेले कैडमियम डालने पर पालक तथा मेथी के तनों (पत्ती सहित) और जड़ों में कैडमियम की सान्द्रता अधिक पाई गई। कैडमियम तथा जिंक दोनों का साथ-साथ प्रयोग करने पर कैडमियम की सान्द्रता घट गई।

वर्मीकल्चर

इधर के वर्षों में कार्बनिक अवशेषों के विघटन हेतु केंचुओं का उपयोग हुआ है। यह पता चला है कि कुछ केंचुये कार्बनिक पदार्थों को अपनी पेषणी में से गुजार कर बहुत तेजी से छिन्न-भिन्न कर देते हैं। वे कार्बनिक पदार्थों में वृद्धि करने वाले जीवों से अपना पोषण प्राप्त करते हैं जिससे उनके द्वारा निकाला गया मल उनके द्वारा ग्रहण किये गये पदार्थ की अपेक्षा अधिक महीन तथा सूक्ष्मजीवी रूप से सक्रिय होता है। इस प्रक्रम के दौरान कार्बनिक पदार्थ में विद्यमान पादप-पोषण विशेषतया नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम तथा कैल्सियम मुक्त होते हैं और सूक्ष्मजीवी क्रिया के द्वारा मूल यौगिकों की अपेक्षा अधिक विलेय तथा पौधों द्वारा ग्रहणीय रूप मे बदल दिये जाते हैं। केंचुये कम्पोस्ट के ढेर के खाद्य पदार्थ का उपयोग करते हैं। सामान्यतया ढेर में प्रतिदिन या दो दिन बाद एक इंच ऊंचा कार्बनिक पदार्थ डालना होता है। परम्परागत वायुजीवी कम्पोस्टिंग प्रक्रम में कार्बनिक पदार्थों को नियमित रूप से केंचुओं द्वारा वायुजीवी दशायें बनी रहती हैं और उलटने पुलटने की आश्यकता नहीं पड़ती।

इस प्रकार डॉ० साहब ने समय समय पर ज्वलंत विषयों को अपने शोध का केन्द्र बिन्दु बनाकर लगभग ४ दशकों तक सक्रिय शोध किया और अभी भी इस दिशा में सक्रिय हैं। निश्चित रूप से आप दुनिया के ऐसे पहले मृदा विज्ञानी कहे जायेंगे जिन्होंने अपने शोध को शोधपत्रों, पुस्तकों, आलेखों के माध्यम से प्रकाशित भी किया और शोधों के परिणामों को प्रयोगशाला तक ही सीमित नहीं रखा अपितु इन्हें खेतों तक पहुँचाया। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि वह डॉ० साहब को स्वस्थ और सक्रिय बनाये रखे ताकि भविष्य में डॉ० साहब इस दिशा में और योगदान कर सकें।

व्याख्याता, शीलाधर मृदा शोध संस्थान
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

३ मई १९८८ को हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के समक्ष डॉ० मिश्र द्वारा दिया गया अध्यक्षीय भाषण

बन्धुओं,

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की इस ऐतिहासिक विज्ञान परिषद् के अन्तर्गत विज्ञान की उच्च शिक्षा का माध्यम अविलंब हिन्दी/अन्य भारतीय भाषाएं हो जानी चाहिए- शीर्षक सामयिक संगोष्ठी में उपस्थित सभी विज्ञान सेवियों एवं भाषाप्रेमियों का स्वागत है। प्रारंभ में ये 'विज्ञान परिषदें' हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों की अभिन्न अंग होती थीं और पहिली विज्ञान परिषद् १९३१ ई में झाँसी अधिवेशन के अवसर पर आयोजित की गई थी जिसका सभापतित्व श्री हीरालाल खन्ना ने किया था। ऐसी परिषदें १९५० ई० तक आयोजित होती रहीं, किन्तु उसके बाद ठप्प हो गईं। अब १९८८ में ३८ वर्ष बाद जब इस विज्ञान परिषद् का आयोजन हुआ है तो आश्चर्य होना स्वाभाविक है। १९३५ ई० की विज्ञान परिषद् में भाषण करते हुए डॉ० गोरखप्रसाद ने हर्ष व्यक्त किया था कि हाईस्कूल में हिन्दी को विज्ञान की परीक्षाओं का माध्यम स्वीकार कर लिया गया है अतएव विज्ञान के प्रत्येक विषय पर पुस्तकें लिखी जानी चाहिए। १९४० ई० में डॉ० सत्यप्रकाश ने अपने अध्यक्षीय भाषण में इंगित किया था कि उस काल तक हिन्दी में कुल डेढ़ हजार पृष्ठ का वैज्ञानिक साहित्य उपलब्ध है। उन्होंने मराठी तथा तमिल भाषाओं में प्राप्य वैज्ञानिक साहित्य की भी चर्चा की थी।

तब से आधी शती बीत चुकी है। पारिभाषिक शब्दावली के लिए १९५० ई० में ही शिक्षा मन्त्रालय ने वैज्ञानिक शब्दावली बोर्ड की स्थापना करके उसमें चुने हुए वैज्ञानिकों एवं शिक्षाविदों को रख कर अब तक विज्ञान के सभी अंगों की शब्दावलियां पूरी कर ली हैं और सरकार ने संस्तुति दे दी है कि भारत की विभिन्न भाषाएं इन शब्दावलियों का उपयोग करें और एकरूपता उत्पन्न हो जो वैज्ञानिक लेखन एवं अध्ययन-अध्यापन के लिए मूलभूत आवश्यकता है।

अब कुछ विश्वविद्यालयों ने हिन्दी को समस्त विषयों के अध्ययन एवं परीक्षा का माध्यम भी स्वीकार कर लिया है और विद्यार्थियों को छूट दी गई है कि वे चाहें तो हिन्दी में प्रश्नोत्तर लिख सकते हैं। यहाँ तक कि अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवाओं की प्रतियोगिता परीक्षाओं में भी वैज्ञानिक विषयों में हिन्दी या प्रादेशिक भाषाओं के प्रयोग करने की छूट है।

१९४७ ई० के बाद हिन्दी में जो वैज्ञानिक साहित्य रचा गया है उसकी कुछ उल्लेखनीय विशेषताएं हैं- यथा उच्चकोटि के लेखकों का हिन्दी में पदार्पण, भाषा एवं शैली में स्पष्टता तथा प्रवाह, मौलिक लेखन तथा अनुवाद। निजी प्रकाशकों ने भी जो पुस्तकें प्रकाशित की हैं उनके बाहृय आकर्षक एवं सुसज्जित एवं उनके आकार वृहद हैं जिससे वैज्ञानिक विषयों को चित्रों से समन्वित किया जा सकता है। आज ऐसी अनेक पुस्तकें प्राप्त हैं जो विदेशी पुस्तकों से होड़ ले सकती हैं।

वस्तुतः विज्ञान परिषदों में समय-समय पर जो कुछ कहा गया या जो-जो आशाएं व्यक्त की गईं थीं उनमें से बहुत बड़े अंश की पूर्ति हो चुकी है। १९७० ई० में हिन्दी प्रदेशों में ग्रन्थ अकादमियों की

स्थापना करके केन्द्रीय सरकार ने एक-एक करोड़ रुपये की धनराशि प्रदान की जिससे विश्वविद्यालय स्तर की पाठ्यपुस्तकें तैयार की गई हैं जिनमें स्वीकृत पारिभाषिक शब्दावली का उपयोग हुआ है।

हाल ही में विश्वविद्यालय स्तर की विज्ञान पुस्तकों की एक बड़ी सूची प्रकाशित हुई है जिसमें से अधिकांश पुस्तकें हिन्दी ग्रन्थ अकादमियों द्वारा प्रकाशित हैं। इसमें ७५० पुस्तकों की वृहद् सूची है जिसमें से रसायन की ११२, भौतिकी की ११५, वनस्पति विज्ञान की ८१, प्राणि विज्ञान की ५०, गणित की ८५, इंजीनियरी की ५६, आयुर्विज्ञान तथा भेषज की ६६ एवं कृषि विषयक १२६ पुस्तकें हैं। इन पुस्तकों के अतिरिक्त भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् ने उत्तमोत्तम पुस्तकें प्रकाशित की हैं। स्पष्ट है कि विश्वविद्यालयों में विज्ञान विषय के अध्ययन-अध्यापन के लिए प्रचुर सामग्री उपलब्ध है। इंजीनियरी तथा चिकित्सा के दो क्षेत्र हैं जिनमें वैज्ञानिक साहित्य का अभाव बताया जाता है किन्तु इस सूची से स्पष्ट है कि यह यथार्थ को छिपाना होगा।

जनोपयोगी साहित्य में भी यथेष्ठ सामग्री उपलब्ध है। डॉ० गोरखप्रसाद तथा फूलदेव सहाय वर्मा ने जो स्वप्न देखे थे वे साकार हो चुके हैं। कृषि विषयक पुस्तकों के लेखन एवं प्रकाशन में पन्तनगर कृषि विश्वविद्यालय अग्रणी है। यही नहीं, १९५४ ई० में डॉ० सत्यप्रकाश ने हिन्दी में वैज्ञानिक अनुसन्धान पत्रिका प्रकाशित करने का जो सुझाव रखा था वह भी १९५८ ई० में पूरा हो चुका है। डॉ० गोरखप्रसाद ने हिन्दी विश्वकोश का जो सपना देखा था वह भी पूर्ण हो चुका है। सन्दर्भ ग्रन्थ के रूप में सी.एस.आई.आर. नई दिल्ली से 'भारत की सम्पदा' के सात मनोहारी खण्ड छप चुके हैं। कई एक वैज्ञानिक कोश भी निकल चुके हैं। 'विज्ञान', 'विज्ञान प्रगति', 'वैज्ञानिक', 'आविष्कार' जैसी पत्रिकाएं जन सामान्य में विज्ञान विषयक सामान्य चेतना का प्रसार कर रही हैं। हाल ही में दिल्ली आई०आई०टी० ने 'जिज्ञासा' नाम की एक पत्रिका प्रकाशित करने का संकल्प किया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् 'कृषि चयनिका' नामक शोध पत्रिका निकाल रही है। अनेक शोध संस्थानों से उनकी प्रगति रिपोर्टें हिन्दी में छपने लगी हैं। कई विश्वविद्यालयों में विज्ञान के शोध प्रबन्ध भी हिन्दी में लिखे जा चुके हैं। कुछ सुप्रसिद्ध विज्ञान लेखकों को राज्यों के सर्वोच्च पुरस्कार भी मिल चुके हैं।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय दिल्ली द्वारा विश्वविद्यालयों में विज्ञान के अध्यापन के लिए कई कार्यशालाएं भी आयोजित हो चुकी हैं जिनमें अध्यापकों ने बड़े ही मनोयोग से अध्यापन करते हुए अपनी क्षमता का परिचय दिया है। पाठ्यपुस्तकों के लेखन एवं प्रतिष्ठित अंग्रेजी ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद करने की प्रक्रिया में उच्चस्तरीय विज्ञान लेखकों की एक बहुत बड़ी टोली तैयार हो चुकी है।

मेरे इस विवेचन का उद्देश्य यह बताना है कि विश्वविद्यालयों में हिन्दी के माध्यम से अध्ययन-अध्यापन का पूरा-पूरा वातावरण बन चुका है। यदि कोई हिचक या अटक है तो वह है आत्म विश्वास की कमी। जिस हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए इतने प्रयास हुए उसे यदि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में व्यवहृत नहीं किया जा रहा तो यह हमारी दुर्बलता ही है। क्या सरकार ने ऐसा कुछ कहा है कि हम विश्वविद्यालयों में विज्ञान की शिक्षा के लिए हिन्दी का व्यवहार न करें ? यह तो हमारे कुछ प्रतिनिधियों के अन्तःकरण की पुकार है कि वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली क्लिष्ट है- इसे सरल बनाया जाए। शायद उन्हें प्रकट करने के लिए सर्वसाधारण के उपयोग के लिए नहीं होती। अतएव जब वरिष्ठ वैज्ञानिक शब्दावली की क्लिष्टता की बात करते हैं तो यह बात समझ में नहीं आती। तब तो यही लगता है कि यह बहाना है। जहाँ इण्टरमीडिएट कक्षाओं तक सारे छात्र हिन्दी माध्यम से विज्ञान पढ़ते हैं वहीं विश्वविद्यालय में पहुँचते ही उन्हें अंग्रेजी में विज्ञान पढ़ने के लिए बाध्य होना पड़ता है। उनकी आशाओं पर तुषारापात हो जाता है। शायद ही कोई शिक्षक उसे उचित राह दिखाता हो।

इतनी बड़ी विडम्बना विश्व के किसी राष्ट्र में नहीं मिलेगी। अध्यापक की जो महत्वपूर्ण भूमिका है, उसे भुला दिया गया है। अब समय आ गया है कि हम आत्मालोचन करें, अपने हृदयों में झांकें, उस व्यामोह को तोड़ दें जो आकांक्षाओं को समझे और उन्हें सही मार्गदर्शन करावे। अब समय नहीं रहा कि गोष्ठियों द्वारा हम हिन्दी को शिक्षा माध्यम किए जाने का समर्थन करावें। जब सारी तैयारियां हो चुकी हैं तो फिर आगा-पीछा या तर्क वितर्क करने से क्या लाभ ?

मेरा तो यही अनुरोध है कि जितने भी मौलिक ग्रंथ लिखे गए हैं उनका सांगोपांग अवगाहन किया जाए और उत्तम ग्रंथों को चुनकर विद्यार्थियों तथा अध्यापकों को पढ़ने के लिए दिया जाए। हमने जितने ग्रंथों का अनुवाद कराया है उनका भी पुनरीक्षण हो। पश्चाताप करने से कोई लाभ नहीं कि पुस्तकें पढ़ने वाला कोई नहीं, पुस्तकें सड़ रही हैं। निर्णय हमारा था, हमीं उससे उबरने का प्रयास करें, किन्तु जल्द से जल्द।

जब तक हर विज्ञानप्रेमी नित्य ही हिन्दी में लिखेगा नहीं, अपने विचारों को हिन्दी पत्रिकाओं में प्रकाशित करेगा नहीं और सतर्क नहीं रहेगा तब तक प्रगति मन्द रहेगी। हमारे वरिष्ट वैज्ञानिकों को अंग्रेजी के उच्च्य प्रासादों से उतर कर हिन्दी की कुटिया में आना होगा। उन्हें अपने मन से ऊंच-नीच का भेदभाव निकालना होगा। उन्हें देश में, देश की भाषाओं में विचार व्यक्त करने होंगे। अपने शोध परिणामों को देश की पत्रिकाओं में प्रकाशित करना होगा।

हिन्दी के लिए जो वातावरण बन चुका है वह स्वास्थ्यप्रद तभी हो सकता है जब उसमें हर विशेषज्ञ अपना योगदान दे। हमने अभी तक जो कुछ अर्जित किया है उसे लुटने न दें। हमारी गति मन्द न पड़े, इसके लिए प्रयत्नशील रहना होगा। चीखने से लाभ होने वाला नहीं। सामयिक साहित्य लिखा और पढ़ा जाए। अच्छी पुस्तकें लिखीं जाएं। अच्छे लेखक पुरस्कृत हों। हिन्दी अकादमियाँ अपनी शीत निद्रा तोड़ें। वे अपने दायित्व को निभावें। उनके पुरस्कार गुणवत्ता पर आधारित हों, व्यक्ति पर नहीं।

कुछ लोग लोकप्रिय वैज्ञानिक साहित्य के स्तर से देश के वैज्ञानिक वातावरण का अनुमान लगाना चाहते हैं। यह टीक नहीं। शास्त्रीय साहित्य से उसे मिश्रित न किया जाए। मेरा अनुभव है कि चिकित्सा और इंजीनियरी क्षेत्रों में भी हिन्दी के प्रति ललक है अतएव उसको सही दिशा प्रदान की जावे।

भविष्य में हमारे जो भी सम्मेलन, गोष्ठियां या परिषदें आयोजित हों वे माध्यम के विषय में बहस के लिए न हों अपितु किसी विशेष शीर्षक पर उपलब्ध साहित्य की विवेचना के लिए या नया साहित्य सृजन को लेकर हों। हमें शक्ति का अपव्यय नहीं अपितु सदुपयोग करना है। मुझे तो हिन्दी का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल प्रतीत हो रहा है। आइये, इस महायज्ञ में अपनी-अपनी क्षुद्र आहुति डाल कर अपना कर्त्तव्य पूरा करें।

मेरी कार्यशीलता

वर्ष १९७८-७९ तथा उसके २० वर्ष बाद १९९७- ९८ में किये गये कार्यों की एक झलक

१९७८-७९

१. शुकदेव द्वारा प्रकाशित नई द्वैमासिक पत्रिका 'विज्ञान भारती' के लिये कई लेख लिखे। प्लास्टिक शती दर शती, सर्वेगुणाः कांचनमाश्रयन्ते, मछलियों के रंग, मेरे विचार (आंइस्टीन की पुस्तक) तथा अन्तरिक्ष रसायन के सार संक्षेप (यह नई विधा है)।

२. प्रगति मंजूषा के लिये लेख लिखे- विज्ञान और धर्म, भारत और भारतीयता।

३. रेडियो वार्ता- प्रयोगशाला से खेतों तक २.१०.१९७९ को प्रसारित हुई।

४. विज्ञान के लिये लेख- खनिज लवण तथा रासायनिक बन्ध ।

५. आविष्कार के लिये लेखमाला लिखी- १. डी.डी.टी., २. सूक्ष्ममात्रिक तत्व, ३. उर्वरक, ४. रंगों की उत्पत्ति।

६. राष्ट्रीय शिक्षा तथा अनुसन्धान परिषद् नई दिल्ली के लिये एक लेख लिखा, मिट्टी के बर्तन तथा धातुओं का विकास। इसे १२-१९ नवम्बर तक दिल्ली में हुई कार्यशाला में पढ़ा गया और यह वहीं से प्रकाशित कक्षा ८ की पुस्तक में सम्मिलित करने के लिये स्वीकृत हुआ।

७. श्री रमेश दत्त शर्मा के लिये एक कहानी लिखी (जो छप नहीं सकी)

८. खेती के लिये लेख लिखा- मृत्तिका अनुसन्धान के २५ वर्ष

९. भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् से आई पुस्तक का भाषा सम्पादन किया।

१०. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी उत्तर प्रदेश की कई पुस्तकों का भाषा सम्पादन एवं प्रूफ शोधन किया। ये हैं- क्रिप्टोगैम्स, वनस्पति विज्ञान, प्रकाश संश्लेषण, खनिज विज्ञान, सिंचाई तथा जल उपयोग, मलक जल, अवकलन आदि।

११. धर्मयुग के लिये फरवरी १९७९ में लेख लिखा जो नवम्बर १९७९ के रोमांचक विज्ञान विशेषांक में छपा।

१२. वैज्ञानिक ऋषि- प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा अभिनन्दन ग्रन्थ पूरा किया।

१३. साहित्यिक कार्य- अंगदपैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा का पाठ तैयार किया जिसे डॉ० रत्नकुमारी स्वाध्याय संस्थान ने छापा।

१९९७-९८

१. पारिभाषिक शब्दावली आयोग नई दिल्ली के लिये पाठमाला- वाहित मल एवं आपंकः उपयोग एवं प्रबंधन लिखा (जो वर्ष २००१ में प्रकाशित हो सकी)।

२. अपने पुत्र आशुतोष के पास पत्नी सहित विदेश गया। वहां 'ऐसे थे हमारे निराला' पाण्डुलिपि पूरी की और लौटकर १ अगस्त को हिन्दी प्रचारक को दिया। (किन्तु बाद में पाण्डुलिपि लौटकर मेरे पास आ गई)।

३. सतकवि गिरा विलास की पाण्डुलिपि भूमिका सहित पूरी की।

४. 'महामानव निराला' पुस्तक प्रभात प्रकाशन ने छापी।

५. भौतिकी की रोचक बातें तथा पृथ्वी की रोचक बातें- पुस्तकें प्रभात प्रकाशन के यहां छपीं।

६. 'जल की रोचक बातें' भारत सरकार के पर्यावरण विभाग द्वारा पुरस्कृत हुई।

७. हिन्दी संस्थान उत्तर प्रदेश द्वारा 'विज्ञान भूषण' सम्मान।

८. फैजाबाद की विज्ञान परिषद् शाखा द्वारा 'विज्ञान मार्तण्ड सम्मान' प्राप्त किया।

९. हिन्दी संस्थान उत्तर प्रदेश से 'बाल विज्ञान सर्वेक्षण' पुस्तिका छपी।

१०. हिन्दुस्तानी एकेडमी में डॉ० हरिमोहन स्मृति प्रथम व्याख्यान दिया।

११. 'विज्ञान प्रसार' से प्रोजेक्ट मिला- 100 years of Science writing.

१२. डॉ० उदयनारायण तिवारी स्मृति व्याख्यान के लिये हिन्दुस्तानी एकेडमी को २५०००/- की राशि प्रदान की।

१३. शीलाधर इंस्टीट्यूट में मेरे शोध छात्रों के नाम का पत्थर प्रो० वी.डी. गुप्ता द्वारा लगाया गया।

प्रो० शिवगोपाल मिश्र द्वारा लिखे गये लेख

'विज्ञान' में प्रकाशित (१९५७-२००१)

	शीर्षक	वर्ष
१.	कृषि विज्ञान को डॉ० धर की देन	नवम्बर १९५७
२.	भारत में रसायन शास्त्र का विकास (प्रो० नीलरत्न धर) (अनु० डॉ० शिवगोपाल मिश्र)	अक्टूबर १९५७
३.	प्राचीन भारत में भूमि का वर्गीकरण (डॉ० एस.पी. रायचौधरी) (अनु० डॉ० शिवगोपाल मिश्र)	
४.	भारतीय कृषि का विकास	जनवरी १९५८
५.	भारतीय कृषि का विकास	फरवरी १९५८
६.	भारतीय कृषि का विकास	मार्च १९५८
७.	भारतीय कृषि का विकास	अप्रैल १९५८
८.	भारतीय कृषि का विकास	मई १९५८
९.	भारतीय कृषि का विकास	जून १९५८
१०.	भारतीय कृषि का विकास	सितम्बर १९५८
११.	हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य का अवतरण	फरवरी १९५८
१२.	वैज्ञानिक कृषि की प्रगति का सिंहावलोकन	जुलाई १९५९
१३.	वन महोत्सव और भूमि संरक्षण (सार संकलन)	अगस्त-सितम्बर १९५९
१४.	कृषि रसायनः एक झांकी	जनवरी १९६०
१५.	गणित का भूत	अगस्त १९६०
१६.	भारतीय कृषि का विकास	अगस्त १९६१
१७.	अविस्मरणीय स्मृतियां	डॉ० गोरखप्रसाद स्मृति अंक १९६१
१८.	हिन्दी का वैज्ञानिक साहित्य	अगस्त १९६२
१९.	अंतरिक्ष अभियान	मई १९६२
२०.	भौतिकशास्त्री मैक्स बोर्न	मई १९६३
२१.	जहां पक्षपात नहीं होता था, वहां भी	सितम्बर १९६३
२२.	खाद्यों में रसायनों का उपयोग	अक्टूबर १९६३
२३.	१९६२-६३ के पुरस्कार विजेता	जनवरी-फरवरी १९६४
२४.	गप्पें नहीं सही खबरें लाया हूं-१	जनवरी-फरवरी १९६४
२५.	कहीं आप अंतरिक्ष यात्रा तो नहीं करना चाहते	मार्च १९६४

२६.	गप्पें नहीं सही खबरें लाया हूं-२	मार्च १९९४
२७.	नींद का सुख	अप्रैल १९९४
२८.	खबरें लाया हूं-३	अप्रैल १९९४
२९.	जैव चुम्बकीय घटना	मई १९९४
३०.	खबरें लाया हूं-४	मई १९९४
३१.	सुप्रसिद्ध गणितज्ञ डॉ० गणेश प्रसाद	मई १९९४
३२.	सागरीय सभ्यता	जून-जुलाई १९९४
३३.	खबरें लाया हूं-५	जून-जुलाई १९९४
३४.	प्रो० गेरहार्ड डोमाक	जून-जुलाई १९९४
३५.	पशु जगत में सुगन्धित पदार्थों का महत्व	सितम्बर १९९४
३६.	हाथ मिलाइये	नवम्बर १९९४
३७.	स्वर्गीय नेहरू जो भुलाये न भूले	दिसम्बर १९९४
३८.	हिन्दी में वैज्ञानिक बाल साहित्य	दिसम्बर १९९४
३९.	पर्वतीय कृषि	जनवरी १९९५
४०.	नीरस बालू से सरस जीवन की उत्पत्ति	जनवरी-फरवरी १९९६
४१.	खन्ना जी के प्रति श्रद्धा सुमन	जनवरी-फरवरी १९९६
४२.	दैनिक जीवन में रसायन-१	अगस्त-नवम्बर १९९६
४३.	दैनिक जीवन में रसायन-२ : मिट्टी और उसका परीक्षण	जनवरी १९९७
४४.	जब स्मरण शक्ति भी मोल ली जा सकेगी	जनवरी १९९७
४५.	दैनिक जीवन में रसायन-३	जनवरी १९९७
४६.	खाद्य समस्या : एक गम्भीर पहेली	फरवरी १९९७
४७.	दैनिक जीवन में रसायन-४ दवायें और औषधियां	फरवरी १९९७
४८.	भूमि उर्वरता	मार्च-अप्रैल १९९७
४९.	दैनिक जीवन में रसायन-५	मार्च-अप्रैल १९९७
५०.	विज्ञान का विराट स्वरूप	जुलाई अगस्त १९९७
५१.	दैनिक जीवन में रसायन-६ रसोई घर में	जुलाई अगस्त १९९७
५२.	मक्खियों से सावधान	जुलाई अगस्त १९९७
५३.	दैनिक जीवन में रसायन-७ ईंधन	सितम्बर १९९७
५४.	सौर ऊर्जा का दोहन-८ पाकशास्त्र में	अक्टूबर १९९७
५५.	दैनिक जीवन में रसायन-१० हमारा भोजन	फरवरी-मार्च १९९८
५६.	दैनिक जीवन में रसायन-११ भोजन का पाचन	अप्रैल-मई १९९८
५७.	जीवविज्ञान और जनसेवा	जून-नवम्बर १९९८
५८.	दैनिक जीवन में रसायन-१२	जून-नवम्बर १९९८
५९.	हरित क्रान्ति	फरवरी-मार्च १९९९
६०.	दैनिक जीवन में रसायन-१३ आवास अलंकरण	मई-जून १९९९

६१.	विज्ञान की भाषा - स्वरूप निर्णय	जुलाई-अगस्त १९६९
६२.	जल प्रदूषण एवं स्वच्छता	जनवरी-फरवरी १९७०
६३.	दैनिक जीवन में रसायन-१४ बागवानी	मई १९७०
६४.	विज्ञान की लोकगम्यता	सितम्बर १९७०
६५.	हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन	नवम्बर १९७०
६६.	शब्दों के चिन्त्य अनुवाद	दिसम्बर १९७०
६७.	हमारी बदलती आस्थायें-१	दिसम्बर १९७०
६८.	प्रदूषण	मार्च १९७१
६९.	मृदा प्रदूषण	अप्रैल १९७१
७०.	हिन्दी में वैज्ञानिक अनुवाद की समस्या	अप्रैल १९७१
७१.	भारतीय कृषि-१	जून १९७३
७२.	भारतीय कृषि--२	जुलाई १९७३
७३.	भारतीय कृषि--३	अगस्त १९७३
७४.	वायु प्रदूषण	मई १९७१
७५.	हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के प्रकाशन का सर्वेक्षण	अप्रैल-मई १९७३
७६.	भारतीय कृषि-४	सितम्बर १९७३
७७.	रसायन के अध्ययन अध्यापन में हिन्दी	अक्टूबर १९७३
७८.	अन्तरिक्ष विज्ञानः मानवता के लिये चुनौती	दिसम्बर १९७३
७९.	ऊसरों का उर्वरीकरण	जनवरी १९७४
८०.	सूक्ष्ममात्रिक तत्व	अप्रैल १९७४
८१.	धरती हमारी माता	अगस्त-सितम्बर १९७४ बाल विशेषांक
८२.	जैव उर्वरक-१	फरवरी-मार्च १९७५
८३.	विज्ञान के ६० वर्ष	अप्रैल १९७५
८४.	जैव उर्वरक-२	अप्रैल १९७५
८५.	हिन्दी में कृषि कोश	वैज्ञानिक परिव्राजक १९७६
८६.	स्वामी जी से मेरा परिचय	वही
८७.	विज्ञान की भाषा-१	जून-जुलाई १९७७
८८.	विज्ञान की भाषा-२	अगस्त १९७७
८९.	कृषि पर आधारित उद्योग धन्धे	जनवरी-फरवरी १९७८
९०.	भारतीयता की जीवंत प्रतिमूर्ति	वैज्ञानिक ऋषि १९७९
९१.	डॉ० वर्मा के कुछ पत्र	वैज्ञानिक ऋषि १९७९
९२.	मिट्टी का मोल	जून-जुलाई १९८०
९३.	जीवनाशी रसायनशास्त्र	सितम्बर १९८०
९४.	स्थल प्रदूषण	दिसम्बर १९८०
९५.	जीवनाशियों से उत्पन्न पर्यावरणीय संकट	१९८० प्रदूषण विशेषांक
९६.	लोकप्रिय विज्ञानसेवी स्वामी हरिशरणानन्द	नवम्बर १९८१

९७.	भारत में विज्ञान गुणवत्ता की समस्या	फरवरी १९८४
९८.	जैव प्रौद्योगिकी	अप्रैल १९८४
९९.	हमारी विज्ञान शिक्षा	मई १९८४
१००.	वर्ष १९८४	जून १९८४
१०१.	हिन्दी का विज्ञान कथा साहित्य	फरवरी १९८५
१०२.	जब पादप संरक्षी संहारक बन जाते हैं	अप्रैल १९८५
१०३.	कॉमिक्स की दुनिया	नवम्बर-दिसम्बर १९८५
१०४.	नाभिकीय युद्ध की विभीषिका	जनवरी-मार्च १९८६
१०५.	हिन्दी लेखक और पर्यावरण	अगस्त-सितम्बर १९८६
१०६.	सैद्धान्तिक भौतिकी के मूल नियम	जनवरी १९८७
१०७.	स्वस्थ वैज्ञानिक परिवेश की तलाश	मार्च १९८७
१०८.	तत्वों की खोजः कुछ रोचक तथ्य	मई १९८७
१०९.	घेंघा या गलगंड रोग	जून १९८७
११०.	भारतीय विज्ञान किधर	अगस्त १९८७
१११.	जनता का कोपभाजन	मार्च १९८७
११२.	विज्ञान की उच्च्व शिक्षा का माध्यम	अगस्त १९८८
११३.	कचरे से कंचन	अप्रैल १९९०
११४.	मृदा एवं जल प्रदूषण : समस्यायें एवं समाधान	मई १९९०
११५.	नये पर्यावरण की तलाश	अगस्त-सितम्बर १९९०
११६.	भूविज्ञान में राष्ट्रभाषा के माध्यम से शोध प्रबन्ध	मई १९९१
११७.	खाड़ी युद्ध के घहराते बादल	जून १९९१
११८.	सुनामी उत्पात	जुलाई १९९१
११९.	ब्रह्माण्ड विषयक सात विचार	सितम्बर १९९१
१२०.	भारतीय भूगर्भशास्त्र को प्रो० साहनी की देन	नवम्बर १९९१
१२१.	भारतीय मुद्रा शास्त्र को डॉ० साहनी की देन	नवम्बर १९९१
१२२.	जनांकिकी किधर	जनवरी-मार्च १९९२
१२३.	वरेण्य वैज्ञानिक डॉ० नीलरत्न धर	मई-जून १९९२
१२४.	वैदिक गणित क्यों	दिसम्बर १९९२
१२५.	धान की खेती में शैवालों की उपयोगिता	मई १९९३
१२६.	दलहनी फसलें : राइजोबियम कल्चर का प्रयोग	जून १९९३
१२७.	सुगन्धवाद	जुलाई-सितम्बर १९९४
१२८.	सूक्ष्ममात्रिक तत्वों का प्रयोग	नवम्बर-दिसम्बर १९९५
१२९.	विज्ञान के लोकप्रियकरण का विनम्र प्रयास	जनवरी-मार्च १९९६
१३०.	यह गोष्ठी क्यों ?	जुलाई-अगस्त १९९६
१३१.	विज्ञान परिषद् के निर्माता डॉ० रामदास तिवारी	नवम्बर-दिसम्बर १९९६
१३२.	वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ० नन्द लाल सिंह (श्रद्धांजलि)	जनवरी १९९७

१३३. अमेरिका में १०० दिन	अक्टूबर १९९७
१३४. हिन्दी में विज्ञान कथा लेखन	अक्टूबर १९९७
१३५. डॉ० नन्द लाल सिंह : संक्षिप्त परिचय तथा हिन्दी सेवा	दिसम्बर १९९७
१३६. कुछ स्मृतियां	दिसम्बर १९९७
१३७. ऐसा क्यों होता है ?	अप्रैल १९९८
१३८. प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव (विनम्र श्रद्धांजलि)	मई-जून १९९८
१३९. पुस्तक : हिन्दी में बाल विज्ञान लेखन	जुलाई-अगस्त १९९८
१४०. हिन्दी की विज्ञान विषयक पुस्तकें	नवम्बर १९९८
१४१. हिन्दी साहित्य और विज्ञान गल्प : एक दृष्टि	दिसम्बर १९९८
१४२. हिन्दी की विज्ञान पत्रिकायें	जनवरी १९९९
१४३. विश्वकोश प्रणेता द्विवेदी जी	फरवरी १९९९
१४४. विश्वकोश की परम्परा और द्विवेदी जी	फरवरी १९९९
१४५. विज्ञान की पहली पत्रिका कौन सी	मार्च १९९९
१४६. महान वैज्ञानिकों की कृतियों के हिन्दी अनुवाद	अप्रैल १९९९
१४७. विज्ञान लेखन के दो महत्वपूर्ण पहलू	अगस्त १९९९
१४८. चार नई पुस्तकें और एक नई पत्रिका	नवम्बर १९९९
१४९. पर्यावरण : लोक दृष्टि में तीन विज्ञान कथा संग्रह	दिसम्बर १९९९
१५०. विज्ञान समाचार	दिसम्बर १९९९
१५१. कृषि विज्ञान में हिन्दी लेखन	जनवरी २०००
१५२. श्री दिलीप साल्वी की चार पुस्तकें	जनवरी २०००
१५३. कार्बनिक खेती	फरवरी २०००
१५४. पर्यावरणीय सुरक्षा	जून २०००
१५५. मार्कोपोलो और विज्ञान	जुलाई २०००
१५६. पाण्डुलिपियों में विज्ञान	नवम्बर २०००
१५७. भारत के महान कृषि विज्ञानी डॉ० धर	जनवरी २००१
१५८. मैं अति लघु प्राणी	जनवरी २००१
१५९. मस्तिष्क और वाक् का सम्बन्ध	फरवरी २००१
१६०. इस सहस्राब्दि का पहला बड़ा भूकम्प	मार्च २००१
१६१. लोकप्रिय विज्ञान लेखक : महापण्डित राहुल सांकृत्यायन	मार्च २००१
१६२. भारत में स्टीफेन हाकिंग	अप्रैल २००१
१६३. वैद्युतगतिकी का जादूगर : फाइनमैन	मई २००१
१६४. पर्यावरण विज्ञान	जून २००१
१६५. जीनियस कौन	सितम्बर २००१

अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित (१९५२-२००१)

शीर्षक		वर्ष
१.	ऊसर समस्या और अन्न संकट का निवारण	पंचदूत, ३० नवम्बर १९५२
२.	कृत्रिम खादों की कथा	पंचदूत, १५ अक्टूबर १९५३
३.	कुछ तिरस्कृत खादें	पंचदूत, सितम्बर १९५४
४.	कृत्रिम खादों की उपयोगिता	पंचदूत, अगस्त १९५४
५.	हड्डियों की खाद	पंचदूत, १५ अक्टूबर १९५४
६.	भारतीय कृषि का इतिहास	पंचदूत, २८ फरवरी १९५५
७.	भारतीय कृषि में घाघ भड्डरी का सहयोग	पंचदूत, ३१ मार्च १९५५
८.	रोगों के कारण : जी०डी० निकोलपस के लेख का अनुवाद	पंचदूत, जनवरी १९५५
९.	पर्वतीय कृषि की समस्यायें	हिमप्रस्थ १९५८
१०.	सहकारी कृषि	हिमप्रस्थ १९५९
११.	विज्ञान और उसका अध्ययन	विश्वोदय १९५९
१२.	भूमि उर्वरता और हरी खाद	हिमप्रस्थ, अक्टूबर १९६०
१३.	भारतीय कृषि में परमाणु शक्ति का प्रयोग	हिमप्रस्थ, मार्च १९६१
१४.	हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के उन्नायक डॉ० गोरख प्रसाद	साप्ताहिक आज २८ मई, १९६१
१५.	हिन्दी का वैज्ञानिक साहित्य : रजत जयंती अंक	राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा मई १९६२
१६.	वैज्ञानिक साहित्य	साहित्यिक निबन्ध,लोक चेतना प्रकाशन, जबलपुर
१७.	जलप्लावन की सम्भावना	विज्ञान जगत सितम्बर १९६३
१८.	जीवाणु युद्ध	प्राच्यभारती सितम्बर १९६३
१९.	चिरजीवन की सुखद कल्पना	साप्ताहिक आज ७ जनवरी १९६३
२०.	अन्य ग्रहों के वासियों से बातचीत	विज्ञान लोक मार्च १९६३
२१.	जीवन संघर्ष की नई व्याख्या	विज्ञान जगत दिसम्बर १९६३
२२.	अन्य ग्रहों से रेडियो सम्पर्क	विज्ञान जगत मई १९६४
२३.	सुप्रसिद्ध गणितज्ञ डॉ० गणेश प्रसाद	किशोर भारती जुलाई १९६४
२४.	कृत्रिम वर्षा	विज्ञान जगत अगस्त १९६४
२५.	३३ वर्ष बाद विश्वयुद्ध	ज्ञानोदय दीपावली अंक १९६७
२६.	राष्ट्रभाषा हिन्दी और वैज्ञानिक शिक्षण	साप्ताहिक भेंट २६ जनवरी १९६८
२७.	वैज्ञानिक अध्ययन और अध्यापन में हिन्दी	भाषण, २४ तथा २५ मई १९७१

२८.	मसाले केवल स्वाद के लिये नहीं	विज्ञान प्रगति खाद्यपोषण विशेषांक १९७०-७१
२९.	आकाश से बरसती महामारियां	साप्ताहिक हिन्दुस्तान २३ मई १९७१
३०.	आत्म प्रवंचना के २४ वर्ष	साप्ताहिक हिन्दुस्तान १५ अगस्त १९७१
३१.	कीटनाशक दवाओं के प्रयोग में सावधानी	खेती मई १९७१
३२.	ऊसर सुधार के नये तरीके	खेती जुलाई १९७१
३३.	प्रयोगशालाओं में प्रोटीन निर्माण	खेती जून १९७२
३४.	ये बरजोर सूक्ष्मजीवाणु	खेती दिसम्बर १९७२
३५.	स्वतंत्र भारत में कृषि रसायन विज्ञान	खेती सितम्बर १९७२
३६.	कृषि रसायन के २५ वर्ष	खेती, रजत जयंती विशेषांक १९७२
३७.	उत्तर प्रदेश में विज्ञान का वातावरण	उत्तर प्रदेश जनवरी १९७३
३८.	भविष्य का भोजन	विज्ञान प्रगति मई १९७३
३९.	उर्वरक	चिकित्सा सेवा मई १९७५
४०.	स्वाद का स्वाद निराला	विज्ञान प्रगति फरवरी १९७७
४१.	पत्तियों से प्रोटीन	खेती जुलाई १९७७
४२.	प्लास्टिक शती दर शती	विज्ञान भारती जुलाई अगस्त १९७८
४३.	सर्वेगुणाः कांचनमाश्रयन्ते	विज्ञान भारती दिसम्बर ७८- फरवरी ७९
४४.	अन्तरिक्ष रसायन	विज्ञान भारती सितम्बर-अक्टूबर १९७८
४५.	खाद्य समस्या- एक गम्भीर पहेली	प्रगति मंजूषा जुलाई १९७८
४६.	विज्ञान और धर्म	प्रगति मंजूषा नवम्बर १९७९
४७.	क्या भारत में सोना बनता था ?	धर्मयुग, रोमांचक विज्ञान विशेषांक नवम्बर १९७९
४८.	अमोनिया : उर्वरकों का जनक	आविष्कार नवम्बर-दिसम्बर १९८०
४९.	मिट्टी अनुसंधान के ५० वर्ष	खेती १९८०
५०.	घातक किन्तु लोकप्रिय रसायन डी०डी०टी०	आविष्कार सितम्बर १९७९
५१.	रंगों की उत्पत्ति	आविष्कार दिसम्बर १९७९
५२.	विज्ञान संकायों में हिन्दी	अमृत प्रभात ५ अगस्त १९७८
५३.	मिट्टी से सोने तक	जीवन और विज्ञान (पुस्तक) एन.सी.ई.आर.टी. १९८०
५४.	विज्ञान और दर्शन	विज्ञान वैचारिकी जुलाई-सितम्बर १९८०
५५.	वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में हिन्दी	राजभाषा भारती, जनवरी-मार्च १९८०
५६.	मछलियों की रंगबिरंगी दुनिया	विज्ञान भारती, बाल विशेषांक १९८०
५७.	पौधों के लिये सूक्ष्ममात्रिक तत्व	आविष्कार जून १९८०
५८.	ये भावी उर्वरक सूक्ष्ममात्रिक तत्व	खेती, उर्वरक विशेषांक १९८०
५९.	मृदा प्रदूषण	इंस्टीट्यूट आफ इंजीनियर्स जरनल हिन्दी अप्रैल १९८१, अंक ६१

६०.	भूमि उर्वरता की आधुनिक परिकल्पना	इंस्टीट्यूट आफ इंजीनियर्स जरनल हिन्दी अप्रैल १९८१, अंक ६२
६१.	धातुओं की रानी बहु उपयोगी चांदी	मनिता फरवरी १९८१
६२.	रसोई के धातु	मनिता जनवरी १९८१
६३.	आवश्यक उपयोगी घातक लोहा	मनिता जनवरी १९८१
६४.	हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य	स्मारिका सेन्ट्रल बैंक आफ इंडिया १९८१
६५.	भावी मानव का स्वरूप कैसा होगा	पी.टी.आई.फीचर्स २१ अगस्त १९८२
६६.	डार्विन की मृत्यु शती	पी.टी.आई.फीचर्स १० अप्रैल १९८२
६७.	प्रदूषण की चपेट में बच्चे	पी.टी.आई.फीचर्स १२ जून १९८२
६८.	जलवायु के बदलने की सम्भावना	पी.टी.आई.फीचर्स २४ अगस्त १९८२
६९.	ऊर्जा का संकटः विविध चुनौतियां	पी.टी.आई.फीचर्स दिसम्बर १९८३
७०.	ऊर्जा संकट	पी.टी.आई.फीचर्स १९८३
७१.	घरेलू ऊर्जा के स्रोतः हरे भरे जंगल	दि इन्स्टीट्यूशन आफ इंजीनियर्स जरनल हिन्दी खंड, दिसम्बर १९८४
७२.	पर्यावरण की शुद्धताः एक गम्भीर सामाजिक दायित्व	ज्ञानवापी नवम्बर-दिसम्बर १९८४
७३.	प्रदूषणकारी तत्व	विज्ञान गरिमा सिंधु १९८४
७४.	कृषि के क्षेत्र में कम्प्यूटरों की भूमिका	इंस्टीट्यूशन आफ इंजीनियर्स जरनल हिन्दी, २ दिसम्बर १९८५
७५.	अल्प परिचित सूक्ष्ममात्रिक तत्व	विज्ञान गरिमा सिंधु, १९८७
७६.	मिट्टी के महान पारखी प्रो० नील रत्न धर	प्रभात खबर रांची, १९८७
७७.	भारतीय कृषि में सुधार की आवश्यकता	दि इंस्टीट्यूशन आफ इंजीनियर्स जरनल अप्रैल १९८७
७८.	विज्ञान की उच्च शिक्षा का माध्यम	अध्यक्षीय भाषण हिन्दी साहित्य सम्मेलन ३ मई १९८८
७९.	लोकप्रिय विज्ञान लेखनः कांटों भरा रास्ता	अमृत प्रभात १२ फरवरी १९८९
८०.	जैवनाशियों के हानिकारक अवशेषी प्रभाव से बचाव	विज्ञान गरिमा सिंधु १९९१
८१.	पर्यावरण को जल प्रदूषण से कैसे बचावें	रेडियो वार्ता १४ जनवरी १९९२
८२.	समुद्री पर्यावरण में व्याप्त प्रदूषण	आविष्कार जून १९९३
८३.	सुदूर संवेदन	विज्ञान गरिमा सिन्धु अंक १५ १९९३
८४.	Sludge application threat to soil environment	Science Promoter January 1993
८५.	Energy plantation by S.G. Mishra & P.C. Srivastava	Chapter in 'Problem of Wasteland and Forest Ecology in India' Ashish Publishing House New Delhi
८६.	वनों के नष्ट होने का कारण	कृषि लोक जोधपुर अप्रैल १९९४
८७.	मृदा प्रदूषण और केंचुये	विज्ञान गरिमा सिंधु अंक १६, १९९४

८८.	प्रदूषण नियंत्रणः एक विवेचन	विज्ञान गरिमा सिंधु अंक १७, १९९५
८९.	फास्फोबैक्ट्रिन, मृदा में फास्फोरस उपलब्धता का पर्याय	आविष्कार जुलाई १९९५
९०.	विकासः पर्यावरण की कीमत पर	इंस्टीट्यूशन आफ इंजीनियर्स जरनल सितम्बर १९९५
९१.	खाद्य समाधान : साधन एवं सम्भावनायें	आविष्कार अगस्त १९९५
९२.	पर्यावरण प्रदूषण : प्रौद्योगिकी का दुष्परिणाम	विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी के नये आयाम विशेषांक १९९५
९३.	छत्रक उत्पादनः खाद्य भी औषधि भी	विज्ञान गरिमा सिंधु अंक १८. १९९६
९४.	हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के संवर्धक डॉ० गोरख प्रसाद	अमृत प्रभात २८ मार्च, १९९६
९५.	कृषि के आचार्य पराशर मुनि	विज्ञान भारती १९९७
९६.	हिन्दी में विज्ञान लेखन का लक्ष्य : स्वस्थ परंपरा	हिन्दुस्तानी भाग ५९, अंक २ १९९८
९७.	पर्यावरण हमारे आसपास	गांव की नई आवाज जून १९९९
९८.	विज्ञान लोकप्रियकरण में साहित्यिक पत्रिकाओं का योगदान	क्षितिज (बम्बई) १९९९
९९.	हिन्दी में विज्ञान लेखन का भावी स्वरूप	क्षितिज १९९९
१००.	मृदा प्रदूषण की गहराती समस्या	खेती १९९९
१०१.	भोजन एवं भोज्य पदार्थों में विषाक्तता : कारण एवं निवारण	Cure, इलाहाबाद
१०२.	पर्यावरणमित्र जैव प्रौद्योगिकीः वर्मीकल्चर	राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी १२-१३ सितम्बर २००० औद्योगिक विष अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ
१०३.	वैज्ञानिक शब्दावली के विकास में प्रारम्भिक प्रयास	विज्ञान गरिमा सिंधु, शब्दावली विशेषांक नं० ३२-२०००
१०४.	इक्कीसवीं सदी के लिए जैव प्रौद्योगिकी साहित्य की रचना	विज्ञान गरिमा सिंधु, जैव प्रौद्योगिकी विशेषांक ३३-२०००
१०५.	प्राचीन काल में कृषि का महत्व	जिज्ञासा २०००
१०६.	पर्यावरण संरक्षण हमारा प्रमुख दायित्व	कृषि महाविद्यालय वकेवर, इटावा की पत्रिका २०००
१०७.	अनुसंधान के क्षेत्र में हिन्दी का प्रवेश	जिज्ञासा २०००
१०८.	हिन्दी में विज्ञान लेखन का क्रमिक विकास	भाषा परिचय जयपुर २००१
१०९.	पर्यावरणीय प्रदूषण के बीच जीने की कला	पर्यावरण नई दिल्ली २००१
११०.	विज्ञान लेखन से हिन्दी समर्थ बनी है	एन सी एल आलोक पुणे २००१
१११.	पुराणों में सूर्य का वर्णन	विकल्प देहरादून २००१
११२.	मिट्टी को भी पहचानें	आविष्कार फरवरी २००१
११३.	प्रदूषण से संदूषण तक	आविष्कार जून २००१

डॉ० मिश्र के प्रकाशित शोधपत्रों की सूची

List of Research Papers Published by Dr. S.G. Misra

1. Misra, S.G. and Dhar, N.R. (1955). Improvement of calcium phosphate status of soils in relation to the loss of lime by leaching. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 24, 305-14.

2. Misra, S.G. (1955). Repeated adsorption of sodium carbonate from solution by a normal soil and its subsequent leachings with water. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 24, 670-76.

3. Misra, S.G. (1956). Effect of repeated application of ammonium chloride on some of the soils properties. J. Indian Soc. Soil. Sci. 4, 57-60.

4. Misra, S.G. and Dhar, N.R. (1956). Adsorption of monocalcium phosphate by soils, bentonites, lignite, hydrated oxides and oxides of iron, aluminium and chromium. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 25, 403-8.

5. Misra, S.G. and Dhar, N.R. (1956). Mechanism of lime saving by the applications of phosphates. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 25, 341-54.

6. Misra, S.G. and Dhar, N.R. (1956). Mechanism of phosphate leaching from soils. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 25, 421-32.

7. Misra, S.G. and Dhar, N.R. (1957). Behaviour of alkali soils in fixing monocalcium phosphate from solutions. Proc. Nat. Acad. Sci., 26, 120-25.

8. Misra, S.G. and Dhar N.R. (1957). Adsorption of phosphate by a calcareous sand. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 26,106-11.

9. Misra, S.G. and Mitra, S.P. and Panda, N. (1957). Adsorption of glucose by calcium bentonite. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 26, 72-74.

10. Misra, S.G. (1958). Effect of repeated washing with distilled water on some chemical properties of soils. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 1, 45-50.

11. Misra, S.G. (1958). Adsorption and fixation of potassium under wet conditions. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 1, 103-10.

12. Misra S.G (1958). Repeated washing of lignite. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 1, 175-80.

13. Misra S.G (1958). Adsorption and fixation of potassium from potassium phosphate under wet condition. Indian. Soc. Soil. Sci. 6, 48-52.

14. Misra S.G (1958). Production of alkalinity in normal soils with special reference to the formation of potassium soil. Proc. Nat. Acad. Sic. (India), 27, 91-102.

15. Misra S.G. and Srivastava K.C. (1959). A note on the adsorption of sucrose by soil, bentonite and kaolinite. Vij. Par. Anusandhan Partika, 2, 61-63.

16. Misra S.G. (1959). Repeated washing of soils with neutral salt solution. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 28, 78-85.

17. Misra S.G. (1959). Effect of sucrose on the availability of phosphate materials mixed with a soil. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 28. 97-106.

18. Misra S.G. and Prasad C. (1959). Adsorption of urea by soils, clay minerals etc. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 28, 155-60.

19. Misra S.G (1960). Studies on phosphate adsorption by lignite. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 3, 165-71.

20. Misra S.G. and Srivastava G.P. (1960). Effect of salts on the release of adsorbed urea by soils. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 29, 163-65.

21. Misra S.G. and Jaiswal S.P. (1960). Study of iodide adsorption by soils and compost. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 3, 59-63.

22. Misra S.G. (1960). A note on the determination of available phosphate of soils by alkaline mothods. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 3, 65-72.

23. Misra S.G. (1961). Studies on the adsorption of phosphates by soils. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 44, 31-48.

24. Misra S.G. and Sharma D.P. (1961). Adsorption of iodide and iodine by phosphatic materials. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 4, 65-71.

25. Misra S.G. and Sharma M.D. (1961). Studies on release of adsorbed copper by soils and compost. Soil and Plant Food (Japan), 6, 103-5.

26. Misra S.G (1961). Effect of leaching soils with divalent cations. Soil Sci. & Plant Nutri. (Japan), 7, 87-89.

27. Misra S.G and Benjamin I. (1962). On the adsorption of arsenite by soils and compost. Indian J. Appl. Chem. 25, (2-3), 99-100.

28. Misra S.G (1962). Studies on the adsorption of thio-urea by soil and compost. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 5, 181-86.

29. Misra S.G and Tiwari R.C. (1962). Studies on the adsorption and release of copper by soils. Effect of cations. J. Soil. Sci. & Plant Nutri. (Japan), 8, 1-4.

30. Misra S.G and Tiwari R.C. (1962). Effect of cations on the adsorption and release of Cu^{++} by compost. Proc. Nat. Institute Sci. (India), 28, 815-19.

31. Misra S.G and Misra A.L. (1962). A note on the adsorption of thiocynate ions. J. Indian Soc. Sci. 11, 247-56.

32. Misra S.G (1963). Studies on the role of phosphate in modifying some of the soil properties, J. Indian Soc. Sci., 11, 247-56.

33. Misra S.G and Tiwari R.C. (1963). Studies on arsenite-arsenate system. Adsorption of arsenate. Soil Sci. & Plant Nutri. (Indian), 9(6), 10-13.

34. Misra S.G and Tiwari R.C. (1964). Studies on retention of zinc in soils of U.P. J. Indian Soc. Sci., 12, 301-9.

35. Misra S.G and Tiwari R.C. (1964). Effect of fertilizers and pH on retention of copper by soils. J. Indian Soc. Soil Sci., 12, 289-96.

36. Misra S.G and Tiwari R.C. (1964). Retention of applied micronutrients by compost. J. Indian. Soc. Soil Sci., 12, 443-48.

37. Misra S.G and Tiwari R.C. (1964). Response of copper addition on wheat growth. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 7, 33-42.

38. Misra S.G and Tiwari R.C. (1966). Studies on the chemistry of copper and zinc applied to three soils-a comparative study. Soil Sci. and Plant Nutri. 12(3), 6-10.

39. Misra S.G and Tiwari R.C. (1964). Retention of applied Cu^{++} by soils. Effect of carbonate, organic matter and base saturation. Plant and Soil, 24(1), 54-62.

40. Misra S.G and Tiwari R.C. (1966). Retention and release of copper and zinc by Indian soils. Soil Sci., 101 (6) 465-71.

41. Misra S.G and Mishra P.C. (1966). Studies on valence variation of manganese in soils. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 9, 35-44.

42. Misra S.G and Sharma D.P. (1966). On the homoionic soils derived from alkali soils of U.P., Vij. Par. Anusandhan Partika, 9, 109-205.

43. Misra S.G., Tiwari R.C., Misra P.C. and Misra K.C. (1967). Trace elements in soils of U.P. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 10, 17-23.

44. Misra S G. and Tiwari R.C. (1967). Effect of Spartin on Mexican wheat. Plant Food Review, 7(7), 1-2.

45. Misra S.G. and Sharma D.P. (1967). Wonderful role of Spartin in reclaiming saline and alkali soils, Plant Food Review, 7 (17), 3-7.

46. Misra S.G. and Sharma D.P. (1967). Growth experiments in chemically reclaimed saline and alkali soils. I.N. Investigations Agronomicas, 27 (57), 197-208.

47. Misra S.G. and Mishra P.C. (1967). Forms of manganese as affected by various factors. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 9, 147-59.

48. Misra S.G. and Mishra P.C. (1968). Effect of anions on the retention of manganese applied to soils. J. Indian Soc. Soil Sci. 16, 173-78.

49. Misra S.G. and Sharma D.P. (1968). Studies on some saline alkali soils of Allahabad. J. Indian Soc. Soil. Sci., 16, 271-75.

50. Misra S.G. and Ojha S.K. (1968). Role of complexants in decreasing P retention. Technology, 5, 108-12.

51. Misra S.G. and Singh B. (1968). Effect of Spartin on paddy in black and saline soils of U.P., Plant Food Review, 8(9), 2-5.

52. Misra S.G. and Singh B. (1968). Effect on Spartin on wheat in alluvial and red soils of U.P. Plant Food Review. 8(9), 2-5.

53. Misra S.G. and Sharma D.P. (1968). Usars can be converted into good cultivable land. Indian Farming. May Issue.

54. Misra S.G and Mishra P.C. (1969). Effect on cations on the adsorption and release of Mn^{++} by soils. Part I. Proc. Nat. Inst. Sci. (India), 35, 406-13.

55. Misra S.G and Mishra P.C. (1969). Effect of cations on the adsorption and release of Mn^{++} by soils. Part II Proc. Nat. Inst. Sci. (India), 35, 428-33.

56. Misra S.G and Sharma D.P. (1969). Acidic leaching and reclamation of saline-alkali and alkali soils. Research Bull. Faculty of Agr. Shoubra El Kheima (Cairo), 25th May, 3-10.

57. Misra S.G and Mishra P.C. (1968). Determining Mn availability in certain soil groups of U.P. Proc. Nat. Acad. Sci. (India), 38(A), 50-56.

58. Misra S.G and Mishra P.C. (1969). Availability of Mn as affected by carbonates in soils. Plant and Soil, 30, 290-98.

59.Misra S.G and Mishra P.C. (1969). Effect of organic matter and iron oxide on the availability of added Mn. Plant and Soil, 30.

60. Misra S.G and Mishra P.C. (1968). Response of added Mn to barley plants. Boletin Investigations Agronomicas (Madrid), 28 (59), 161-72.

61. Misra S.G and Sharma D.P. (1968). Leaching homoionic soils derived from native saline alkali soils. Boletin Investigations Agronomicas (Madrid), 28 (59), 173-84.

62.Misra S.G and Ojha S.K. (1969). Release of retained P by various extractants J. Ind. Soc. Soil Sci. 17, 67-70.

63. Misra S.G and Ojha S.K. (1969). Fate of soluble phosphates applied to soils. Indian J. Agri. Sci. 38, 837-44.

64. Misra S.G and Ojha S.K. (1969). P distribution in black and red soils of U.P. Madras Agr. Jour. 56 (7), 455-61.

65. Misra S.G., Ojha S.K. and Singh B. (1969). Effect of various N fertilizers on the uptake of N and P by paddy crop in black soil from eastern U.P. Madras Agri. Jour., 56(7), 435-37.

66. Misra S.G and Sharma D.P. (1968). Soil permeability studies in reclaimed saline and alkali soils. J. Soil Water Conservation (India), 16(3), 11-14.

67. Misra S.G and Ojha S.K. (1969). Application of soluble phosphates to soils. Food Farming and Agri. 1, 40-43.

68. Misra S.G and Mishra K.C. (1969). Total and available molybdenum in soils of Uttar Pradesh. Boletin Inst. National de Invest. Agro. (Madrid), Vol. 60.

69. Misra S.G. and Mishra K.C. (1969). Effect of some fertilizers and mocronutrients on added molybdenum in soils of Uttar Pradesh. Boletin Inst. Nacional de Invest. Agro. (Madrid), 60.

70. Misra S.G and Mishra P.C (1969). Studies on the availability of MnO_2 added to soils. Boletin Inst. Nacional de Invest. Agron. (Madrid), 60.

71. Misra S.G. and Singh B. (1969). Response of different nitrogenous fertilizers on vegetative growth of Taichu Native Paddy. Food Farming & Agr. Vol. II, 13-15.

72. Misra S.G. and Mishra K.C. (1969). Effect of complexants on retention and release of Molybdenum applied to soils under water-logged condition. Technology. 6, 140-42.

73. Misra S.G. and Singh B. (1969). Volatilization losses of nitrogen from different nitrogenous fertilizers added to soils. Ind. J. Agronomy, 14, 214-217.

74. Misra S.G. and Singh B. (1968). Relative efficiencies of Ammonium sulphate and Urea in black and saline soils of U.P. under Paddy. Ind. J. Agron. 13, 224-229.

75. Misra S.G. and Kishra M.K. (1969). Availability of copper in some soils of Uttar Pradesh. J. Ind. Soc. Soil Sci. 17, 283-84.

76. Misra S.G. and Tiwari R.C. (1969). Testing the fertility status of Black and Red soils from South-East Uttar Pradesh. J. Ind. Soc. Soil Sci. 17, 167-70.

77. Misra S.G. and Ojha S.K. (1970). Retention of phosphate by some soils of U.P. Agrochimia, 44, 137-147.

78. Misra S.G. (1970). Effect of crop residues and bulky organic manures on the availability of micronutrients A Review. Food Farming & Agric. II, 19-32.

79. Misra S.G. and Mishra P.C. (1970). Studies on the forms of retained Mn in soils. J. Indian Soc. Soil. Sci. 18, 147-50.

80. Misra S.G. and Tripathy N. (1970). A comparative study of some trace elements in Bhat and Alluvial soils. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 13, 13-18.

81. Misra S.G. and Sharma D.P. (1969). Studies on saline, saline alkali and alkali soils. Part II, Proc. Nat. Inst. Sci. 35, 138-45.

82. Misra S.G. and Sharama D.P. (1970). Suitability of saline water as a reclaimant for alkali soils of U.P. Part I. Food Farming & Agric. II, 29-32.

83. Misra S.G. and Sharma D.P. (1970). Suitability of saline water as a reclaimant for alkali soils of U.P. Part II, Agron. Nat. Inst. Sci., 36, 211-222.

84. Misra S.G. et. al. (1970). A note on the uptake of molybdenum by wheat as affected by N and P fertilizeres. Indian J. Agro. 15, 191-92.

85. Misra S.G. and Singh B. (1970). Effect of different treatments on volatilization losses of nitrogen. Boletin Inst. Nacional de Invest. Agron. (Madrid) No. 62, 91-98.

86. Misra S.G. and Sharma D.P. (1970). Use of Spartin as a reclaiming agent. Univ. Allahabad Studies, 2, 243-50.

87. Misra S.G. and Singh B. (1970). Volatilization loss and transformation of ammonium sulphate in calcareous soils. Ibid, 2, 219-222.

88. Misra S.G. and Mishra K.C. (1970). Molybdenum retention in soils in presence of free ion oxide and calcium carbonate. Technology, 8, 4, 2-45.

89. Misra S.G. and Mishra K.C. (1970). Uptake of Mo by mung and sunhemp under different treatments from a black soil. Food Farming and Agriculture, III (5), 2-7.

90. Misra S.G., Ojha S.K. and Gupta B.P. (1970). Effect of prolonged waterlogging on P retention by black and red soils of U.P. : Symposium on recent Adv. in crop production, U.P., Institute of Agric. Sciences, pp. 117-122.

91. Misra S.G. and Singh B. (1971). Efficiency of various nitrogenous fertilizers on height, tillers, dry weight and nitrogen uptake by paddy. Food Farming and Agriculture, III, 15-18.

92. Misra S.G. and Gupta B.P. (1971). Effect of alternate wetting and drying on phosphate retention. Technology, 8, 154-157.

93. Misra S.G. and Tripathy N. (1971). Total and available iron in some Indian soils. Proc. Acad. Sci. India. 41(4), I & II, 13-16.

94. Misra S.G. and Khan T. (1971). Effectiveness of some chemical amendments to reclaim waterlogged saline sodic soils. INIA/Ser. General (Spain)/N. 1, 195-199.

95. Misra S.G. and Gupta B.P. (1971). Distribution of added P in soils as influenced by Fe^{+3} and Al^{+3} ions. INIA Ser. General (Spain) N.I., 201-201.

96. Misra S.G. and Tripathi N. (1971). A note on selenium content of some Indian soils. INIA Ser. General (Spain), N.I., 209-214.

97. Misra S.G. and Mishra K.C. (1972). Distribution of total and available Molybdenum in soils of U.P. Ind. Soc. Soil Sci. 20, 193-196.

98. Misra S.G. and Tripathi, N. (1972). A note on selenium status of surface soils. Ind. J. Agri. Sci. 42, 182-83.

99. Misra S.G. and Ojha S.K. (1972). Pattern of P distribution in soils saturated with single cat-ions. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 15, 105-15.

100. Misra S.G. and Pande P. (1972). Nickel as a trace element in soils of U.P. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 15(4), 193-196.

101. Misra S.G. and Pandey R.S. (1972). Zinc phosphate interaction in Bhat soils. Technology, 9(2), 183-86.

102. Misra S.G. and Tripathy N. (1972). Titanium status of Indian Soils. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 16(2), 115-117.

103. Misra S.G. and Mishra K.C. (1972). Retention and release of applied Mo to soils under permanent waterlogged condition. J. Indian Soc. Soil Sci. 20(3), 250-62.

104. Misra S.G., Mishra P.C. and Pandey R.S. (1973). Availability of soil copper as affected by zinc additions. Bhartiya Krishi Anusandhan Patrika (Karnal), 1, 1-5.

105. Misra S.G. and Pandey P. (1973). Organic iron in relation to organic matter. Bhartiya Krishi Anusandhan Patrika, 1, 23-28.

106. Misra S.G. and Pandey G. (1977). Availability of Zn as affected by Complexants. Allahabad Farmer, 48(2), 115-18.

107. Misra S.G. and Pandey P. (1978). Distribution of Ni in soils of U.P. Van Vigyan, 16-18.

108. Misra S.G. and Dwivedi R.S. (1978). Micronutrient Interaction. Rasayan Sameeksha, 2, 91-104.

109. Misra S.G. and Pandey G. (1979). Effect of organic matter on the uptake of Lead by maize crop. Bangladesh J. of Biol Sci. 3(1), 31-35.

110. Misra S.G. and Pandey G. (1979). Study of Zn-P interaction with wheat at test crop. Allahabad Farmer, 50(3), 235-46.

111. Misra S.G. and Pandey G. (1979). Availability of lead as affected by lime and phosphate in Alluvial Soil. Allahabad Farmer, 50(2), 91-97.

112. Misra S.G. and Dwivedi R.S. (1979). Residual effect of Cu in combination with N on the yield and uptake of some micro and macro nutrients by maize crop. J. Soil and Water Conservation India, 29(1-4), 61-67.

113. Misra S.G. and Tripathy S.S. (1980). Availability and fixation of applied iron and its effect on various forms of soil Mn. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 23, 125-133.

114. Misra S.G. and Dwivedi R.S. (1980). Effect of Cu-P interaction on the availability of iron and Mn. An incubation study. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 23(2), 183-186.

115. Misra S.G. and Pathak S.P. (1980). P status soils of Allahabad Division. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 23(4), 365-7.

116. Misra S.G. and Murlidhar S. (1980). Effect of Fe-P interaction on the availability of nutrients in presence of complexant. An incubation study. Nat. Acad. Sci. Letters, 3, 37-48.

117. Misra S.G. and Joshi H.C. (1980). Influence of temp. on adsorption of three organphosphorus pesticides by soil. Nat. Acad. Sci. Letters, 3, 301-304.

118. Misra S.G. and Gupta A.K. (1981). Studies on the depletion pattern of available nutrients. Univ. Allahabad Studies 13, 163-166.

119. Misra S.G. and Pathak S.P. (1981). Effect of waterlogging on native inorganic P fractions. Nat. Acad. Sci. Letters, 4, 133-139.

120. Misra S.G. and Gupta A.K. (1981). Influence of pesticides on growth and metabolic changes of germinating seeds. Nat. Acad. Sci. Letters 4(2), 78-82.

121. Misra S.G. and Gupta A.K. (1981). Fate of organophosphate pesticides in Soils. Rasayan Samiksha, 3-4, 69-87.

122. Misra S.G and Pathak S.P. (1982). Phosphate fertilization in alluvial soils of Allahabad Division. Interrelation in water soluble P, absorbed P and Olsen's P. J. Indian Chem. Soc. 59, 466-69.

123. Misra S.G. and Jaiswal P.C. (1982). Adsorption of Fe by spinach on Chromium (VI) treated Soil. J. Plant. Nutrition, 5, (4-5), 755-60.

124. Misra S.G and Gupta A.K. (1982). Effect of pesticides on protein fractionation during germination of mung. Nat. Acad. Sci. Letters, 5(12), 411-414.

125. Misra S.G and Gupta A.K. (1982). Effect of Systemic pesticides on germination and initial growth of seedlings of mung and cowea. Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 25, 227-33.

126. Misra S.G and Gupta A.K. (1983). Growth and metabolic activity in paddy and mung as affected by pesticides. Pesticides, 17, 3-7.

127. Misra S.G and Joshi H.C. (1983). Adsorption of three organophosphorus pesticides in different soils. Environ. and Ecol. 1, 75-81.

128. Misra S.G and Gupta A.K. (1983). Effect of Pesticides on amylase activity, starch and soluble sugar content during germination, Univ. Allahabad Studies, 15(1), 83-92.

129. Misra S.G and Gupta A.K. (1983). Growth and metabolic activity in paddy and mung as affected by pesticides. Ibid. 17(2), 3-5.

130. Misra S.G and Jaiswal P.C. (1984). Absorption of Mn by spinach on Cr (VI) treated soil. Indian Journal Plant Nutri. 3, 167-172.

131. Misra S.G and Tripathi S.S. (1984). Forms and distribution of iron and Mn in soils of Bundelkhand. Univ. Allahabad Studies, 16(1-5), 295-305.

132. Misra S.G and Jaiswal P.C. (1985). Effect of soil applied Cr on the growth and compostion of weeds in spinach. Indian J. Agri. Sci. 55(5), 378-80.

133. Misra S.G and Gupta A.K. (1985). Effect of organophosphorus insecticides on the growth and metabolism during germination of mung and cowpea, Pesticides, 19, 31-33.

134. Misra S.G., Gupta A.K. and Verma M.K. (1985). Studies on uptake and dissipation of carbaryl in spinach crop. J. Current Bio. Sci. 2(3), 37-40.

135. Misra S.G and Singh U. (1985). Effect of ziram, atrazine and 2-4D on the germination of triticale and Vijaya Wheat. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 28(4), 380-383.

136. Misra S.G. and Dwivedi P. (1985). Effect of B, Mn & IIA on the sugar percentage in three crops used as animal feeds. Univ. Allahabad Studies, 17(1), 45-53.

137. Misra S.G. and Tiwari A. (1985). Degradation of contact metallic fungicides in soils treated with urea. Univ. Allahabad studies, 17(NS) Feb.

138. Misra S.G. and Srivastava C.P. (1986). Quasi-essential trace-elements : An appraisal. Univ. Allahabad Studies 18 (2), 31-40.

139. Misra S.G. and Tiwari A. (1987). Persistence of contact metallic fungicides in soil under acid and alkali treatment. In book Ecology of Rural India. 216-218.

140. Misra S.G., Singh N. and Gupta A.K. (1987). Residual acculumates of organophosphorous insecticides in onion and garlic. In book Ecology of Rural India. 189-197.

141. Misra S.G. and Singh Umesh (1987). Herbicides : scope and hazards. In book Ecology of Rural India. 189-197.

142. Misra S.G., Gupta A.K. and Singh Shailendra (1987). Effect of Carbofuran on symbiotic nitrogen fixation. In book Ecology of Rural India. 198-203.

143. Misra S.G. and Dwivedi P. (1986). Effect of Boron, Manganese and Indole Acetic Acid on the sugar percentage in three root crops used as animal feeds. Univ. Allahabad Studies, 18, 163-171.

144. Misra S.G. (1987). Contaminated soils and their management. Univ. Allahabad Studies, 19, 43-53.

145. Misra S.G. and Misra U.S. (1987). Distribution of Earthworms in sewage irrigated soil. Univ. Allahabad Studies, 19, 29-36.

146. Misra S.G. and Vinay Kumar (1987). Influence of Pb and Ca interaction on leafy vegetable (fenugreek) under sewage water irrigated condition. Univ. Allahabad Studies, 19, 83-88.

147. Misra S.G. and Shukla P.K. (1987). Removal of Cd and Pb by various crops. Univ. Allahabad Studies, 19, 117-123.

148. Misra S.G. and Shukla P.K. (1987). Long term effect of Cd x Pb interactions on crops. Univ. Allahabad Studies, 19, 1-16

149. Misra S.G., Tiwari A. and Tiwari K.N. (1987). Critical limits for potassium in soils and plants. Univ. Allahabad Studies, 19, 155-159.

150. Misra S.G. and Tiwari S.D. (1987) Ameliorating effect of rock phosphate on the toxicity of sludge Univ. Allahabad Studies. 19 (N.S.) No.1-6.

151. Misra S.G. and Dinesh Mani (1987). Uptake of heavy metals (Cd, Cr, Pb and Zn) by lettuce crop in presence of sludge and Mussoorie Rock Phosphate. Univ. Allahabad Studies. 19 (N.S.) No. 1-6. 89-87.

152. Misra S.G., Srivastava C.P. and Dinesh Mani (1988) New dimensions in sewage irrigation Vij. Par. Anusandhan Patrika, 31, No. 4. 185-189.

153. Misra S.G. and Singh U. (1988). Effect of easily decompasable organic matter on the degradation of Atrazine in soil under various moisture levels. Indian J. Agri. Chem. 21, 57-60.

154. Misra S.G. and Dinesh Mani (1988). Use of sewage water reinforced with Mussorie Rock Phosphate and organic matter, Vij. Par. Anusandhan Patrika. 32, 4. 39-43.

155. Misra S.G., Tiwari A. and Singh Umesh (1989). Land Pollution. in book New World Environment Series Ed. I. Mohan 333-339.

156. Misra S.G., Srivastava C.P. and Shukla P.K. (1989). Sewage pollutants and their interaction. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 32, 9-14.

157. Misra S.G. and Dinesh Mani (1990). Use of sewage water and sludge with Mussorie Rock Phosphate. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 33, 3. 193-199

158. Misra S.G. and Dinesh Mani (1990). Utilization of sewage water with farm yard manure and Mussorie Rock Phosphate. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 33, No. 4. 263-267.

159. Misra S.G. and Dinesh Mani (1991). Study of the quality of domestic sewage and sludge. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 34, No.1-2, 83-90.

160. Misra S.G. and Tiwari S.D. (1991). Effect of sludge application along with Mussorie Rock Phosphate. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 34, 1-2, 97-101.

161. Misra S.G. and Tiwari S.D. (1991). Effect of sludge on plant growth. Paper presented in the SAARC countries conference held at Feroze Gandhi College, Rae Bareili. 23-24 Feb.

162. Misra S.G. and Dinesh Mani (1992). Heavy Metal contamination in the sewage sludge of Mumfordganj, Allahabad. Agricultural Science Digest, 12(3): 159-162

163. Misra S.G., Mishra S.D. and Dinesh Mani (1992). Quality of sewage water of Sheila Dhar Institute Experimental Farm, Allahabad for irrigating purposes. Indian Environmental Protection. 12, 1 54-56

164. Misra S.G. and Tiwari S.D. (1992). Effect of different doses of sludge on crop growth, Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 35, 2. 105-109.

165. Misra S.G. and and Tiwari S.D. (1992). Effect of continuous application of sludge on soils pollution. Indian Jour. of Environmental Protection : Kalpana Corporation, B.H.U. Varanasi.

166. Misra S.G. and Shukla P.K. (1991). Effect of Cd x Pb interaction on their DTPA-extractability from soil after growing crops. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 35, 269-274.

167. Misra S.G. and Vinay Kumar (1992). Loss due to lead on leafy vegetables. Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 35, 37-42.

168. Misra S.G. and Misra U.S. (1992). Variation in the number, length and weight of earthworms under different soil ecosystems. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 35, 187-194.

169. Misra S.G. and Pawan Kumar (1992). Effect of interaction of lead and iron in presence of organic matter and rock phosphate on biomass and uptake of heavy metals by Fenugreek crop. Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 35, 169-173.

170. Misra S.G. and Dinesh Mani (1993). Total addition of heavy metals in soil through sewage sludge. Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 36, 1. 69-73.

171. Misra S.G. and Dinesh Mani (1993). Effect of sewage and sludge reinforced with Mussoorie Rock phosphate on the growth, yield and uptake of heavy metals by lettuce. Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 36, No. 3. 201-207.

172. Misra S.G. and Dinesh Mani (1993). Depthwise distribution of heavy metals in sewage suldge soils of Sheila Dhar Institute Experimental Farm, Allahabad. Indian J. of Environmental Protection, 13, 5. 371-373.

173. Misra S.G. and Dinesh Mani (1993). Acculumation of heavy metals in sewage sludge irrigated soil of KAPG Experimental Farm, Allahabad. Paper accepted for annual session of National Academy of Sciences. India, Allahabad, held at Indian Institute of Science, Balgalore, Nov. 24-26.

174. Misra S.G. and Pawan Kumar (1993). Studies on minimizing the toxic effect of sewage sludge. Indian J. Environment Protection, 13, 925-928.

175. Misra S.G. and Dinesh Mani (1994). Uptake of heavy metals by vegetable crops grown in sewage irrigated and sludge added soils. Curr. Agric. 18, 1-2, 49-53.

176. Misra S.G., Pandey S.K. and Dinesh Mani (1994). Uptake of heavy metals by coriander crop in presence of phosphatic fertilizer in a sludge treated soil. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 37, 231-234.

177. Misra S.G and Dinesh Mani (1994). A case study of metallic pollution caused by continuous use of sewage and sludge at the experimental farm of Sheila Dhar Institute of Soil Science, Allahabad. Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, 37, 4. 259-267.

178. Misra S.G. and Dinesh Mani (1995). Uptake of pollution from sewage sludge as affected by phosphate addition. Environment and Ecology. 13, (2) : 297-299.

179. Misra S.G., Singh A.K., Dinesh Mani and Pandey D.D. (1995). Effect of sewage enriched with iron on the growth of spinach and of heavy metals. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 38, 219-233.

180. Misra S.G., Mishra U.S. and Dinesh Mani (1995). Earthworms as affected by metallic pollution. New Approaches in Agricultural Technology, 3, 631-636.

181. Misra S.G., Tiwari S.D. and Dinesh Mani (1995). Response of sludge alongwith rock phosphate on the biomass and heavy metals uptake by spinach. Curr. Agri. 19, 1-2, 59-61.

182. Misra S.G., Tiwari Ashok and Tiwari K.N. (1995). Soil test methods & critical limits of potassium in soil and plants for wheat grown in Typic ustrochrepts. J. Indian Soc. Soil Sci. 43 (3), 408-413.

183. Misra S.G. and Pandey S.K. (1996). Effect of heavy metal enriched sludge on radish. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 39, 27-31.

184. Misra S.G., Dinesh Mani and Tiwari S.D. (1996). Soil Pollution through sewage sludge. A review. Proc. Nat. Acad. of Sci. India, 66 (B) I, 35-52.

185. Misra S.G. and Dinesh Mani (1997). Interaction between Cadmium and Calcium. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 40, 4, 221-228.

186. Misra S.G. and Dinesh Mani (1998). Soil Pollution through domestic sludge. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 41, 1, 21-29.

187. Misra S.G, Dinesh Mani and Tiwari S.D. (1998). Relevance of sewage-sludge in agriculture in 21st century. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 41,4, 259-264.

188. Misra S.G., D.D. Pandey and Dinesh Mani (1999). Uptake of heavy metals by spinach on a domestic sewage irrigated soil. Vij. Par. Anusandhan Patrika. Vol.

189. Misra S.G. and Dinesh Mani (2000). Interaction between Cadmium and Zinc. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 43, 4, 282-287.

190. Misra S.G. and Dinesh Mani (2000). Distribution of heavy metals in sewage irrigated soils. Vij. Par. Anusandhan Patrika, 44, 2, 161-186.

191. Misra S.G. and Gupta D.K. (1961). Effect of carbonate and chloride on Walkley and Black value of Organic Carbon in soils and compost. J. Indian Sci. Soil Sci. 9, 125-129.

192. Misra S.G. and Sharma D.P. (1971). Studies on saline and alkali soils of Yamuna-Ganges Plains. Zmejiste I. Bijika, 20, 63-70.

193. Misra S.G., Misra P.C. and Misra M.K. (1973). Note on the evaluation of methods for estimating available Copper in soils. Indian J. Agric. Sci. 43(6), 609-610.

194. Misra S.G. and Singh B. (1973). The leaching of applied nitrogen in soil columns. Proc. Indian Nat. Acad. 39A, 78-84.

195. Misra S.G. and Singh B. (1973). Retention and fixation of nitrogen applied to soils. Technology, 10(3-4), 256-60.

196. Misra S.G. and Pandey G. (1974) Effect of different sources of lead on the uptake of nutrients by maize. Bangladesh J. Biol. Sci., 3 (1), 15-16.

197. Misra S.G. and Khan T. (1974). Growth studies with some homoinic soils. Univ. Allahabad Studies, 6 (N.S.), 145-158.

198. Misra S.G. and Pandey P. (1974). Evaluation of a suitable extractant for available iron in soils. Indian J. Agri. Sci. 44(12), 865-870.

199. Misra S.G. and Pandey P. (1975). Effect of phosphate, calcium carbonate and complexants on the availability of iron in soils. Technology, 12(1), 24-28.

200. Misra S.G., Pandey R.S. etc. (1975). Retention and release of Zn by soils. Proc. Nat. Acad. Sci. India, 45A, 31-36.

201. Misra S.G. and and Pandey G. (1975). Total lead in saline and alkali soils of U.P. Vij. Pari. Anusandhan Patrika, 18, 165-168.

202. Misra S.G. and Pandey P. (1975). Availability of soil nickel as affected by Phosphate, Carbonate and Complexants. An. INTA Ser. General 3, 71-80.

203. Misra S.G. and Khan T. (1975). Behaviour of some saline-sodic and adjoining normal soils towards leaching with irrigation water. Proc Nat Acad. Sci. India, 45, A, 101-109.

204. Misra S.G. and and Pandey P. (1976) Zinc status of Dhankar soils. Proc. Nat. Acad. Sci. India. 45A. 21-25.

205. Misra S.G. and Pandey P. (1976). Behaviour of Native iron in waterlogged soils of eastern U.P. J. Indian Soc. Soil Sci. 24(3), 297-302.

206. Misra S.G. and Pandey G. (1976). Zind in saline and alkali soils of U.P. J. Indian Soc. Soil Sci. 24(3), 336-38.

207. Misra S.G. and Pandey G. (1976). Zinc-phosphate in interaction in an alluvial soil. Proc. Nat. Acad. Sci. India, 46A, 17-20.

208. Misra S.G. and Pandey P. (1976). Effect of application of Mn, Cu and Ni on the availability of iron in soils. Van Vigyan, 14, 29-33.

209. Misra S.G. and Pandey P. (1976). Effect of some heavy metal on the availability of Iron. Agrokenima es Talatjan. 25, 81-86.

210. Misra S.G. and Khan T. (1977). Evaluation of Chemical amendments for effective reclamation of saline-sodic and sodic soils. J. Soil and Water Conservation in India, 27, 76-83.

211. Misra S.G., Misra K.C. and Misra P.C. (1977). Retention and release of molybdenum by soils in Book- Molybdenum in the environment. Vol-2, Edited by Chapell and Peterson, New York, pages 597-618.

अनेक नवीन तथ्यों को उजागर किया है। यह ग्रन्थ नागरी प्रचारणी सभा से शीघ्र ही प्रकाशित होकर पाठकों के लिये सुलभ हो जायेगा।

डॉ० मिश्र ने विगत ४५ वर्षों में हिन्दी के भण्डार में श्रीवृद्धि का जो अकिंचन प्रयास किया है उसका निकट भविष्य में मूल्यांकन हो सकेगा।

डॉ० मिश्र का अपने जनपद की माटी से अत्यधिक लगाव रहा है। उसके प्राचीन स्थलों को प्रकाश में लाने के लिये उन्होंने 'अन्तरवेद' पत्रिका का पुरातत्व अंक निकाला। यही नहीं, जनपद के अवधी लोकगीतों और लोककथाओं का संकलन किया। दुर्भाग्यवश उनकी लोकसाहित्य विषयक पाण्डुलिपि अब भी अप्रकाशित है।

उन्होंने जनपद के अनेक रीतिकालीन कवियों के परिचय 'ब्रजभारती' तथा 'पंचदूत' (पाक्षिक) में प्रकाशित किये। समय समय पर वे हिन्दी के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की सूचना विभिन्न पत्रिकाओं में छापते रहे हैं।

१६५७ में जब स्वतन्त्रता संग्राम की शताब्दी मनाई जाने वाली थी तो उन्हें 'जनपद और १८५७' शीर्षक एक पुस्तिका का सम्पादन का कार्य मिला था। उसमें उन्होंने आल्हखंड के तर्ज पर खागा के स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी दरियाव सिंह पर लम्बी सी कविता लिखी। अपने मित्र श्री चन्द्रपाल सिंह के सहयोग से उन्होंने जिला कलेक्ट्रेट से तत्कालीन कागजात के आधार पर जनपद के स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों पर एक खोजपूर्ण पुस्तक का सम्पादन किया : 'दरियाव सिंह तथा १८५७'। ज्ञात हो कि इसके कुछ अंश जिला गजेटियर में सम्मिलित हो चुके हैं।

डॉ० मिश्र का जनपद के साहित्यिक उत्थान में अभूतपूर्व योदान है। इन्होंने हसवा निवासी सन्त चन्ददास की कृतियों पर भी अनेक लेख लिखे और उनके सुझाव पर उनकी कृति 'राम विनोद' पर एक छात्र ने डाक्टरेट की डिग्री के लिये कार्य किया।

डॉ० मिश्र के साहित्यिक निबन्ध हिन्दी की शोध पत्रिकाओं तथा हिन्दी के समाचार पत्रों में छपते रहे हैं। उनका सानिध्य अनेक साहित्यकारों से रहा है जिसमें महापंडित राहुल सांकृत्यायन्र, श्री अगरचन्द्र नाहटा, श्री हरिहर निवास द्विवेदी, डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल, डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा, पं० कृष्णदत्त बाजपेयी, श्रीनारायण दत्त प्रमुख हैं।

डॉ० मिश्र के अनेक शोधपूर्ण निबन्ध कई संग्रहों में सम्मिलित हैं- यथा सूरदास, प्रेमचन्द्र, निराला आदि पर संग्रह।

उन्होंने अनेक साहित्यकारों के अभिनन्दन ग्रन्थों के लिये निबन्ध लिखे हैं। इनमें पं० कृष्णदत्त बाजपेयी, डॉ० किशोरी लाल गुप्त, डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त, डॉ० किशोरी लाल तथा श्री कैलाश कल्पित के अभिनन्दन ग्रन्थ प्रमुख हैं।

उन्होंने हिन्दी के अनेक शोध छात्रों की सहायता भी की है। मृगावती तथा बिहारी सतसई के सम्बन्ध में हालैंड तथा लंदन के विद्वानों से पत्र व्यवहार होता रहा है। उनके पास अनेक साहित्यकारों द्वारा लिखित महत्वपूर्ण पत्र हैं।

यदि महाकवि निराला के साथ डॉ० मिश्र के सानिध्य की चर्चा न की जाये तो उनके द्वारा साहित्य सृजन की समीक्षा अधूरी रहेगी। डॉ० मिश्र १२ वर्षों तक महाकवि निराला के सम्पर्क में रहे। उनके विषय में लगातार निबन्ध लिखते रहे। उनकी असंग्रहीत रचनाओं का संकलन करके उनकी

भूमिका लिख कर उन्हें प्रकाशित कराया। 'चयन', 'गीत गुंज' तथा 'संग्रह' ऐसे ही संकलन हैं। निराला के संसर्ग में रहकर रूसी साहित्यकार चेलिशेव तथा हंगरी के विद्वान ओडोनेल स्मेकाल से पत्र-व्यवहार करते रहे। निराला शताब्दी पर उन्होंने 'महामानव निराला' नामक पुस्तक लिखी है जो प्रभात प्रकाशन, दिल्ली से छपी है। इसमें डायरी के आधार पर निराला का चित्रण किया गया है। डॉ० मिश्र निराला जी पर लेखनी चलाने वाले एक विज्ञानी लेखक हैं। अभी वे 'ऐसे थे हमारे निराला' के प्रकाशन की बाट जोह रहे हैं।

डॉ० मिश्र ने भाषा विज्ञान विषयक व्याख्यान कराने के उद्देश्य से हिन्दुस्तानी एकेडमी को डॉ० उदयनारायण स्मृति व्याख्यान के लिए एकमुश्त राशि प्रदान की है जिससे प्रतिवर्ष शीर्षस्थ भाषाविज्ञानियों के व्याख्यान सम्पन्न हो सकें।

साहित्यिक उपलब्धियां

डॉ० मिश्र ने 'मधुमालती' की भूमिका में पहली बार चुनारगढ़ को मंझन की कर्मभूमि बताकर पं० परशुराम चतुर्वेदी के ऊहापोह को समाप्त किया। डॉ० मिश्र मधुमालती में चुनारगढ़ के वर्णन के साथ जरगो नदी पर ध्यान नहीं दे पाये थे। आगे चलकर श्याम मनोहर पाण्डेय ने इसको स्पष्ट किया तो डॉ० मिश्र ने 'मधुमालती' के द्वितीय संस्करण में इस सूचना को सहर्ष स्थान दिया।

'सत्यवती' के सम्पादन के समय भी डॉ० मिश्र ने इसी कृति की एक अर्द्धाली में प्रकारान्तर से उल्लिखित उसके रचनाकाल को स्पष्ट नहीं कर पाये थे जिसका उद्घाटन उसी की भूमिका में श्री हरिहर निवास द्विवेदी ने किया था।

डॉ० मिश्र के सम्पादन कार्य की प्रशंसा डॉ० नलिन विलोचन शर्मा, डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त, डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल तथा श्री हरिहर निवास द्विवेदी ने अपने लेखन में की है। डॉ० मिश्र आज भी उत्साहित हैं अवधी कोश बनाने के लिये किन्तु समयाभाव तथा उपयुक्त प्रकाशक के अभाव में यह योजना अभी साकार नहीं हो पा रही है।

डॉ० मिश्र को 'सतकवि गिराविलास' की प्राप्ति अपने में सुखद आश्चर्य है। इसी प्रकार 'हरिचरित्र' के संयुक्त लेखन के उद्घाटन का श्रेय डॉ० मिश्र को जाता है।

\- साभार

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में कृतित्व (पाठालोचन एवं सम्पादन)

१६५८	ईश्वरदासकृत सत्यवती तथा अन्य रचनायें, विद्या मन्दिर,ग्वालियर (पुरस्कृत)
१६५७	मंझनकृत मधुमालती, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी (पुरस्कृत)
१६६०	कुतुबनकृत मृगवती, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
१६६३	भीमकृत डंगवै तथा चक्रव्यूह रचना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
१६७६	अंगद पैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा, रत्न कुमारी स्वाध्याय संस्थान, इलाहाबाद
१६८०	आलमकृत माधवानल कामकन्दला, रत्न कुमारी स्वाध्याय संस्थान, इलाहाबाद
१६८४	बिहारी के कवित्त तथा दोहे, रत्न कुमारी स्वाध्याय संस्थान, इलाहाबाद
१६६८	महामानव निराला, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
२००१	बलदेवकृत सतकवि गिरा विलास, हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग
	लालचदासकृत हरिचरित्र, नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी (प्रकाशाधीन)
	ऐसे थे हमारे निराला, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली (प्रकाशाधीन)

निबन्धादि

कई सौ लेख विभिन्न पत्रिकाओं में छपे जिनमें साप्ताहिक हिन्दुस्तान, साप्ताहिक आज, भारत, अमृत पत्रिका, हिन्दुस्तानी, सम्मेलन पत्रिका, ज्योत्स्ना, प्राच्य भारती, अन्तरवेद, पंचदूत, अपरा, साहित्य सन्देश मुख्य हैं।

लेखों के विषय

पुरानी पाण्डुलिपियों के विवरण, सूफी सन्त साहित्य, निराला जी के साहित्य आदि के बारे में, पुरातात्विक स्थल, लोक साहित्य, जनपद के कवि।

अभिनन्दन ग्रन्थों के लिये

संस्मरण आदि जिनमें श्री कृष्णदत्त बाजपेयी, डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त, डॉ० किशोरी लाल गुप्त, डॉ० किशोरी लाल, कैलाश कल्पित अभिनन्दन मुख्य हैं।

साहित्यकारों से पत्र व्यवहार

महापंडित राहुल सांकृत्यायन, डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल, डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा, पं० हरिहर निवास द्विवेदी, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री नारायण दत्त जी, डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त, श्री कृष्णदत्त वाजपेयी, डॉ० शिवमंगल सिंह सुमन, डॉ० राम विलास शर्मा

सम्पादित ग्रन्थ

१.	१६५७:	१८५७ और जनपद फतेहपुर
२.	१६५८:	अन्तरवेद पुरातत्व अंक
३.	१६५६:	अन्तरवेद लोक साहित्य अंक
४.	१६६२:	अन्तरवेद निराला अंक
५.		१८५७ और दरियाव सिंह

डॉ० मिश्र की साहित्यिक रचनाएँ

साहित्यिक रचनायें :

१९५३-२००१ के बीच लगभग ५० वर्षों में कुल १२७ रचनायें छपीं जिनमें से प्रथम दस वर्षों (१९५३-६४) में सर्वाधिक रचनायें हैं, फिर १९६८-१९७०, १९८०-८६ और २०००-२००१ की रचनायें हैं।

वैसे १९४६ से ही पद्य लिखना शुरू किया और 'रत्नावली' खंड काव्य रचा किन्तु निराला जी के सुझाव के बाद आलोचनात्मक दृष्टि बनी।

कवितायें	१२
निराला विषयक निबन्ध	१९
लोकसाहित्य	४
जीवनियां/संस्मरण	१५
सूफी साहित्य से सम्बद्ध	१७
सन्त/भक्त कवियों की रचनायें	२१
रीतिकालीन	३
आधुनिक काव्य/गद्य	२
हस्तलिखित/पुरातत्व/जनपद	१२
कुल	१०५

ये रचनायें ३७ पत्रिकाओं में तथा १४ समाचार पत्रों में छपीं।

अजन्ता, कल्पना (हैदराबाद), वीणा, ज्योत्स्ना, विश्वोदय, भारती (ग्वालियर), कल्पना (इलाहाबाद), अणुव्रत, साहित्य (देहरादून), साहित्य सन्देश, सरस्वती सम्वाद, कला सरोवर, हिन्दुस्तानी, पुष्कल, वीर बालक, ब्रज भारती, आदर्श, परिषद् पत्रिका, सम्मेलन पत्रिका, प्राच्य भारती, रसवन्ती, समाज सन्देश, महावाणी, निराला, अन्तरवेद, त्रिपथगा, समाज (कलकत्ता), दक्षिण ज्ञानोदय भारती, चित्र भारती, डेलीगेसी पत्रिका, विश्वविद्यालय मैगजीन, हिमप्रस्थ, हिन्दी प्रचारक (बनारस), दक्षिण भारती समाचार पत्र, परिशोध, पंचाल, गांव की नई आवाज, मजदूर सन्देश, पंचदूत, आज, प्रकाश (पटना), नवप्रभात (इन्दौर), भारत, अमृत पत्रिका, नवजीवन, लीडर, अमृत बाजार पत्रिका, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, सम्मेलन संदेश, साप्ताहिक भेंट, न्यायाधीश, हिन्दुस्तान, अमर उजाला।

मुख्य उपलब्धियाँ :

सूफी कवियों की कृतियों का उद्‌घाटन, कई सन्त भक्त कवियों की खोज, जनपदीय साहित्य, वीरों, कवियों, पुरातात्विक स्थलों की खोज, निराला को समुचित स्थान दिलाने का प्रयास।

पुस्तकें जिनमें लेख सम्मिलित हुये हैं :

१९६२ ‘निराला व्यक्तित्व’ : सम्पादक प्रेमनारायण टंडन १९६२ में महामानव निराला लेख

१९६२ रजत जयन्ती ग्रंथ : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, मई १९६२ में हिन्दी का वैज्ञानिक साहित्य

१९६३ साहित्यिक निबन्ध : सम्पादक महेन्द्र भटनागर १९६२ में हिन्दी का वैज्ञानिक साहित्य, लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर

१९६४ हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास : लोक साहित्य खंड १९६४ में चन्द्रावली का पंवाडा

१९५९ निराला कृत ‘गीतगुंज’ की भूमिका

१९५७ निराला कृत ‘चयन’ की भूमिका (निराला के निबंधों का संकलन भी)

हिन्दी विश्वकोश में – कई खंडों में किण्वन, फास्फेट तथा कुक, ग्लिंका, गिलबर्ट, खन्ना सहित २० जीवनियां

नाहटा जी द्वारा सम्पादित ‘चंदायन’ में लोरक चंदा पंवाडा

‘संग्रह’ निराला के निबन्धों का संकलन

१९५३ निराला अभिनन्दन ग्रंथ- कलकत्ता

१९८४ अनुवाक में जनपद फतेहपुर से प्राप्त पाण्डुलिपियों का हिन्दी साहित्य में योगदान

प्लकर, हालैंड को मृगावती सम्पादन में सहयोग

D.F. Plukker
Dept. of Modern Indian Languages
University of Amsterdom
Keizersgracht 73
1015 C.E. Amsterdom
Holland

डॉ० गोविन्द चन्द्र पाण्डेय अभिनन्द ग्रंथ में ‘हरिचरित्र’

बाजपेय (डॉ० बाजपेयी अभिनन्दन ग्रन्थ में भीमकवि)

लेखमाला जो प्रकाश में नहीं आ पाई

१९७८ में लिखित

१. वैज्ञानिक शोध से सम्बद्ध नग्न सत्यों का अंकन
२. शोध छात्र
३. हमारे वैज्ञानिक (७ जनवरी १९७८ को दिनमान में छपे प्रत्यक्ष वैज्ञानिक की प्रतिक्रिया में वैज्ञानिक रहस्य)
४. विशिष्टीकरण
५. हमारे विश्वविद्यालय, विज्ञान, विज्ञान शिक्षा
६. मौलिकता
७. पाण्डुलिपियों की खोज में (१-४ भाग)

८. अखाड़ा और नकली चांद : अवधी गद्य १९५७
९. लड़ाकू पत्नियां
१०. फटेहाल किसान
११. विरह में
१२. ये अभागे शिक्षक
१३. फटा दूध, बिगड़ा पूत
१४. ये मनहूस दरबान
१९५० 'रत्नावली' खण्ड काव्य शुरू हुआ

मार्च १९४९ में गांव में कवि सम्मेलन में समस्यापूर्ति
केहिकारन वानर लंक है जारी (१९४९)

रावण ने जब सीता हरी लगवाये अनेक तहां प्रहरी।
पुरुषोत्तम राम की शक्ति हरी, पै न बानर की कुछ भक्ति हरी।।
जब सिंधु को कूदि उपारि कै वृक्ष अली! क्यों थी वानर बाग उजारी।
मौन रहो मत मोहि कहो, केहि कारण वानर लंक है जारी।।

सोमानन्द जी हमको पढ़ाये गये
वंदेमातरम हमें समुझाये गये
स्वार्थ सरिता में गोते लगावें नहीं
मिथ्यावादी यहां कहे जायें नहीं

१९४८ में 'पुष्प' नाम की हस्तलिखित पत्रिका, आर्य कुमार समाज
१९४७ ग्रामोत्कर्ष कलाप से आगे काव्य में ग्रामजनों की जागृति के
१९४९ 'शिव' कलाप १० कवितायें
भूत-प्रेत (गद्य) ४८ पृष्ठ में

कौन थे पूर्वज हमारे, हो गये हम पुत्र क्या ?
डरते सदा हैं भूत से मिल जायेगी निजतन्त्रता क्या ?
समापन एक कविता से-
भगवान भारत भूमि में फिर एक बार पधारिये
निज बांसुरी की तान से अघ सकल आज विदारिये।

नवम्बर १६४६ नवकिरण पुंज २६ गीत

चेतावनी

बोलो तो......

एक बार गूंज उठे देश

दूर हों स्वदेश के कलेश

हो हमी प्रजा तथा प्रजेश

शान्ति वृद्धि देश में हमेश

सोचो तो तीन वर्ष बाद

तीन काल बाद

भारत है पूर्ण निर्विवाद

जीवन में रंग और स्वाद

विहान (डॉ० शिवगोपाल मिश्र)

देख! प्रगति का उदित सूर्य

भास्कर दिगन्त, तम जाल क्षीण

शशधर, तारागण हो मलीन

खग कलरव का उच्चरित तूर्य।

खेतों में खुल खुल कर हँसती

आभा जीवन की मोदमयी,

तरु-तृण बन लता सुहागमयी

धरती, प्रकाश से जब भरती।

गा उठतीं किलक किलक कलियां

जन गीत सलोने सपने से

रोने के, हंसने, जगने के

जग जाती हैं भ्रमरावलियां।

हंस पड़ते सरसिज खिल खिल कर

बिछ जातीं मुक्ता से गलियां

पौधों में आवेंगी फलियां

चल पड़ते कृषक वृषभ मिलकर

– आज में १६५६-५७ में प्रकाशित

दरियादिल दरियाव को कहां लौ करौं गान।
दरिया सिंह ने दरि दियो अंगरेजन की शान । १।
दरिया तू दरियाव! खलन के सुजन सहइया
सत्तावन के विप्लव में निज धुजा उड़इया।
खागा मां गढ बना, देश के विकट लड़इया
अंग्रेजी शासक की हौ तुम धूर उड़इया। २।
अंतरवेद पुकार फिरिंगिन के परि पाले
तेरी भै ललकार, परे प्रानों के लाले।
सुनते हैं ऐ बीर! कि तू शूली पर झूला
बन प्रसून इस पावन भू का अब भी फूला।
तेरे कर में सदा न्याय की खंग दुधारी
स्वजन बचाती, काट गिराती राज्य पुजारी।
तेरे बलिदानों की सचमुच अकथ कहानी
कहना चाहें लोग, भरे आंखों में पानी।
तेरे यश के गायक, भूषण चन्द नहीं हैं
गाना भी वे चाहें तो अब छन्द नहीं हैं।
(जनपद फतेहपुर और १६५७ में)

अन्तरवेद कै गदर

सिंघबहिनी सुमिरन कैके गढबीरन के चरन मनाय
करौं तैयारी मैं बरनैं कै, अंतरवेद कै गदर बनाय।
जौन देस माँ तेगा भाला बरछी बान धरिन गभुवार
जौन देस माँ धरती माता कीन्हेसि लरकन प्यार दुलार।
आजौं लाठी पुरछा भरकै, साफा का मूंडे माँ धार
अवधी भाषा का जो ब्वालैं निकरे गोली के बौछार।
उरहू घुरहू आँखी देखे बडे बडे झारन मरि जायं
हाथ उठाये थर थर काँपै राजा राजा बडे जुझार।
कौन फिरिंगिन कै बसात हुआं यह मुगलन के जमे न पाँव
खीचर अंतरवेद का राना भगवंत सिंह क नाव बिकान।
दुनियापत तौ अंगरेजन कै नाकन चना करायेसि खूब
सत्तावन के आवत आवत अंतरवेद माँ भभका फूट।
फतेहपुर, खागा, जमरावाँ बने अखारा क्यार सरूप
हिकमत उल्ला, दरिया सिंह और सिवदयाल गरजैं जहं भूप।
सालन पहिले किला बनायेन फौज बढायेन कसम धराय
हाथी हथिनी घोड़ा बहलैं साजिन रथ का हाल चढ़ाय।
आसपास के जवान बोलाइन, झंडा तरे दिहिन डोरियाय
कहिन कि माँ का दूध लजैये जो कोउ भाग हिंया से जाय।।

साहित्यिक लेख

(१९५५-२००१)

१९५५	ज्ञान सागर के रचयिता हंसदास	साप्ताहिक भारत १८ सितम्बर
१९५६	कवि नरहरि और रुक्मिणी मंगल	पुष्कल १५ अगस्त
	जनपद फतेहपुर के ध्वंसावशेष	अमृत पत्रिका २६ अक्टूबर
	फतेहपुर की गौरवशाली परम्परा	अमृत पत्रिका २६ अगस्त
१९५६	असनी के ब्रजभाषा कवि	ब्रज भारती मार्गशीर्ष २०१३
	बीरवर दरियाव सिंह	भारत २८ नवम्बर
१९५७	एकडला के कवि	ब्रज भारती वर्ष १५ अंक १
	संत चंददासकृत भक्त विहार में मीराबाई का उल्लेख	ब्रज भारती वर्ष १५ अंक ४
	सन्त कवि चन्ददास	ब्रज भारती भाद्रपद २०१४
	१८५७ के अमर शहीद : बाबा गयादीन दुबे	साप्ताहिक हिन्दुस्तान ८ दिसम्बर
	वैष्णव कवि गिरधारी	कल्पना (हैदराबाद) मार्च
	बदलते तत्व (कविता)	ज्योत्स्ना नवम्बर
	Literary & heroic tradition of Fatehpur District	Leader 15 August
१९५८	विकट स्थिति (कविता)	ज्योत्स्ना जनवरी
	लोक चित्रकला	ज्योत्स्ना नवम्बर
	विजय गीत (कविता)	बीर बालक अक्टूबर
	अगरचन्द नाहटा से भेंट	ज्योत्स्ना अप्रैल
	विचारणीय प्रश्न	अणुव्रत सितम्बर
	चन्द्रसखी के सम्बन्ध में	ब्रज भारती वर्ष १६ अंक २
	शाहजहांकालीन अवधी के अज्ञात कवि रामचन्द्र	अजन्ता मार्च
	अवधी के प्राचीन कवि लालचदास	साहित्य सन्देश दिसम्बर
	निराला और नेहरू	मजदूर सन्देश (इन्दौर) ३ नवम्बर
	अन्तरवेद के अवधी लोकनृत्य गीत	साप्ताहिक आज
	मृगावती के सम्बन्ध में वितण्डावाद	हिन्दी प्रचारक
	कवि गंग और उनकी गंगपचीसी	हिन्दी प्रचारक
	भक्तकवि माधव	भारती (ग्वालियर)

	जनपद फतेहपुर का साहित्यिक उन्नयन	अन्तरवेद जनवरी
	अन्तरवेद के गदर	अन्तरवेद जनवरी
१६५६	सुन्दरकांड की एक खंडित प्रति	सम्मेलन पत्रिका भाग ४५ संख्या ४
	नरपति व्यासकृत नलदयन्ती कथा	हिन्दुस्तानी अप्रैल-जून
	विष्णु पुराण और उसका रचयिता	दक्षिण भारती दीपावली
	ज्योति पर्व (गीत)	ज्योत्स्ना नवम्बर अंक
	अवधी के प्रथम कवि ईश्वरदास की एक अन्य रचना अंगदपैज	हिन्दुस्तानी जनवरी
	महाकवि के संसर्ग में	विश्वोदय मार्च
	ईश्वरदासकृत स्वर्गारोहण	--
	मुक्ति पर्व (कविता)	ज्योत्स्ना अगस्त
	राजस्थान के साहित्य मर्मज्ञ श्री अगरचन्द नाहटा से भेंट	अजन्ता जुलाई-अगस्त
	Some Glimpse of Antarved Culture	Leader 15 August
	विज्ञान और उसका अध्ययन	विश्वोदय फरवरी
	आधुनिक दृष्टि और महाकाव्य	सरस्वती संवाद अगस्त-सितम्बर
१६६०	राजर्षि टंडन सम्बन्धी मेरे संस्मरण	--
	गोस्वामी लक्षदास	त्रिपगथा मार्च
	हिन्दवी के तीन प्रेमाख्यानक काव्य	भारती (ग्वालियर)
	जनपद फतेहपुर से प्राप्त कुछ रागमाला ग्रंथ	हिन्दुस्तानी अप्रैल-जून
	जायसीकृत चित्ररेखा : एक विश्लेषण	दक्षिण भारती जनवरी
	महाकवि निराला : व्यक्तित्व और कृतित्व	वीणा मार्च साप्ताहिक आज ३१ जनवरी
	लखसेन पद्मावती	ज्योत्स्ना मार्च
	दामोकविकृत लखमसेन पद्मावती (आलोचनात्मक अंश)	ज्योत्स्ना अप्रैल
	अवधी लोक गीतों में फाग	वीणा अप्रैल १६६०
	आधुनिक नारी की समस्याएं	साप्ताहिक आज १५ मई
	अन्तर्द्वन्द (कविता)	ज्योत्स्ना जून
	ज्योति चाहिए हमें (कविता)	ज्योत्स्ना
	नौकर के नौकर	साप्ताहिक आज २७ नवम्बर
	शेख तकी कृत बारामासा	इलाहाबाद यूनिवर्सिटी मैगजीन साहित्य संदेश अप्रैल
	गोविन्द विप्र कृत आदि पर्व की कथा	हिन्दुस्तानी नवम्बर साहित्य संदेश नवम्बर
१६६१	अड़तालीसवें साइंस कांग्रेस के सभापति डॉ० धर	आज ४ जनवरी

	महाभाग निराला	साप्ताहिक आज २२ जनवरी
	क्या लिखूं (कविता)	ज्योत्स्ना मार्च
	अवधी प्रेमाख्यान : अध्ययन और ऐतिहासिक परम्परा	सरस्वती संवाद फरवरी
१६६२	निराला का काव्य साहित्य	निराला (प्रयाग) फरवरी
	यह सूनी सूनी वसंत पंचमी	साप्ताहिक आज ११ फरवरी
	महामानव निराला	रसवन्ती (निराला अंक)
	संस्मरण निराला के	साहित्य संदेश (निराला अंक) फरवरी-मार्च
	नारी की समस्याएं	सम्मेलन संदेश (भागलपुर) ३ जून
	समाज का कलंक दहेज	सम्मेलन संदेश ३१ अगस्त
	निराला सम्बन्धी भ्रामक तथ्य	साप्ताहिक हिन्दुस्तान १४ अक्टूबर
	कविवर बिहारी की नवीन रचना	साहित्य संदेश सितम्बर
	निवेदन (कविता)	ज्योत्स्ना सितम्बर
	निराला की गर्वोक्तियां	प्राच्य भारती सितम्बर
	निराला साहित्य के निष्पक्ष अध्ययन की आवश्यकता	सम्मेलन पत्रिका श्रद्धांजलि अंक
	विश्वास करें तो कहूं	त्रिपगथा मार्च भाग ४८, १६८४
१६६३	युवकों से	सम्मेलन सन्देश ११ जनवरी
	हमारा दायित्व	प्राच्य भारती (युद्ध विशेषांक) जनवरी-फरवरी
	आदर्श दम्पति	साप्ताहिक आज २८ दिसम्बर
	नए लोग नई सम्स्याएं	साप्ताहिक आज
	उस देवदूत को हमारा प्रणाम	साप्ताहिक भेंट २ अक्टूबर
	चिर यौवन की सुखद कल्पना	साप्ताहिक आज ७ जनवरी
	राष्ट्रीयता के अग्रदूत निराला जी	साप्ताहिक आज वसन्त अंक
	निराला की अंतिम कृति गीतगुंज	प्राच्य भारती अप्रैल
	आधुनिकता बनाम सच्चरित्रता	सम्मेलन संदेश
	ये फैशनेबुल रोग	साप्ताहिक आज
	ओ प्रहरी हिमवान (कविता)	प्राच्य भारती जुलाई
	विजय पर्व की गाथा (कविता)	साप्ताहिक भेंट (कानपुर) १५ अगस्त
	आधुनिक शिक्षा एवं शिक्षक	सम्मेलन संदेश १८ सितम्बर
	सम्पादकी का बोझ	प्राच्य भारती अगस्त
	अन्तर्वेद का ढेंढिया त्यौहार	साप्ताहिक भेंट (दीपावली)
	डॉ० रामकुमार वर्मा जैसा मैंने देखा पाया	--
	भगत विहार में वर्णित सूरदास को अनुराग	--

१९६४	सफलता का मर्म	प्राच्य भारती दिसम्बर-जनवरी १९६४
		साप्ताहिक आज ७ मार्च
	कर्मवीर नेहरू	प्राच्य भारती जुलाई
	सर्वव्यापी भ्रष्टाचार	सम्मेलन संदेश ५ नवम्बर
	मृगावती का संभावित स्रोत	परिशोध (चण्डीगढ़)
	निराला के काव्य में होली का वर्णन	प्राच्य भारती फरवरी
	जिनकी स्मृति भुलाए नहीं भूलती	साप्ताहिक आज १८ जनवरी
	अमर गायक निराला	साप्ताहिक भेंट गणतंत्र अंक
	राष्ट्रीयता के अग्रदूत	नवजीवन १६ जनवरी
	निराला एक पहेली	साहित्य (देहरादून)
	डॉ० रामविलास के सम्पर्क में	डॉ० नत्थन सिंह बडौत के
पास		प्रकाशनार्थ भेजा
	चिन्तन के क्षणों में	प्राच्य भारती
	भीमकवि की दो अज्ञात रचनाएं	
	कवि ईश्वरदास की दो अन्य रचनाएं	
१९६७	३३ वर्ष बाद विश्वयुद्ध : शेष शताब्दी विशेषांक	ज्ञानोदय (दीपावली)
१९६८	छात्रों में अनुशासन	साप्ताहिक भेंट १५ अगस्त
	राष्ट्रभाषा हिन्दी और वैज्ञानिक शिक्षण	साप्ताहिक भेंट २६ जनवरी
	सूफी प्रेमाख्यान काव्य की दो महत्वपूर्ण कड़ियां	प्राच्य भारती दिसम्बर-जनवरी
१९६९	भाषा का प्रश्न	साप्ताहिक भेंट १५ अगस्त
१९८०	गोदान के भाषा प्रयोगों की समीक्षा	प्रेमचन्द्र शती पर डॉ० मृत्युन्जय उपाध्याय द्वारा सम्पादित पुस्तक में
१९८१	साकेत : कुछ मीठी कुछ कड़वी	पुस्तक में
१९८२	सन्त कवि चन्ददास की एक नवीन रचना श्रृंगार सागर	सम्मेलन पत्रिका वर्ष ४६ संख्या ३
	जनपद फतेहपुर के पुरातात्विक स्थल	पांचाल
१९८३	अवढरदानी साहित्यकार स्व० नाहटा जी	राष्ट्रभाषा सन्देश
१९८४	जनपद फतेहपुर से प्राप्त हस्तलिखित ग्रन्थों का हिन्दी साहित्य में योगदान	अनुवादक : साहित्य कला केन्द्र अमौली फतेहपुर
	हरिचरित्र : भाषा भागवत	ज्ञानवापी अप्रैल
	Haricharitra : An Awadhi Premier Krishna Kavya of Medieval Age	Vajpeya (पृ० कृष्णदत्त बाजपेयी अभिनन्दन ग्रंथ)
१९८५	अवधी का प्रथम कवि कौन	परिषद पत्रिका अप्रैल (पटना)
	एकडला : एक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक स्थल	अन्तरवेद ३१ जनवरी
	श्रीमद्भागवत तथा तुलसीदास :	अन्तरवेद १५ अक्टूबर

१९८६	केसौ केसौराइ	यूनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद अंक १८ फरवरी
१९८८	सत्कवि गिरा विलास	कला सरोवर वर्ष २ अंक १ (बनारस)
१९८९	अन्तर्वेद के स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी	न्यायाधीश ७ जून
१९९२	एक प्रखर सम्पादक : डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त	डॉ० परमेश्वरी लाल
1995	Dangvai Katha by Bhim	Dr. G.C. Pandey felicitation Volume
१९९६	पं० कृष्णदत्त बाजपेयी और उनकी साहित्यिक अभिरुचि	पांचाल खण्ड ६ कानपुर
१९९७	चन्दायन का भाषा भूगोल	महावाणी रायबरेली रचनात्मक संघ
२०००	डंगवै कथा की परम्परा	हिन्दुस्तानी जनवरी-मार्च
२००१	दलितों के कवि निराला	अमृत प्रभात २८ जनवरी
	आलोचक प्रवर डॉ० रामविलास शर्मा नहीं रहे	अमृत प्रभात ३ जून
	सूफी कवि आलम की उपेक्षा क्यों	सम्मेलन पत्रिका (प्रेषित)
	जायसीकृत पद्मावत के बंगला अनुवादक सय्यद अलाओल	हिन्दुस्तानी (प्रेषित)

प्राचीन अलभ्य काव्य ग्रन्थों के उद्धारक-सम्पादक : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० किशोरी लाल गुप्त

डॉ० शिवगोपाल मिश्र प्रयाग विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान के प्राध्यापक रहे हैं। उनका विद्यार्थी जीवन तो विज्ञान के विद्यार्थी के रूप में बीता ही है, यह कहने की कोई बात नहीं। फिर वे साहित्य के इतने बड़े प्रेमी पण्डित भी कैसे हो गए ? जहाँ तक ललित साहित्य का सम्बन्ध है, वह तो सबके लिए है। चाहे वकील हो, डाक्टर हो, इंजीनियर हो, व्यापारी हो, सामान्य कृषक हो, साहित्य सब का है। सभी उपन्यास, कहानी, कविता, निबन्ध एवं नाटक पढ़ने में आनन्द लेते हैं। उनमें से कुछ ऐसी रचनाएं भी कर लेते हैं। शोध तो इने-गिने लोगों का काम है। कोई हिन्दी वाला हिन्दी साहित्य के शोधकार्य में प्रवृत्त हो, यह तो ठीक ही है। हिन्दी के शोधार्थियों में भी अनुपलब्ध प्राचीन काव्य की शोध करने वाले कितने हैं ? इने-गिने। उंगलियों पर गिने जाने वाले ऐसे लोगों में एक नाम डॉ० शिव गोपाल मिश्र का भी है।

डॉ० मिश्र ने अब तक दस अनुपलब्ध प्राचीन काव्य ग्रन्थों को सम्पादित करके एवं प्रकाशित कराके हिन्दी की बहुत बड़ी सेवा की है। एतदर्थ प्राचीन हिन्दी काव्य के सभी प्रेमी मिश्र जी के परम अनुगृहीत हैं, ऋणी हैं।

मैं हिन्दी के प्राचीन काव्य ग्रन्थों का जिज्ञासु एवं अध्येता रहा हूँ। मेरी इसी अभिरुचि ने डॉ० शिवगोपाल मिश्र के सम्पर्क में लाने का संयोग एवं सुयोग प्रस्तुत किया। डॉ० मिश्र द्वारा सम्पादित कुतुबनकृत मृगावती का प्रथम प्रकाशन १९६३ में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा हुआ। मैंने इसकी एक प्रति १७-७-६४ को खरीदी थी।

कुतुबन की मृगावती के दो अन्य संस्करण बाद में और हुए। दूसरा संस्करण डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त द्वारा संपादित होकर १९६७ ई० में एवं तीसरा संस्करण माता प्रसाद गुप्त द्वारा संपादित होकर और बाद में निकला। डॉ० मिश्र को कुतुबन की मृगावती के प्रथम संस्करण प्रस्तुत करने का गौरव प्राप्त है।

डॉ० मिश्र द्वारा संपादित कुतुबन की मृगावती को पहली बार प्रकाशित देखकर प्राचीन काव्य ग्रन्थों का प्रेमी मैं प्रफुल्ल हो उठा और उसे पूर्णरूपेण आद्यन्त पढ़ गया। मुझे इसमें अनेक त्रुटियाँ दिखाई पड़ीं। मैंने मनोयोगपूर्वक प्रायः १५ पृष्ठों का एक बड़ा लेख लिख डाला। इसमें मैंने उसकी हर प्रकार की त्रुटियों का विस्तृत विवेचन किया था। यह विवेचन इस प्रकार की त्रुटियों का था कि मैं इस ग्रन्थ को निर्दोष देखना चाहता था। तब तक डॉ० मिश्र से परिचय नहीं हो पाया था। न मैंने उन्हें देखा

था और न जानता ही था।

१६६४ में डॉ० मिश्र से मेरी एक दिन भेंट 'हिन्दी प्रचारक' के यहाँ पिशाच मोचन वाराणसी में अचानक हो गई। मैंने उनसे उनके कुतुबन की मृगावती पर लिखित अपनी समीक्षा की चर्चा की। उन्होंने उसे देखने की उत्सुकता प्रकट की। मैंने कहा कि मैं उसे आपके पास डाक से भेज दूँगा। बाद में मैंने उस लेख को उनके पास भेज भी दिया। उन्होंने उसे मनोयोगपूर्वक पढ़ा और मेरे लेख पर हाशिये पर यत्र-तत्र अपनी सहमति या असहमति भी लिख दी और मेरा लेख मुझे लौटा दिया। मैंने उक्त ग्रन्थ में संशोधन की दृष्टि से लिखा था। निन्दा की दृष्टि से नहीं। इसीलिए उसे उनके पास भेज देने में मुझे कोई संकोच नहीं हुआ था। यह है मेरी डॉ० मिश्र के सम्पर्क में आने की कथा।

डॉ० मिश्र द्वारा कुतुबन की मृगावती के प्रकाशन के पहले इनके द्वारा संपादित एक और सूफी प्रेमाख्यान काव्य मंझनकृत मधुमालती का प्रकाशन नवम्बर १६५७ में हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी द्वारा हो चुका था। मैंने जिसकी एक प्रति बाद में १६-६-६४ को खरीदी।

मंझन की मधुमालती को भी सर्वप्रथम प्रकाश में लाने का श्रेय डॉ० मिश्र को ही है। मधुमालती का डॉ० माताप्रसाद गुप्त का संस्करण उसके चार वर्ष बाद १६६१ ई० में मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद से हुआ।

इन दो सूफी काव्यों के अतिरिक्त मिश्र जी ने दो अन्य अवधी कवियों का भी उद्धार किया। एक हैं गाजीपुर जिले के पन्द्रहवीं शती के परम प्राचीन कवि ईश्वरदास। इनके ग्रन्थों का सम्पादन डॉ० मिश्र ने किया है। एक हैः सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ। इसका प्रकाशन १६५८ ई० में हरिहर निवास द्विवेदी के विद्या मन्दिर प्रेस ग्वालियर से हुआ। इसमें सत्यवती कथा के साथ-साथ भरत मिलाप, एकादशी कथा, स्वर्गारोहिणी कथा के भी मूल पाठ हैं। इस प्रकार इसमें कुल चार ग्रन्थ हैं। भरत-मिलाप का प्रकाशन १६२५ ई० में व्यंकटेश्वर प्रेस बम्बई से हो चुका है। इसी प्रकार सत्यवती कथा का भी प्रकाशन १६३७ ई० में हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से हो चुका है। इसका संपादन 'हिन्दुस्तानी' के संपादक रामचन्द्र टण्डन ने किया था।

ईश्वरदास की दूसरी पोथी है अंगद पैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा। इसका प्रकाशन डॉ० रत्नकुमारी स्वाध्याय संस्थान, विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद से हुआ। इसमें दो ग्रन्थ हैं, एक है अंगद पैज और दूसरा है स्वर्गारोहिणी कथा। स्वर्गारोहिणी कथा, सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियों में भी संकलित है।

दूसरे कवि भीम हैं। इनकी दो कृतियों का संपादन एक ही जिल्द में हुआ है- डंगवै कथा तथा चक्रव्यूह कथा। इसका प्रकाशन हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने १६६६ ई० में किया था।

मिश्र जी की अंतिम कृति 'सतकवि गिरा विलास' है। यह कृति अभी हाल ही में पिछले वर्ष २००१ में हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से प्रकाशित हुई है। यह शिव सिंह सरोज के आधार ग्रन्थों में से एक है। इसमें ३५ कवियों के छन्द उदाहरणस्वरूप उद्धृत हैं। इसकी रचना संवत् १८०३ वि० में हुई थी। इसके रचयिता बलदेव उपाध्याय हैं। यह रस-ग्रंथ है और संग्रह की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

सतकवि गिरा विलास की केवल ३०० प्रतियाँ छपी हैं और स्वयं मिश्र जी ने इसके प्रकाशन में ७००० रुपये लगाए हैं। १५३ पृष्ठों के इस ग्रंथ का मूल्य आज के इस मंहगे जमाने में केवल ५० रुपये

है। इस तथ्य से स्पष्ट है कि मिश्र जी प्राचीन काव्य के उद्धार में तन, मन, धन सब प्रकार से दत्तचित्त हैं।

डॉ० रामकुमारी जी मिश्र डॉ० शिवगोपाल मिश्र की पत्नी हैं। यह सुप्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक डॉ० उदय नारायण तिवारी की सुपुत्री हैं। यह इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यापिका रही हैं। इन्होंने बिहारी-विभूति नाम से बिहारी सतसई की टीका लिखी है। इन्होंने ईश्वरदास के अंगद पैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा के संपादन में भी सहयोग दिया है। इन्होंने भी दो प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन किया है।

१. आलमकृत माधवालन काम कन्दला।

२. कविवर बिहारी के कवित्त और दोहे।

सतसई कार बिहारी ने रीतिकालीन प्रसिद्ध छन्द कवित्त सवैयों में भी कुछ रचना की हो, यह असम्भव नहीं। डॉ० रामकुमारी जी की यह शोध विद्वानों के लिए विचार का विषय है। अस्तु, प्राचीन काव्य के उद्धार के लिए यह दम्पति ही दीवाना है।

डॉ० शिव गोपाल मिश्र और डॉ० रामकुमार मिश्र इसी प्रकार हिन्दी के प्राचीन काव्य का उद्धार निरन्तर करते हुए हमें उपकृत करते रहें, परम प्रभु से हमारी यही प्रार्थना है।

सुधवै, भदोही

गुरुतुल्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र

हरिमोहन मालवीय

साहित्य का आस्वाद कुछ लोग सायास प्राप्त करते हैं, कुछ भाग्यशाली होते हैं जो जन्मते ही साहित्यिक परिवेश में हैं और सहज ही वे जीवन के किसी कार्य व्यापार में हों, किन्तु वे रमते साहित्य में ही हैं। डॉ० शिवगोपाल मिश्र ऐसे ही बिरले व्यक्तित्व के धनी वैज्ञानिक हैं जो मृदा की रासायनिक निष्पत्तियों की खोज में लगे रहे, लेकिन उनका धरती प्रेम उन्हें पुरातात्विक खोज की ओर भी खींच ले गया और उन्होंने व्यापक परिभ्रमण करते हुये फतेहपुर जनपद की पुरातात्विक संपदा का विवरणात्मक परिचय प्रस्तुत करने का कठिन कार्य भी किया। वे हिन्दी के सर्वाधिक प्राणवान और अप्रतिम महाकवि निराला की सन्निधि में रहे और उनके संघर्षों एवं उनके हाव-भाव, क्रियाकलापों का निरीक्षण परीक्षण और अध्ययन भी करते रहे। फलतः 'महामानव निराला' जैसी कृति ने उनके मन में साहित्य और साहित्यकारों के संवंध में उपजी आस्था को अभिव्यक्ति दी। अवधी लोक साहित्य के संग्रह संपादन ने उन्हें लोक-जीवन के बहुरंगी आयामों का संदर्शन प्रस्तुत करने की सामर्थ्य प्रदान की।

डॉ० मिश्र शान्त स्वभाव और क्रियाशील जीवन जीने के अभ्यासी हैं। उनकी वैज्ञानिक उपलब्धियों और उनके द्वारा विज्ञान परिषद् के विकास की क्रियान्विति के वृत्त के तो लोग बहुत साक्षी होंगे लेकिन उनके साहित्याराधन का सम्यक विवेचन संभवतः समग्र रूपेण नहीं हो पाया है।

मैंने जितना उन्हें विगत चालीस वर्षों में देखा और जाना है उसकी एक उज्ज्वल छाप मेरे मन में है। अकृत्रिम व्यवहार, सहज मुस्कान के साथ विनम्र वाणी में अपने क्रियाकलापों की चर्चा करना उनका स्वभाव है। अपने कार्यों के डिमडिम पीटने, आश्चर्य एवं कुतूहल उत्पन्न करने में उनका विश्वास नहीं है। वर्षों कार्य में दत्तचित रहकर समय-समय पर अपनी उपलब्धियों को वे प्रकट करते रहे हैं।

मैं जब हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के साहित्य विभाग से संबद्ध हुआ उससे पूर्व ही सन् १९५८ में कुतुबन कृत मृगावती का प्रकाशन सम्मेलन ने कर दिया था। मैं जब उस विभाग में क्रियाशील हुआ था उस समय डॉ० मिश्र द्वारा संपादित ग्रंथ भीम कवि कृत डंगवै तथा चक्रव्यूह का प्रकाशन कार्य पूर्ण हो रहा था। शनैः शनैः आपसे संपर्क सूत्र सुदृढ़ होता चला गया और आप जब मिलते तब किसी अज्ञात ग्रंथ की चर्चा करके नयी जानकारियां देते रहते।

बिरले ही लोग होते हैं जो सांस्कृतिक थाती को बचाने, संरक्षित करने और उसे उजागर करने का कार्य करते हैं। डॉ० मिश्र उनमें से एक हैं जो अपने अध्यवसाय से ऐसी निधि को प्रकाश में लाने के काम में मौन साधक की भांति कई दशकों से लगे हुये हैं।

ऊपर मैंने जिन हस्तलिखित ग्रंथों के संपादन का जिक्र किया उनके अतिरिक्त आपने ईश्वरदास कृत सत्यवती तथा अन्य रचनायें (१९५८), मंझन कृत मधुमालती (१९६०), आलम कृत माधवानल कामकन्दला (१९८०), बिहारी के कवित्त (१९८४) तथा अंगद पैज तथा स्वर्गारोहिणी कथा (१९७९) का भी सम्पादन किया है।

मुझे डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी ने हिन्दुस्तानी एकेडमी से बलदेव कृत 'सतकवि गिरा विलास' जैसे संग्रह ग्रंथ को प्रकाशित करने का सुयोग प्रदान किया। मैंने उनके निर्देश से उसे प्रकाशित भी कर दिया है। यहां मैं इस बात का उल्लेख करके गौरवान्वित होना चाहता हूं कि अवकाश ग्रहण करने से पूर्व हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के साहित्य विभागाध्यक्ष के नाते मुझे प्रख्यात विद्वान डॉ० किशोरीलाल जी द्वारा संपादित विद्वन्मोद तरंगिणी ग्रंथ को प्रकाशित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वह भी रीतिकाव्य के उत्कृष्ट कवियों के कवित्त सवैयों का अद्भुत संग्रह ग्रंथ है। डॉ० मिश्र के संपादन का महत्व इसलिये है कि वह विद्वन्मोद तरंगिणी का पूर्ववर्ती आधार ग्रंथ भी है। डॉ० मिश्र ने लालच दास कृत हरिचरित्र का भी संपादन कार्य किया है जो प्रकाशाधीन है।

हस्तलेखों की प्रतियां प्राप्त करना, उनके पाठान्तर करना और प्रामाणिक या मूल पाठ को प्रस्तुत करना अत्यधिक श्रमसाध्य है और ग्रंथ की आधार सामग्री और सहायक सामग्री एवं तत्संबंधी परंपरा और उससे संबंधित प्रकाशित साहित्य की पाण्डुलिपि के साक्ष्य के सहारे आलेखन विलोड़न करना सबके बंस की बात नहीं होती। इसके लिये बहुज्ञता और प्रत्युत्पन्न मतित्व अपेक्षित रहता है। एक वैज्ञानिक दृष्टि पाठ के वास्तविक स्वरूप को परख कर योग्य निर्णय देने में सहायक होती है।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने मध्यकालीन साहित्य की बहुमूल्य निधियों एवं कृतियों के अनुशीलन में जो श्रम किया है, जिस साधना और सूझ-बूझ का परिचय दिया है वह उल्लेखनीय है। उनका यह कार्य तब महत्वपूर्ण बन जाता है जब पूर्ववर्ती विद्वानों के समकक्ष ग्रंथ का संपादन कार्य किया जाता है। मधुमालती और मृगावती जैसे प्रेमाख्यानक काव्य पर डॉ० माता प्रसाद गुप्त आदि विद्वानों के संपादन प्रकाशित हो चुके हैं। डॉ० मिश्र ने जिज्ञासु अध्येताओं के लिये अपने द्वारा अन्वेषित पाठ को प्रस्तुत करके सराहनीय कार्य किया है कि वे तुलनात्मक दृष्टि निक्षेप से मूल पाठ की संभावनाओं पर विचार विमर्श करें।

आज जब कि मध्यकालीन साहित्य को नकार कर साहित्य और वाङ्मय की नई नई धारायें आगे बढ़ाने में ही लोगों का ध्यान है ऐसे समय में अमूल्य प्राचीन पोथियों में उपलब्ध ज्ञान राशि और साहित्य निधि को संपादित, संरक्षित और प्रकाशित करने के कार्य में कोई निरन्तर गतिशील रहता है तो यह उसका संकल्पबद्ध सद्प्रयास सराहनीय तो है ही अभिनन्दनीय भी है।

डॉ० मिश्र का हिन्दी विषयक साहित्यिक लेखन, संस्मरण, आलोचना, प्राचीन ग्रंथों के पाठालोचन तक ही सीमित नहीं है। आपने 'अपरा' शीर्षक से एक साहित्यिक पत्रिका का भी संपादन, प्रकाशन कार्य अनेक साहित्यकारों के सहयोग से किया है। मैं उनके अनेक उपकारों के कारण उन्हें गुरुतुल्य मानता हूं और जब मेरे मन में हस्तलिखित साहित्य के संपादन का भाव जगा था तब अपने सहज आत्मीय स्नेह से आपने उंगली पकड़कर इस राह पर चलना सिखाया था! आपका सहज अनुराग ही है कि मैं विज्ञान परिषद् जैसी संस्था में वैज्ञानिकों के बीच बैठकर जागतिक वैज्ञानिक अन्वेषण का किंचित आभास पाता रहता हूं।

डॉ० मिश्र की सात दशक की यात्रा वैज्ञानिक अन्वेषण, अनुवाद, ग्रंथ संपादन एवं लेखन में व्यतीत हुई है। वे पूरी क्षमता से विज्ञान क्षेत्र में अपनी उपलब्धियां देते रहे और भारतीय मनस्वियों का वह स्वप्न साकार करते चले जिस स्वप्न में भारतीय लोक को वैज्ञानिक चेतना संपन्न बनाने के लिये हिन्दी में विज्ञान विषयक उत्कृष्ट साहित्य उपलब्ध कराने का पुनीत संकल्प था।

गुरुतुल्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र के साहित्याराधन के प्रति मेरा विनम्र नमन है।

अध्यक्ष, हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग
७४२/६५३, महामना मालवीय नगर
इलाहाबाद

गुरुवर्य डॉ० शिवगोपाल मिश्र : मेरी दृष्टि में

डॉ० भुवनेश्वरी तिवारी

विद्या-विनयसम्पन्न ख्यातिप्राप्त डॉ० शिवगोपाल मिश्र पर उनकी अभूतपूर्व साहित्यिक एवं वैज्ञानिक सेवाओं को लक्ष्य कर उनके शिष्यों द्वारा एक अभिनन्दन ग्रन्थ तैयार कर उनका शारदीय अभिनन्दन किया जा रहा है, यह अतीव प्रसन्नता का विषय है।

डॉ० मिश्र का वैशिष्ट्य है कि वे एक विज्ञानवेत्ता, कृषि रसायनशास्त्री, मृदा विज्ञानी, वरिष्ठ विज्ञान लेखक, साहित्यकार, सम्पादक, पुरातत्व एवं लोक साहित्य में रुचि रखने वाले और सुविख्यात लेखक हैं। साथ ही एक सहृदय सज्जन हैं। मुझे उनकी स्नेहिल शीतल छाया प्राप्त हुई है। वे मेरे पिता श्री के एक अच्छे मित्र रहे हैं। मेरा आपसे परिचय एवं भावभीना साक्षात्कार सन् १६७६-८० में हुआ। इस सम्पर्क के सेतु पूज्य प्रो० कृष्णदत्त जी बाजपेयी थे। डॉ० मिश्र मेरे शारदीय पथ के प्रेरक, मार्गदर्शक एवं शुभेच्छु गुरु हैं। उनका पुष्ट परिपक्व ज्ञानानुभव जिज्ञासु छात्र-छात्राओं को सही दिशा निर्दिष्ट करने वाला है जिससे हम सब लाभान्वित हुये हैं। ज्ञानार्जन और ज्ञानार्पण आपका स्वभाव रहा है और आज भी है।

यों तो डॉ० मिश्र विज्ञान के प्राध्यापक रहे हैं पर आपकी अभिरुचि एवं सक्रिय योगदान हिन्दी साहित्य, लोक साहित्य एवं पुरातत्व आदि में भी रहा है। आप अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, अवधी के ज्ञाता हैं। विज्ञान के छात्र होते हुये भी आपने हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रेम को किस प्रकार पुष्ट किया स्वयं उन्हीं के एक पत्र से उद्धृत है-

"हिन्दी तथा संस्कृत मुझे हाई स्कूल में प्रिय विषय थे। विज्ञान का छात्र होने से पढ़ नहीं पाया था अतः मैंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन से विशारद और साहित्यरत्न की परीक्षायें दे कर हिन्दी में विशेषता प्राप्त की। १६५२ से ही वैज्ञानिक लेख हिन्दी में लिखने लगा। डॉ० सत्यप्रकाश, डॉ० गोरख प्रसाद के सम्पर्क में आने से विज्ञान परिषद के लिये हिन्दी में कार्य करने लगा। मैंने अपने विषय की हिन्दी में कई पुस्तकें लिखीं।" (डॉ० शिवगोपाल मिश्र का पत्र १५.०४.२००१)

गुरुवर्य डॉ० मिश्र के पास एक खोजी दृष्टि है। शिक्षा और सर्जन के क्षेत्र में चाहे वह कोई भी विषय हो, आपके लिये हुये निष्कर्ष विद्वत्समाज को मान्य रहे हैं। यहां पर यह बताना अनुचित एवं अप्रासंगिक न होगा कि मैं हिन्दी साहित्य की छात्रा रही हूं और इसी क्षेत्र एवं दिशा में कार्यरत हूं। मुल्ला दाऊद कृत चांदायन में बैसवारी लोक संस्कृति विषय पर मैंने शोध कार्य लखनऊ विश्वविद्यालय से किया। इस सूफी प्रेमाख्यान के सम्बन्ध मे आदरणीय डॉ० मिश्र के सुझाव पत्र द्वारा मिलते रहे हैं। जितना कुछ जान सकी हूं उसी आधार पर कहना चाहती हूं कि आपकी गवेषणात्मक, तर्कसम्मत, वैज्ञानिक दृष्टि का सुफल हम सबको प्राप्त हुआ है।

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में डॉ० मिश्र का योगदान

सन् १६५३ से हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों में आप सम्मिलित होते रहे। सन् १६५० में निराला जी के सम्पर्क में आये। उस समय लोक साहित्य का काम चल रहा था अतएव आपने अवधी लोक गीतों एवं कथाओं का संकलन करना प्रारम्भ किया। साथ ही पाण्डुलिपियों की खोज

करने लगे। यहीं से उनके प्राचीन साहित्य के प्रति लगाव का परिचय मिलता है। एक सूत्र के रूप में प्रथमतः विचार्य है सूफी साहित्य। सूफी कृतियों में आपने मृगावती, मधुमालती, आलम कृत माधवानल कामकन्दला एवं गैर सूफी प्रेमाख्यानों में ईश्वरदास कृत सत्यवती का सम्पादन किया। आपने 'मृगावती' सूफी प्रेमाख्यानक ग्रन्थ के सम्पादन में फतेहपुर जिला स्थित एकडला ग्राम से प्राप्त पाण्डुलिपि को सर्वाधिक प्रामाणिक मान कर पांच प्रतियों के आधार पर इस ग्रन्थ का सम्पादन, पाठानुशीलन, विश्लेषण और विवेचन किया है। डॉ० मिश्र द्वारा सम्पादित 'मृगावती' की भूमिका अत्यन्त सारगर्भित और कई उपयोगी तथ्यों के उद्‌घाटन में सफल है। मृगावती की उपलब्ध प्रतियों में जिनका विवरण डॉ० मिश्र ने दिया है वे इस प्रकार हैं : १. चौखम्भा वाली प्रति २. भारत कला भवन बनारस वाली प्रति ३. अनूप संस्कृत पुस्तकालय बीकानेर की प्रति ४. मनेर शरीफ की प्रति ५. एकडला की प्रति। (द्रष्टव्य है- मृगावती, संपादक डॉ० शिवगोपाल मिश्र)। डॉ० मिश्र द्वारा सम्पादित मृगावती को आधार बना कर जबलपुर विश्वविद्यालय से एक छात्र ने शोध कार्य किया है। साथ ही सम्मेलन की परीक्षाओं में सन्नद्ध है। सन् १६५६ में आपने मंझनकृत 'मधुमालती' का सम्पादन किया। मधुमालती राजस्थान के पाठ्यक्रम में सम्मिलित है। इन सूफी ग्रन्थों की मूल पाण्डुलिपियों की उपलब्धि आपकी दुर्लभ खोज है। इसके अतिरिक्त लालचदास कृत हरिचरित्र तथा बलदेवकृत सत कवि गिराविलास की पाण्डुलिपि भी आपने खोज निकाली और उनका सम्पादन भी किया। इसी क्रम में विचार्य है रीतिकालीन साहित्य। मेरे एक पत्र के उत्तर में डॉ० मिश्र ने स्पष्ट किया- "रीतिकालील साहित्य में मेरी रुचि का कारण मेरी पत्नी द्वारा 'बिहारी सतसई' पर शोध कार्य था। मैंने बीकानेर में जाकर उसकी सबसे प्राचीन प्रति प्राप्त की। बाद में अपनी पत्नी के साथ बिहारी के कवित्तों का प्रकाशन किया।" (डॉ० मिश्र का पत्र दिनांक १५.४.२००१) 'प्राचीन कवियों के शोधपूर्ण लेख' ब्रज भारती में प्रकाशित हुये हैं। लोक साहित्य के संदर्भ में फतेहपुर जनपद के लोकगीत एवं लोक कथाओं का संकलन आपने किया। चन्द्रावलि का पंवारा आपसे ही राहुल सांकृत्यायन ने प्राप्त किया। इन कार्यों में आपका विशेष अवधी भाषा प्रेम है।

अब एक दृष्टि पुरातत्व के क्षेत्र में डालें तो ध्यातव्य है कि फतेहपुर जनपद जो आपकी जन्मभूमि ही है उसके प्रमुख पुरातात्विक स्थलों का सर्वेक्षण कर आपने इस पर साधिकार लेखनी उठाई। इनके ऐसे लेखों से कई भ्रांतियां निर्मूल्य सिद्ध हुई हैं। (द्रष्टव्य है- प्रो० कृष्णदत्त बाजपेयी स्मृति विशेषांक का लेख फतेहपुर के प्रमुख पुरातात्विक स्थल)। मृण्मूर्तियों का संकलन भी आपके द्वारा हुआ है। 'अन्तर्वेद' नामक पत्रिका तथा 'विज्ञान' मासिक के सम्पादक आप रहे हैं। विज्ञान परिषद से एक त्रैमासिक शोध पत्रिका का सम्पादन आप लम्बे समय से सफलतापूर्वक कर रहे हैं। आज भी विज्ञान परिषद प्रयाग में एक वैज्ञानिक के रूप में हिन्दी का कार्य तथा परिषद् के प्रशासनिक कार्य में व्यस्त हैं। आपके गौरवशाली कृतित्व के आधार पर आपको सम्मान प्राप्त हुए हैं- यथा हिन्दी संस्थान आगरा से डॉ० आत्माराम सम्मान, हिन्दी संस्थान उत्तर प्रदेश से विज्ञान भूषण तथा आल इण्डियन साइंस राइटर्स एसोसियेशन से फेलोशिप।

निष्कर्षतः यह निर्विवाद है कि डॉ० मिश्र की विज्ञान एवं हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में की गई वैदुष्यपूर्ण बोधगम्य सेवायें बहुमूल्य हैं। वे हिन्दी साहित्य के इतिहास की विश्रृंखलित कड़ियों को जोड़ने में सहायक हैं। साहित्य एवं विज्ञान में श्रीवृद्धि तो होगी ही।

इस प्रकार गुरुवर्य डॉ० मिश्र के आक्षरिक व्यक्तित्व पर कुछ कह कर मैं अपने को धन्य समझती हूं। यह मेरा लघु लेख अपने गुरुवर्य के प्रति मेरा सश्रद्ध नीराजन है। विनम्र भाव के साथ सादर स्वीकार्य हो।

बेलीगंज, रायबरेली
उत्तर प्रदेश

प्राचीन काव्य के मर्मी : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

डॉ० किशोरी लाल

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विज्ञान संकाय में प्रवेश करने पर एक मार्ग मुस्लिम हॉस्टल की ओर चला गया है, उसी के निकट विज्ञान का ऐसा कक्ष था जिसके ऊपरी भाग में 'हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ' द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पुस्तकों के क्रय के निमित्त मैं अक्सर जाया करता था। ऊपरी भाग से नीचे उतरने पर मैंने एक दिन सहसा देखा कि एक सज्जन प्राचीन हिन्दी काव्य में बड़ी महत्वपूर्ण सूचना दे रहे हैं। उनके निकट जाने पर मालूम हुआ कि ये सुप्रसिद्ध भाषाविद् डॉ० उदयनारायण तिवारी के जामाता हैं। यह सम्प्रति इलाहाबाद विश्वविद्यालय में विज्ञान के अध्यापक हैं। यद्यपि इनकी धर्मपत्नी डॉ० रामकुमारी मिश्र हिन्दी विभाग में हमारे साथ ही हिन्दी में अध्यापन कार्य करती थीं पर मुझे यह नहीं ज्ञात था कि इनके पति डॉ० शिवगोपाल मिश्र भी विज्ञान के अध्यापक होते हुए प्राचीन हिन्दी कविता में पूर्ण रुचि लेते हैं। बातों के सिलसिलें में उन्होंने बताया कि वे मेरी बहुत सी कृतियों को पढ़ चुके हैं और उन्हें क्रय करके अपने संग्रह में रख लिया है। देखा गया है कि समानधर्मा और समान रुचि वास्तव में मैत्री के कारण होते हैं, निश्चय ही इन दोनों गुणों के कारण डॉ० शिवगोपाल मिश्र मेरे जीवन के अधिक निकट होते गए और थोड़े ही समय में वे मेरे प्रशंसक और निकटस्थ जनों में परिगणित होने लगे।

वस्तुतः डॉ० मिश्र जी का जीवनसूत्र ऐसे ग्रामीण अंचल से जुड़ा था, जहां उन्हें प्राचीन कवियों के अनेकशः मर्मी ही नहीं मिले, अपितु बहुत से हस्तलेख भी प्राप्त हुए। डॉ० मिश्र रहने वाले फतेहपुर के हैं और फतेहपुर के अन्तर्गत असनी अकबरकालीन कवियों से लेकर १८वीं और १९वीं शताब्दी तक के कवियों की जन्मभूमि रही है। फतेहपुर असनी के अधिकांश ब्रह्मभट्ट-लब्धप्रतिष्ट साहित्य शास्त्र के आचार्य और सुकवि हैं। डॉ० मिश्र से जब मेरी वार्ता होती थी तो वे विस्तृत रूपेण प्राचीन हस्तलेखों के मर्म बताने में थकते नहीं थे। वैज्ञानिक सरणियों में उन्होंने कई हस्तेलखों का संपादन भी किया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने सतसईकार बिहारी के बहुत से कवित्तों को ढूंढ निकाला है और बिहारी के कवित्त शीर्षक से ग्रंथ भी प्रकाशित करवा दिया है। इसी प्रकार आलमकृत 'कामंदकला' का संपादन भी किया है। डॉ० मिश्र के इसी प्रकार कई अन्य ग्रंथ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से भी मुद्रित हो चुके हैं। डॉ० मिश्र को बलदेव कवि द्वारा संग्रहीत सतकवि गिरा विलास की दो प्रतियां मिली हैं। वास्तव में सतकवि गिरा विलास ठाकुर शिव सिंह सरोज के आधार ग्रंथों में परिलक्षित होता है। यह हर्ष का विषय है कि सतकवि गिरा विलास अद्यावधि अप्राप्त थी, इसे सर्वप्रथम डॉ० मिश्र ने खोज कर हिन्दी जगत के समक्ष प्रस्तुत किया और सुना गया कि अब इसे उन्होंने सुसंपादित कराकर हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से मुद्रित भी करा लिया है। मैं जब शिवसिंह सरोज के प्रसिद्ध आधार ग्रंथ विद्वन्मोद तरंगिणी का संपादन कर रहा था तो उस समय डॉ० मिश्र से सतकवि गिरा विलास के सम्बन्ध में

विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई थी– यद्यपि मूलग्रंथ को देखने का मुझे सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। डॉ० मिश्र विज्ञानवेत्ता होते हुए हिन्दी की प्राचीन काव्य धारा से अटूट रूप से जुड़ गए हैं और मैं समझता हूं कि वे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र और डॉ० माता प्रसाद गुप्त के प्रकृत अनुगत हैं। इस दिशा में वे निरन्तर बढ़ रहे हैं और कई अन्य हस्तलेखों को सुसंपादित करने की उनकी हार्दिक इच्छा है। सम्प्रति वे अवकाशप्राप्त जीवन बिता रहे हैं फिर भी प्राचीन साहित्य साधना में उनकी निष्ठा और लगन अक्षुण्ण बनी हुई है। वे जब मिलते हैं तो अपनी सहज हंसी बिखेर देते हैं, उन्हें बाह्यकृत देखकर अपरिचित व्यक्ति एक बार चौंक उठेगा और यह सोचेगा कि विज्ञान की चकाचौंध से दूर इस साधक ने अवधी और ब्रजभाषा के ठेठ शब्दों की पकड़ और उनकी बारीकियों में इतनी दक्षता प्राप्त कैसे की ?

डॉ० मिश्र मेरे अन्तरंग मित्र हैं। मेरा उनसे एक लम्बी अवधि से सम्बन्ध रहा है। आज वे अपनी वय के सत्तरहवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं और उनके सम्मान में उनके मित्रगण, उनके शुभैषी और शुभचिंतक उन्हें अभिनंदन ग्रंथ भेंट करने जा रहे हैं, ऐसे पुनीत अवसर पर मैं डॉ० मिश्र के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए आशा करता हूं कि वे अबाधगति से प्राचीन साहित्य के उन्नयन, विकास और उद्धार में सदैव लगे रहेंगे।

१६०, नैनी बाजार
इलाहाबाद

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट की एक अनुपम खोज : डॉ० शिवगोपाल मिश्र

(तीस हजार पृष्ठों के अनुवाद की कहानी)

श्रीनिवास आचार्य दास

सन् १६८२ का वर्ष। अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभागवत संघ के मुंबई क्षेत्र के आचार्य एवं गुरु श्री गोपालकृष्ण गोस्वामी ने मुझे गौर-पूर्णिमा के अवसर पर हिन्दी विभाग का प्रभारी एवं सम्पादक नियुक्त किया और आदेश दिया कि मुझे इस्कान के संस्थापकाचार्य कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद द्वारा रचित लगभग एक लाख पृष्टों के साहित्य में से लगभग तीस हजार अति महत्वपूर्ण पृष्ठों के अनुवाद, संपादन तथा कंपोजिंग की व्यवस्था करनी है। आज्ञा शिरोधार्य थी, यद्यपि मैं इस योग्य कतई न था।

श्रील प्रभुपाद ने संस्कृत एवं बंगला धार्मिक/आध्यात्मिक साहित्य का अंग्रेजी में अनुवाद किया तथा उनका तात्पर्य लिखा था। उनकी अंग्रेजी रचनायें-श्रीमद्भागवत १५००० पृष्ठ, श्रीचैतन्य-चरितामृत ५००० पृष्ठ, श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप १००० पृष्ट, भक्तिरसामृतसिंधु ४५० पृष्ठ, लीला पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण १००० पृष्ट तथा अन्य ३० पुस्तकों की सम्मिलित पृष्ट संख्या लगभग ८००० थी। दस-बारह वर्षों की सीमित अवधि में इस कार्य को पूरा करना था। अतः हमें एक ऐसे अनुवादक की खोज थी, जो इस कार्य को निर्धारित अवधि के अन्दर पूरा कर सके।

बहुत सोच विचार के उपरांत यह तय हुआ कि अनुवाद से लेकर मुद्रण तक का पूरा कार्य तीर्थराज प्रयाग की पुण्यभूमि में हो। प्रयाग हिन्दी-अंग्रेजी के मूर्धन्य विद्वानों की भूमि रही है अतः ट्रस्ट के अधिकारियों ने स्व. वेदव्यास जी दास को पर्यवेक्षण हेतु इलाहाबाद भेजा। वेदव्यास जी उस समय बुक ट्रस्ट में प्रवंधक के सचिव थे। वे इलाहाबाद, लखनऊ तथा वाराणसी में अनुवादकों की खोज में लग गये। साथ ही साथ एक ऐसे प्रेस की भी खोज थी, जहां श्रीमद्भागवत के संस्कृत श्लोक, शब्दार्थ, अनुवाद एवं तात्पर्य की शुद्ध कंपोजिंग हो सके। कुछ सप्ताह बाद जब वे मुंबई लौटे तो यह निश्चित हुआ कि मैं इलाहाबाद जाकर रहूं। अतः इलाहाबाद चला गया तथा मुट्टीगंज स्थित काली मंदिर के गेस्टहाउस में रहने लगा। वेदव्यास जी ने एक पुस्तक 'आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान' की हिन्दी पाण्डुलिपि श्रीनारायण प्रेस को कंपोजिंग के लिये दे दी थी। इस पुस्तक का अनुवाद इस्कॉन के एक भक्त ने किया था। इसकी कंपोजिंग वहां चलने लगी तथा मैं वहां इस पुस्तक का प्रूफ देखता रहा। कार्य अत्यन्त धीमी गति से चल रहा था। एक दो महीने बाद एक और पुस्तक 'लीला पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण' के दूसरे भाग के अनुवाद की हिन्दी पाण्डुलिपि लेकर वेदव्यास जी इलाहाबाद पधारे। अब चूंकि श्रीनारायण प्रेस में एक पुस्तक की कंपोजिंग अत्यन्त धीमी गति से चल रही थी, अतः हमने निश्चय किया कि इसकी कंपोजिंग किसी दूसरे प्रेस में हो। इसी सिलसिले में हम लोग अशोक मुद्रण गृह के

मालिक श्री अशोक सहगल जी से मिले और उन्होंने सहर्ष इस पुस्तक की कंपोजिंग का कार्य स्वीकार किया। उनके पास स्वचालित मोनोटाइप मशीन थी, अतः कंपोजिंग तेज गति से होने लगी। इस पुस्तक का मुद्रण भी वहीं होना था। सहगल जी ने मेरे रहने की व्यवस्था भी वहीं प्रेस में कर दी, और अब मैं वहीं रहने लगा। वेदव्यास जी भी कुछ दिन मेरे साथ वहीं रहे। मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि महान स्वतंत्रता सेनानी श्री चन्द्रशेखर आजाद भी उसी कमरे में कुछ दिन रहे थे।

हमें लगभग पन्द्रह हजार पृष्ठों वाले श्रीमद्‌भागवत के अनुवाद की चिन्ता सता रही थी। यद्यपि इसका अनुवाद तीन अलग-अलग व्यक्ति अलग-अलग स्थानों में कर रहे थे, अनुवाद की गति धीमी और तीनों की शैली में भिन्नता थी। हम चाहते थे कि कोई एक ही व्यक्ति इन पन्द्रह हजार पृष्ठों का अनुवाद करे, साथ ही साथ कंपोजिंग भी चलती रहे और वह उसका प्रूफ भी देख ले।

एक दिन शाम को हम तीनों, वेदव्यास जी, सहगल जी तथा मैं प्रेस के लॉन में टहल रहे थे कि वेदव्यास जी ने उनको इस समस्या से अवगत कराया। यह १६८२ के जन्माष्टमी के दो दिन पूर्व की बात थी। श्रीमान् सहगल जी ने हमसे कहा, मेरी दृष्टि में एक व्यक्ति हैं जो इस कार्य को पूरा करने में आपकी सहायता कर सकते हैं। डॉ० शिवगोपाल मिश्र के बारे में चर्चा की और कहा कि यद्यपि वे रसायनशास्त्र के प्रोफेसर हैं, किन्तु आध्यात्मिक रुचि के व्यक्ति हैं, भगवान् श्रीकृष्ण के भक्त, साहित्य प्रेमी तथा अनेक पुस्तकों के सफल अंग्रेजी-हिन्दी अनुवादक हैं। अतः हम लोग दूसरे दिन प्रातः सहगल जी के साथ प्रोफेसर साहब के निवासस्थान २५, अशोक नगर गये। सहगल जी ने हमारा परिचय कराते हुये उनसे कहा, इन्हें कुछ अनुवाद कराना है। मिश्र जी ने वेदव्यास जी की ओर देखते हुये पूछा, बताइये मुझे क्या करना होगा ? तो उन्होंने श्रीमद्‌भागवत के छठे स्कन्ध के तीसरे भाग की एक प्रति उनकी ओर बढ़ाते हुये कहा, आपको इसका अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करना है। मैं विश्वविद्यालय के कई लोगों से मिला, किन्तु कोई तैयार नहीं हुआ। मिश्र जी ने मुस्कुराते हुये कहा, मैं तो विज्ञान का विद्यार्थी हूं तथा मेरा संस्कृत ज्ञान स्वल्प है। किन्तु उनके लाख मना करने पर भी हमने श्रीमद्‌भागवतम् के छठे स्कन्ध का भाग तीन उनके हाथों में थमा दिया तथा अनुवाद का नमूना भेजने का आग्रह किया। उन्होंने जन्माष्टमी के दूसरे दिन दस-बारह पृष्ठों का अनुवाद हमारे पास अशोक मुद्रण गृह में भेज दिया। हम लोगों के लिये यह संतोष का विषय था कि उन्होंने इतनी शीघ्रता से इस कार्य को पूरा किया। वेदव्यास जी ने अनुवाद की एक फोटाकापी मुझे दी तथा अनुमोदनार्थ मूल प्रति वे मुंबई ले गये।

मैंने अनुवाद का पुनरीक्षण किया तो पाया कि अनुवाद में कहीं कोई त्रुटि नहीं थी। लगता था कि जन्माष्टमी के दिन भगवान् श्रीकृष्ण ने स्वयं उनके हृदय में विराजमान होकर यह अनुवाद लिखाया है। अंग्रजी-हिन्दी अनुवाद में एक शब्द भी नहीं छूटा था, यहां तक कि अल्पविराम एंव पूर्णविराम तक का ध्यान रखा गया था। जितने वाक्य अंग्रेजी में थे, उतने ही हिन्दी में थे। यह अविकल अनुवाद था। ऐसा प्रायः कम ही होता है। अनुवाद को स्पष्ट करने के लिये अनुवादक प्रायः एक वाक्य को दो तीन वाक्यों में तोड़ देते हैं या स्पष्टीकरण हेतु कुछ शब्द बढ़ा चढ़ा कर लिख देते हैं। किन्तु यहां डॉ० मिश्र जी ने ऐसा कुछ नहीं किया था। अनुवाद की भाषा सरल तथा अर्थ स्पष्ट था। कई बार लोग अपनी विद्वता प्रदर्शित करने के लिये अनुवाद की भाषा इतनी क्लिष्ट कर देते हैं कि साधारण व्यक्ति समझ नहीं पाता। हरे कृष्ण आन्दोलन का मिशन है कि सरलतम भाषा में भगवान् श्रीकृष्ण के सन्देश को जन-जन तक पहुंचाया जाये। डॉ० मिश्र ने इस बात को अच्छी तरह से अपने हृदय में बिठा लिया था, अतः अनुवाद बहुत ही सुबोध बन पड़ा था। डॉ० मिश्र जी की दूसरी विशेषता थी कि उनकी लिखावट साफ और स्पष्ट थी। मुझे लगा कि कंपोजिटरों को इस लिखावट को पढ़ने में कठिनाई नहीं होगी।

कंपोजिटर भूल कम करेंगे, जिससे प्रूफ शोधन के कार्य में काफी सहूलियत रहेगी। हमारे साथ कई बार ऐसा भी हुआ है कि अनुवादकों ने अनुवाद तो ठीक-टाक किया, किन्तु लिखावट इतनी अस्पष्ट होती थी कि पांडुलिपि को टाइप कराना पड़ता था। टाइप कराने के बाद फिर उसका संशोधन होता था, अतः कार्य काफी बढ़ जाता था। मुझे यह जानकर सन्तोष हुआ कि हम इन झंझटों से बच जायेंगे। इससे समय की काफी बचत होगी। तीसरी विशेषता थी-द्रुत गति से अनुवाद करने की क्षमता। एक दिन में १०-१२ पृष्ठों का अनुवाद कम नहीं था, जबकि विषय-वस्तु सर्वथा भिन्न थी। चौथी विशेषता श्रीमान् सहगल ही का आश्वासन कि मिश्र जी आपको कम से कम अनुवाद की गति के बारे में तो निराश नहीं करेंगे। यह उनका अपना पूर्वानुभव था। पांचवी विशेषता थी कि उन्होंने सामग्री मुद्रित होने के पूर्व के प्रूफ देखने की सहमति भी दे दी थी। इससे मुझे लगा कि कार्य की गुणवत्ता में काफी वृद्धि होगी। प्रूफ देखते समय यदि आवश्यक हुआ तो कुछ संशोधन भी कर लेंगे। छटी विशेषता यह थी कि वे हमारे अति निकट रहते थे, अतः उनके घर प्रूफ भेजने तथा वापस मंगाने में कोई कठिनाई न होगी। अतः मैं प्रतिदिन सुबह-शाम भगवान् श्रीकृष्ण से यही प्रार्थना करता कि भगवान् इनके अनुवाद का अनुमोदन मुंबई के भक्तों से करा दे। अन्त में यही हुआ। मुंबई से वेदव्यास जी का पत्र आया, अनुवाद सराहनीय है। पूरी पुस्तक का अनुवाद करा डालें। डॉ० मिश्र जी ने भागवतम के ६.३ का अनुवाद २०-२५ दिन में ही पूरा कर दिया। इसके बाद डॉ० मिश्र जी को श्रीमद्भागवत का पांचवां स्कन्ध अनुवाद के लिये दिया गया। पांचवें स्कन्ध में खगोल विज्ञान का बड़ा विस्तृत वर्णन है, अतः वेदव्यास जी की राय थी कि डॉ० मिश्र जी ही इसका अनुवाद ठीक ठीक करेंगे क्योंकि विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली से वे परिचित हैं। पांचवें स्कन्ध के दोनों खण्डों का अनुवाद भी इन्होंने शीघ्र ही पूरा कर दिया तथा यह पुस्तक अशोक मुद्रण गृह में छप भी गयी।

इसके बाद डॉ० मिश्र चौथे स्कन्ध का अनुवाद करने लगे। यह उस समय चार खण्डों में छपा था। चारों खण्डों की पृष्ठ संख्या १३०० के लगभग थी। अक्टूबर १६८३ की बात है, डॉ० मिश्र जी की पुत्री विभा को नेत्र कष्ट हुआ तो उनको चिकित्सा हेतु मद्रास जाना पड़ा। जब वे वहां गये तो चौथा स्कन्ध भी साथ ले गये तथा मद्रास में भी उन्होंने अनुवाद कार्य जारी रखा। उनका कहना था, अनुवाद कार्य से मुझे बहुत ढाढ़स मिलता रहा। व्यथित चित्त को एकाग्र करने में इससे सहायता मिलती है। मैं अनुभव करने लगा था कि श्रील प्रभुपाद के तात्पर्य किसी भी संसारी व्यक्ति की आंखें खोलने वाले हैं। मुझे याद है, एक बार जब मैं उनके निवास स्थान पर गया तो वे हरे कृष्ण महामंत्र का जाप कर रहे थे। वे कहते, कष्ट के समय इस जप से शान्ति मिलती है। प्रतिदिन जप करके ही अनुवाद प्रारम्भ करते। ऐसा लगता था मानो भगवान् श्रीकृष्ण उनके हृदय में विराजमान होकर अनुवाद लिखा रहे हों।

अब तक पांचवें स्कन्ध के दोनों भाग, छठे के तीनों भाग तथा तीसरे के चारों भागों की कंपोजिंग इलाहाबाद में हो चुकी थी जिसमें से छठे स्कन्ध के भाग एक का अनुवाद तथा तीसरे स्कन्ध के पहले भाग का अनुवाद दो व्यक्तियों ने किया था। यद्यपि दोनों अनुवादक सक्षम थे किन्तु दोनों विद्वान लेखक अपनी किसी पुस्तक के लेखन कार्य में व्यस्त थे, अतः अनुवाद में अधिक समय न दे पाते थे। अतः निर्णय लिया गया कि श्रीमद्भागवत का पूरा अनुवाद डॉ० मिश्र ही करेंगे।

जून १६८५ में भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट ने अमेरिका से एक फोटो टाइपसेटिंग मशीन मंगाई। इस मशीन का नाम Compset था। इस कम्प्यूटर-आधारित मशीन में देवनागरी भाषा में टाइपसेटिंग हो सकती थी। यह एक नई तकनीक थी, तथा इस मशीन में ६ प्वाइन्ट से लेकर १२० प्वाइन्ट तक के असीमित फौंट थे। अब सीसे के ढले टाइप का जमाना लद रहा था अतः मुझे आदेश हुआ कि मैं

वापस मुंबई आ जाऊं तथा इस मशीन की कार्यप्रणाली सीखूं। इस प्रणाली को सीखने में मुझे तीन महीने लगे। इसी समय भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट ने 'भगवद्दर्शन' मासिक पत्रिका निकालने की योजना बनाई तथा उसका सम्पादक मुझे ही नियुक्त कर दिया। अतः मैंने इस्कान की अंग्रेजी पत्रिका 'बैक टु गाडहेड' के अनेक अंकों के लेख अनुवाद हेतु डॉ० मिश्र ही के पास इलाहाबाद भेजे। यह अगस्त १९८५ की बात है। तब से लेकर लगातार १३ वर्षों तक डॉ० मिश्र ही ने इसका अनुवाद किया। 'भगवद्दर्शन' पत्रिका की टाइपसेटिंग कई वर्षों तक इसी फोटोटाइपसेटिंग मशीन में होती रही।

इस बीच अशोक मुद्रण गृह में डॉ० मिश्र जी द्वारा अनूदित भागवत के शेष खण्डों की कंपोजिंग का कार्य चल रहा था। सातवें स्कन्ध की कंपोजिंग श्रीनारायण प्रिंटिंग प्रेस में हो रही थी। अनुवाद से लेकर प्रूफ-शोधन तक का सारा कार्य डॉ० मिश्र जी स्वयं देखते थे।

ज्यों ज्यों मिश्र जी अनुवाद करते जाते मैं मुंबई से उनके लिये अनुवाद की सामग्री भेजता रहता। मुंबई पहुंचकर मैंने सबसे पहले उनके पास 'प्रभुपाद' अनुवाद हेतु भेजी। यह श्रील प्रभुपाद के शिष्य श्री सत्स्वरूप-दास गोस्वामी द्वारा लिखित श्रील प्रभुपाद की संक्षिप्त जीवनी है। लगभग ४०० पृष्ठों की जीवनी का अनुवाद इन्होंने १९८५ में ही पूरा कर दिया। यह उनकी अमेरिकी शिष्य द्वारा लिखी जीवनी है तथा इसमें अमेरिकी स्लैंग का खुलकर प्रयोग हुआ है। वहां के परिवेश का वर्णन वहां गये बिना जानना अति मुश्किल कार्य था। अतः इसका अनुवाद अत्यन्त कठिन था, किन्तु पूर्ण मनोयोग से डॉ० साहब ने कार्य को पूरा किया। आज लोग इस जीवन चरित्र को पढ़कर आनन्द लेते हैं। दिसम्बर १९८५ तक डॉ० मिश्र जी ने श्रील प्रभुपाद की श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप का भी अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद पूरा किया था तथा पाण्डुलिपि कंपोजिंग के लिये तैयार थी। किन्तु इसका पहला संस्करण नवम्बर १९९० में मुद्रित हो सका। लगभग ७५० पृष्ठ के इस हिन्दी संस्करण का सन् २००० तक अट्ठाइस बार पुनर्मुद्रण हो चुका है। इस प्रकार कुल ६,०३,००० प्रतियां दिसम्बर २००० तक छप कर वितरित हो चुकी हैं। १९८५ तक एक अन्य छोटी पुस्तक Nectar of Instruction का भी अनुवाद हो चुका था। इसके बाद फरवरी १९८७ तक उन्होंने भागवत के आठवें तथा नवें स्कन्ध का अनुवाद कर दिया था। तदुपरांत आठ मास तक वे Prabhupada Nectar, Higher Taste, Rajvidya, Prahalad, Sudama, Sakshi Gopal तथा Kaliya आदि पुस्तकों का अनुवाद करते रहे।

सन् १९८५ में यह निर्णय लिया जा चुका था कि सत्रह खंडों (अब ६ खंडों में प्रकाशित) वाले श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी विरचित श्रीचैतन्य-चरितामृत का अनुवाद भी होना है। श्रील प्रभुपाद ने अन्य ग्रंथों की तरह इस महत्वपूर्ण गौड़ीय वैष्णव परम्परा के मूलभूत बंगला ग्रंथ का अनुवाद अंग्रेजी में किया था एवं विस्तृत तात्पर्य लिखा था। अंग्रेजी संस्करण में इस ग्रंथ की पृष्ठ संख्या लगभग ५००० थी। इस ग्रंथ में श्रीचैतन्य महाप्रभु का सुन्दर जीवन-चरित्र है। श्रीचैतन्य महाप्रभु का जन्मस्थान पश्चिम बंगाल के नदिया जिले के मायापुर गांव में हुआ था। अतः यह विचार किया गया कि क्यों न श्रीधाम मायापुर जाकर श्रीचैतन्य महाप्रभु की पुण्यभूमि का दर्शन किया जाय। अतः मिश्र जी मेरे साथ १९८६ की गौर पूर्णिमा के अवसर पर मायापुर गये तथा वहां लगभग १०० देशों - रूस, अमेरिका, चीन, जापान, कोरिया, लेटिन अमेरिका, आस्ट्रेलिया से आये हुये हजारों भक्तों का दर्शनलाभ हुआ। मन्दिर परिसर भव्य था तथा हमने वहां श्रील प्रभुपाद की पुण्य समाधि के दर्शन किये, जो उस समय निर्माणाधीन थी। हम दोनों ने मायापुर के उन सभी स्थानों के दर्शन किये, जो श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलास्थली कहलाते हैं।

डॉ० मिश्र जी ने जुलाई ८८ से दिसम्बर १९८९ की अवधि में श्रीचैतन्य-चरितामृत की आदि

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट इन्टरनेशनल

सन् १९७२ में श्रील प्रभुपाद ने भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट इन्टरनेशनल की स्थापना संयुक्त राज्य अमेरिका में की थी, जो इस समय विश्वभर में भारतीय धर्म और दर्शन के क्षेत्र में, पुस्तकों की मुद्रण संख्या के आधार पर विश्व का सबसे बड़ा प्रकाशक है। इस ट्रस्ट की स्थापना से लेकर अब तक करोड़ों लोगों ने श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में से कम से कम एक पुस्तक पढ़ी होगी तथा अपने जीवन में शुद्धि का अनुभव किया होगा। भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट द्वारा श्रील प्रभुपाद एवं उनके अधिकृत शिष्यों द्वारा रचित वैष्णव साहित्य ही प्रकाशित किया जाता है। यह साहित्य विश्व की ५० से अधिक भाषाओं में अनूदित है, यथा- हिब्रू, अरबी, चीनी, रूसी, जापानी, डच, फ्रेंच, जर्मन, इतालवी, स्विडिश तथा सभी प्रमुख भारतीय भाषायें। श्रील प्रभुपाद द्वारा अंग्रेजी में प्रस्तुत एवं डॉ० शिवगोपाल मिश्र द्वारा हिन्दी में अनूदित श्रीमद्‌भगवद्‌गीता यथारूप का सन् १९९० से दिसम्बर २००० तक २८ बार पुनर्मुद्रण हो चुका है तथा कुल ९,०३,००० प्रतियां मुद्रित होकर वितरित की जा चुकी हैं। पिछले वर्ष मात्र दिसम्बर २००० में श्रीमद्‌भगवद्‌गीता यथारूप की १,२२,००० प्रतियां वितरित की गई थीं। इस्कॉन के भक्तगण विश्व के प्रायः सभी देशों में कृष्णभावनामृत का प्रचार प्रसार एवं भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का वितरण करते हैं।

लीला तथा मध्य लीला के खण्डों का अनुवाद पूरा कर दिया था। इसी बीच उनकी पुत्री पुनः बीमार पड़ गई और दिल्ली ले जाकर उसका आपरेशन कराना था। मुझे अच्छी तरह याद है कि उन्होंने दिल्ली में भी श्रीचैतन्य-चरितामृत का अनुवाद जारी रखा। वे पुत्री की अस्वस्थता के बावजूद श्रीचैतन्य-चरितामृत का अनुवाद जारी रखे हुये थे। इस बीच हमने उनके पास दो अन्य छोटी पुस्तकें भेजीं - On way to Krishna तथा ब्रह्मसंहिता। डॉ० मिश्र ने क्रमशः सितम्बर १९९० में तथा फरवरी १९९१ में इन दोनों पुस्तकों का अनुवाद पूरा किया।

श्रील प्रभुपाद ने श्रीमद्‌भागवतम् के ९ स्कन्धों का अनुवाद पूरा कर दिया था तथा दसवें स्कन्ध का अनुवाद कर ही रहे थे कि वे १४ नवम्बर १९७७ को गोलोक धाम वृन्दावन में नित्य लीला प्रविष्ट हुये। उन्होंने दसवें स्कन्ध के कुल तेरह अध्यायों का अनुवाद किया था। इस बीच श्रील प्रभुपाद के एक वरिष्ठ अमेरिकन शिष्य श्री हृदयानन्द गोस्वामी ने भागवत के शेष दसवें, ग्यारहवें तथा बारहवें स्कंध का अनुवाद पूरा कर लिया था। अतः हमने डॉ० मिश्र जी से पुनः आग्रह किया कि अब वे भागवत के इन शेष खण्डों का अनुवाद भी पूरा कर दें। अतः मिश्र जी ने सितम्बर १९९९ से जून १९९२ तक दसवें स्कन्ध के शेष ७७ अध्यायों का अनुवाद पूरा कर दिया। तब तक हमारे पास गयारहवां तथा बारहवां स्कन्ध भी अमेरिका से छपकर आ चुके थे। अतः नवम्बर १९९२ से जून १९९३ तक की अवधि में आपने इन दोनों स्कन्धों के लगभग १२०० पृष्ठों का अनुवाद पूरा किया। चूंकि इन स्कन्धों के संस्कृत से अंग्रेजी अनुवाद उनके अमेरिकन शिष्यों ने किये थे तथा तात्पर्य लिखे थे, अतः श्रील प्रभुपाद से काफी भिन्नता होने के कारण काफी चिन्तन-मनन कर डॉ० मिश्र जी ने यह अनुवाद किया। स्वाभाविक है, समय कुछ अधिक लगा। कृष्णद्वैपायन व्यास द्वारा विरचित श्रीमद्‌भागवत

पुराण का अनुवाद श्रील प्रभुपाद तथा उनके शिष्यों ने अंग्रेजी भाषा में १५,००० से अधिक पृष्ठों में किया था। इन सभी पृष्ठों के हिन्दी अनुवाद का श्रेय डॉ० शिवगोपाल मिश्र को जाता है। डॉ० मिश्र ने अधिकांश अनुवाद अवकाशग्रहण के पूर्व ही पूरा कर दिया था। वे प्रतिदिन ३-४ घण्टे अनुवाद करते। इतने से ही इतना अनुवाद हो जाता कि टाइपसेटरों को फुर्सत न मिलती। अवकाशप्राप्ति के बाद डॉ० मिश्र जी ने श्रीचैतन्य-चरितामृत के अन्त्य लीला के शेष पांचों खण्डों का अनुवाद करना प्रारम्भ किया। उन्होंने जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर इन तीन महीनों में ही पांचों खण्डों (१५०० पृष्ठ) का अनुवाद पूरा कर दिया।

इस बीच हमें यह जानकर गहरा धक्का लगा कि दिल्ली में आपरेशन के बावजूद उनकी पुत्री विभा की दृष्टि न लौट सकी। वह अब सदा के लिये दृष्टि खो चुकी थी। उसकी दृष्टिहीनता की स्थिति में किस तरह चला फिरा जाये और फिर दृष्टिहीन बच्चों को किस तरह पढ़ाया जाये इसका प्रशिक्षण दिल्ली के ही बी.आर.ए. इन्सटीट्यूट में दिलाया। दो वर्ष बाद जोधपुर के अंध विद्यालय में पढ़ाने का कार्य मिल गया। डॉ० मिश्र जोधपुर आते जाते रहे और क्रमशः इन तीन पुस्तकों का अनुवाद किया Queen Kunti, A Second Chance, A Journey of Self Discovery। इसके साथ ही साथ १९९४ की जनवरी मे Preaching is the Essence का अनुवाद पूरा हुआ। श्रीमद्भागवत यथारूप का नया संस्करण छपना था, अतः मई १९९४ में इसका संशोधन भी सम्पन्न हुआ। श्रीमद्भागवत के शेष बचे दो खंडों का अनुवाद (भागवत ३.१ तथा भागवत ६.१) क्रमशः अप्रैल तथा जुलाई में पूरा हुआ। दिसम्बर १९९४ में मिश्र जी ने Path of Perfection का भी अनुवाद किया। इस प्रकार वे पूर्णरूपेण कृष्णभावनाभावित साहित्य के अनुवाद में व्यस्त रहे। लगभग बारह वर्षों में डॉ० मिश्र जी ने श्रील प्रभुपाद के ३०००० से अधिक पृष्ठों के सभी प्रमुख ग्रंथों का अनुवाद कर एक कीर्तिमान स्थापित किया है। अब तक भारत की किसी भी अन्य भाषा में प्रभुपाद की पुस्तकों का इतना अनुवाद नहीं हुआ था। वस्तुतः यह अनुवाद और भी शीघ्रता से होता किन्तु टाइपसेटिंग तथा मुद्रण में काफी समय लग रहा था अन्यथा यह सारा कार्य छह-सात वर्षों में ही पूरा हो जाता।

१९९५ में मेरे पास अनुवाद हेतु कोई सामग्री नहीं थी किन्तु साल के अन्त में मुझे आदेश मिला कि Spiritual Master & The Disciple मिश्र जी को भेजूं। डॉ० मिश्र ने इस पुस्तक का अनुवाद दिसम्बर १९९५ में पूरा कर दिया। इसके बाद फिर काफी समय तक अवकाश सा रहा। १९९६ में कुछ छोटी पुस्तकों का अनुवाद कार्य पुनः प्रारम्भ हुआ Song of Vaishnava, The Laws of Nature, Civilization & Transcendence, Hare Krishna Challenge, Jagannathpriya Natakam, नारदभक्ति सूत्र आदि। इन सभी पुस्तकों का अनुवाद आपने शीघ्र ही कर डाला तथा अधिकांश पुस्तकें छप चुकी हैं। Light of Bhagwat का अनुवाद किसी अन्य अनुवादक ने किया था। इस अनुवाद को डॉ० मिश्र जी ने सुधारा। अब यह पुस्तक भी छप चुकी है। इसके बाद दो पुस्तकें मुझे अनुवाद हेतु दी गईं Scientific Basis of Krishna Consciousness तथा Dharma-The way of Transcendence। ये दोनों पुस्तकें मैंने इलाहाबाद भेजीं। कुछ ही दिनों में इनका अनुवाद मेरे पास पहुंच गया। अब Typesetting हो रही है तथा शीघ्र छपने की आशा है।

डॉ० शिवगोपाल जी ने श्रील प्रभुपाद रचित पुस्तकों के अतिरिक्त उनके शिष्यों द्वारा रचित कुछ पुस्तकों का अनुवाद भी किया है। यथा Brahmacharya in Krishna Consciousness, Message to youth of India, Beginer's Guide to Krishna Consciousness, Deity Worship Book इत्यादि। इस प्रकार डॉ० शिवगोपाल जी ने अब तक लगभग ३५,००० पृष्ठों का अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत कर एक

कीर्तिमान स्थापित किया है।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी ने श्रील प्रभुपाद विरचित इतने विशाल अंग्रेजी साहित्य का हिन्दी भाषा में अनुवाद कर चैतन्य महाप्रभु के मिशन 'सर्वत्र प्रचार होइबे मोर नाम' अर्थात् कृष्णभक्ति के प्रचार मिशन को एक नई गति प्रदान की है। श्रील प्रभुपाद जी के गुरु महाराज श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रेस को वृहदमृदंग कहा करते थे। सामान्य मिट्टी के मृदंग से जो प्रचार की गूंज होती है, वह क्षणिक होती है किन्तु जब प्रेस में छपी पुस्तक किसी के हाथ में थमा दी जाती तो प्रचार की गूंज ज्यादा स्थायी होती है। डॉ० शिवगोपाल जी ने श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों के अनुवाद के माध्यम से वृहदमृदंग द्वारा कृष्णभावनामृत के प्रचार मिशन को आगे बढ़ाने में भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट को जो सहयोग दिया है वह अवर्णनीय है। जो व्यक्ति भगवान् श्रीकृष्ण के सन्देश का प्रचार करता है, वही उनका प्रिय भक्त होता है। श्रील प्रभुपाद अपने भागवत के तात्पर्य (७.६.२४) में लिखते हैं- प्रचार कार्य भगवान् की सर्वोत्तम सेवा है। भगवान् उस व्यक्ति से तुरन्त अत्यधिक तुष्ट होंगे जो कृष्णभावनामृत के इस प्रचार में अपने को प्रवृत्त करता है। इसकी पुष्टि स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में (१८.६९) की है- न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः- इस जगत में न तो उससे बढ़कर मेरा कोई सेवक है, न उससे अधिक प्रिय कोई आगे होगा। यदि कोई व्यक्ति भगवान् की महिमा तथा उनकी सर्वोत्कृष्टता का प्रचार करने का सच्चे दिल से प्रयत्न करता है तो भले ही व अपूर्ण रूप से शिक्षित क्यों न हो वह भगवान् का सर्वप्रिय सेवक बन जाता है। यही भक्ति है। :: इति ::

संपादक
भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट
हरे कृष्ण लैण्ड, जूहू, मुंबई-४०००४९

शिव सौरभम्
डा० शिव गोपाल मिश्र की 70वीं वर्षगाँठ पर अभिनन्दन